फतेहपुर जिला पंचायत संगठन एवं कार्य तथा जिले के विकास में योगदान

बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय, झाँसी (उत्तर प्रदेश)

राजनीति विज्ञान विषय के अन्तर्गत

डॉक्टर ऑफ फिलासफी उपाधि हेतु प्रस्तुत

शोध प्रबन्ध

निर्देशक
डॉ. राजीव रत्न द्विवेदी
रीडर एवं विभागाध्यक्ष
राजनीति विज्ञान विभाग
अतर्रा पी. जी. कालेज, अतर्रा
जनपद - बाँदा (उत्तर प्रदेश)

शोधार्थी
राहुल मिश्र
एम. ए. (राजनीति विज्ञान)
छत्रपति शाहू जी महाराज विश्वविद्यालय,
कानपुर
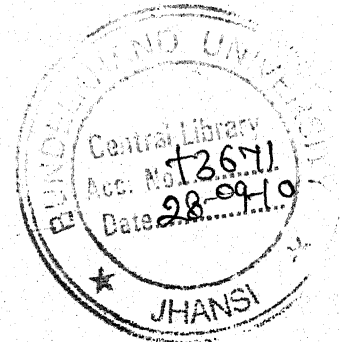
डॉ. राजीव रत्न द्विवेदी
एम. ए. (राजनीति विज्ञान), पी-एच. डी.

रीडर एवं विभागाध्यक्ष
राजनीति विज्ञान विभाग
अतर्रा पी. जी. कालेज, अतर्रा
जनपद - बाँदा (उत्तर प्रदेश)

प्रमाण पत्र

प्रमाणित किया जाता है कि राहुल मिश्र पुत्र श्री धर्मचन्द्र मिश्र द्वारा प्रस्तुत शोध प्रबन्ध **'फतेहपुर जिला पंचायत संगठन एवं कार्य तथा जिले के विकास में योगदान'** मेरे निर्देशन में विद्यालय के पत्रांक बु. वि./प्रशा./शोध /2005/2723-25 दिनांक 6-4-2005 के द्वारा राजनीति विज्ञान विषय में शोध कार्य के लिए पंजीकृत हुए। इन्होंने मेरे निर्देशन में आर्डिनेस की धारा 7 द्वारा वांछित अवधि तक कार्य किया तथा इस अवधि में शोध केन्द्र में उपस्थित रहे। यह इनकी मौलिक कृति है, इन्होंने इस शोध के सभी चरणों को अत्यन्त सन्तोषजनक ढंग से परिश्रमपूर्वक सम्पन्न किया। मैं इस शोध प्रबन्ध को प्रस्तुत करने की संस्तुति करता हूँ।

डॉ. राजीव रत्न द्विवेदी

आभार प्रदर्शन
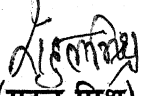
प्रत्येक अध्ययन एक सामूहिक कार्य है। प्रस्तुत शोध प्रबन्ध ग्रन्थ भी एक सामूहिक प्रयत्न का प्रतिफल है। अतः यह उचित जान पड़ता है कि इस शोध ग्रन्थ को पूरा करने में सहयोग दाताओं के प्रति आभार प्रकट करें। मैं अपने शोध निर्देशक डॉ. राजीव रत्न द्विवेदी विभागाध्यक्ष, राजनीति विज्ञान विभाग, अतर्रा पी. जी. कालेज, अतर्रा के प्रति उनके अमूल्य निर्देशन के लिए हृदय से आभारी हूँ। साथ ही मैं उन सभी उत्तरदाताओं के प्रति भी कृतज्ञता प्रकट करता हूँ जिन्होंने साक्षात्कार देकर व अन्य तरीकों से मुझे सम्बन्धित विषय की जानकारी प्राप्त करने में सहयोग दिया। श्री शूलपाणि दीक्षित सहायक संख्याधिकारी फतेहपुर व उनके कार्यालय के उन सभी लिपिक वर्ग का आभारी हूँ जिन्होंने जिले से सम्बन्धि करने में सहयोग प्रदान किया।

मैं फतेहपुर जिला पंचायत अधिकारी के उन सभी लिपिकों व मुख्य अधिकारी जिला पंचायत फतेहपुर के सहयोग का आभारी हूँ जिन्होंने फतेहपुर जिला पंचायत से सम्बन्धित भूत, भविष्य एवं निकट भविष्य की योजनाओं के सम्बन्ध में जानकारी प्रदान की। मैं अमर शहीद ठा. दरियाव सिंह महाविद्यालय के प्राचार्य डॉ. ओउम प्रकाश अवस्थी का सहृदय से आभारी हूँ जिन्होंने मुझे पुत्रवत् स्नेह एवं कार्य विषय में प्रोत्साहित करने का कार्य किया। साथ ही मैं अपने पूज्यनीय माता-पिता का आभारी हूँ जिन्होंने मुझे इस स्तर तक पहुँचाने में प्रमुख भूमिका निभाई है। साथ ही मैं अपनी पत्नी श्रीमती पुष्पा मिश्रा के प्रति भी हार्दिक रूप से आभारी हूँ जिसकी प्रेरणा एवं सम्बल से यह कार्य सम्पन्न हो पाया।

अन्त में मैं शोध प्रबन्ध के कम्प्यूटर टंकण एवं डिजाइनिंग हेतु श्री योगेश जी एवं श्री सुधीर तिवारी जी का भी आभारी हूँ जिन्होंने मुझे सराहनीय योगदान दिया। मुझे विश्वास है कि इस अध्ययन की राजनीति विज्ञान के

क्षेत्र के विद्वानों, नेताओं एवं मौलिक चिन्तकों द्वारा प्रोत्साहन प्राप्त होगा। यदि यह अध्ययन जनपदीय विकास एवं जिला पंचायतों के सम्वर्धन में उपयोगी सिद्ध होता है तो शोधार्थी इसे अपने श्रम का सही पुरस्कार समझेगा।

आकांक्षारत

(राहुल मिश्र)

एम. ए. (राजनीति विज्ञान)

ग्राम- रानीपुर बहेरा, सिलमी
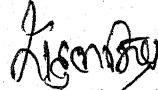
जनपद - फतेहपुर (उत्तर प्रदेश)

घोषणा - पत्र

यह घोषित किया जाता है कि पी-एच. डी. उपाधि बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय के विचारान्स प्रस्तुत **'फतेहपुर जिला पंचायत संगठन एवं कार्य तथा जिले के विकास में योगदान'** शीर्षक पर शोध प्रबन्ध मेरी मौलिक कृति है। कृति में उपलब्ध मार्ग दर्शन एवं सुझावों का उपयोग किया गया है। उसका यथास्थान उल्लेख किया गया है।

यह भी घोषणा की जाती है कि प्रस्तुत कृति अन्य व्यक्ति द्वारा इस विश्वविद्यालय में अथवा किसी विश्वविद्यालय में प्रस्तुत शोध प्रबन्ध का अंश नहीं है।

शोधार्थी

(राहुल मिश्र)

एम. ए., राजनीति विज्ञान
छत्रपति शाहू जी महाराज विश्वविद्यालय,
कानपुर

अनुक्रमणिका

अध्याय प्रथम **शोध परम्परा एवं अध्ययन विधि** 01

(क) अनेक आलोचनाओं के बाद भी पंचायत राज एक परीक्षणीय सिद्धान्त है।

(ख) सिद्धान्त के विषय में कुछ महत्वपूर्ण पुस्तकों की समीक्षा

(I) पुस्तक - पंचायती राज संगठन और कार्य प्रणाली
लेखक - श्री देवेन्द्र मिश्र
प्रकाशन - क्लासिकल पब्लिसिंग कम्पनी, नयी दिल्ली

(II) पुस्तक - पंचायती राज व्यवस्था
लेखक - श्री देवेन्द्र उपाध्याय
प्रकाशन - सामयिक प्रकाशन, नयी दिल्ली

(III) पुस्तक - स्थानीय स्वशासन
लेखक - श्री चन्द्र प्रकाश वर्थवाल
प्रकाशन - सुलभ प्रकाशन 17, अशोक मार्ग, लखनऊ

(IV) पुस्तक - भारत में पंचायती राज
लेखक (सम्पादक) - आर. पी. जोशी एवं रूपा भगलानी
प्रकाशन - राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर

(V) पुस्तक - ग्रामीण स्थानीय प्रशासन
लेखक - चन्द्रा पटनी
प्रकाशन - रिसर्च पब्लिकेशन्स त्रिपोलिया बाजार, जयपुर

(VI) पुस्तक - इंग्लैण्ड में स्थानीय प्रशासन
लेखक - श्री हरिश्चन्द्र
प्रकाशन - कालेज बुक डिपो, त्रिपोलिया बाजार, जयपुर

(VII) पुस्तक - पंचायती राज व्यवस्था में पंचायत समिति
लेखक - श्री उमेश प्रसाद सिंह
प्रकाशन - राधा पब्लिकेशन, नयी दिल्ली

(VIII) पुस्तक - उत्तर प्रदेश की नयी पंचायती राज व्यवस्था 'एक दर्शन'
सम्पादक व प्रकाशन - किसान सेवा समिति, लखनऊ

(ग) इस सिद्धान्त का सुनिश्चित संरचनात्मक स्वरूप जिसका अभिन्न अंग नगरीय एवं ग्रामीण समाज है।

(घ) इस सिद्धान्त की उपयोगिता ग्रामीण एवं नगरीय समाज के परिप्रेक्ष्य में।

(ङ) पंचायती राज व्यवस्था द्वारा जनपद फतेहपुर के परिप्रेक्ष्य में किये गये कार्यों की समीक्षा।

कार्य

(I) नलकूप, सिंचाई एवं विद्युत

(II) स्वास्थ्य

(III) अम्बेडकर ग्राम योजना

(IV) दुकान निर्माण योजना

(V) दुकानदारों एवं मत्स्य पालकों को भूमि पट्टा।

अध्याय - द्वितीय **कार्य की विस्तृत रूपरेखा** 33

(क) सैद्धान्तिक परिचय

(A) स्वशासन का परिचय

(B) भारत में स्वशासन का सिद्धान्त

(ख) व्यवहारिक स्थिति

(A) प्राचीन भारत में स्वशासन का सिद्धान्त

अथवा

ब्रिटिश शासन से पूर्व भारत में स्थानीय स्वशासन

(B) ब्रिटिश काल में स्वशासन का विकास

(C) स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् स्वशासन की स्थिति।

अध्याय तृतीय **73वाँ संविधान संशोधन अधिनियम, 1972 द्वारा प्रदत्त स्थिति** 83

(A) पंचायत परिभाषा

(B) पंचायती राज का गठन एवं संरचना

(C) निर्वाचन

(D) सदस्यों की अर्हतायें एवं निर्बन्धन

(E) पंचायतों की शक्तियाँ

(F) प्राधिकार एवं उत्तरदायित्व

		130
अध्याय चतुर्थ	**जिला पंचायत का गठन एवं विकास**	
	जनपद फतेहपुर के महत्वपूर्ण आंकड़े	
	(A) जिला पंचायत फतेहपुर का संक्षिप्त इतिहास	
	(i) जनपद फतेहपुर की भौगोलिक स्थिति	
	(ii) संरचना	
	(iii) जनपद फतेहपुर की सामाजिक स्थिति	
	(iv) जनपद फतेहपुर का आर्थिक सर्वेक्षण	
	(B) जिला पंचायत फतेहपुर की संरचना	
	(C) जिला पंचायत फतेहपुर की संग	
	(v) कृषि उद्योग एवं निर्माण समिति	
	(vi) समता समिति	
	(vii) अन्य समितियाँ	
	(viii) समितियों का संगठन	
	(ix) समितियों का कार्यकाल और निर्वाचन पद्धति	
	(x) उप समितियां	
	(D) आरक्षण	
	(E) जिला पंचायत की निर्वाचक नामावली	
	(G) मत का अधिकार	
	(H) कार्यकाल	
	(I) अर्हता एवं निर्बन्धन	
	(J) अध्यक्ष एवं उपाध्यक्ष	
	(i) अध्यक्ष, उपाध्यक्ष पद का आरक्षण	
	(ii) कार्यकाल	
	(iii) कार्य	
	(K) अधिकारी एवं कर्मचारी	
		171
अध्याय पंचम	**नियंत्रण एवं पर्यवेक्षण सम्बन्धी कार्य**	
	(1) शिक्षा सम्बन्धी कार्य	
	(A) प्राथमिक एवं उच्च प्राथमिक विद्यालयों की स्थापना एवं रख-रखाव।	
	(B) स्कूल पूर्व शिक्षा हेतु अनौपचारिक शिक्षा केन्द्रों का संचालन।	

(C) शिक्षा मित्र योजना का कार्यान्वयन।
(D) सर्व शिक्षा अभियोन योजना का क्रियान्वयन।
(2) चिकित्सा एवं स्वास्थ्य सम्बन्धी कार्य।
(A) सामुदायिक एवं प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों की स्थापना व रखरखाव।
(B) आयुर्वेदिक, होम्योपैथिक एवं यूनानी स्वास्थ्य केन्द्रो की स्थापना व रखरखाव।
(C) प्रतिरक्षीकरण, टीकाकरण कार्यक्रम का क्रियान्वयन।
(3) स्वास्थ्य, शिक्षा सम्बन्धी क्रियाकलाप।
(4) जिला पंचायत द्वारा संचालित परिवार कल्याण कार्यक्रम।
(5) कार्य शिविरों का आयोजन।
(6) पर्यावरण, प्रदूषण नियंत्रण सम्बन्धी कार्य।
(7) जिला पंचायत की उपविधियाँ बनाने का अधिकार।
(8) विद्युत वितरण एवं चोरी पर नियंत्रण।
(9) निरीक्षण, प्रवेश एवं तलाशी सम्बन्धी कार्य।

अध्याय षष्टम् **जिला पंचायत फतेहपुर के वित्त एवं उद्योग सम्बन्धी कार्य** **217**
(A) जिले के आर्थिक विकास हेतु योजनायें तैयार करना।
(B) योजनाओं का बजट निर्धारित करना।
(C) जिला पंचायत की आय के लिए स्रोत खोजना।
(D) वार्षिक प्रशासनिक रिपोर्ट पेश करना।
(E) लघु उद्योगों के विकास हेतु प्रयत्न।
(F) लघु उद्योगों के विकास हेतु बैंकों से ऋण प्रदान करवाना।
(G) सन् 2007-08 जिले के बजट में किये गये प्रावधान

अध्याय सप्तम् **जिला पंचायत फतेहपुर के समन्वयमूलक तथा परामर्शमूलक कार्य** **244**
(A) जिला पंचायत फतेहपुर की समन्वयमूलक एवं परामर्शमूलक कार्यों की पृष्ठभूमि।
(B) समाज कल्याण एवं कमजोर वर्गों के कल्याण हेतु योजनाओं का कार्यान्वयन।

(I) अनुसूचित जाति, जनजाति और पिछड़े वर्गों को छात्रवृत्तियाँ, वृत्तिकायें, बोर्डिंग अनुदान, पुस्तकें और अन्य उपसाधन क्रय करने के लिए अन्य अनुदान देकर शिक्षा सुविधाओं का विस्तार।

(II) निरक्षरता उन्मूलन और साधारण शिक्षा के नर्सरी विद्यालयों, बालवाड़ियों, रात्रि विद्यालयों और पुस्तकालयों का संगठन करना।

(III) नेत्रहीन, मूक-बधिर तथा शारीरिक रूप से विकलांग निराश्रित व्यक्तियों को उनके भरण-पोषण हेतु अनुदान स्वीकृत करने की कार्यवाही।

(C) ग्रामीण हाटों-बाजारों का अर्जन एवं रखरखाव सम्बन्धी कार्य।

(D) समाज सुधार सम्बन्धी क्रिया-कलाप।

(E) विकास योजनाओं को समन्वित या एकीकृत करने का कार्य।

(F) जिला योजना के सम्बन्ध में राज्य सरकार को परामर्श देना।

(G) महिला एवं बाल विकास सम्बन्धी कार्य।

(H) ग्रामीण आवास एवं पेयजल।

(I) इन्दिरा आवास योजना।

(I) प्रधानमंत्री ग्रामोदय योजना (ग्रामीण आवास)

(B) पेयजल

(I) अन्य समन्वयमूलक कार्य।

अध्याय अष्टम् **जिला पंचायत फतेहपुर की कार्यपद्धति** तथा इसमें आने वाली कठिनाइयाँ (समस्यायें) एवं उनका निवारण **273**

अध्याय नवम् **उपसंहार** **312**

सन्दर्भ सूची **325**

अध्याय प्रथम

अध्याय प्रथम

शोध परम्परा एवं अध्ययन विधि

➢ *(क) अनेक आलोचनाओं के बाद भी पंचायत राज एक परीक्षणीय सिद्धान्त है।*

➢ *(ख) सिद्धान्त के विषय में कुछ महत्वपूर्ण पुस्तकों की समीक्षा*

(I) पुस्तक - पंचायती राज संगठन और कार्य प्रणाली

➢ *लेखक - श्री देवेन्द्र मिश्र*

➢ *प्रकाशन - क्लासिकल पब्लिसिंग कम्पनी, नयी दिल्ली*

(II) पुस्तक - पंचायती राज व्यवस्था

➢ *लेखक - श्री देवेन्द्र उपाध्याय*

➢ *प्रकाशन - सामयिक प्रकाशन, नयी दिल्ली*

(III) पुस्तक - स्थानीय स्वशासन

➢ *लेखक - श्री चन्द्र प्रकाश वर्थवाल*

➢ *प्रकाशन - सुलभ प्रकाशन* 17, *अशोक मार्ग, लखनऊ*

(IV) पुस्तक - भारत में पंचायती राज

➢ *लेखक (सम्पादक) - आर. पी. जोशी एवं रूपा भगलानी*

➢ *प्रकाशन - राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर*

(V) पुस्तक - ग्रामीण स्थानीय प्रशासन

➢ *लेखक - चन्द्रा पटनी*

➢ *प्रकाशन - रिसर्च पब्लिकेशन्स त्रिपोलिया बाजार, जयपुर*

(VI) पुस्तक - इंग्लैण्ड में स्थानीय प्रशासन

➢ *लेखक - श्री हरिश्चन्द्र*

➢ *प्रकाशन - कालेज बुक डिपो, त्रिपोलिया बाजार, जयपुर*

(VII) पुस्तक - पंचायती राज व्यवस्था में पंचायत समिति

➢ *लेखक - श्री उमेश प्रसाद सिंह*

➢ *प्रकाशन - राधा पब्लिकेशन, नयी दिल्ली*

(VIII) पुस्तक - उत्तर प्रदेश की नयी पंचायती राज व्यवस्था 'एक दर्शन'

➢ *सम्पादक व प्रकाशन - किसान सेवा समिति, लखनऊ*

➢ *(ग) इस सिद्धान्त का सुनिश्चित संरचनात्मक स्वरूप जिसका अभिन्न अंग नगरीय एवं ग्रामीण समाज है।*

➢ *(घ) इस सिद्धान्त की उपयोगिता ग्रामीण एवं नगरीय समाज के परिप्रेक्ष्य में।*

➢ *(ङ) पंचायती राज व्यवस्था द्वारा जनपद फतेहपुर के परिप्रेक्ष्य में किये गये कार्यों की समीक्षा।*

कार्य

➢ *(I) नलकूप, सिंचाई एवं विद्युत*

➢ *(II) स्वास्थ्य*

➢ *(III) अम्बेडकर ग्राम योजना*

➢ *(IV) दुकान निर्माण योजना*

➢ *(V) दुकानदारों एवं मत्स्य पालकों को भूमि पट्टा।*

☆☆☆

प्राक्कथन

स्थानीय स्वशासन एक महत्वपूर्ण कार्य होते हुए भी सदैव आलोचना और अव्यवस्था का शिकार रहा है क्योंकि सदैव ही हमारा ध्यान राष्ट्रीय आयोग या राज्य स्तरीय सरकारों पर होता है। स्थानीय स्वशासन की तरफ न तो ठीक से ध्यान केन्द्रित किया जाता है और न ही समुचित व्यवस्था की जाती है क्योंकि लोकतंत्र के विषय में हम केवल राष्ट्रीय या राज्य स्तर पर कल्पना करते हैं और धरातल से जुड़े लोकतंत्र अर्थात् स्थानीय स्वशासन को भुला देते हैं। लोकतंत्र का वास्तविक अर्थ यह है कि दरिद्र से दरिद्र व निरीह से निरीह व्यक्ति को सत्ता में भागीदारी का अवसर प्राप्त हो क्योंकि जनता ही लोकतंत्र द्वारा सत्ता प्राप्त करने का साधन है और वही इस व्यवस्था से प्रभावित भी होती है इसलिए जनता की भागीदारी एवं सर्वोच्चता दोनों ही लोकतांत्रिक राजनीतिक व्यवस्था का आवश्यक तत्व है। यही कारण है कि भारत के संविधान निर्माताओं ने संविधान की प्रस्तावना में **"हम भारत के लोग"**[1] शब्द का प्रयोग किया है। जिस देश की जनसंख्या अरबों में हो, वहाँ विभिन्नता होना कोई बड़ी बात नहीं है किन्तु इन विभिन्नताओं को बुरी मानकर आलोचना करना अहम प्रश्न हो जाता है। जहाँ आधुनिक लोकतांत्रिक सरकारों की जटिलताओं और बढ़ती हुई अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओं का ग्रामीण लोगों के लिए कोई अर्थ नहीं होता है वहाँ राजनीतिक प्रणालियों में परिवर्तन करते रहना अनिवार्यता होती है ताकि छोटे वर्गों के उपेक्षित समूह स्वशासन के निर्माण के रूप में अपनी भूमिका निभा सकें। सत्ताधारियों की उत्तरदायित्व की भावना, सरकार द्वारा जनता की आवाज सुनने की प्रवृत्ति निरक्षर ग्रामवासियों का बड़े कार्यों, राष्ट्रीय नीतियों तथा अबूझ कानूनों पर नियंत्रण इस समय बहुत कम है।" यह सब आम चुनाव कहलाने वाली उस प्रदूषित तथा कभी-कभी आने वाली राजनीतिक बाढ़ तक ही सीमित है जिसमें छोटा आदमी छोटी सी पेंसिल से छोटे से मतदान केन्द्र में छोटे से कागज पर छोटा सा निशान लगा देता है और अगले चुनावों तक के लिए अपनी सार्थकता खो बैठता है।"[2] और इस तंत्र की आलोचना करते हुए कहा गया कि 'स्वशासन में लोकतंत्र की अफीम मजाक

---

1. भारतीय संविधान की प्रस्तावना : सुभाष कश्यप, पृष्ठ 42
2. पंचायती राज व्यवस्था, डेविड उपाध्याय, पृष्ठ 97

है।'[1] इसलिए यह कहा जा सकता है कि जब तक विकेन्द्रीकरण के सिद्धान्त को सत्ता में भागीदारी नहीं मिल जाती तब तक लोकतंत्र अपने उद्देश्य में सफल सिद्ध नहीं हो सकता है, यह एकमात्र दिखावा होगा।

भारत गाँवों में निवास करता है जब तक हम सत्ता का ऐसा सिद्धान्त विकसित नहीं कर लेते जिसमें कि पिछड़े ग्रामीण भागीदारी निभायें तब तक हमारी संवैधानिक लोकतांत्रिक व्यवस्था अपने औचित्य को नहीं प्राप्त कर सकेगी। महात्मा गाँधी का यह कथन कि 'सत्ता पंचायतों को लोकतांत्रिक पद्धति की राजनीतिक अभिव्यक्ति और निचले स्तर पर स्वशासन की सामाजिक अभिव्यक्ति है। विकेन्द्रीकृत सत्ता जिसमें शासन की बागडोर उन कुछ लोगों के हाथ में होती है जो ऊपर बैठकर शासन चलाते हैं ग्रामीण समुदाय को अलग-थलग कर देते हैं।'[2]

भारत में वास्तविक लोकतंत्र तभी लागू हो सकता है जब केन्द्र और राज्यों में केन्द्रीयकृत सत्ता को हाथ में रखने वाले चालबाज, माफिया, पेशेवर राजनीतिज्ञों को बाहर कर समाज के पिछड़े एवं निचले स्तर से निर्वाचित होकर संवैधानिक शक्तियों से सम्पन्न होकर जन प्रतिनिधि शासन सत्ता का ग्रामीण स्तर से लेकर राष्ट्र स्तर तक संचालन करेंगे तथा ग्रामीण स्तर पर गठित होने वाली सत्ता की इकाइयों को ऐसे विधायी, प्रशासनिक, न्यायिक अधिकार मिलेंगे जिससे वह नौकरशाही से उच्च स्तर पर लड़ सकें तथा अहंवादी राजनीतिज्ञों को भक्ति भावना दिखाये बिना जन प्रतिनिधि के रूप में कार्य कर सके।

संविधान के अनुच्छेद 40 में पंचायतों की स्थापना हेतु जो देश के शासन का आधारभूत सिद्धान्त है जिससे सरकार निर्भरता के भाव से मुक्त होकर ग्राम स्तर पर देश के विकास के साधन के रूप में कार्य कर सकें। आजादी के बाद भी स्थानीय शासन के रूप में पंचायती राज संस्थाओं को प्रशासनिक एवं न्यायिक कार्यों से उपेक्षित रखा गया। जनता की राजनीति में भागीदारी की केवल चर्चा की जाती है उसे सत्ता में सक्रिय भागीदारी निभाने हेतु प्रशासनिक एवं न्यायिक कार्यो में स्वायत्तता अधिकार और दायित्व नहीं दिया जाता है साथ ही यह व्यवस्था उसी प्रकार सीमित रहती है जितनी सत्ता की व्यवहारिक वास्तविकतायें इजाजत देती हैं।

वर्तमान समय में पंचायतें स्वयं अपनी हालत में सुधार नहीं कर पा रही हैं। उनकी

---

1. पंचायती राज व्यवस्था, डेविड उपाध्याय, पृष्ठ 97
2. उपरोक्त, पृष्ठ 98

हालत दयनीय बनी हुई है। वे सत्ता सम्पन्न किन्तु ऐसी सत्ता के अतिरिक्त कुछ नहीं है जो विपन्नता के रोग से ग्रसित है। वहाँ कोई विकेन्द्रीकरण लोकतंत्र नहीं है और नौकरशाह उन चुने हुए प्रतिनिधियों पर निजी स्वार्थों की पूर्ति हेतु पंचायतों को भंग कर देती है। लोग चाहें जो भी हों उनकी विचारधारा नहीं बदलती, पंचायती राज को गम्भीरता से नहीं लेते। बतौर फतेहपुर जिला पंचायतें इसका उदाहरण हैं। सुश्री मायावती ने अपने मुख्यमंत्रित्व काल में फतेहपुर जिला पंचायत के अध्यक्ष के वित्तीय एवं प्रशासनिक शक्तियों पर पाबन्दी लगा दी थी। इस सच्चाई के लिए कारण कुछ भी दोषी रहा हो किन्तु पहले दलगत दृष्टि से मुक्त होकर इसका निष्पक्ष मूल्यांकन करना होगा। समाजवादी तथा धर्मनिरपेक्ष रास्ते पर चलते हुए ग्रामीण विकास, राष्ट्रीय एकता देश की प्रगति तभी सम्भव हो सकती है जब राजनीतिक हितों को ध्यान में रखे बिना पंचायती राज व्यवस्था को स्थानीय शासन का हिस्सा मान लिया जाय। राजधानी के आदेश तथा जनता के मध्य कुछ जनता के प्रतिनिधि तैयार होने चाहिए जो स्वशासी इकाइयों के प्रतिनिधि ही शासन के विकेन्द्रीकरण के सिद्धान्त को इस दुःखद आशंका के साथ कि सत्ता उनके हाथ से निकल कर विपक्ष के हाथ न आ जाय। ऐसा गणराज्य कैसे कायम रहेगा, जो सत्ता के लिए उलझी पार्टियों की रेतीली नाव पर टिका हो। लोगों के लिए दल होना चाहिए न कि दल के लोग, सिद्धान्त हावी हो जाय तो इससे विकास को एक झटका लगता है और जनता के सहयोग से नयी सामाजिक, आर्थिक व राजनीतिक व्यवस्था का निर्माण करने वाली ऐसी प्रक्रिया शुरू हो जाती है जो नोच-खसोट करने वाली प्रक्रिया के अनुरूप होती है। सदियों से चली आ रही वह व्यवस्था सामन्तवादी और उपनिवेशवादी युगों से गुजरते हुए हमारे समाज को बन्दी बनाया है, अवश्य समाप्त होनी चाहिए तथा सर्वहारा वर्ग को सत्ता प्रदान करके सार्वजनिक न्याय एवं विकास की आक्सीजन प्रदान करके उनको जीवन प्रदान करना चाहिए।

लोकतंत्र का व्यवहारिक दर्शन यह है कि इसमें समाज के सभी वर्गों, सम्प्रदायों, धर्मों के सभी पुरुषों, स्त्रियों और बच्चों की भूमिका रहती है। विकास प्रक्रिया का बुनियादी पहलू है। हैरिसन का कहना है कि 'जन सहयोग का सिद्धान्त सभी लोगों में व्यापक रूप से अपनाया जाने लगा है। अधिकाधिक लोग यह बात मानने लगे हैं कि यदि लोगों की शक्ति और संसाधनों को संगठित किया जाय तो विकास की गति लायी जा सकती है। यह भी चेतना आ रही है कि गरीबों को अपने जीवन व आजीविका को प्रभावित करने वाले फैसलों में भाग लेने का मानवीय अधिकार है जिससे वे अब तक असमान सत्ता के ढांचे के कारण वंचित रहे हैं। इस विचार को संयुक्त राष्ट्र के दूसरे विकास दशक के लिए स्वीकृत अन्तर्राष्ट्रीय विकास नीति में शामिल किया गया। इसमें कहा गया है कि विकास प्रक्रिया में जनता के

सभी वर्गों का सक्रिय सहयोग व समर्थन प्राप्त करने के तरह-तरह के प्रयास किये जायेंगे। ।'[1]

इसके अतिरिक्त ग्रामीण जन बेकार व निराश, हताश होंगे तो कुछ गलत काम करेगा जिसमें देश के उत्थान में योगदान करने की इच्छा है, शक्ति है तथा अधिकार भी। उसे अगर जरूरत है तो रचनात्मक वातावरण की, अतः हैरिसन लिखते हैं- 'जन सहयोग से असंख्य लाभ हो सकते हैं अब तक इस्तेमाल न किये गये संसाधनों तथा मुक्त जन शक्ति के उपयोग से परियोजना की लागत कम हो जात है। निर्णय करने के स्तर पर लोगों का सहयोग लेने से उनकी इच्छाओं तथा अनिच्छाओं के बारे में बेहतर जानकारी मिल सकती है। इससे गल्तियों और त्रुटियों से बचा जा सकता है और फिजूलखर्ची रुक सकती है जिसके लिए विकास गतिविधियाँ बदनाम रही हैं क्योंकि सम्भावित लाभार्थियों से पहले से परामर्श नहीं लिया जाता, सेवा या उत्पादन सहकारी समितियों के माध्यम से उत्पादन कार्यों में जन सहयोग को बढ़ाया जा सकता हो, इस तरह कार्यकर्ताओं का मनोबल बढ़ता है, उत्पादन में वृद्धि होती है और प्रबन्धकों और उनके अधीन व्यक्तियों में संघर्ष की और धीरे काम करने या तोड़-फोड़ की सम्भावनाओं में कमी आती है। उनके स्थानों पर उच्च वर्ग के सामने गरीब लोग एकदम निष्क्रिय से रहते हैं। यह निष्क्रियता उनके सार्वजनिक जीवन को ही नहीं बल्कि उनके व्यक्तिगत और पारिवारिक जीवन को भी प्रभावित करती है। ऐसे लोगों के लिए सहभागिता शिक्षा सहयोगी सिद्ध हो सकती है। इससे उनमें यह विश्वास जाग जाता है कि परिस्थितियों से नियंत्रित होने के बजाय परिस्थितियों पर नियंत्रण लगाया जाना चाहिए। निर्णय लेने का आधार व्यापक बन जाता है तो ऐसी विकास नीति के अपनाये जाने की सम्भावनायें कम हो जाती हैं जो बहुत कम लोगों के फायदे की हो। इस प्रकार नयी समतावादी और गरीबी दूर करने की नीति अपनाये जाने के अवसर बढ़ जाते हैं।'[2]

वित्तीय प्रशासनिक एवं न्यायिक अधिकारी से सम्पन्न निर्वाचित पंचायतों के बारे में एक गम्भीर शिकायत यह है कि इनके कारण हमारे गांव में गहरी और पक्की धड़ेबाजी फैली है। आपसी मनमुटाव, जातिगत तथा राजनीतिक झगड़ों तथा साम्प्रदायिक हिंसा के कारण सरकारी ड्रामों के सामूहिक प्रयास कमजोर पड़ जाते हैं, इसके अलावा गाँवों में धन का दुरुपयोग सामन्तवादी शोषण, महिलाओं के प्रति असमानता, हरिजनों तथा गिरिजनों पर अत्याचार और चुनावों में हेरा-फेरी जैसी बुराइयों को बल मिलता है। हालांकि देश के अधिकतर हिस्सों के लिए इस तरह की आशंका करना हास्यास्पद हो सकता है किन्तु काफी क्षेत्रों में पंचायती राज

---

1. द वर्ल्ड थर्ड वर्ल्ड टुमारो, पृष्ठ 36
2. उपरोक्त, पृष्ठ 36-37

व्यवस्था को विफल करने वाले तत्व मौजूद है। महिलाओं, अनुसूचित जातियों व जन जातियों के लिए सीटों की आरक्षण व्यवस्था उचित है। गाँवों में धड़ेबाजी से निपटना कठिन कार्य है किन्तु इसी आधार पर निर्वाचन स्थानीय स्वशासन की व्यवस्था को समाप्त करना कितना तर्कसंगत होगा और न ही साम्प्रदायिका के अस्तित्व से इंकार किया जा सकता है। वास्तविकता में यही तर्क भारत को स्वतंत्रता देने से इन्कार करने हेतु दिया गया था। परन्तु क्या हमारे सार्वजनिक जीवन में राजनीतिक व साम्प्रदायिक धड़ेबाजी नहीं है। व्यापक स्तर पर व्याप्त भ्रष्टाचार के बारे में क्या कहा जा सकता है। परन्तु एक राष्ट्र के रूप में टेढ़े-मेढ़े ढंग से सही आगे बढ़ रहे हैं। इसलिए निचले स्तर पर स्थानीय स्वशासन प्रणाली को अस्वीकार करने का कोई उचित कारण नहीं है, निश्चय ही रिश्वतखोरी, पक्षपात, भाई-भतीजावाद, जात-पांत तथा अन्य बुराइयाँ रहेंगी। बेईमानी से सामना होने के इन अनुभवों से भी लोगों की आँखें खुलेंगी। पंचायत हो या देश, उस पर शासन कौन करेगा इसकी अन्तिम निर्णायक जनता है। भले ही वह अज्ञानी, निरक्षर, संकीर्ण विचारधारा या नासमझ क्यों न हो। क्या प्रधानमंत्री या मुख्यमंत्री जो एक दल के नेता हैं विपक्ष के कट्टर विरोधी नहीं होते हैं। क्या कभी-कभी अपने विभाग के मामलों में अनभिज्ञ नहीं होते हैं? परन्तु संसदीय प्रणाली में ऐसे जोखिम तो होते ही हैं। बर्नाड शा ने एक बार कहा था- 'लोकतंत्र के नाम पर अब केवल कुछ भ्रष्ट लोगों का चुनाव हो जाता है और वह बहुसंख्यक ऐसे लोगों द्वारा जो कि स्वयं इस योग्य नहीं होते हैं।'[1]

निचले स्तर पर अर्थात् पंचायती राज व्यवस्था में क्रूरतायें, अत्याचार, झगड़ालू तौर तरीके व हमले भी हो सकते हैं। ऊपरी स्तर पर तो इससे भी अधिक घातक, अधिक भ्रष्ट साधन अपनाये जाते हैं किन्तु वह सब छिपा रहता है। परन्तु आम आदमी को सत्ता में शामिल कर लेने में बहुत फायदे होते हैं। राजनीतिक सक्रियता बढ़ जायेगी। प्रशासन चलाने के लिए अधिक व्यक्ति उपलब्ध होने लगेंगे और लोकतांत्रिक ढाँचा मजबूत होगा।

स्थानीय सहभागिता लोकतंत्र की प्रगति की दिशा में बहुत बड़ा कदम है। पाल हैरिसन लिखते हैं कि 'निर्वाचित ग्राम तथा जिला परिषदों के विकास की योजनायें तैयार करने तथा कई प्रकार के स्थानीय कार्यकर्ताओं के चयन करने में सहयोग लिया गया इससे ज्ञात हुआ कि बड़े जमींदारों ने इन परिषदों में स्थान पाने के लिए अतिरिक्त सुविधायें लेने के उद्देश्य से अपनी नयी ताकत का प्रयोग किया। उदाहरण के लिए उनसे सम्बन्धित या उनके ग्राहकों को नौकरियाँ दीं।'

---

1. उपरोक्त, पृष्ठ 101

वास्तविक सामुदायिक सहभागिता तभी सम्भव है जब लोगों के हित समान हों, जब विकास के लाभ सबको समान रूप से मिल सकते हों तथा भूमि और आजीविका के साधन सबके लिए उपलब्ध हों। इसी सार्थक सामुदायिक सहभागिता के लिए भूमि, सम्पत्ति और आय का नये सिरे से बंटवारा करना अनिवार्य है।[1]

अक्सर ऐसा देखा जाता है कि पंचायतों में कब्जा करने के लिए चुनाव प्रक्रिया में माफ़िया लोगों द्वारा अतिरिक्त प्रयासों को रोकने की व्यवस्था न हो तो कुछ अज्ञात कमियां रह जाती हैं। हैरिसन ने एक स्थान पर कहा है कि 'घोर असमानता से ग्रस्त समाजों में पश्चिमी ढंग के लोकतंत्र को लागू करने से आर्थिक दृष्टि से शक्तिशाली लोगों का वर्चस्व कायम हो जायेगा। स्पष्ट वर्गों में बंटे समाज में निर्वाचित प्रतिनिधि मुख्यतया उन्हीं लोगों का प्रतिनिधित्व करेगा, जिनसे हित उनसे मेल खाते हैं। परिषद के जो सदस्य जमीदार हैं वे केवल जमीदारों के हितों की ही रक्षा करेंगे। गरीब देशों में प्रायः जबर शेरों को अपना प्रतिनिधि चुन लेते हैं और फिर वे उनसे वही उम्मीद कर सकते हैं कि वे उन्हें खा जाय।'[2]

प्रारम्भ में जरूर कुछ कठिनाइयाँ आयेगी किन्तु अनुभव के बाद ज्यों-ज्यों लोगों में चेतना आयेगी, कठिनाइयाँ दूर होती जायेगी। दूसरी ओर पंचायती राज संस्थाओं की तरफ से ग्रामीण विकास में लोगों की सहभागिता से वे संसाधन भी काम में आयेंगे, जिनका इस्तेमाल अभी तक नहीं हो पाया है।

सहभागिता से लागत घटती है तथा कम इस्तेमाल किये गये साधनों में सबसे अधिक मूल्यवान संसाधन मानव ऊर्जा तथा सृजनात्मकता का उपयोग होता है तथा सहभागिता से काम के स्थानों पर और समाज में भी निचते स्तर पर लोकतंत्र आ जाता है। कम से कम इतना अवश्य होना चाहिए कि योजनायें ऊपर से न थोपी जायें तथा इन्हें तैयार करने में उन लोगों को शामिल किया जाय, जिनके लिए वे हैं।'[3]

जनता को सत्ता के सिद्धान्त के अनुसार विकेन्द्रीकृत क्षेत्र बनाये जाने चाहिए जिससे जनता के सक्षम प्रतिनिधि महत्वपूर्ण कार्य कर सकें। इसी से चुने गये लोगों में कार्यक्षमता तथा जिम्मेदारी पैदा होती है। हमें ऐसे स्थानीय उम्मीदवार चुनने चाहिए जिनमें काम करने की अभिरुचि, ईमानदारी, सेवाभाव, सामाजिक प्रतिबद्धता तथा मानवीय मामलों एवं संस्थागत नियंत्रण का अनुभव हो। यह सच है कि अनेक बार इस तरह के आदर्श स्थानीय सामन्त

---

1. द थर्ड वर्ल्ड टुमारो, पृष्ठ 89
2. उपरोक्त, पृष्ठ 299
3. उपरोक्त, पृष्ठ 344

वर्ग द्वारा कुचल दिये जाते हैं परन्तु लोकतांत्रिक संघर्ष के जरिये भले ही वो पीड़ादाय होता है, सामाजिक आन्दोलन जोर पकड़ता है। ग्रामीण जीवन पर कुछ वर्ग शिकंजे और महिलाओं तथा कमजोर वर्गों की उपेक्षा करने वाले दमनकारी तत्वों की समस्या से कानूनी प्रावधानों तथा प्रगतिशील राजनीतिक तत्वों के समर्थन से इन दलित वर्गों को इकट्ठा करके निपटा जा कता है जब तक हम लोकतंत्रीकरण की लहर से लोगों में जागरुकता नहीं लाते, तब तक हमारे प्रयास व्यर्थ रहेंगे। हम भाग्यवादी बनकर अपने प्रयास नहीं छोड़ सकते हैं कि सुधार लाना व्यर्थ है।

अगली महत्वपूर्ण समस्या यह है कि पंचायतों को उनकी सीमाओं तथा समूचे परिवेश की अनुकूलता की आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए किस तरह से शासकीय अधिकार सौंपे जाय? क्या इस ग्रामीण संस्थाओं को विधायी, न्यायपालिका या कार्यपालिका से सम्बन्धित काम सौंपे जाय? क्या इनकी भूमिका बहस के अड्डों से बढ़कर होनी चाहिए?

क्या प्रशासन रचनात्मक अधिकारों से वंचित रहकर केवल चुनावी अखाड़ा बना रहे? क्या उन्हें स्थानीय रूप से उपयोगी ऐसे विधायी अधिकार भी दिये जायें, जिनमें स्थानीय आवश्यकताओं के अनुरूप थोड़ा बहुत परिवर्तन किया जा सके? लेकिन जो समग्र रूप में इस तरह की सभी संस्थाओं में लागू होते हों? क्या पंचायती राज व्यवस्था के अधिकार क्षेत्र में न्यायिक अधिकार भी शमिल किये जायें और सदस्यों द्वारा पक्षपातपूर्ण तथा कानूनी जानकारी के अभाव के कारण किये जा सकने वाले दुरुपयोग को भी रोकने के उपाय किये जायें? क्या पंचायतों को सीमित पुलिस अधिकार भी मिलने चाहिए और यदि हाँ तो कानून और व्यवस्था के व्यापक ढांचे के अन्तर्गत सहयोग और तालमेल तथा आपराधिक जांच एवं अभियोग की प्रतिक्रिया का क्या स्वरूप हो? यदि आम आदमी में हमारा विश्वास हो तथा उन्हें तुच्छ समझने की प्रवृत्ति से स्वयं को हम मुक्त कर सकें तो पंचायतों द्वारा कई कानूनों पर अमल हो सकता है और मामलों की जाँच तथा मुकदमों की कार्यवाही हो सकती है। ब्रिटेन तथा अमेरिका में निर्णायक मण्डल (जूरी) व्यवस्था तथा सोवियत संघ में जन अदालतें इस तथ्य का प्रमाण हैं।

'न्याय करने का दायित्व ग्राम पंचायतों का होगा और अलग से न्याय पंचायतों का गठन किया जायेगा। गरीब किसान के लिए न्याय के लिए गाँव से बाहर जाने तथा मुकदमेबाजी पर अपने गाढ़े पसीने की कमाई तथा समय बर्बाद करने की जरूरत नहीं रहेगी। वह गाँव में ही आवश्यक गवाहियाँ जुटा सकता है तथा वकीलों के शोषण से बचकर अपना मुकदमा स्वयं लड़ सकता है। कोई जटिल कानूनी पेंच सामने आने पर तालुके या जिले का

सब जज गाँव आकर कठिन मामलों को सुलझाने में गांव की मदद कर सकता है। इस तरह से न्याय प्रणाली सस्ती, सरल तथा जल्दी न्याय दिलाने वाली होगी। इसके अतिरिक्त गांव में दिवानी तथा फौजदारी के मुकदमों के सभी पहलुओं की कमोवेश सारी जानकारी गाँव वालों को होगी, इसलिए धोखाधड़ी, कानूनी दांव-पेंच की भी बहुत कम गुंजाइश रहेगी।'[1]

पंचायती राज व्यवस्था इन तमाम आलोचनाओं एवं समस्याओं के बाद भी अपनी उपयोगिता सिद्ध करती आयी है। भारतीय स्वतंत्रता निचले स्तर से ही प्रारम्भ होनी चाहिए। इस प्रकार प्रत्येक गाँव, पंचायतें या गणराज्य होगी जिसे पूर्ण अधिकार होंगे। पाल हैरिसन लिखते हैं कि 'हमें उन भारत के गाँवों को, जो उतने ही प्राचीन हैं जितना कि देश तथा उन शहरों का भारत, जो विदेशी शासन की उपज है। में से एक को चुनना होगा। आज शहर पनप रहे हैं तथा गाँवों का शोषण कर रहे हैं, जिससे वे विनाश के कगार पर पहुँच गये हैं।'[2]

गाँधीवादी विचारधारा गाँव पर आधारित थी जिसमें स्थानीय सामग्री तथा प्रतिभा का उपयोग हो। स्थानीय लोगों की देखरेख तथा निगरानी हो तथा काम करने पर लोगों को गर्व होता हो। वे चाहते हैं कि 'प्रत्येक गाँव स्वशासन तथा आत्मनिर्भर अर्थव्यवस्था हो, जिसका संचालन पंयाचतों द्वारा लोकतांत्रिक सहभागिता के आधार पर किया जाय।'

किसी भी स्वशासन में पंचायती राज व्यवस्था का महत्वपूर्ण स्थान है। यह न केवल नागरिकों की प्राथमिक आवश्यकताओं की पूर्ति करती है वरन् उन्हें शासन करने का आरम्भिक ज्ञान भी प्रदान करती है। यही कारण है कि पंचायती राज व्यवस्था के सिद्धान्त को आधुनिक लोकतांत्रिक व्यवस्थाओं का अविभाज्य अंग माना जाता है। मात्र लोकतंत्र में ही नहीं ऐसी व्यवस्था में जो लोकतांत्रिक नहीं है, स्थानीय स्वशासन के सिद्धान्त की कार्यरूप में विस्तृत व्यवस्था पाई जाती है। कभी-कभी ऐसा इसलिए कि लोगों में दिखाया जा सके कि शासन उनकी सेवा हेतु है।

(1) शोध पुस्तकों का अवलोकन

भारतीय स्थानीय स्वशासन के अन्तर्गत पंचायती राज व्यवस्था के सन्दर्भ में पंचायती राज संगठन और कार्य प्रणाली, पंचायती राज व्यवस्था, भारत में पंचायती राज, ग्रामीण स्थानीय प्रशासन, इंग्लैण्ड में स्थानीय प्रशासन आदि ग्रन्थों में जो उल्लेख मिलता है, इन्हीं पुस्तकों का मैंने अपने शोध पत्र में समीक्षा जैसा दुरूह कार्य करने का अल्प प्रयास किया है।

---

1. महात्मा गांधी 'हरिजन', दिनांक 22-07-1946
2. द थर्ड वर्ल्ड टुमारो, पाल हैरिसन, पृष्ठ 17

इसमें कुछ पुस्तकें निम्नलिखित हैं-

'पंचायती राज संगठन और कार्य प्रणाली'[1] इसके लेखक हैं श्री देवेन्द्र मिश्र। इस ग्रन्थ में 6 अध्याय हैं तथा इसमें पंचायती राज अवधारणा एवं आकार, कार्यकरण तथा बिहार की वर्तमान पंचायती राज व्यवस्था का वर्णन किया गया है।

अध्याय-1 में जो पुस्तक की प्रस्तावना के रूप में जिसके अन्तर्गत लेखक ने बिहार की सम्पूर्ण पंचायती राज व्यवस्था पर दिव्य दृष्टि डालने का प्रयास किया है। जैसा कि कहा जाता है कि प्रस्तावना किसी पुस्तक का दर्पण होती है। उसी के अनुसार लेखक ने प्रथम अध्याय में पुस्तक की सम्पूर्ण जानकारी देने का प्रयास किया है। दूसरा अध्याय पंचायती राज-कार्यकरण का है। इसके अन्तर्गत यह बताने का प्रयास किया गया है कि बलवन्त राय मेहता कमेटी आने के पूर्व या पश्चात् किन समस्याओं का सामना करना पड़ा तथा उनका किस प्रकार समाधान या निराकरण किया गया तथा विभिन्न प्रदेशों की पंचायती राज व्यवस्था का स्वरूप एवं आकृति क्या है? तथा जिन उद्देश्यों को लेकर इनका गठन किया गया था उनको प्राप्त करने में कहाँ तक सफलता प्राप्त हुई है तथा पुस्तक में ग्रामीण नागरिकों से यह आशा की गयी कि वह इन संस्थाओं के माध्यम से स्वयं अपनी समस्याओं का हल ढूँढने का प्रयास करें तभी प्रगति सम्भव है। अध्याय तीन के अन्तर्गत बिहार राज की पंचायती राज व्यवस्था का सन्दर्भ ग्रहण किया गया है तथा स्थानीय स्वशासन के सन्दर्भ में आने वाले बिहार सरकार की अधिनियमों का उल्लेख किया गया है व स्थानीय संस्थाओं के प्रधानों के कार्यों का विवरण और पंचायतों की कार्यपालिका, न्यायपालिका सम्बन्धी शक्तियाँ का सम्यूक विवेचन प्रस्तुत किया है। इस पुस्तक के चौथे अध्याय में उदाहरण स्वरूप बिहार की व्यवस्था को दृष्टि में रखकर चतरा अनुमण्डल का सिंहावलोकन किया गया है। चतरा मण्डल की पंचायती राज व्यवस्था को तथा चतरा अनुमण्डल की भौगोलिक, सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक व्यवस्थाओं का चित्रण प्रस्तुत किया है तथा पांचवें अध्याय में ग्रामीण स्थानीय प्रशासन का सामान्य परिचय प्रस्तुत किया गया है। ग्राम्य राजनीति और निर्वाचन दोनों किस प्रकार एक दूसरे को प्रभावित करते हैं? किसी संस्था पर उसका क्या प्रभाव पड़ता है? पुस्तक के अन्तिम एवं छठे अध्याय में पंचायती राज से सम्बन्धित महत्वपूर्ण बिन्दुओं पर प्रकाश डाला गया है। पंचायती राज की स्थापना, उद्देश्य, स्वरूप आदि का उल्लेख किया गया। जिन उद्देश्यों की पूर्ति अभी तक नहीं सम्भव हुई उसके पीछे कौन सी सफलता एवं असफलता कार्य कर रही है, जानने का प्रयास किया गया है।

---

1. पंचायती राज संगठन और कार्य प्रणाली - देवेन्द्र मिश्र, प्रकाशक - क्लासिकल पब्लिशिंग कम्पनी, नयी दिल्ली

'पंचायती राज व्यवस्था'[1] के लेखक श्री देवेन्द्र उपाध्याय जी है। प्रस्तुत पुस्तक पांच खण्डों में विभाजित की गयी है। विषय सूची अध्याय के अनुसार न देकर खण्डों में विभाजित की गयी है। प्रथम खण्ड में पंचायती राज व्यवस्था में होने वाले नवीन परिवर्तन, सामुदायिक विकास की सफलता एवं असफलता के कारण तथा बलवन्त राय मेहता कमेटी, अशोक मेहता कमेटी, जे. पी. के राव समिति की संस्तुतियाँ, एम. एल. सिंहवों समिति की रिपोर्ट आदि का विवरण प्रस्तुत किया गया है। पुस्तक के द्वितीय खण्ड में पंचायती राज के संदर्भ में ग्रहण की गयी नवीन विचारधाराओं का अध्ययन किया गया है जो राजीव गाँधी द्वारा विभिन्न सम्मेलनों में दिये गये भाषणों पर आधारित है तथा पंचायती राज और महिला सम्मेलन तथा महिला भागीदारी पर विचार प्रस्तुत किया गया है। खण्ड तीन के अन्तर्गत विभिन्न लेखकों द्वारा पंचायती राज व्यवस्था पर लिखे गये लेखों का प्रशासन किया गया है। पहला लेख एस. के. डे. जी का लोगों का अधिकार या लोगों पर अधिकार है जिसमें पंचायती राज की त्रिस्तरीय व्यवस्था, सामुदायिक विकास कार्यक्रम, लोकसभा में प्रश्न, पंचायती राज मंत्रालय की समाप्ति, संविधान में संशोधन आदि का उल्लेख किया है तो दूसरा लेख 'पंचायती राज - इसकी उपयोगिता' वसन्त साठे का लिखा हुआ जिसमें जाति, प्रथा, गाँवों से पलायन, विकेन्द्रीकरण आदि का उल्लेख किया गया है। तीसरा लेख वास्तविकता या मृगमरीचिका का वी. आर. कृष्ण अय्यर का लिखा हुआ है। चौथा लेख वैकल्पिक दृष्टिकोण - ज्योति वसु का लिखा हुआ है जिसमें साम्यवादी व्यवस्था का प्रभाव झलकता हैं। जैसे परिसम्पत्तियों का असमान वितरण, जमीन का पुर्नवितरण, उपयुक्त टेक्नोलॉजी का चुनाव, कुटीर उद्योंगों का विकास, पंचायतों को अधिक जिम्मेदारी आदि का प्रकाशन किया गया है। पांचवां लेख चन्द्रोदय दीक्षित का लिखा हुआ पंचायती राज व्यवस्था का क्रान्तिकारी स्वरूप प्रकाशित किया गया है। पुस्तक के खण्ड चार में संविधान संशोधन विधेयक 64 व 1989 के अन्तर्गत पंचायतें, गठन, संरचना, कार्यकाल, शक्तियां, प्राधिकार एवं उत्तरदायित्व आदि का वर्णन है। अन्तिम तथा पांचवें खण्ड में लोकतंत्र का आधार पंचायती राज, नियोजन और प्रगति में जन भागीदारी के लिए पंचायतें, 72 वां संविधान संशोधन अधिनियम, 1991 से सम्बन्धित विभिन्न जानकारियाँ प्रस्तुत की गयी हैं।

'श्री चन्द्र प्रकाश वर्थवाल द्वारा रचित स्थानीय स्वशासन'[2] एक महत्वपूर्ण ग्रन्थ है जिसको लेखक ने पांच भागों एवं बाईस अध्यायों में विभाजित कर दिया है। इस पुस्तक के प्रथम अध्याय में विषय प्रवेश का उल्लेख किया गया है जिसमें स्थानीय स्वशासन की

---

1. स्थानीय स्वशासन - श्री चन्द्र प्रकाश वर्थवाल, सुलभ प्रकाशन, 17 अशोक मार्ग, लखनऊ
2. पंचायती राज व्यवस्था - डॉ. देवेन्द्र उपाध्याय, प्रकाशन - सामयिक प्रकाशन, नयी दिल्ली।

परिभाषा, अवस्थिति, प्रास्थिति, उसके कार्य, वित्तीय स्रोत, नियंत्रण तथा स्थानीय स्वशासन और स्वायत्त शासन के मध्य अन्तर की बात की गयी है। अध्याय दो से लेकर अध्याय 6 तक भाग दूसरा है जिसमें ग्रेट ब्रिटेन के स्थानीय स्वशासन के सन्दर्भ में वहाँ के स्थानीय स्वशासन के इतिहास, संरचना, कार्य, वित्तीय स्रोत एवं केन्द्रीय नियंत्रण आदि का विवरण दर्ज है। भाग तीन अध्याय 7 से अध्याय 14 तक चलता है जिसमें अमेरिका के स्थानीय स्वशासन के सन्दर्भ में इतिहास संरचना, काऊण्टीज का विवरण, वित्तीय स्रोत, नियंत्रण आदि का उल्लेख किया गया है। भाग - 4 अध्याय 15 से 18 तक चलता है जिसमें फ्रांस के स्थानीय स्वशासन के ऐतिहासिक विकास, क्षेत्र, वहाँ के स्थानीय संस्था डिपार्टमेन्ट, कम्यून आदि का विवरण दिया गया है। भाग 5 अध्याय 19 से लेकर अध्याय 22 तक चलता है जिसमें भारत के स्थानीय स्वशासन की प्रकृति एवं भूमिका तथा इसका ऐतिहासिक विकास, 73 वाँ संविधान संशोधन अधिनियम, 1992, 74वां संविधान संशोधन, 1992 तथा संविधान संशोधनों के पश्चात् उत्तर प्रदेश की स्थानीय स्वशासन की व्यवस्था का वर्णन किया गया है।

भारत में पंचायती राज के सम्पादक आर. पी. जोशी एवं रूपा मंगलानी[1] हैं। जिसमें इन्होंने 18 लेखकों के लेखों को स्थान दिया है जो अपने आप में प्रत्येक लेख एक पुस्तक का स्थान ले लेता है क्योंकि सभी लेख गागर में सागर भरने का प्रयास करते हैं। पुस्तक में प्रथम लेख अरुणा भरद्वाज द्वारा लिखित पंचायती राज व्यवस्था के वैचारिक आयाम है। इसी तरह इस पुस्तक के समस्त लेख पंचायती राज व्यवस्था के चारो ओर परिक्रमा करते हैं तथा पंचायती राज व्यवस्था की विशद जानकारी प्रस्तुत करते हैं। अध्याय द्वितीय से अध्याय 18 तक क्रमशः पंचायती राज की विकास यात्रा संगठनात्मक एवं कार्यात्मक पहलू, कार्मिक प्रशासन, प्रशासनिक तंत्र एवं जन प्रतिनिधि, वित्तीय संसाधन, दशा एवं दिशा, सहयोगात्मक सम्बन्ध, राजकीय नियंत्रण : दशा एवं दिशा, राजनीतिक दलों की भूमिका, ग्रामीण विकास, अवधारणा एवं स्वरूप, जनजातीय उपक्षेत्रों में पंचायती राज, संस्थायें एवं पारदर्शी प्रशासन एवं पंचायती राज व्यवस्था मूल प्रश्न एवं प्रवृत्तियों का विशद वर्णन किया गया है। पुस्तक में पंचायती राज के भूत, वर्तमान और भविष्य पर नजर डालने की कोशिश की गयी है।

चन्द्रा पटनी द्वारा रचित ग्रामीण स्थानीय प्रशासन[2] में 6 अध्याय हैं और 377 पेज हैं जिसके प्रथम अध्याय में ग्राम को एक लघु समुदाय मानते हुए सामाजिक व्यवस्था में ग्राम का स्थान एवं महत्व, जाति और ग्रामीण सामाजिक संरचना का वर्णन किया गया है। अध्याय

---

1. भारत में पंचायती राज - सम्पादक आर. पी. जोशी, रूपा भगलानी, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर
2. ग्रामीण स्थानीय प्रशासन - चन्द्रा पटनी, रिसर्च पब्लिकेशन, त्रिपीलिया बाजार, जयपुर।

दो में ग्राम अर्थव्यवस्था का स्वरूप, कृषि विकास और उसकी समस्यायें, भूमि सुधार एवं ग्रामीण औद्योगीकरण आदि का विवरण दर्ज है। अध्याय तीन महत्वपूर्ण है जिसमें पंचायती राज के तीनों स्तरों के संगठनात्मक पहलूओं पर नजर डाली गयी है। अध्याय चार में पंचायती राज की संस्थायें किस प्रकार नियोजन एवं विकास में सहभागिता निभाती हैं, इसका वर्णन किया गया है। अध्याय पांच पंचायती राज की बदलती राजनीतिक परिस्थितियों एवं परिस्थितियों व नेतृत्वकर्ताओं के बीच सामंजस्य एवं समन्वय का अध्ययन किय गया है। अध्याय छह जो सबसे महत्वपूर्ण है इसमें विश्व के विभिन्न देशों के स्थानीय स्वशासन का वर्णन है तथा उनकी विशेषताओं को जानने का प्रयास किया गया है।

श्री हरिश्चन्द्र द्वारा रचित इंग्लैण्ड में स्थानीय प्रशासन[1] पुस्तक में नौ अध्याय हैं। यह पुस्तक भारत के परिप्रेक्ष्य में और अधिक महत्वपूर्ण हो जाती है क्योंकि भारतीय स्थानीय स्वशासन की संगठनात्मक व्यवस्था ग्रेट ब्रिटेन की स्थानीय स्वशासन का विकास एवं क्षेत्र तथा बनावट की चर्चा की गयी है। तीसरे अध्याय में स्थानीय सत्ताओं के कार्यों पर चर्चा है। चौथा अध्याय स्थानीय संस्थाओं का रूप एवं रचना निर्धारित करता है।

पांचवें अध्यांय में ग्रेट ब्रिटेन की स्थानीय समस्याओं को मिलने वाले सेवि वर्ग का वर्णन है। छठे एवं सातवें अध्याय में इन संस्थाओं पर केन्द्रीय सरकार का नियंत्रण और वित्त का वर्णन है। अध्याय 8 व 9 में क्रमशः ग्रेट ब्रिटेन में समिति व्यवस्था और स्थानीय एवं शासन में आने वाली समस्याओं एवं भावी सम्भावनाओं का विवेचन करती हैं।

(2) प्रस्तावित शोध कार्य का उद्देश्य

प्रस्तुत शोध कार्य का उद्देश्य यह जानकारी प्राप्त करना है कि प्राचीन काल में स्थानीय स्वशासन की समस्याओं का क्या स्वरूप, संगठन, कार्य था तथा वह किस प्रकार विकास में अपना सहयोग करती थी जिससे वह अपने उद्देश्य की प्राप्ति में किस हद तक उन्हें सफलता एवं असफलता प्राप्त हुई। वर्तमान में भारतीय राजनीतिक व्यवस्था में उसका किस हद तक व्यवहारिक प्रयोग वाली संस्था बनाया जाता है व शक्तियाँ प्रदान की जाती हैं। सत्ता का किस हद तक विकेन्द्रीकरण किया जाता है कि पंचायती राज व्यवस्था के आदर्शात्मक स्वरूप की स्थापना सम्भव हो सके।

शोध का विषय फतेहपुर जिला पंचायत संगठन एवं कार्य तथा जिले के विकास में योगदान का अध्ययन ही स्थानीय स्वशासन के अन्तर्गत कार्यरत संस्थाओं का ज्ञान तीन भागों

---

1. इंग्लैण्ड के स्थानीय प्रशासन, हरिश्चन्द्र - कालेज बुक डिपो त्रिपोलिया बाजार, जयपुर

में मिलता है। प्राचीन काल की संस्थायें, ब्रिटिश कालीन संस्थायें, तीसरी स्वतंत्रता प्राप्त के बाद की संस्थायें। प्राचीन काल की स्थानीय संस्थाओं का ज्ञान वेदों, संहिताओं, महाकाव्यों, बौद्ध, जैन ग्रन्थों एवं कौटिल्य के अर्थशास्त्र से प्राप्त होती है। ब्रिटिशकालीन संस्थाओं का ज्ञान उस समय आने वाले विभिन्न भारतीय शासन विधानों एवं विद्वत जनों की पुस्तकों से प्राप्त होता है। वर्तमान स्थानीय संस्थाओं की जानकारी संविधान संशोधन अधिनियमों एवं पंचायती राज संगठन, कार्य प्रणाली, पंचायती राज व्यवस्था, स्थानीय स्वशासन, भारत में पंचायती राज, ग्रामीण स्थानीय प्रशासन, इंग्लैण्ड में स्थानीय प्रशासन, पंचायती राज व्यवस्था में इन पंचायती राज संस्थाओं का पूर्ण विवरण प्राप्त होता है। मेरा प्रयास यह है कि भारतीय स्थानीय स्वशासन के अन्तर्गत पंचायती राज व्यवस्था का समग्र अध्ययन कर वर्तमान में उनकी सक्रियता का अवलोकन करना है।

वर्तमान परिदृश्य में पंचायती राज व्यवस्था द्वारा जनपद फतेहपुर में जिला पंचायत द्वारा बदलती राजनीतिक परिस्थितियों में इस संस्था की उपादेयता ज्ञात करना साथ ही यह जानकारी हासिल करना कि जिला पंचायत फतेहपुर जिले के विकास हेतु किस हद तक प्रयासरत हैं। यह जानकारी प्राप्त करना कि जिला पंचायत अपने कार्यों में किस हद तक सफल व असफल रही है तथा विकास की प्रक्रिया को किस हद तक प्रभावित करती है इत्यादि समस्याओं का समाधान खोजना भी प्रस्तावित शोध कार्य का उद्देश्य है।

(3) उपधारणा - प्रस्तुत शोध अध्ययन के उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु निम्नलिखित उपधारणाओं को निर्धारित किया गया है-

(1) आधुनिक भारतीय स्थानीय स्वशासन की संस्थाओं को सुदृढ़ स्थिति प्रदान करने में लाभ प्राप्त होगा।

(2) वर्तमान पंचायती राज व्यवस्था में शक्ति विकेन्द्रीकरण की प्रक्रिया में आने वाली समस्याओं के निदान हेतु उपाय प्राप्त किये जा सकते हैं।

(3) वर्तमान में लोकतंत्र की जड़ों को मजबूत बनाने हेतु सहायता प्राप्त हो सकती है।

(4) शासक एवं शासित के मध्य उत्पन्न होने वाली समस्याओं के बीच समन्वय स्थापित करने में सफलता मिल सकती है।

(4) उपकरण - प्रस्तुत शोध प्रबन्ध के पूर्ण करने में विभिन्न प्रकार के उपकरणों की आवश्यकता पड़ेगी जिसमें पत्र-पत्रिकाओं, स्मरणों, प्राचीन कालीन स्थानीय स्वशासन के सम्बन्ध में लिखे गये ग्रन्थ, राजनीतिक ग्रन्थ, अनेक धर्म साहित्य एवं वर्तमान में विद्वानों द्वारा

लिखी गयी पुस्तकें, ग्रन्थ तथा अन्य शोध ग्रन्थ मुख्य रूप से सम्मिलित किये जायेंगे।

किसी भी अनुसन्धान का उद्देश्य एक घटना विशेष के सन्दर्भ में वैज्ञानिक निष्कर्ष निकालना होता है जो वास्तविक तथ्यों पर आधारित यथार्थ एवं निश्चित निष्कर्ष होता है।

(5) विधि - शोध कार्य को पूरा करने में मुख्य रूप से वैज्ञानिक अनुसन्धान पद्धति एवं ऐतिहासिक अनुसन्धान पद्धति का प्रयोग किया जायेगा।

(A) वैज्ञानिक अनुसन्धान प्रकृति

आज के वैज्ञानिक युग में प्रत्येक समस्यामूलक तथ्य की समीक्षा वैज्ञानिक ढंग से की जाती है। राजनीतिक अनुसन्धानों में इसका महत्व और बढ़ जाता है क्योंकि इनमें तथ्य और समस्यायें बड़ी जटिल, परिवर्तनशील प्रकृति की होती हैं। इसमें हमें वैज्ञानिक अनुसन्धान पद्धति का प्रयोग राजनीतिक अनुसंधान में बहुत ही सावधानी से करना होगा।

साधारण तथा वैज्ञानिक अनुसन्धान पद्धति वह पद्धति है जिसमें एक वैज्ञानिक किसी विषय वस्तु के अध्ययन के प्रयोग में लाता है। कोहन एवं नेगेल के अनुसार - 'वैज्ञानिक पद्धति की सर्वप्रथम विशेषता यह होती है कि इसमें वास्तविक तथ्यों को प्राप्त करने का प्रयास किया जाता है न कि इच्छित तथ्यों को। इसकी द्वितीय विशेषता यह है कि प्रत्येक अनुसंधान स्वयं में विशिष्ट होता है।'

इनसाइक्लोपीडिया ब्रिटेनिका के अनुसार - 'वैज्ञानिक पद्धति एक सामूहिक पद है जो उन विभिन्न प्रक्रियाओं के विषय में उल्लेख करता है जिनका सहायता से विज्ञान बनते है। विस्तृत अर्थ में कोई भी अध्ययन पद्धति जिसके द्वारा वैज्ञानिक अथवा निष्पक्ष और व्यवस्थित ज्ञान प्राप्त किया जाता है एक वैज्ञानिक पद्धति कहलाती है।

यदि उपरोक्त परिभाषाओं का अध्ययन करें तो हम कह सकते हैं कि वैज्ञानिक पद्धति में निम्नलिखित विशेषतायें एवं तत्व समाहित हैं-

(1) तथ्यों का सतर्कतापूर्वक सम्यक विभाजन।

(2) तथ्यों के पारस्परिक सम्बन्धों का विभाजन।

(3) सृजनात्मक कल्पना के आधार पर वैज्ञानिक नियमों का निर्धारण।

(4) वस्तुनिष्ठता या पक्षपातहीनता - अनुसंधान के अन्तर्गत हम अपने अध्ययन में व्यक्तिगत भावनाओं पूर्व कल्पनाओं को अपने में और न ही स्वार्थवश तथ्यों को तोड़े-मरोड़ें।

(5) सत्यापनशीलता।

(6) निश्चिन्तता।

(7) सामान्यता।

(8) पूर्वानुमान क्षमता।

(B) ऐतिहासिक अनुसन्धान पद्धति

एक समाज का इतिहास प्रायः उसकी वर्तमान सामाजिक व्यवस्था का मूल आधार होता है। अतः एक समाज की वर्तमान संस्थाओं, समस्याओं व विचारधाराओं के विशिष्ट स्वरूप को ज्ञात करने के लिए उसके ऐतिहासिक अनुसन्धानों की आवश्यकता होती है।

जान वेस्ट के शब्दों में - 'ऐतिहासिक अनुसन्धान ऐतिहासिक समस्याओं के अन्वेषण में वैज्ञानिक पद्धति की अनुपयुक्त होती है।

करलिगर के शब्दों में - 'ऐतिहासिक अनुसंधान अतीत की घटनाओं, विकास क्रमों तथा अनुसन्धानों का वह सूक्ष्मात्मक अन्वेषण होता है जिसके अतीत से सम्बन्धित सूचनाओं के सम्बन्धों का प्राप्त सन्तुलित विवेचन की वैधता का सावधानीपूर्वक परीक्षण सम्मिलित रहता है।'

क्षेत्र (Seopd)- ऐतिहासिक अनुसन्धान की शिक्षा शास्त्र, समाज शास्त्र, मनोविज्ञान तथा राजनीति शास्त्र के क्षेत्र में व्यापक आवश्यकता होती है।

उद्देश्य (Aims) - ऐतिहासिक अनुसन्धान का उद्देश्य अतीत की घटनाओं का विवरण प्रस्तुत करना नहीं होत है बल्कि उन विचारधाराओं के क्रमिक विकास का विवरण प्रस्तुत करना होता है जो इतिहास के विभिन्न कालों में उदित और विकसित हुए हैं। ऐतिहासिक अनुसन्धान द्वारा प्राप्त विभिन्न तथ्य नीति निर्धारण को अतीत की त्रुटियों के प्रति सतर्क रखते हैं तथा भविष्य के लिए सचेत करते हैं।

स्रोत (Sources)-

प्राथमिक स्रोत - इनका सम्बन्ध प्रदत्त के मूल व मौलिक साधनों से होता है। कारलिंगर ने लिखा है - 'प्राथमिक स्रोत एक ऐतिहासिक प्रदत्त का मूल भण्डार होता है।'

गौण स्रोत - करलिंगर के अनुसार - 'गौण स्रोत वे स्रोत हैं जो अपने मूल स्रोतों में से एक या अधिक चरण दूर होते हैं। गौण साधनों का उपयोग ऐतिहासिक अनुसन्धानकर्ता के

लिए सापेक्षित कम विश्वसनीय रहता है।'

(C) इस सिद्धान्त का सुनिश्चित संरचनात्मक स्वरूप, जिसका अभिन्न अंग नगरीय एवं ग्रामीण समाज है

भारत में स्थानीय स्वशासन की स्थापना एवं विकास में ऐतिहासिक, सामाजिक, प्रशासनिक आदि अनेक तत्वों ने योगदान दिया है। इसमें सन्देह की गुंजाइश नहीं कि स्थानीय शासन राष्ट्रीय शासन से पूर्व स्थापित हो चुका था। स्थानीय शासन कार्यों का आधार प्रादेशिक होता है। प्रशासनिक दृष्टि से इसका महत्व इसलिए है कि यह नागरिक सेवाओं को समुदाय के निवास क्षेत्र अथवा प्रदेश की दृष्टि से आयोजित क्रमबद्ध और संगठित करने का कार्य करती है। नागरिक सेवाओं तथा समस्याओं में अन्तर होता है। स्थानीय शासन प्रशासनिक एकरूपता को रोकता है जो राज्य की नौकरशाही का उद्देश्य होता है। स्थानीय शासन वस्तुतः जनता की सेवा करता है। स्थानीय शासन का उत्तरदायित्व दिन प्रतिदिन बढ़ता ही जाता है। स्थानीय शासन को बढ़े हुए उत्तरदायित्व के निर्वाह के लिए विशेष तकनीकी, अधिक धन एवं जन सहयोग की आवश्यकता है। स्थानीय शासन अपने उत्तरदायित्व का भलीभांति निर्वाह कर सके। इसके लिए स्थानीय शासन को वैधानिक आधार प्रदान किया गया है। स्थानीय स्वशासन की सभी ग्रामीण एवं नगरीय संस्थाओं का गठन राज्य सरकार व्यवस्थापिका द्वारा पारित कानून द्वारा किया जाता है। कानून द्वारा ही उनके आकार एवं स्वरूप में अन्तर किया जाता है। जैसे- नगरपालिका को नगर निगम घोषित करना, नगर पालिका बोर्ड को नगर परिषद बनाना आदि। स्थानीय स्वशासन की सभी प्रशासनिक क्रियाओं पर राज्य सरकार के कार्यपालिका विभाग एवं निदेशालयों का नियंत्रण रहता है। जैसे- उपनियमों की स्वीकृति, बजट स्वीकृति, कार्मिकों की संख्या का निर्धारण, लेखा अंकेक्षण आदि कार्यों के लिए राज्य सरकार ने नियम बनाकर प्रतिबन्धित कर दिया है। यहाँ तक कि स्थानीय शासन के चुनाव में भी राज्य सरकार द्वारा बनाये गये कानून द्वारा निश्चित किये जाते हैं। जैसे- स्थानीय स्वशासन की संस्थाओं का कार्यकाल चुनाव के लिए सीमा क्षेत्र का वार्डों में विभाजन, सदस्यों की योग्यता, सहवरण, आरक्षण, अध्यक्ष/उपाध्यक्ष का चुनाव, समितियों का चुनाव, उनकी सदस्य संख्या का निर्धारण, बैठकों की अनिवार्यता, समितियों की संख्या का निर्धारण आदि। यही नहीं राज्य सरकारें स्थानीय स्वशासन संस्थाओं के लिए करों का निर्धारण करती हैं। आवश्यकता पड़ने पर आर्थिक और तकनीकी सहायता प्रदान करती हैं। यह सब व्यवस्था स्थानीय स्वशासन के वैधानिक आधार के कारण ही सम्भव हो सकी है।

दूसरी ओर स्थानीय शासन को जनाधार प्रदान किया गया है। जनता को अपने स्थान विशेष सम्बन्धी कानून बनाने का अधिकार प्रदान किया गया है। यहाँ वह राजनीतिक शिक्षा

प्राप्त कर सकती है। स्थानीय शासन में स्थानीय परिषदें स्वयं स्थान विशेष सम्बन्धित उपनियम बनाती हैं। उपनियम का निर्माण पंचायतों की बैठकों में बहुमत के आधार पर होता है। स्थानीय जनता को निकाय के कार्यों का अवलोकन करने का अवसर प्राप्त हो जाता है। वह तुरन्त निगम के कार्यों का पर्यवेक्षण एवं निरीक्षण करके विरोध प्रकट कर सकती है। जनता किये गये कार्यों के आधार पर विचार बनाती है तथा जनता के विरोध के भय से निर्वाचित सदस्य अनुशासन में रहकर कार्य करते हैं। ये लोग जनता के अधिक निकट होते हैं। स्थानीय जनता को सामुदायिक प्रबन्ध की प्रक्रिया में भाग लेने का अवसर और सुविधा मिलती है। परिणामस्वरूप स्थानीय शासन को जनता का अधिक सहयोग प्राप्त होता है एवं समर्थन मिल पाता है। अतः लोग स्थानीय शासकों तक आसानी से पहुँच जाते हैं। उन्हें आशा रहती है कि वे स्थानीय शासन पर केन्द्र व राज्य सरकार की अपेक्षा अधिक प्रभाव डाल सकते हैं। स्थानीय शासन जनता तथा राज्य शासन के बीच विचारों और भावनाओं के सम्प्रेषण का महत्वपूर्ण माध्यम है। स्थानीय समुदाय ही इच्छाओं को राज्य प्रशासन तक पहुँचाता है। इसी प्रकार केन्द्र और राज्य की योजनाओं को स्थानीय जनता तक पहुँचाते हैं। स्थानीय शासन अपनी वैधानिकता एवं जनाधार के कारण ही लोकतंत्र की नमनीयता, शक्ति एवं सम्पन्नता के विकास में योगदान देता है। एडवर्ड जेक्स ने ब्रिटिश स्थानीय शासन के सन्दर्भ में लिखा है- 'जिन देशों में स्थानीय शासन के अंग केन्द्रीय सत्ता की मुट्ठी भरे रहकर कार्य करते हैं वहाँ प्रशासन की सुयोग्यता भले ही अधिक हो किन्तु वहाँ की जनता का राजनीतिक चरित्र असन्तोषजनक रहता है। दीर्घकाल तक जनता उदासीन बनी रहती है किन्तु इसके विपरीत जिस देश में स्थानीय शासन सुदृढ़ होता है उसकी गति धीमी हो सकती है और उनके कार्य पद्धति में भयंकर भूलें हो सकती हैं किन्तु उस देश की प्रगति अविचल एवं सुस्थिर होगी। वहाँ राजनीतिक स्थिरता एवं ईमानदारी देखन को मिलेगी।'[1]

स्थानीय स्वशासन राज्य सूची का विषय है। फलतः प्रत्येक राज्य अपनी भौगोलिक सीमा के अन्दर ग्रामीण एवं नगरीय स्थानीय स्वशासन के लिए नियम बनाते हैं। भारतीय स्थानीय स्वशासन हेतु राष्ट्रीय प्रतिरूप नहीं है। इन्हें प्रजातंत्र की पाठशाला कहा जाता है। परन्तु इन संस्थाओं को अनेक बार प्रजातांत्रिक ढंग से कार्य नहीं करने दिया जा रहा है, राज्य सरकारें सार्वभौम होने के कारण जनता के निर्वाचित प्रतिनिधियों को हटा देती है। स्थानीय स्वशासन की संस्थाओं को भंग कर देती है। निर्वाचित प्रतिनिधियों के स्थान पर प्रशासकों की नियुक्ति कर देती है। डॉ. अरगल ने स्थानीय स्वशासन की स्थापना के दो कारण बताये

---

1. एडवर्ड जेक्स - एन आउट लाइन ऑफ इंग्लिश गवर्नमेन्ट, पृष्ठ 8-9

हैं।' 19 शताब्दी के अन्त में केन्द्रीय सरकार वित्तीय संकट की अवस्था में थी, अतः वित्तीय संकट की अवस्था से उबरने के लिए कर एकत्रित करने का कार्य स्थानीय प्रशासन को सौंप दिया गया। इसका दूसरा कारण था कि स्थानीय प्रशासन को कुछ कार्य दे देने से जिलाधीश का कार्यभार हल्का हो जाता है।'[1]

स्थानीय प्रशासन के गठन का उद्देश्य जनता को प्रजातंत्र के सिद्धान्त एवं व्यवहार का प्रशिक्षण देना नहीं है। अन्य सभी कार्यों की भाँति स्थानीय प्रशासन को वित्त की आवश्यकता रहती है। परन्तु स्थानीय प्रशासन के पास सदैव धन की कमी बनी रहती है। इसका प्रथम कारण है- भारत एक गरीब देश है, यहाँ की जनता समयानुसार कर नहीं अदा कर पाती है। दूसरा कारण- करों की चोरी होती है। तीसरा- प्रभावकारी व्यक्ति अपने प्रभाव से कर देने से बच जाते हैं। चौथा- निर्वाचित सदस्य नवीन कर लगाकर जनता में अपनी लोकप्रियता कम नहीं करना चाहते हैं। निर्वाचित सदस्यों एवं जनता का यही प्रयास रहता है कि राज्य सरकार से सहायतानुदान के रूप में धन प्राप्त हो जाय।

स्थानीय स्वशासन की संस्थाओं के दो भाग हैं- प्रथम ग्रामीण स्थानीय स्वशासन। दूसरा नगरीय स्थानीय स्वशासन। ग्रामीण स्थानीय स्वशासन पर नियंत्रण का उत्तरदायित्व सामुदायिक विकास विभाग तथा पंचायती राज विभाग का है। जब कि नगरीय स्वशासन पर नियंत्रण स्वायत्त शासन विभाग का रहता है। ये संस्थायें पूर्ण रूप से वयस्कमताधिकार के सिद्धान्त पर निर्वाचित होती हैं। इन चुनावों में वहाँ मतदाता सूची काम में लायी जाती है जो राज्य के विधानसभा के चुनाव में प्रयोग में लायी जाती है।

भारत में स्वतंत्र भारत का नवीन संविधान सन् 1950 में लागू हुआ तथा इसे स्वशासन के सन्दर्भ में नया युग कह सकते हैं। इसमें कोई शक नहीं कि भारत का स्थानीय स्वशासन ब्रिटिश शासन की देन है। उसी ढांचे के अनुरूप स्वतंत्र होने के बाद भारतीय संविधान निर्माताओं ने स्वशासन को संविधान में स्थान दिया तथा संविधान के अनुच्छेद 40 में पंचायतों के गठन पर जोर दिया गया। अतः भारत का वर्तमान स्थानीय प्रशासन दो प्रणालियों में विभक्त है-

(i) ग्रामीण क्षेत्र के लिए।

(ii) शहरी क्षेत्र के लिए।

---

1. अरगल आर - म्यूनिसिपल गवर्नमेन्ट इन इण्डिया, पृष्ठ 34

ग्रामीण क्षेत्र के स्थानीय स्वशासन में बहुत से उतार-चढ़ाव के तदुपरान्त सन् 1992 में संवैधानिक दर्जा प्राप्त होने तथा बलवन्त राय मेहता कमेटी के प्रतिवेदन के अनुरूप त्रिस्तरीय व्यवस्था अपनायी गयी।

(i) ग्राम स्तर पर ग्राम पंचायत।

(ii) खण्ड स्तर पर क्षेत्र पंचायत।

(iii) जिला स्तर पर जिला पंचायत।[1]

ग्राम स्तर पर ग्राम पंचायत के गठन हेतु निम्न शर्तें ध्यान में रखी जाती हैं-

(1) सामान्य क्षेत्रों में ग्राम पंचायत के गठन हेतु यथासाध्य 1000 जनसंख्या होनी चाहिए।

(2) किसी ग्राम पंचायत के प्रादेशिक क्षेत्र में केवल ऐसे प्रादेशिक क्षेत्र एवं ग्राम को सम्मिलित किया जायेगा जो भौगोलिक दृष्टि से एक दूसरे के निकटस्थ हों तथा समान दूरी होने पर कम जनसंख्या वाली ग्राम सभा में संविलयन किया जायेगा।[2]

(3) किसी ग्राम पंचायत के गठन के समय किसी राजस्व ग्राम या इसके मजरे को विभाजित नहीं किया जायेगा।

(4) ऐसे मजरे या ग्रामों के मध्य किसी पंचायत क्षेत्र के सम्मिलित करने में कोई दूसरी ग्राम पंचायत न पड़ती हो।

(5) ऐसे मजरे या राजस्व ग्रामों के बीच पहाड़, नदी, नाला आदि न पड़ना चाहिए तथा अधिक आबादी वाले गाँव के नाम ग्राम पंचायत गठित की जायेगी।

क्षेत्र पंचायत का तात्पर्य उत्तर प्रदेश क्षेत्र पंचायत एवं जिला पंचायत अधिनियम 1994 के अधीन स्थापित क्षेत्र पंचायत से है जिसके अन्तर्गत क्षेत्र पंचायत की कोई समिति, सदस्य, अधिकारी या सेवक भी होगा जिसके द्वारा उक्त अधिनियम के द्वारा प्रदत्त अधिकार एवं शक्तियों का प्रयोग अथवा किसी कर्तव्य या कृत्य का सम्पादन इस अधिनियम द्वारा प्राधिकृत या अपेक्षित हो।

'राज्य सरकार गजट में अधिसूचना द्वारा प्रत्येक खण्ड के लिए एक क्षेत्र पंचायत

---

1. उत्तर प्रदेश क्षेत्र पंचायत एवं जिला पंचायत अधिनियम, 1994

1. उत्तर प्रदेश पंचायती राज एक दर्शन - पृष्ठ 2

स्थापित करेगी जिसका नाम विकास खण्ड के नाम पर होगा तथा पंचायत एक निगमित निकाय होगी।[1]

इसी तरह जिला पंचायत का संगठन निम्न आधार पर किया जायेगा -

(1) किसी जिले के नाम पर जिला पंचायत का नाम होगा।

(2) जिला पंचायत के किसी प्रादेशिक निर्वाचित क्षेत्र की जनसंख्या 50 हजार से कम नहीं होगी।

(3) पर्वतीय क्षेत्र में यह क्रम 7 किमी. अर्द्धव्यास क्षेत्रफल का हो जाता है। जनसंख्या भले ही 50,000 से कम हो।'[2]

ग्रामीण क्षेत्र में काम करने वाली पंचायती राज संथाओं के प्रथक-प्रथक अधिकार एवं शक्तियाँ तथा उत्तरदायित्व उत्तर प्रदेश क्षेत्र पंचायत एवं जिला पंचायत अधिनियम, 1994 द्वारा निर्धारित किये गये हैं।

(B) शहरी क्षेत्र के लिए संस्थायें

भारतवर्ष में प्रजातंत्र की स्थापना में स्थानीय स्वशासन का विशेष महत्व रहा है। शहरी क्षेत्र में कई प्रकार की स्थानीय संस्थायें कार्यरत हैं। नगर के आकार एवं जनसंख्या में वृद्धि के कारण पर्याप्त परिवर्तन हुआ है। इस परिवर्तन के साथ-साथ स्थानीय निकायों की आवश्यकता पहले से अधिक बढ़ गयी है क्योंकि नगरीय समस्याओं को दूर करने का उत्तरदायित्व स्थानीय निकायों पर होता है। महानगर से लेकर सामान्य नगरीय कस्बे नगरीय प्रशासन में आते हैं। नगरों के अन्तर्गत निम्नलिखित स्वशासन में संस्थायें कार्य करती हैं-

नगरीय प्रशासन

(1) नगर महापालिका/नगर निगम

(2) नगर पालिका

(3) नगर पंचायत

(4) नगर सुधार न्यास

---

1. उपरो क्त, पृ 83
2. उपरोक्त, पृष्ठ 56

(5) पोर्ट ट्रस्ट

(6) छावनी मण्डल।

नगर निगमों की स्थापना राज्य की व्यवस्थापिका के विशिष्ट अधिनियम द्वारा की जाती है। निगमाध्यक्ष मेयर कहलाता है। नगर निगम स्थापित करने का कोई स्पष्ट मापदण्ड निर्धारित नहीं है। नगर निगम प्रायः घनी आबादी वाले नगरों में स्थापित किये जाते हैं। इनकी स्थापना किन नगरों में की जाय यह नीतिगत प्रश्न है जो सम्बन्धित राज्य सरकार द्वारा अपने साधन, स्रोतों एवं स्थानीय शासन के दर्शन इत्यादि के परिवेश में निर्धारित किया जाता है। **'वर्तमान में भारत में कतिपय ऐसे नगर भी हैं जिनकी आबादी 50 लाख से 80 लाख के मध्य है। कतिपय ऐसे नगर निगम भी स्थापित हैं जिनकी जनसंख्या 5 लाख से भी कम है। इसी प्रकार कुछ नगर निगमों की वार्षिक आय 50 लाख रुपये से कम है।'**[1]

ग्रामीण नगरीय सम्बन्ध समिति 1966 ने यह अभिशंसा की थी कि स्थानीय शासन को निगम पद्धति उन्ही नगरों में स्थापित की जाय जिनकी जनसंख्या 5 लाख तथा वार्षिक आय एक करोड़ से कम न हो परन्तु यह अनुभव किया गया कि यह कसौटियाँ बहुत कठिन सिद्ध होगी। अतः किसी वर्तमान नगरपालिका को नगर निगम में परिवर्तित करने की उपयुक्त अपेक्षा को एक मात्र आधार नहीं बनाया जा सकता है। राज्य सरकारों द्वारा नगर निगम स्थापित करते वक्त निम्न आधारों को ध्यान में रखा जाता है-

(1) घना बसा हुआ क्षेत्र हो।

(2) नगरपालिका क्षेत्र काफी विकसित तथा भविष्य में विकास की सम्भावना हो।

(3) नगर पालिका की वर्तमान वित्तीय स्थिति सुदृढ़ तथा भविष्य में सुदृढ़ होने की सम्भावना हो।

(4) नगर पालिका क्षेत्र में निवास करने वाले नागरिकों को बढ़े हुए करों को वहन करने की क्षमता होनी चाहिए।

(5) नगर निगम स्थापित किये जाने के पक्ष में प्रबल लोकमत होना चाहिए।'[2]

वस्तुतः ऐसे मापदण्ड हों जिनका राज्य सरकारें प्रायः निगम स्थापित करते वक्त ध्यान

---

1. उत्तर प्रदेश स्थानीय निकाय अधिनियम, 1994

2. उत्तर प्रदेश नगर निगम अधिनियम, 1994

रखती हैं। राज्य सरकारें ही इस बात का अन्ततः निर्णय करती हैं कि किस नगर में नगर-निगम गठित किया जाय। सामान्यतः जो नगर अपनी विशाल आबादी के कारण महानगर बनने की ओर अग्रसर हो और वहाँ की नगर पालिका की वित्तीय स्थिति काफी सुदृढ़ हो तथा नगर निगम बनाये जाने के पक्ष में लोकतंत्र खड़ा हो वहाँ प्रायः राज्य सरकारें नगर निगम की स्थापना कर देती है।

नगर पालिका - नगरीय स्थानीय प्रशासन की दूसरी महत्वपूर्ण इकाई को नगरपालिका के नाम से जाना जाता है। इसकी स्थापना राज्य सरकार द्वारा निर्मित विधि के अनुरूप की ज़ाती है। देश के प्रायः सभी राज्यों में नगरपालिकाओं का संगठन पाया जाता है। नगर पालिकाओं के गठन के प्राविधान राज्यों में अलग-अलग है। **'कहीं जनसंख्या को आधार माना जाता है, कहीं उस क्षेत्र की आय को ध्यान में रखा जाता है तो कहीं जनसंख्या एवं आय दोनों को ध्यान में रखा जाता है। नगर पालिका के गठन हेतु क्षेत्र को वार्डों में बांट दिया जाता है।'[1]**

नगर पंचायत - जिन शहरों में जनसंख्या कम है वहाँ नगर पंचायतें गठित की जाती है। इनके सदस्य भी वार्डों से निर्वाचित होकर आते हैं। इन पंचायतों में निर्वाचित एवं मनोनीत दोनों प्रकार के सदस्य होते हैं। नगरपालिका की अपेक्षा इनकी आय के स्रोत सीमित होते हैं। इन पर सरकारी नियंत्रण काफी होते हैं।

नगर सुधार न्यास - बड़े-बड़े शहरों की व्यवस्था के सुचारु संचालन हेतु नगर सुधार न्यासों की स्थापना की जाती है। इनके कार्य नगर पालिकाओं, नगर निगमों के कार्यों से पृथक होते हैं। मुख्यतः इनके कार्य नगर का सुव्यवस्थित विकास जैसे- पार्कों, सड़कों, खुले स्थानों, शौचालयों, बाजारों आदि की व्यवस्था करना है।

पोर्ट ट्रस्ट - बड़े-बड़े बन्दरगाहों के लिए पोर्ट ट्रस्ट की स्थापना की जाती है। जैसे- कलकत्ता, कोचीन, विशाखापट्टनम् आदि। पोर्ट ट्रस्ट के सदस्य वाणिज्य एवं व्यापार द्वारा चुने जाते हैं। सरकार द्वारा मनोनीत किये जाते हैं। इनका सभापति कोई सरकारी व्यक्ति होता है। इनके प्रमुख कार्य पोर्ट सम्बन्धी मामलों का प्रबन्ध करना, बन्दरगाह की रक्षा, माल का प्रबन्ध करना आदि है।

छावनी बोर्ड - सैनिक स्थलों के प्रबन्ध के लिए छावनी बोर्ड स्थापित किये जाते हैं। इन पर सैनिक विभाग का पूर्ण नियंत्रण रहता है। इनका कार्य केवल छावनी क्षेत्र तक हीं सीमित रहता है। इनके सदस्य चुने हुए होते हैं। अध्यक्ष सरकार द्वारा मनोनीत किया जाता है। इनका पर्यवेक्षण निरीक्षण सैनिक नियमों के आधार पर होता है।

(घ) इस सिद्धान्त की उपयोगिता ग्रामीण एवं नगरीय समाज के परिप्रेक्ष्य में

स्थानीय शासन प्रणाली की ग्रामीण एवं नगरीय समाज के परिप्रेक्ष्य में उपयोगिता जैसे बड़े प्रश्न पर विचार करने के पहले इसके बने रहने के कारण, इसकी उत्पत्ति तथा हमारे देश के इतिहास में लम्बे समय तक इसका वर्चस्व बने रहने के बारे में समझना अति आवश्यक है। स्थानीय स्वशासन का अर्थ होता है- 'स्थान विशेष के लोगों द्वारा स्थान विशेष से सम्बन्धित प्रश्न करना।'[1] स्थानीय स्वशासन के सदस्य स्थान विशेष के लोगों द्वारा (ग्रामीण/नगरीय) निर्वाचित होते हैं तथा उन्हें स्थानीय जनता अपने नेता के रूप में निर्वाचित करती है तथा वे स्थान विशेष की परिस्थितियों के अनुसार सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक एवं धार्मिक गतिविधियों में मार्गदर्शन करते थे। ग्रामीण संस्थाओं में तो सामुदायिक विवादों में फैसला करने के लिए न्यायिक ट्रिब्यूनल भी होते थे तथा उन्हें न्यायकर्ता के रूप में भी स्वीकार किया जाता था। ग्रामीण पंचायतें लोकतांत्रिक स्वशासी संस्थायें बन गयीं तथा लगभग सभी सामाजिक कार्यों में उनका नियंत्रण रहता है। धार्मिक या सांसारिक मामलों में लोगों पर उन धर्मों के नियम लागू होते थे जिनको वे मानते थे। इस तरह सभी राजनीतिक, आर्थिक, धार्मिक उद्देश्यों के लिए स्थानीय स्वशासन की ये संस्थायें जो स्थान विशेष में रहने वाले लोगों के जीवन में उपयोगी सिद्ध होती है।

समाज का आर्थिक ढांचा इस प्रकार का था कि उसमें समाज और सुव्यवस्थित आत्मनिर्भरता रहती थी। एक समुदाय, गांव, कस्बे का रूप तभी ले पाता था जब कि उसके पास आवश्यक संसाधन उपलब्ध होते थे। उदाहरण के लिए अनाज उत्पादन गांव का मुख्य धंधा था किन्तु इसके साथ वहाँ कपड़ा बुनकर, कुम्हार, लुहार, बढ़ई, तेली, दूधिये, दर्जी, धोबी, सुनार, मोची, कलाकार और पुरोहित तथा समाज के लिए आवश्यक विभिन्न कामों को करने वाले अन्य लोग भी निवास करते थे। वास्तव में हजारों वर्षों के बाद ये काम अलग-अलग जातिगत कार्य बन गये। लेकिन वास्तविकता यह है कि एक गाँव की आर्थिक स्थिरता को प्राप्त करने के लिए इन काम धन्धों के करने वालों का होना जरूरी था। गाँव में वस्तुओं का आदान-प्रदान सभी के बीच होता था। जैसा कि बताया गया है कि इससे गाँव की अर्थव्यवस्था आत्मनिर्भर बनी और स्थानीय स्वशासन की संस्थाओं की मौजूदगी से उनकी स्थिरता सुनिश्चित हो गयी तथा निर्वाचित सदस्य समाज के सभी आर्थिक, राजनीतिक, धार्मिक कार्यो में मार्गदर्शन करते रहते थे।

---

1. स्थानीय स्वशासन - चन्द्र प्रकाश वर्थवाल, पृष्ठ 3

'इन्हीं विचारों के कारण सदियों के बाद जमींदारों, पटैलों और साहूकारों एवं राजाओं की सामन्ती प्रणाली का भी विकास हुआ।' इनका व्यक्तियों के राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक व धार्मिक जीवन पर प्रभुत्व बना रहता था।'[1] और ये सामन्त, जमींदार, पटैल, साहूकार, शासन व्यवस्था में अधिकांशतः दमनकारी हथकण्डे अपनाते थे। सद्भावनापूर्ण माहौल बहुत उग्र रहता था। यह स्थान विशेष के लोगों के साथ इनके व्यवहार पर निर्भर होता था। जब इन दो शासकों के मध्य लड़ाई होती तो समाज के नागरिकों के जीवन के सभी पक्ष प्रभावित होते थे लेकिन कुल मिलाकर जमीन का वही क्षेत्र रहा और इसके रहते गांव की आत्मनिर्भरता और स्वयं अपनी सहायताओं में समर्थ अर्थ व्यवस्था पीढ़ी दर पीढ़ी निर्वाध बनी रही। इसी आधार पर ऐसी संस्कृति और सभ्यता का ऐसा विकास हुआ जो चार पाँच सौ वर्षों में चली आ रही है।

'औद्योगिक समाज के अस्तित्व में आने से स्थितियों में परिवर्तन आने लगा है। यह परिवर्तन आर्थिक क्षेत्र के साथ-साथ राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक क्षेत्र में भी हुआ।'[2] आर्थिक दृष्टि से यद्यपि खेती और कृषि सम्बन्धित उद्योग धन्धे अभी भी देश के गाँवों की धरती पर आधारित है लेकिन दूसरी ओर उपभोक्ता वस्तुओं का आधार जो मुख्यतः गाँव में काम-धन्धें करने वाले लोगों द्वारा बनायी जाती थी। धीरे-धीरे ये वस्तुयें गाँव से दूर नगरीय क्षेत्रों में बनायी जाने लगी। उत्पादइयाँ और कारखाने बड़े पैमाने की अर्थव्यवस्था के आधार पर स्थापित किये जाने लगे। यहाँ तैयार वस्तुयें देश भर के उपभोक्ताओं को भेजी जाने लगी।

इस आर्थिक पहलू को ध्यान रखना बहुत आवश्यक है। कपड़ा, लोहे, इस्पात की चीजें, तांबे और पीतल की वस्तुयें जो प्राच्य समय में गांवों में बनायी जाती थी और उनसे जुड़े मिस्त्री गाँवों में पाये जाते थे, अब धीरे-धीरे बड़े उद्योग-धन्धों का रूप ले लिया है तथा गाँवों की पहुँच से दूर होते गये हैं। अब यह उद्योग-धन्धे नगरीय संस्कृति एवं अर्थव्यवस्था से प्रभावित है तथा पिछले शताब्दी के बाद स्थिति और बहुत दयनीय हो गयी। परम्परागत कामों में लगे लोगों से उनके काम छिन गये। अब पुनः स्थानीय स्वशासन की संस्थायें कुटीर उद्योगों की स्थापना एवं बढ़ावा देकर गाँवों के लोगों के लिए रोजगार के अवसर पैदा करती है।

स्थानीय शासन की संस्थाओं की सफलता एक निर्णायक सीमा तक उनके पर्याप्त वित्तीय स्रोतों एवं सुदृढ़ आर्थिक व्यवस्था पर आधारित होती है। कोई भी संस्था अपने कर्तव्यों का

---

1. पंचायती राज - देवेन्द्र उपाध्याय, पृष्ठ 88
2. उपरोक्त, पृष्ठ 88

उचित सम्पादन तब तक नहीं कर सकता जब तक कि उसके पास पर्याप्त वित्त व्यवस्था नहीं होती है। इस प्रकार यह स्पष्ट होना चाहिए कि स्थानीय स्वशासन के इस सिद्धान्त से ग्रामीण एवं नगरीय क्षेत्रों में आत्मनिर्भरता वाली आर्थिक प्रणाली की दृष्टि से कितना महत्वपूर्ण है यह सोचना होगा। अब एक ऐसे प्रशासनिक ढांचे की ओर सोचना होगा जो अपनी जनता को आत्म निर्भर अर्थव्यवस्था और सामजिक वातावरण उपलब्ध कराने में सहायक होगा।' आधुनिक औद्योगिक समाज में गाँवों को आत्म निर्भर बनाना सम्भव नहीं होगा। अतः पुनः पुरानी स्थानीय संस्थाओं की तरह ध्यान खींचना होगा। आज के प्रशासनिक एवं राजनीतिक सन्दर्भ में आर्थिक विकास के लिए सर्वश्रेष्ठ विकेन्द्रीकृत इकाई जिला ही होगा।'[1]

स्थनीय स्वशासन का सिद्धान्त स्वयं लोगों को उनके प्रभावित करने वाली गतिचिधियों के प्रबन्ध में प्रत्यक्ष रूप से जोड़ने के सिद्धान्त पर आधारित है क्योंकि 'स्थानीय नागरिक ही यह ठीक ढंग से समझते हैं कि उनकी समस्यायें क्या हैं? उनकी प्राथमिक आवश्यकतायें क्या हैं? तथा उनकी समस्याओं का उचित हल क्या हो सकता है?'[2] जनपद स्तर पर स्थानीय स्वशासन की संस्थाओं को व्यवहारिक रूप से जिले के सारे क्षेत्र में आर्थिक विकास, राजनीतिक सत्ता एवं सामाजिक प्रशासन के अधिकार सौंप दिये जायें तो जिले के अन्दर उपभोक्ताओं की आवश्यक वस्तुओं का उत्पादन करने के लिए औद्योगिक इकाइयाँ लगाना सम्भव होगा। राष्ट्रीय सरकारों को सोच-विचार के साथ राष्ट्रीय नीति का निर्माण करके यह सुनिश्चित करना चाहिए कि विकेन्द्रीकृत और श्रम प्रधान औद्योगिक इकाइयों में बनायी जा सकने वाली उपभोक्ता वस्तुएं इसी क्षेत्र में बनायी जाय। केन्द्रीयकृत आधार पर उत्पादित ऐसी वस्तुओं पर प्रतिबन्ध लगाना चाहिए। यह हमारी परम्परागत सोच है कि ऐसी वस्तुओं का उत्पादन विकेन्द्रीकृत स्थानों पर नही किया जा सकता है। आधुनिक युग में यह सम्भव है कि लघु उद्योग स्थापित करके इन वस्तुओं का उत्पादन कर सके। इसी आधार पर स्थान विशेष में उत्पादित आवश्यक वस्तुओं एवं सेवाओं हेतु आर्थिक बाजार उपलब्ध हो जाता है, जब इस आर्थिक बाजार के लिए माँग पैदा कर ली जाती है तो इस माँग को पूरा करने के लिए उत्पादन भी इन्हीं क्षेत्रों में होना चाहिए। तभी हमारी जनसंख्या का विकेन्द्रीकृत एवं संतुलित विकास होगा।'[3]

स्थानीय स्वशासन की संस्थायें ग्रामीण एवं नगरीय दोनों क्षेत्रों में उत्पन्न होने वाली

---

1. उपरोक्त, पृष्ठ 93
2. उपरोक्त, पृष्ठ 93
3. उपरोक्त, पृष्ठ 94

राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक व धार्मिक सभी स्थानीय समस्या होने के कारण स्थानीय संस्थायें अधिक उपयोगी सिद्ध होती हैं क्योंकि ये संस्थायें स्थानीयता के कारण अपने नागरिकों पर हर प्रकार दबाव बनाने में कामयाब रहती हैं तथा नागरिक भी अपने निर्वाचित जन प्रतिनिधियों पर उत्तरदायित्व का बोझ डाल कर इस प्रकार की समस्याओं से मुक्त हो जाता है। महात्मा गाँधी ने कहा है कि - 'स्थानीय संस्थाओं के पास जितनी अधिक शक्तियाँ होगी जनता के लिए उतना ही बेहतर होगा। ईमानदारी और परिश्रम को प्रश्रय देना इन संस्थाओं का कार्य है। स्थानीय संस्थाओं का यह कर्तव्य है कि वह गाँव वालों को झगड़ों से बचाने के लिए यदि उनमें आपस में कोई (राजनीतिक, धार्मिक व आर्थिक) झगड़ा हो तो उसे निपटाने के बारे में उन्हें शिक्षित करे। क्योंकि यदि हम सच्चे लोकतंत्र अर्थात् पंचायती राज व्यवस्था का स्वप्न देखते हैं।[1]

ग्रामीण एवं नगरीय विकास हेतु आवश्यक है कि स्थानीय संस्थाओं को मजबूती प्रदान की जाय तथा इन संस्थाओं को सामाजिक सद्भावना एवं आर्थिक मजबूती प्रदान करने हेतु विशेष शक्ति सम्पन्न बनाना होगा। महात्मा गाँधी का विचार था कि - 'पंचायतों का यह कार्य है कि वे ईमानदारी और मेहनत को बनाये रखें, वे गाँव के लोगों को विवादों से दूर रहना सिखायें। यदि विवाद हो तो वे उसका समाधान कर लें। इससे बिना खर्चे के उन्हें जल्दी न्याय मिल जायेगा।'[2]

निष्कर्षतः हम यह कह सकते हैं कि सत्ता के विकेन्द्रीकरण हेतु स्थानीय स्वशासन अति आवश्यक है। वे ही स्थान विशेष के कार्यक्रमों एवं आयोजनों को क्रियान्वयन और मूल्यॉकन करती है। हमारे जैसे देश जिसकी विशाल जनसंख्या एवं उसमें अनेक संस्कृतियाँ हैं। अनेक धर्म हैं। इसका शासन केन्द्रीय/राज्य सत्ता केन्द्र से नहीं संचालित किया जा सकता है। जब तक निम्न स्तर पर लोगों को सहभागी न बनाया जाय और उन्हें शासन संचालन के कार्य न सौंपे जाय। स्थानीय संस्थायें समृद्धि एवं विकास का पर्याय नहीं है। आवश्यकता लोकतंत्र को मजबूत बनाने की है। सामान्य नागरिक सिर्फ सुविधायें नहीं चाहते बल्कि वह यह भी चाहते हैं कि जो उनके कल्याण हेतु योजनायें बनायी जायें उनमें वह भागीदारी निभायें और यह कार्य केवल स्थानीय स्वशासन की संस्थायें ही कर सकती हैं। 'देश की आजादी का अर्थ मात्र राजनीतिक आजादी नहीं है। इसका अर्थ शहरी लोगों की आजादी भी नहीं है, वास्तविक आजादी वह होगी जिसमें ग्रामवासियों को अपने भाग्य का अपने भविष्य के निर्माण

---

1. पंचायती राज गाईड - I, सम्पादक - शंकर राम, पृष्ठ 1
2. पंचायती राज गाईड - I, शंकरराम, पृष्ठ 147

का स्वामित्व प्राप्त होगा। वह उनके स्वशासन के जरिये ही होगा। इसी का अर्थ है पंचायती राज।'[1] इस प्रकार स्थानीय स्वशासन का सिद्धान्त भारतीय ग्रामीण एवं नगरीय क्षेत्रों में अपनी उपयोगिता को समय-समय पर सिद्ध करता रहा है।

(ङ) पंचायती राज व्यवस्था द्वारा जनपद फतेहपुर के परिप्रेक्ष्य में किये गये कार्यों की समीक्षा

पंचायती राज संस्थाओं में जिला पंचायत अपना सर्वोच्च स्थान रखती है तथा वह जनपद के अन्दर योजनाओं के कार्यान्वयन में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है। राज्यों या केन्द्रों से प्राप्त कार्यक्रम या योजनायें सर्वप्रथम जिला पंचायत में सूचनार्थ प्रेषित होता है तथा राज्य सरकार इसके अधिकार क्षेत्र में आवश्यकतानुसार परिवर्तन करती रहती है। उत्तर प्रदेश क्षेत्र पंचायत एवं जिला परिषद अधिनियम 1961 द्वारा इनके कार्यों को निश्चित किया गया है। इस अधिनियम में इसके बाद परिवर्तन होते रहे हैं। फतेहपुर जिला पंचायत द्वारा जनपद के परिप्रेक्ष्य में किये गये कार्यों की समीक्षा कर जनपद के विकास में योगदान करने की उनकी भूमिका पर दृष्टि डालेंगे।

(1) नलकूप एवं सिंचाई तथा विद्युत

जिला पंचायत ने अपनी बैठक दिनांक 18-01-2006 में राजकीय नलकूपों उनके चैनलों की स्थिति तथा विद्युत आपूर्ति की उनकी समस्याओं पर गहनतम ढंग से विचार विमर्श करते हुए सर्वसम्मति यह तय किया कि कार्यपालक अभियन्ता नलकूप तथा जिला अभियन्ता विद्युत फतेहपुर को राजकीय नलकूपों को चालित करने तथा इनके चैनलों की मरम्मत करने व सुधार करने तथा विद्युत आपूर्ति के सम्बन्ध में अनुरोध एवं विचार किया जायेगा ताकि किसानों को इस सुखाड़ की स्थिति में सहारा प्राप्त हो सके। जिला पंचायत द्वारा यह भी निर्णय लिया गया कि जिला विकास अधिकारी तथा समाहर्ता फतेहपुर को भी यथोचित कार्रवाई हेतु सूचना दी जाय। इस अनुशंसा के सम्बन्ध में जिला पंचायत के मुख्य अधिकारी ने पत्रांक 541 दिनांक 30-01-2006 को अभियन्ता राजकीय नलकूप, अभियन्ता विद्युत, जिला विकास अधिकारी फतेहपुर को सूचनार्थ प्रेषित किया।[2]

'फतेहपुर जिला पंचायत के अन्तर्गत स्थापित राजकीय नलकूपों की संख्या 527 है।[3]

---

1. उपरोक्त, पृष्ठ 1
2. सामाजिक, आर्थिक फतेहपुर वर्ष 2005-2006, पृष्ठ 13
3. जिला पंचायत गठन पंजीकरण रजि. 2005-2006, पृष्ठ 13

सिंचाई क्षेत्र की सघनता को देखते हुए यह स्पष्ट हो जाता है कि सिंचाई निजी नलकूपों पर आश्रित है तथा जो राजकीय नलकूप हैं भी उनमें प्रभावशाली एवं दबंग लोगों ने कब्जा कर रखा है जिससे सामान्य जनता सिंचाई की सुविधाओं से वंचित रह जाती है तथा महंगे एवं निजी नलकूपों पर आश्रित रहते हैं। जो राजकीय नलकूप प्रभावशाली लोगों से बचे हुए हैं वहाँ विद्युत तार को चोर काट कर ले जाते हैं अर्थात् विद्युत व्यवस्था सदैव बाधित रहती है अर्थात् राजकीय नलकूप जिस उद्देश्य को लेकर स्थापित किये गये थे उनसे वह बहुत दूर रह जाते हैं। जनसामान्य सिंचाई हेतु निजी नलकूपों पर पूरी तरह से आश्रित हैं। नलकूपों में लगाये गये सरकारी कर्मचारी अपने घरों पर बैठे रहते हैं तथा वहाँ के प्रभावशाली व्यक्ति उनका लाभ उठाते हैं। इस प्रकार हम यह कह सकते हैं कि जिला पंचायत की राजकीय नलकूप योजन सफलता नहीं प्राप्त कर सकी है।

(2) स्वास्थ्य - जिला पंचायत की हुई बैठक 13-04-2006 में ग्रामीण क्षेत्रों में बीमारियों की रोकथाम के लिए सर्वसम्मति से निर्णय हुआ कि ग्रामीण कुओं में दवा डालना, हैजा निरोधक सुई देना, डी. डी. टी. का छिड़काव करना तथा अन्य बीमारियों से बचाव हेतु प्रभारी चिकित्सा पदाधिकारी राजकीय औषधालय तथा उनके सहयोगी चिकित्सा पदाधिकारी पूरी तत्परता से कार्य करे ताकि आम जनता को बीमारियों से सुरक्षा मिल सके। सर्वसम्मति से यह निर्णय लिया गया कि जिला पंचायत स्तर पर प्रत्येक स्वास्थ्य केन्द्र के चिकित्सा प्रभावारी को प्राथमिक उपचार हेतु आवश्यक दवाओं की आपूर्ति करने के निमित्त असैनिक शल्य-चिकित्सा पदाधिकारी एवं वरिष्ठ कार्यपालक अधिकारी फतेहपुर को लिखा जाय।'[1] हम यह कह सकते हैं कि जिला पंचायत द्वारा लिये गये निर्णयों के अनुसार अगर प्राथमिक उपचार की दिशा में पहले से तैयारी कर ली जाय तो निश्चित रूप से हम गर्मियों के मौसम में होने वाली महामारियों, बीमारियों से जन सामान्य की सुरक्षा करने में सफल हो सकते हैं।

(3) अम्बेदकर ग्राम योजना - इस योजना के अन्तर्गत अनुसूचित जाति की अधिकता वाले गाँवों को अम्बेदकर ग्राम के रूप में चयनित किया जाता है। इस योजना का उदयकाल सन् 1990-91 रहा है।' अम्बेदकर ग्राम योजना के अन्तर्गत सन् 2003 तक 509 ग्रामों को सम्मिलित किया गया है जिसमें 11 प्रमुख कार्यक्रम संचालित किये जा रहे थे।'[2] जो कार्यक्रम लागू किये गये वे निम्न हैं- जैसे- सम्पर्क मार्ग, विद्युत, नाली, खड़ंजा, स्वच्छ शौचालय, निःशुल्क बोरिंग, स्वर्ण जयन्ती स्वरोजगार योजना, इन्दिरा आवास, ग्रामीण पेयजल, स्कूल

---

1. फतेहपुर जिला पंचायत गठन रजि., पृष्ठ 15
2. सामाजार्थिक समीक्षा 2006 - संख्याधिकारी कार्यालय फतेहपुर, पृष्ठ 27

भवन निर्माण, किसान पेन्शन तथा विधवा पेन्शन आदि हैं। अभी 509 अम्बेदकर ग्रामों में लगभग 100 अम्बेदकर ग्राम ऐसे शेष हैं जो सम्पर्क मार्ग एवं विद्युतीकरण से वंचित हैं। सन् 2003 के बाद इस योजना का नाम बदलकर समग्र ग्राम विकास योजना कर दिया गया है तथा चयन विधि का विधायकों के सहमति को आधार बना दिया गया है जब कि सभी योजना पूर्ववत है।

(4) दुकान निर्माण योजना - जिला पंचायत फतेहपुर के अन्तर्गत निगम द्वारा गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन करने वाले अनुसूचित जाति के उद्यमशील व्यक्तियों को जिनके पास अपनी दुकान नहीं है। **'उन्हें उनकी स्वयं की भूमि पर दुकान निर्माण हेतु 38,000 रुपये दिये जाने का प्रावधान है। जिसमें लगभग 6,000 रुपये अनुदान स्वरूप तथा शेष 32,000 रुपये 10 वर्षों में समान मासिक किस्तों में बिना ब्याज के वापस करना होता है।'**[1] सन् 2003-2004 तक 12 लाभार्थियों को इसके अन्तर्गत लाभान्वित किया जा चुका है तथा सन् 2004-2005 एवं 2005-2006 में चार-चार दुकानों का निर्माण कराया गया है।

(5) दुकानदारों एवं मत्स्य पालकों को भूमि पट्टा - जिला पंचायत फतेहपुर द्वारा परम्परागत पेशे से जुड़े लोगों की आर्थिक दशा सुधारने के लिए कुम्हारों तथा मछुआरों को अपना व्यवसाय उन्नत करने के लिए तथा जीविका के साधन को और अधिक विकसित करने हेतु पट्टे दिये जाते हैं। इसके सम्बन्ध में कुम्हारों के लिए शासनादेश 1993 तथा मछुआरों के लिए 1994 में दिये गये हैं। **'77 तालाबों जिनका क्षेत्रफल 61.53 हेक्टेयर है, व्यक्तियों को पट्टे पर दिये गये हैं। अब तक 456 कुम्हारों में से 132 कुम्हारों को 6.858 हेक्टेयर के पट्टे दिये जा चुके हैं।'** [2]

☆☆☆

---

1. सामाजार्थिक कर समीक्षा - अर्थ एवं संख्याधिकारी कार्यालय, पृष्ठ 28
2. उपरोक्त, पृष्ठ 28

अध्याय द्वितीय

अध्याय - द्वितीय

कार्य की विस्तृत रूपरेखा

(क) सैद्धान्तिक परिचय

➢ (A) *स्वशासन का परिचय*

➢ (B) *भारत में स्वशासन का सिद्धान्त*

(ख) व्यवहारिक स्थिति

➢ (A) *प्राचीन भारत में स्वशासन का सिद्धान्त*

अथवा

➢ *ब्रिटिश शासन से पूर्व भारत में स्थानीय स्वशासन*

➢ (B) *ब्रिटिश काल में स्वशासन का विकास*

➢ (C) *स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् स्वशासन की स्थिति।*

☆☆☆

कार्य की विस्तृत रूपरेखा

सैद्धान्तिक परिचय

(A) स्वशासन का परिचय

किसी भी राजनीतिक व्यवस्था में स्थानीय स्वशासन का अत्यधिक महत्वपूर्ण स्थान है। यह न केवल नागरिकों की प्राथमिक आवश्यकताओं की पूर्ति करती है वरन् उन्हें शासन करने का आरम्भिक ज्ञान भी प्रदान करती है। यही कारण है कि स्थानीय स्वशासन को आधुनिक लोकतांत्रिक व्यवस्थाओं का अविभाज्य अंग माना गया है। मात्र लोकतंत्र में ही नहीं, ऐसी व्यवस्थाओं में भी जो लोकतंत्रीय नहीं है, स्थानीय स्वशासन की विस्तृत व्यवस्था पायी जाती है। कभी-कभी ऐसा इसलिए भी किया जाता है ताकि लोगों को यह दिखाया जा सके कि शासन उनकी सेवा के लिए है।

स्थानीय शासन के विषय में डॉ. ब्राइस ने कहा है कि **'लोकतंत्र का सर्वश्रेष्ठ शिक्षालय और लोकतंत्र की सफलता की सबसे बड़ी गारन्टी स्थानीय स्वशासन का चलन है।'**[1] स्थानीय स्वशासन का इतना महत्व होते हुए भी न तो उसकी समुचित प्रशंसा हुई और न हीं उसे ठीक से समझा गया और न ही उसकी ओर ध्यान दिया गया है और प्रत्येक दशा में सारा ध्यान राष्ट्रीय और राज्य की सरकारों पर होता है।

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। समाज में रहकर ही वह अपने व्यक्तित्व का विकास करता है। अतः समाज में रहना उसका स्वभाव है। उसकी अनेक आवश्यकतायें होती हैं जिनकी पूर्ति वह समाज में रहकर करता है। वह अपनी पूर्ति हेतु विभिन्न प्रकार के सामाजिक संगठने, संघों, समुदायों का निर्माण करता है। राज्य इन्हीं मानवीय संघों में सर्वोच्च, श्रेष्ठ राजनीतिक संगठन है। आधुनिक राज्यों के आकार एवं जनसंख्या में बेतहासा वृद्धि हो गयी है तथा लोकतंत्रात्मक, लोक कल्याणकारी समाजवादी राज्य के कार्यों का क्षेत्र अत्यधिक विस्तृत हो गया है। फलस्वरूप किसी देश के लिए केन्द्र या राजधानी से शासन को

---

1. डॉ. बी. एल. फड़िया, कुलदीप फड़िया - राजनीति विज्ञान, पृष्ठ 42

सुव्यवस्थित रूप से चलाना कठिन होता जा रहा है। इसके दो मुख्य कारण है। प्रथम सभी कार्यों के लिए केन्द्र के पास समय का अभाव है। दूसरा यह आवश्यक नहीं कि सभी कार्यों का सम्बन्ध केन्द्र अथवा राष्ट्र से हो। कुछ कार्यों का सम्बन्ध केन्द्र से तथा कुछ कार्यों का सम्बन्ध स्थानीय विशेष से होता है। अतः ये सभी तत्व मिलकर सत्ता, अधिकार, शक्ति और उत्तरदायित्व के विकेन्द्रीकरण की मांग करते हैं जो स्थानीय स्वशासन को जन्म देता है।

ह्यू सेम्यूल एण्ड मार्टिन एलिन एम[1] के कथनानुसार संसार में सम्प्रभुता प्राप्त चार प्रकार की सरकारें हैं-

(1) ऊपरी सम्प्रभु सरकार,

(2) सम्प्रभु राष्ट्र सरकार,

(3) मिश्रित सम्प्रभुता (एक संघ में सम्मिलित किये गये राज्य) वाली सरकार और

(4) अधम सम्प्रभु सरकार।

सम्प्रभु राष्ट्र-सरकारों के पास पूर्ण सत्ता होती है अतः वे अनगिनत शैलियों क आनन्द लेती है। इस प्रकार की सम्प्रभु-सरकारें जनमत का केन्द्रीय बिन्दु हैं। मिश्रित सम्प्रभु-सरकारों में सर्वोच्च राजनीतिक शक्ति और सत्ता, सम्पूर्ण देश की केन्द्रीय सरकार और विभिन्न भौगोलिक आधारों पर स्थापित राज्यों में विभक्त होती है। प्रत्येक भौगोलिक आधार पर स्थापित राज्य अपनी सीमा में सर्वोच्च है और दूसरे भौगोलिक आधार पर स्थापित राज्य से स्वतंत्र है। स्थानीय सरकारें अधम सम्प्रभु सरकारें हैं, ये सम्प्रभु राष्ट्र या मिश्रित सम्प्रभु राज्य की भौगोलिक सीमा की इकाइयाँ हैं। सरकार की अन्य इकाइयों की भाँति स्थानीय सरकारों की इकाइयों का भी निश्चित क्षेत्र, जनसंख्या, संगठन और सत्ता होती है, जिसे स्थानीय जन कार्यों को पूरा करने की शक्ति दी जाती है।

स्थानीय स्वशासन की स्थापना समाज की मूलभूत आवश्यकताओं एवं आधारभूत कार्यों की पूर्ति हेतु की जाती है। स्थानीय स्तर पर स्थानीय जनता को स्थानीय कार्यों पर जनमत प्रकट करने का अवसर प्रदान किया जाता है तथा स्थानीय शासन में अपना स्थानीय प्रतिनिधि चुनने का अवसर प्राप्त होता है। स्थानीय प्रतिनिधि स्थानीय कार्यों में विशेष ध्यान देते हैं।

स्थानीय स्वशासन से हमारा अभिप्राय यह है कि स्थानीय व्यक्ति स्वयं अपने प्रतिनिधियों द्वारा करें। अंग्रेजी शब्द (Local Self Gournment) लोकल सेल्फ गवर्नमेन्ट के अनुसार स्थानीय

1. ह्यूम सेम्यूल एण्ड मार्टिन एलिन एम- द स्वक्चर ऑफ लोकल गवर्नमेन्ट टू द वर्ल्ड (द हेग 1961), पृष्ठ 1

स्वशासन में तीन बातें होती हैं। प्रथम तो यह कि वह गवर्नमेन्ट या स्वशासन सरकार है। दूसरी यह कि यह ऐसी सरकार है जिसका सम्बन्ध स्थानीय विषय, स्थानीय नेता और स्थानीय शासन प्रणाली से है। तीसरा यह एक सेल्फ गवर्नमेन्ट अथवा स्वशासन है जो लोकतंत्रात्मक सिद्धान्तों और आदेशों के अनुरूप होना चाहिए। स्थानीय स्वशासन में दो प्रकार की स्थानीयता पायी जाती है- पहली क्षेत्र सम्बन्धी, दूसरी कार्य सम्बन्धी स्थानीय संस्थाओं का शासन सीमित क्षेत्र में होता है। दूसरे स्थानीय स्वराज की संस्थाओं को दिये गये कार्य (नल, बिजली, यातायात) ऐसे छोटे कार्य हैं जिनका महत्व केवल स्थानीय होता है। डॉ. आर्भिवादम के अनुसार - **'स्थानीय शासन केन्द्रीय सरकार के अधिनियम द्वारा निर्मित एक शासकीय इकाई है जिसमें नगर व गांव की भांति एक क्षेत्र की जनता द्वारा चुने हुए प्रतिनिधि भी होते हैं और जो अपने अधिकार क्षेत्र की सीमाओं के भीतर लोककल्याण के लिए प्रदत्त अधिकारों का प्रयोग करती हैं।**[1]

स्थानीय स्वशासन की यह संस्थायें विभिन्न देशों में विभिन्न रूपों के अनुसार स्थापित की जाती हैं जिन्हें अलग-अलग नामों से पुकारा जाता है। जैसे- इंग्लैण्ड में इन्हें स्थानीय सरकारें कहा जाता है जिनके प्रमुख उदाहरण हैं- पेरिस ग्रामीण जिला, शहरी जिला, नान काउण्टी बरों, काउण्टी बरो, प्रशासकनिक काउण्टी। अमेरिका में इसे नगरपालिका शासन कहते हैं जिनकी प्रमुख इकाइयाँ नगर टाउनशिप, टाउन और काउण्टी हैं। फ्रांस में इसे स्थानीय शासन कहते हैं। फ्रांस में इसकी सबसे छोटी इकाई कम्यून और सबसे बड़ी इकाई को डिपार्टमेन्ट कहते हैं। सोवियत रूस में इसे म्यूनिसिपल सोवियत नाम दिया गया है। इनके दो रूप ग्रामीण एवं शहरी हैं जिनके ऊपर रोमन और ओवलास्ट है तथा भारत में इसे स्थानीय स्वशासन के नाम से पुकारा जाता है। इसके दो प्रकार हैं- ग्रामीण एवं शहरी, ग्रामीण स्थानीय स्वशासन का ग्राम पंचायत, क्षेत्र पंचायत, जिला पंचायत स्पष्ट उदाहरण है तथा शहरी क्षेत्र में पोर्ट ट्रस्ट, छावनी बोर्ड, नगरपालिकाओं और नगर निगम आदि संस्थायें पायी जाती हैं।

भारत में स्थानीय स्वशासन राज्य सूची का विषय माना गया है। इसका अभिप्राय यह है कि भारत संघ की समस्त राज्य सरकारें इस बात के लिए स्वतंत्र हैं कि वे अपने राज्य में जैसा स्थानीय स्वशास चाहे अपना सकती है। किसी भी देश में स्थानीय स्वशासन के प्रायः दो स्वरूप होते हैं। नगरीय एवं ग्रामीण। नगरीय क्षेत्र में स्थानीय प्रशासन को संचालित करने वाली इकाइयों पर नगरीय क्षेत्र में रहने वाली जनता की स्थानीय आवश्यकताओं की पूर्ति करने का दायित्व रहता है। इसी प्रकार ग्रामीण क्षेत्र के निवासियों की स्थानीय आवश्यकताओं की पूर्ति का दायित्व पंचायती राज की त्रिस्तरीय रचना द्वारा वहन किया जाता है। स्थानीय स्वशासन की नगरीय एवं ग्रामीण, इन दोंनों संस्थाओं में स्थानीय जनता अपनी सक्रिय

भागीदारी निभाती है। अतः स्थानीय स्वशासन का अपना अस्तित्व प्राचीन काल से लेकर आज तक बिना किसी लाग लपेट के बना हुआ है।

स्थानीय शासन और स्थानीय स्वशासन में साधारणतया अन्तर नहीं माना जाता है परन्तु अध्ययन की दृष्टि से अगर देखा जाय तो इनमें मूलभूत अन्तर विद्यमान है। स्थानीय शासन में स्थान विशेष शासन प्रान्तीय या केन्द्रीय शासन के प्रतिनिधियों द्वारा संचालित किया जाता है जब कि स्थानीय स्वशासन में स्थान विशेष का शासन स्थानीय लोगों द्वारा चलाया जाता है। विभिन्न भारतीय विद्वानों ने इसे भिन्न-भिन्न दृष्टिकोण से देखा है।

प्रोफेसर श्रीराम माहेश्वरी स्थानीय शासन और स्थानीय स्वशासन को भारत के संदर्भ में एक ही मानते हैं। उनकी मान्यता यह है कि स्थानीय स्वशासन शब्द की उत्पत्ति उस समय हुई थी जब कि देश ब्रिटिश शासन के अधीन था और जनता को केन्द्रीय अथवा प्रान्तीय किसी भी स्तर पर स्वशासन उपलब्ध नहीं था। जब ब्रिटिश सरकार ने भारतीयों को स्थानीय शासन से सम्बद्ध करने का निर्णय किया तो उसका अभिप्राय जनता को कुछ अंशों में स्वशासन प्रदान करना था किन्तु आज जब देश में केन्द्र और राज्य दोनों ही स्तरों पर स्वशासन की स्थापना हो चुकी है, तो स्थानीय स्वशासन का वह विशिष्ट सन्दर्भ और महत्व लुप्त हो चुका है।[1] दूसरी ओर स्वर्गीय डॉ. वी. एम. सिन्हा ने दोनों में भिन्न-भिन्न अर्थ देखा है। उनके अनुसार हमारे देश में स्थानीय स्वायत्त शासन से नगर निगम, नगरपालिका, कस्बा क्षेत्र समिति, अधिसूचित क्षेत्र समिति, छावनी मंडल, ग्राम पंचायत, पंचायत, पंचायत समिति तथा जिला परिषदों का बोध होता है।[2]

स्थानीय शासन और स्वशासन की संस्थायें सार्वभौम नही होती है और न ही उन्हें कोई संवैधानिक संरक्षण प्राप्त होता है। वे अधीनस्थ निकाय होती हैं जो केन्द्र या प्रान्तीय सरकारों के अधीन कार्य करती है। इनका गठन केन्द्रीय या प्रान्तीय विधान मण्डलों की संविधि द्वारा होता है जिसमें इन संस्थाओं के संरचना, अधिकार एवं उत्तरदायित्वों का उल्लेख होता है तथा इन पर केन्द्रीय या प्रान्तीय सरकारों का नियंत्रण रहता है। सामान्यतः केन्द्र या प्रान्तीय सरकारें इनके कार्यों में हस्तक्षेप नही करती हैं किन्तु यदि स्थानीय संस्थायें अपनी सत्ता का दुरुपयोग करती हैं या ऐसे नियम बनाती है जिनसे केन्द्र या प्रान्त के कानूनों का उल्लंघन होता है अथवा अपने अधिकार क्षेत्र से बाहर कार्य करती हैं तब उनके कार्यों को रद्द किया जा सकता है। स्थानीय संस्थाओं को भंग कर केन्द्र या प्रान्त की सरकार (जैसी भी स्थिति

---

1. प्रो. श्री राम माहेश्वरी - भारत में स्थानीय शासन, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल प्रेस, आगरा 1998, पृष्ठ 3-4
5. डॉ. बी. एम. सिन्हा- भारत में नगरीय सरकारें, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर 1986, पृष्ठ - 1

है) उनकी शक्तियाँ अपने हाथ में ले सकती हैं या उनकी सविधि में ही परिवर्तन कर सकती हैं। स्थानीय स्वशासन को सीमित स्वतंत्रता प्राप्त है। इनकी स्थापना स्थानीय लोगों द्वारा स्थानीय आवश्यकताओं का प्रबन्ध करने हेतु की जाती हैं। एनसाइक्लोपीडिया ब्रिटेनिका के अनुसार - **'स्थानीय शासन संस्थायें पूर्ण राज्य की अपेक्षा एक अन्दरुनी प्रबन्धित एवं छोटे क्षेत्र में निर्णय लेने तथा उनको क्रियान्वित करने वाली सत्ता है। स्थानीय स्वशासित शासन को इसलिए महत्वपूर्ण माना जाता है कि वह स्थानीय लोगों के निर्णय लेने एवं कार्य करने की स्वतंत्रता पर जोर देता है।'**

'भारतीय संविधान में इन संस्थाओं के लिए स्थानीय स्वशासन शब्द का प्रयोग किया गया है।'[1]

स्थानीय स्वायत्त शासन की परिभाषायें

स्थानीय स्वशासन का तात्पर्य स्थानीय स्तर की उन संस्थाओं से है जो स्थानीय जनता द्वारा चुनी जाती हैं जो केन्द्रीय या प्रान्तीय सरकार के अधीन रहते हुए स्थानीय दायित्वों का प्रबन्ध करती हैं। इसका अर्थ यह है कि स्थानीय स्वशासन की इकाइयाँ अपने अधिकारों का प्रयोग सीमित क्षेत्र में करती हैं। वे सम्प्रभु की तरह नहीं होती हैं। भारत में स्थानीय स्वशासन को राज्य सूची का विषय माना गया है। अतः भारत में यह संस्थायें राज्य विधानमण्डलों द्वारा बनायी गयी विधि के आधीन कार्य करती हैं और उस विधि द्वारा दी गयी शक्तियों एवं अधिकार का प्रयोग करते हुए अपने दायित्वों की पूर्ति करती हैं। स्थानीय स्वशासन की विभिन्न भारतीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय विद्वानों द्वारा कुछ महत्वपूर्ण परिभाषायें इस प्रकार दी गयी हैं -

विलियम ए. राबसन के कथनानुसार - 'सामान्यतः स्थानीय शासन में एक ऐसे प्रादेशिक प्रभुत्वहीन समुदाय की धारणा निहित होती है जिसके पास अपने मामलों का नियमन करने का विधिक अधिकार तथा आवश्यक संगठन हुआ करता है जो बाह्य नियंत्रण से मुक्त रहकर काम कर सकें, साथ ही यह भी जरूरी है कि स्थानीय समुदाय का अपने मामलों के प्रशासन में साझा हो। स्थानीय शासन के ये तत्व किस सीमा तक विद्यमान होते हैं इस विषय में न्यूनाधिक अन्तर हो सकता है।[2]

बी. वेंकटराव के अनुसार - **'स्थानीय सरकार, राज्य सरकार का वह भाग है जो मुख्यतः**

---

1. भारत के संविधान की सातवीं अनुसूची की दूसरी सूची की चतुर्थ प्रविष्टि
2. विलियम ए. राबसन : एनसाइक्लोपीडिया ऑफ सोशल साइंसेज वाल्यूम 9-10, पृष्ठ 514

स्थानीय विषयों से सम्बन्ध रखती है तथा उसकी शासन करने वाली सत्ता के अधीन रहती है लेकिन उसके चुनाव, राज्य की सत्ता के नियंत्रण की अपेक्षा स्वतंत्र रूप से योग्य निवासियों द्वारा किये जाते हैं।'[1]

एल. गोल्डिंग के अनुसार - **'स्थानीय सरकार की सबसे सरल परिभाषा यही है कि यह एक बस्ती के लोगों द्वारा अपने मामलों का स्वयं ही प्रबन्ध है।'**[2]

जान जे. क्लार्क के अनुसार - **'स्थानीय सरकार एक राष्ट्र अथवा राज्य की सरकार का वह भाग होता है जो मुख्य रूप से ऐसे विषयों पर विचार करती है जिनका सम्बन्ध एक विशेष जिले अथवा स्थान के लोगों से होता है। साथ ही साथ वह उन विषयों पर विचार करती है जिन्हें संसद द्वारा इनके माध्यम से प्रशासित होने के लिए निश्चित कर दिया जाता है।'**[3]

जी. एम हैरिस के अनुसार - 'स्थानीय स्वशासन स्थानीय संस्थाओं द्वारा शासन है जो कि स्वतंत्र रूप से निर्वाचित हो परन्तु राष्ट्रीय शासन के अधीन हो।'

जे. जे. क्लार्क के अनुसार - 'स्थानीय शासन किसी भी राष्ट्र अथवा राज्य की सरकार का वह भाग है जो मुख्यतः ऐसे मामलों से सम्बन्ध रखता है जो कि किसी जनपद अथवा स्थान के निवासियों के सम्बन्धित होते हैं।'

ए. डी. आर्शिवादम के अनुसार - 'स्थानीय स्वशासन केन्द्र सरकार या राज्य सरकारों के अधिनियम द्वारा निर्मित एक ऐसी प्रशासकीय इकाई है जिसमें नगर या ग्राम, जहाँ एक क्षेत्र की जनता द्वारा निर्वाचित प्रतिनिधि होते हैं और जो अपने दायित्व क्षेत्र की परिसीमा में प्रदत्त अधिकारों का उपभोग लोक कल्याण के लिए करते हैं।'

इस प्रकार स्थानीय स्वशासन की विभिन्न परिभाषाओं का अध्ययन करने के बाद स्थानीय स्वायत्त शासन को कहा जा सकता है कि एक क्षेत्र का प्रशासन या एक गांव, एक कस्बा, एक शहर या इस प्रकार का क्षेत्र राज्य से छोटा हो, जो स्थानीय निवासियों का बिना किसी भेदभाव के प्रतिनिधित्व करता हो तथा पर्याप्त सीमा तक स्वायत्तता रखता हो अपने राजस्व का एक बड़ा भाग स्वयं स्थानीय करों के रूप में एकत्रित करता है तथा अपनी आय को स्थानीय विषयों के प्रबन्ध में खर्च करता है और जो समय सरकार या केन्द्र सरकार के कार्यों से भिन्न है। इस तरह स्थानीय स्वशासन से हमारा तात्पर्य यह होता है कि स्थान विशेष

---

1. बी. बेंकटराव. ए हण्डरेड इयर्स ऑफ गवर्नमेन्ट इन आसाम, बनि प्रकाशन मण्डल गौहाटी 1965, पृष्ठ - 1
2. (एल. गोल्डिंग) डॉ. बी. एल. फड़िया, कुलदीप फड़िया, राजनीति विज्ञान, साहित्य भवन पब्लिकेशन, पृष्ठ 42
3. उपर्युक्त।

का प्रशासन स्थान विशेष के प्रतिनिधियों द्वारा चलाया जाय और यदि उस स्थान विशेष प्रशासन केन्द्र या राज्य सरकार के अधिकारियों द्वारा चलाया जायेगा तो वह प्रशासन स्थानीय प्रशासन तो कहलायेगा किन्तु उसमें स्वशासन उसी तरह अदृश्य रहेगा जिस तरह मानव शरीर से आत्मा या चिन्तन। स्थानीय स्तर की समस्याओं का स्थानीय स्तर पर (समाधान) प्रबन्ध करने हेतु लगभग सभी देशों में स्थानीय स्वशासन की संस्थाओं को स्थापित किया जाता है। ये संस्थायें ग्रामीण एवं शहरी इलाकों के लिए अलग-अलग हो सकती हैं। इन्हें केन्द्र सरकार या राज्य सरकार को व्यवस्थापिका द्वारा पारित अधिनियमों के आधार पर निर्मित किया जाता है। ये संस्थायें उन्हीं अधिकार एवं शक्तियों का उपयोग करती हैं जो उन्हे व्यवस्थापिका द्वारा पारित अधिनियम के अन्तर्गत प्रदान किये जाते हैं। राज्य सरकार इन संस्थाओं के ऊपर निरीक्षण एवं निर्देशन के माध्यम से नियंत्रण रखती है इन्हें राज्य सरकार द्वारा अनुदानित वित्त के उपयोग के कारण भी यह इनके नियंत्रण में रहती है लेकिन अधिनियमों द्वारा प्राप्त शक्तियों के उपयोग के मामले इनके स्वयं के विवेक पर आधारित होते हैं और अपने क्षेत्र के अन्तर्गत कार्यों को संचालित करती हैं।

स्थानीय स्वशासन की प्रकृति एवं ऐतिहासिक भूमिका

स्थानीय स्वशासन की प्रकृति और उसके ऐतिहासिक महत्व व विशेषताओं को इस प्रकार रेखांकित किया जा सकता है-

(1) भारत में स्थानीय स्वशासन की जड़ें यद्यपि प्राचीन हैं परन्तु उनकी वर्तमान संरचना पूर्व के ब्रिटिश शासन की देन है। भारत में इस रूप में स्थानीय स्वशासन, जिसमें प्रतिनिधि संगठनों जो कि मतदाताओं के प्रति उत्तरदायी हो, स्थानीय प्रशासन तथा करों के आरोपण के अधिकारों का प्रयोग करते हों। लोकतंत्र की प्रथम पाठशाला के रूप में कार्य कर रहे हों तथा वह जनता और केन्द्र/राज्य सरकार के बीच कड़ी के रूप में प्रचलित हो।

73वां संविधान संशोधन द्वारा संविधान में 11 वीं अनुसूची व 74वे संविधान संशोधन द्वारा 12वीं अनुसूची जोड़कर क्रमशः पंचायती राज संस्थाओं व नगरीय स्वायत्त संस्थाओं द्वारा किये जाने वाले कार्यों का संकेतात्मक उल्लेख किया गया है।

राज्य सरकार के लिए जिस अधिनियम द्वारा इनकी संरचना कार्यक्षेत्र का निर्धारण होता है। उसी अधिनियम के तहत उन्हें इनके कार्यक्षेत्र के अन्तर्गत स्वायत्तता प्राप्त होती है तथा अपने क्षेत्राधिकार के अधीन आने वाले निवासियों पर कर लगाकर वित्त एकत्र करने का अधिकार प्राप्त होता है।

स्थानीय जनता कुछ विशिष्ट मामलों में इन संस्थाओं के निर्णय निर्माण में सक्रिय भाग लेते हैं। विशेषतः ग्राम पंचायत के माध्यम से जनता भागीदारी निभाती है।

स्थानीय स्वशासन की आवश्यकता

किसी देश के शासन को केन्द्र या राजधानी से सुचारु रूप से चलाना एक जटिल समस्या होती है क्योंकि वर्तमान समय में बढ़ती जनसंख्या एक विस्तृत राज्य है। प्रत्येक छोटे-बड़े कार्य के लिए केन्द्र से आशा रखना नितान्त अनुचित ही न होकर सम्भव भी नहीं दिखाई पड़ता है। अतः यह भी आवश्यक नहीं है कि स्थानीय कार्यों में भी केन्द्र या राज्य सरकार रुचिपूर्वक सहयोग करें और यह भी आवश्यक नहीं है कि इन कार्यों का सम्बन्ध केन्द्र या राज्य से हो। अतः स्थानीय आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए सशक्त स्थानीय स्वशासन की मांग बढ़ती जा रही है क्योंकि जब स्थानीय लोक स्थान विशेष पर शासन करते हैं तो वह उस क्षेत्र विशेष की सभी समस्याओं से परिचित होने के कारण संसाधनों का उचित दोहन एवं आवश्यकताओं की सही व उपयोगितानुसार पूर्ति करते हैं।

संविधान द्वारा केन्द्र व राज्य सरकारों के मध्य शक्तियों का स्पष्ट विभाजन किया गया है उसें यह स्पष्ट कर दिया गया है कि नागरिकों की स्थानीय आवश्यकताओं की पूर्ति और उत्तरदायित्व के पाल की भावना उत्पन्न होती है। ब्राईस ने लिखा है - 'जो भी ग्राम के मामलों में ईमानदारी; सक्रियता और सार्वजनिक भावना सीख लेता है उसने अपने महान देश के नागरिक के कर्तव्य का पहला पाठ सीख लिया है।'

कहा जा सकता है कि स्थानीय शासन का कार्य उन सब संसाधनों को जुटाना है जो शारीरिक, आर्थिक, सामाजिक व सांस्कृतिक जीवन को अच्छा बनाने के लिए आवश्यक होती है। औद्योगीकरण और नगरीकरण के फलस्वरूप स्थानीय संस्थाओं के कार्यों में पहले की अपेक्षा अधिक वृद्धि हुई है और भविष्य में इनके कार्यों में और अधिक वृद्धि होने की सम्भावना बनी हुई है। विलियम राक्सन ने ठीक ही लिखा है- **'आज स्थानीय प्राधिकरणों को पहले से अधिक सुअवसर प्राप्त हैं। यदि केन्द्रीय शासन की शक्तियाँ बढ़ रही हैं तो स्थानीय निकायों के कार्यों में भी निरन्तर वृद्धि हो रही है।'**[1]

इस प्रकार यह कहना उचित होगा कि स्थानीय शासन स्थानीय नेतृत्व के राजीनतिक अनुभव को बढ़ावा देता है। जब लोकतंत्र के आधार पर सृजनात्मक कार्यों को सम्पादित

---

1. विलियम ए राक्सन - एन साइक्लोपीडिया ऑफ सोशल साइंसेज वाल्यूम -9 पृष्ठ 584

करता है। लोकतंत्र में शक्ति, नमनीयता और सम्पन्नता के विकास में योग देता है। इस सम्बन्ध में जेक्स एडवर्ड लिखते हैं कि **'जिन देशों में स्थानीय शासन के अंग केन्द्रीय सरकार की मुट्ठी में रहकर कार्य करते हैं वहाँ प्रशासन की सुयोग्यता भले ही अधिक हो किन्तु वहाँ की जनता का राजनीतिक चरित्र असन्तोषजनक होता है। दीर्घकाल तक जनता उदासीन बनी रहती है और फिर खतरनाक ढंग से उत्तेजित हो उठती है। परिणामस्वरूप केन्द्रीय सरकार अस्थिरता और भ्रष्टाचार का शिकार बन जाती है। इसके विपरीत जिस देश में स्थानीय सरकार सुदृढ़ होती है उसकी गति धीमी हो सकती है। उसकी कार्य पद्धति में भयंकर भूलें हो सकती हैं किन्तु उस देश की प्रगति अविचल तथा सुस्थिर होगी और वहां राजनीतिक स्थिरता और ईमानदारी देखने को मिलेगी।'**[1]

'भारत के लिए स्थानीय संस्थाओं का काफी महत्व है। प्रारम्भ से ही स्थानीय संस्थाएं महत्वपूर्ण रही हैं। यहां तक कि भारत में स्वशासन का प्रारम्भ स्थानीय संस्थाओं से ही हुआ है। ग्राम स्वराज्य उल्लेखनीय भारतीय अवधारणा हैं। पंचवर्षीय योजनाओं तथा विकास के कार्यक्रमों को सुलझाने के लिए भी स्थानीय स्वायत्त संस्थाओं को बहुत महत्व प्रदान किया गया है। ग्राम, खण्ड और जिला-प्रान्तीय सरकार के लिए यह सम्भव नहीं है कि वह हर स्थान पर हर समस्या को कुशलतापूर्वक सुलझा सके। जनता को भी स्थानीय संस्थाओं से सेवा लेने हेतु अधिक स्तरों पर स्थानीय संस्थाओं की स्थापना की गयी है। इनकी सफलता पर ही हमारा भविष्य निर्भर करता है।[2]

स्थानीय स्वशासन से उत्पन्न होने वाले दोषों का अध्ययन भी यहां पर महत्वपूर्ण है। इस बात का सदैव भय बना रहता है कि स्थानीय शासन कहीं विकृत होकर संकीर्ण, स्वार्थमूलक, अज्ञानपूर्ण संस्था का रूप धारण न कर ले। हो सकता है कि स्थानीय संस्थायें अपने छोटे आकार के कारण योग्य एवं नागरिक भावना से परिपूर्ण व्यक्तियों को कार्य करने हेतु आकृष्ट न कर सकें। जे. एस. मिल ने स्थानीय संस्थाओं की ऐसी स्थिति पर विचार करते हुए लिखा है- **'लोकप्रिय स्थानीय संस्थाओं का सबसे बड़ा दोष यह है कि उनका संचालन सदैव निम्न चरित्र बल के लोगों द्वारा होता है और यही मुख्य कारण है कि जिससे वे बहुधा असफल सिद्ध हुए हैं।'**[3]

---

1. जेक्स एडवर्ड - एन आउट लाईन ऑफ इंग्लिस लोकल गवर्नमेन्ट (लन्दन मैथ्यू एण्ड कम्पनी 1925), पृष्ठ - 9 छठा संस्करण।
2. प्रतिवेदन - प्रथम पंचवर्षीय योजना 1954
3. जे. एस. मिल - रिप्रेजेन्टेटिव गवर्नमेन्ट (लन्दन गर्वनमेन्ट लाइब्रेरी संस्करण 1957), पृष्ठ 351

स्थानीय संस्थाओं के प्रतिनिधि स्थानीय होने के कारण स्थान विशेष से इतना लगाव होता है कि उन्हें जब भी मौका मिलता है तो वह स्थान विशेष के ही लोगों को देख पाते हैं जिससे राष्ट्रीय हितों की अनदेखी हो सकती है जो उनके संकीर्ण सोच का प्रतीक हो जाता है। इससे तुच्छ प्रवृत्तियों को बल मिलता है जो राष्ट्रीय एवं प्रान्तीय हितों के लिए हानिकारक होती है। स्थानीय संस्थायें दूषित राजनीति की जननी होती है क्योंकि जिस स्थान विशेष पर जिस जाति, वर्ग के लोगों की बहुलता होती है वही लोग स्थानीय संस्थाओं पर कब्जा कर लेते हैं या हावी हो जाते हैं और सम्पूर्ण समाज के हितों एवं लाभों को अपने जाति या वर्ग विशेष को प्रदान करने लगते हैं जिससे अन्य वर्गों की उपेक्षा होती है या जिन उद्देश्यों को लेकर केन्द्र या राज्य सरकार ने कार्यक्रम योजना तैयार की थी उनका उद्देश्य धरा का धरा रह जाता है अर्थात् यह संघर्षों को भी जन्म देती है।

स्थानीय संस्थाओं के पास धन का अभाव होने के कारण वे विशेषज्ञों की सहायता लेने में असमर्थ होती हैं। जैसे- भवन निर्माण हेतु वास्तुकारों, कुशल चिकित्सा हेतु निपुण चिकित्सकों, पुलों आदि के लिए इंजीनियरिंग ज्ञान का अभाव रहता है।

स्थानीय संस्थाओं को ऐसे कार्य सौंप दिये गये हैं, जिन्हें वह सुचारु रूप से सम्पन्न करने में असमर्थ है। जैसे- शिक्षा एक ऐसा विषय है जो केन्द्र या राज्य सरकारों के पास ही होना चाहिए था परन्तु इसे स्थानीय शासन को सौंप दिया जाता है तो इसकी दुर्दशा हो जाती है। भारत में प्राथमिक शिक्षा की दुर्दशा का यही कारण है और स्थानीय संस्थायें वित्तीय साधनों के अभाव के कारण स्थानीय शासन अपने अधिकारों और दायित्वों का कुशल निर्वाह नहीं कर पाते हैं जिससे वे नाममात्र के होकर रह जाते हैं जिससे शासन के केन्द्रीकरण को बढ़ावा मिलता है। वर्तमान में बढ़ती हुई संचार व्यवस्था भी स्थानीय शासन के कार्यो में कमी करती है। आज केन्द्रीय शासन और नगर अधिकारी संचार साधनों के माध्यम से एक स्थान विशेष में घटित समस्या का समाधान कुछ ही पलों में निकाल लेते हैं अर्थात् संचार साधनों के द्वारा भी स्थानीय संस्थाओं के महत्व को अस्वीकार किया जा रहा है।

स्थानीय स्वायत्त संस्थायें जो सेवायें स्थानीय लोगों को प्रदान करती हैं। वह प्रायः सभी सेवायें घाटे में चलती हैं क्योंकि उनका कार्य क्षेत्र छोटा एवं सम्पादन कुशल ढंग से नहीं हो पाता है जिसके कारण इन संस्थाओं को सदैव हानि सहन करना पड़ता है। इस सम्बन्ध में **विलियम ए. राक्सन लिखते हैं-** 'उन देशों में, जहाँ व्यापक औद्योगिक विकास हो चुका है अथवा हो रहा है, स्थानीय शासन के क्षेत्र अधिकतम कुशलता की दृष्टि से बहुत छोटे सिद्ध हो रहे हैं। औद्योगिक क्रान्ति के परिणामस्वरूप स्थानीय शासन के क्षेत्र प्रायः इतने छोटे पड़ते

हैं कि उनमें बहुसंख्यक जनता के काम और निवास दोनों के लिए पर्याप्त स्थान नहीं मिल पाता, जिसके कारण जर्मनी, फ्रांस, इंग्लैण्ड, अमेरिका आदि देशों में गम्भीर प्रशासनिक और वित्तीय समस्यायें उठ कर खड़ी हुई है, साथ ही साथ नगरीय तथा ग्रामीण आयोजन और सार्वजनिक स्वास्थ्य आदि अनेक ऐसी नागरिक सेवायें होती हैं जिनके लिए अत्यधिक विशिष्ट प्रकार के विशेषज्ञों और संस्थाओं की आवश्यकता होती है और सार्वजनिक हित के कुछ ऐसे कार्य हुआ करते हैं जिन्हें बड़े पैमाने पर चलाने से ही लाभ होता है। इन सबको सुचारु रूप से सम्पादित और संचालित करने के लिए भी क्षेत्राधिकार के विशाल प्रदेशों की मांग उठाई जा रही है। लगभग सभी प्रमुख देशों में स्थानीय शासन के क्षेत्र आधुनिक संचार साधनों के आगमन से पहले ही निर्धारित किये गये थे और उनमें से किसी भी देश में उन क्षेत्रों के आकार और रूप को सामाजिक और आर्थिक विकास की प्रवृत्तियों के साथ समन्वित करने का प्रयत्न नहीं किया गया है। परिणाम यह है कि लगभग हर देश में ऐसी स्थानीय शासन संस्थायें हैं जिनके क्षेत्र इतने छोटे हैं और जनता इतनी गरीब है कि वे स्थानीय शासन के बोझ को उठाने में सर्वथा असमर्थ हैं।[1]

स्थानीय शासन का वैधानिक जनाधार

भारत में स्थानीय प्रशासन की स्थापना एवं विकास में ऐतिहासिक विचारात्मक और प्रशासनिक आदि तत्वों ने विशेष योगदान दिया है इसमें कोई सन्देह नहीं किया जा सकता है कि स्थानीय प्रशासन केन्द्रीय शासन से पूर्व स्थापित हो चुका था। स्थानीय प्रशासन के कार्यो का आधार प्रादेशिक होता है। यह इसलिए और भी महत्वपूर्ण हो जाती है क्योंकि यह नागरिक सेवाओं के समुदाय के निवास क्षेत्र अथवा प्रदेश की दृष्टि से आयोजित, क्रमबद्ध और संगठित करने का कार्य करती है। नागरिक सेवाओं और समस्याओं में प्रादेशिक अन्तर होता है। स्थानीय शासन प्रशासनिक एकरूपता की स्थापना को रोकता है जो राज्य की नौकरशाही का उद्देश्य होता है। स्थानीय शासन वस्तुतः जनता की सेवा करता है। स्थानीय शासन का दायित्व दिन प्रतिदिन बढ़ता ही जा रहा है। स्थानीय शासन को बढ़े हुए उत्तरदायित्व के निर्वाह के लिए विशेष तकनीकी, अधिक धन और जन सहयोग की आवश्यकता होती है। स्थानीय शासन अपने उत्तरदायित्व का भलीभांति निर्वाह कर सकें इसके लिए स्थानीय शासन को वैधानिक आधार प्रदान किया गया है। स्थानीय स्वायत्त शासन की सभी नगरीय एवं ग्रामीण संस्थाओं का गठन राज्य सरकार की व्यवस्थापिका द्वारा पारित कानून द्वारा किया जाता है। कानून द्वारा ही उनके आकार एवं स्वरूप में अन्तर किया जाता

1. विलियम ए. राब्सन - एन साइक्लोपीडिया ऑफ सोशल साइंसेज वाल्यूम - 9-10, पृष्ठ 583

है। जैसे- नगरपालिका को नगर निगम घोषित करना, नगरपालिका बोर्ड को नगरपालिका परिषद बनाना आदि। स्थानीय शासन की सभी प्रशासनिक क्रियाओं पर राज्य सरकार के कार्यपालिका विभाग एवं निदेशालयों का नियंत्रण रहता है। जैसे- उपनियमों की स्वीकृति, बजट स्वीकृति, कार्मिकों की संख्याओं का निर्धारण, लेखा अंकेक्षण आदि कार्यों के लिए राज्य सरकार ने नियम बनाकर प्रतिबन्धित कर दिया है। यहां तक कि स्थानीय शासन के चुनाव भी राज्य सरकार द्वारा बनाये गये कानून द्वारा निश्चित किये जाते हैं। जैसे- स्थानीय शासन का कार्यकाल, चुनाव के लिए सीमा क्षेत्रों का वार्डों में विभाजन, सदस्यों की योग्यता, सहवरण, आरक्षण, अध्यक्ष/उपाध्यक्ष का चुनाव, समितियों का चुनाव, उनकी सदस्य संख्या का निर्धारण, बैठकों की कार्यवाही, समितियों की संख्या का निंर्धारण आदि। यही नहीं राज्य सरकारें स्थानीय स्वायत्त संस्थाओं के लिए करों का निश्चय करती हैं। आवश्यकता पड़ने पर आर्थिक एवं तकनीकी सहायता प्रदान करती हैं। यह सब व्यवस्था स्थानीय शासन के वैधानिक आधार के कारण ही सम्भव हो सकी है।

दूसरी तरफ स्थानीय शासन को जनाधार प्रदान किया गया है। जनता को अपने स्थान विशेष सम्बन्धी कार्यों के लिए कानून बनाने का अधिकार प्रदान किया गया है। यहाँ वह राजनीतिक शिक्षा प्राप्त कर सकती है। स्थानीय शासन में स्वयं स्थानीय परिषदें स्थान द्वारा बहुमत के आधार पर किया जाता है। स्थानीय जनता को निकाय के कार्यों का अवलोकन करने का अवसर मिल जाता है। वह तुरन्त निकाय के कार्यों का अवलोकन कर पर्यवेक्षण एवं निरीक्षण कर अपना विरोध प्रकट कर सकती है। जनता निर्वाचित सदस्यों द्वारा किये गये कार्य के आधार पर अपना विचार बनाती है। जनता के विरोध के भय से निर्वाचित सदस्य अनुशासन में रह कर कार्य करते हैं। स्थानीय जनता को सामुदायिक प्रबन्ध के मामलों में सक्रिय भाग लेने का अवसर और सुविधा मिलती है। परिणामस्वरूप स्थानीय शासन को जनता का सहयोग एवं समर्थन मिल जाता है। स्थानीय शासन जनता के अधिक निकट होता है। अतः लोग उसके निकट आसानी से पहुँच जाते हैं। उन्हें आशा रहती है कि वे स्थानीय शासन पर केन्द्र या राज्य सरकार की अपेक्षा अधिक प्रभाव डाल सकते हैं। स्थानीय शासन जनता और राज्य शासन के बीच विचारों और भावनाओं के सम्प्रेषण का महत्वपूर्ण माध्यम है। स्थानीय समुदाय की इच्छाओं को राज्य प्रशासन तक पहुँचाता है। इसी प्रकार केन्द्र व राज्य की योजनाओं और कार्यक्रमों को स्थानीय जनता तक पहुंचाते हैं। स्थानीय शासन अपनी वैधानिकता एवं जनाधार के कारण ही लोकतंत्र की नमनीयता, शक्ति तथा सम्पन्नता के विकास में योग देता है। एडवर्ड जेक्स ने 'ब्रिटिश स्थानीय शासन के संदर्भ में लिखा था- 'जिन देशों में स्थानीय शासन के अंग केन्द्रीय सत्ता की मुट्ठी में रहकर कार्य करते हैं, वहाँ

प्रशासन की सुयोग्यता भले ही अधिक हो, किन्तु वहाँ की जनता का राजनीतिक चरित्र असंतोषजनक रहता है। दीर्घकाल तक जनता उदासीन बनी रहती है और भ्रष्टाचार का शिकार बन जाती है। इसके विपरीत जिस देश में स्थानीय शासन सुदृढ़ होता है, उसकी गति धीमी हो सकती है और उसकी कार्य पद्धति में भयंकर भूलें भी हो सकती हैं, किन्तु उस देश की प्रगति अविचल तथा सुस्थिर होगी और वहाँ राजनीतिक स्थिरता और ईमानदारी देखने को मिलेगी।'[1]

भारत वर्ष में स्थानीय स्वशासन और स्थानीय स्वायत्त शासन में अन्तर है। **ब्रिटिश काल में स्थानीय शासन का अर्थ प्रान्तीय या जिला प्रशासन से माना जाता था। नगरपालिका एवं जिला बोर्डों के लिए स्थानीय स्वायत्त शासन का प्रयोग किया जाता था।** स्वतंत्र भारत में यह अन्तर ज्यों का त्यों बना हुआ है। इस प्रकार का अन्तर अन्यत्र कहीं दिखाई नहीं पड़ता है। जिस प्रकार भारतीय संविधान में विषयों की तीन सूचियाँ केन्द्र, राज्य और समवर्ती सूची बनायी गयी है और स्थानीय स्वायत्त शासन राज्य सूची का विषय है। फलतः प्रत्येक राज्य अपनी भौगोलिक सीमा में ग्रामीण एवं नगरीय दोनों प्रकार के स्थानीय स्वायत्त शासन हेतु नियम बनाते हैं। केन्द्रशासित क्षेत्र में स्थित स्वायत्तशासी संस्थाओं के लिए केन्द्र सरकार कानून बनाती है। छावनी परिषदें रक्षा मंत्रालय के अधीन कार्य करती हैं। भारतीय स्थानीय स्वायत्त शासन का राष्ट्रीय प्रतिरूप नहीं है। स्थानीय स्वायत्त शासन संस्थाओं को प्रजातंत्र की पाठशाला कहा जाता है परन्तु इन संस्थाओं को अनेक बार प्रजातांत्रिक ढंग से कार्य करने का अवसर नहीं मिल पाता है। राज्य सरकारें सार्वभौम होने के कारण जनता के निर्वाचित प्रतिनिधियों को हटा देते हैं। स्थानीय स्वायत्त संस्थाओं के निर्वाचित स्वरूप को भंग कर देती हैं। निर्वाचित प्रतिनिधियों और पदाधिकारियों की जगह प्रशासकों की नियुक्ति कर दी जाती है। स्थानीय स्वायत्त शासन की स्थापना के दो प्रमुख कारण थे। 19वीं शताब्दी के मध्य में केन्द्रीय सरकार वित्तीय संकट की अवस्था में थी। अतः वित्तीय संकट से उबरने हेतु स्थानीय कर के रूप में धन एकत्रित करने का उद्देश्य उत्तरदायित्व स्थानीय स्वायत्त सेवाओं को सौंप दिया गया। इसका दूसरा कारण था स्थानीय स्वायत्त संस्थाओं को कुछ प्रशासनिक कार्य दे देने से जिलाधीश का कार्यभार हल्का हो जाता था। स्थानीय स्वायत्त संस्थाओं के गठन का उद्देश्य जनता को प्रजातंत्र के सिद्धान्त एवं व्यवहार से सम्बन्धित प्रशिक्षण देना नहीं था। अन्य सभी कार्यों की भाँति स्थानीय स्वायत्त संस्थाओं के लिए वित्त की आवश्यकता होती है। परन्तु इन संस्थाओं में सदैव धन की कमी बनी रहती है। इसके भी अनेक कारण हैं।

---

1. एडवर्ड जेक्स - एन आउट लाईन ऑफ इंग्लिस गवर्नमेन्ट (लन्दन मैथ्यू एण्ड कम्पनी), पृष्ठ 8-9

प्रथम कारण है भारत एक गरीब देश है, जनता में कर देने की क्षमता नहीं होती है। दूसरा- करों की चोरी होती है। तीसरा- प्रभावकारी व्यक्ति अपने प्रभाव के कारण कर देने से बच जाते हैं। चौथा निर्वाचित सदस्य नवीन कर लगाकर जनता के बीच अलोकप्रिय होना नहीं चाहते हैं। स्थानीय प्रशासन के निर्वाचित सदस्यों एवं जनता का यही प्रयास रहा है कि राज्य सरकार से सहायता अनुदान के रूप में धनराशि उपलब्ध हो जाये। स्थानीय प्रशासन के चुनाव के समय यह घोषणा की जाती है कि राजनीतिक दल किसी प्रकार का हस्तक्षेप नहीं करेंगे। परन्तु स्थानीय शासन राजनीति का शिकार हो गया है, केवल प्रत्यक्ष में राजनीतिक दलों की तरह चुनाव-चिन्ह आवंटित नहीं किये जाते। शेष सभी राजनीतिक सुविधाओं का उपयोग निर्वाचन के लिए प्रत्याशी के द्वारा किया जाता है। प्रत्याशी स्वतंत्र रूप से खड़े होते हैं। दल उन्हें सहायता प्रदान करते हैं। यह सहायता आर्थिक एवं चुनाव प्रचार सम्बन्धी भी हो सकती है। निर्वाचित सदस्य अपने दल की नीति के अनुसार कार्य करते हैं। स्थानीय स्वायत्त संस्थाओं को प्रशासनिक दृष्टि से भी अकुशल माना जाता है। कहा जाता है कि जो व्यक्ति केन्द्र या राज्य स्तर पर स्थान पाने में असफल रहता है उसे स्थानीय संस्थाओं में थोड़े से ही प्रयास से स्थान मिल जाता है। इन संस्थाओं की अकुशलता के कारण धन का अभाव, अल्प वेतन भोगी, कार्मिक वर्ग, सदस्यों की पारम्परिक होड़ एवं राज्य स्तर के नेताओं का हस्तक्षेप आदि है।

ग्रामीण एवं नगरीय स्थानीय स्वायत्त शासन तथा स्थानीय स्वायत्त शासन के दो भाग हैं। ग्रामीण स्थानीय स्वायत्त शासन पर नियंत्रण का उत्तरदायित्व सामुदायिक विकास विभाग तथा पंचायती राज विभाग का है। नगरीय स्थानीय शासन पर स्वायत्त शासन विभाग का नियंत्रण रहता है। ये संस्थायें पूर्ण रूप से वयस्क मताधिकार के सिद्धान्त पर निर्वाचित होती हैं। इन चुनावों के लिए वही मतदाता सूची काम में लायी जाती है जो राज्य के विधानसभाओं के निर्वाचन में काम में लायी जाती है। सिद्धान्त एवं व्यवहार में स्पष्ट अन्तर दृष्टिगोचर होता है। सैद्धान्तिक दृष्टि से इन संस्थाओं को केन्द्र एवं राज्य की राजनीति से दूर रखा गया है। परन्तु व्यवहार में राजनीति का पूर्ण परिचय मिलता है।

(ख) भारत में स्वशासन का सिद्धान्त

(1) जनतांत्रिक विकेन्द्रीकरण का सिद्धान्त

जनतांत्रिक विकेन्द्रीकरण दो शब्दों से मिलकर बना है-

(1) जनतंत्र और (2) विकेन्द्रीकरण। जनतंत्र वह व्यवस्था है जिसमें जनता स्वयं शासन में भाग लेती है। अर्थात् शासन सत्ता का स्रोत जनता है। जनतंत्र में जनता प्रत्यक्ष या

अप्रत्यक्ष रूप से शासन में भाग लेती है। विकेन्द्रीकरण का अर्थ है- सत्ता, शासन, उत्तरदायित्व पहल कदमी शासन के किसी एक स्थान पर केन्द्रित न होकर भिन्न-भिन्न स्थानों पर विभक्त होनी चाहिए। विकेन्द्रीकृत व्यवस्था में प्रत्येक शासन केन्द्र का संवैधानिक क्षेत्र होता है जिसमें वह अपनी सत्ता, स्वतंत्रता, उत्तरदायित्व व पहलकदमी का प्रयोग करता है। अपने क्षेत्र में उपलब्ध साधनों का इच्छानुसार प्रयोग करता है। स्पष्ट है कि जनतांत्रिक विकेन्द्रीकरण शासन में लोगों की सक्रिय साझेदारी के साथ शासन के निम्न स्तरों, स्थानीय संस्थाओं जैसे लघु प्राधिकरणों में पहल करना, स्वयं निर्णय लेने की क्षमता; अपने साधनों के अनुसार विकास, योजनायें बनाने एवं उनको क्रियान्वित करने की व्यवस्था होती है।

जनतांत्रिक विकेन्द्रीकरण इस धारणा पर आधारित है कि केन्द्रीय व प्रान्तीय स्तर के अतिरिक्त ग्रामीण स्तर पर भी लोगों को शासन से सम्बन्ध रखना चाहिए। यदि ऐसा नहीं किया जाता है तो लोगों में असहयोग, अनुत्तरदायित्व, उदासीनता की भावनायें घर कर जायेंगी जो जनतंत्र की सफलता के लिए बाधक होंगी। स्थानीय लोग स्थान विशेष की समस्याओं से भलीभांति परिचित होते हैं। वे उनके समाधान में रुचि एवं लगन का परिचय देते हैं। जनतांत्रिक विकेन्द्रीकरण स्थानीय जनता के स्थानीय हितों में अभिरुचि जाग्रत करता है। स्थानीय पहल करने को उभारता है।

जनतांत्रिक विकेन्द्रीकरण और लोक पंचायती राज दोनों एक दूसरे के पर्यायवाची बन गये हैं। द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात् एशिया और अफ्रीका के नवोदित राष्ट्रों ने लोकतंत्र की जड़ों को मजबूत बनाने एवं जन सामान्य को अपने नागरिक एवं राजनीतिक कार्यों में वास्तविक भागीदार बनने की दृष्टि से लोकतांत्रिक संरचना का अधिकतम विकेन्द्रीकरण करने का प्रयोग आरम्भ किया। इस प्रयोग को **'ग्रास रूट डेमोक्रैसी'**[1] के नाम से अभिहित किया गया है।

जनतांत्रिक विकेन्द्रीकरण में जनतंत्र और विकेन्द्रीकरण का क्षेत्र विस्तृत होता है। शासन के निम्न से निम्न इकाई में जनता की भागीदारी होती है। इन इकाइयोंकी स्वतंत्रता और स्वायत्तता का क्षेत्र निश्चित होता है तथा इनका एक संवैधानिक स्वरूप होता है। इनकी निर्वाचन प्रक्रिया भी अन्य सभी शासन इकाइयो की तरह वयस्क मताधिकार पर आधारित होती है। निर्वाचित सदस्य अपनी संस्था के प्रति उत्तरदायी होती है। इसी कारण वह सीधे जनता के प्रति उत्तरदायित्व रखते हैं। भारत में जनतांत्रिक विकेन्द्रीकरण की व्यवस्था संविधान में की गयी है। इन अनुच्छेद के माध्यम से संविधान राज्यों से यह अपेक्षा करता है

1. बेवस्टर की 'न्यू ट्वन्टीयथ सेन्चुरी डिक्सनरी ऑफ इंग्लिस लैंग्वेज' - इंडियन एडिशन 1960, पृष्ठ 275

- 'वह ग्राम पंचायतों के संगठन के लिए कदम उठायेगा और उन्हें ऐसी शक्तियों और प्राधिकार सत्ता से विभूषित करेगा कि वे स्वशासित इकाइयों के रूप में कार्य कर सकें।'[1]

इसे धरातल पर लोकतंत्र के नाम से अभिव्यक्त किया जाता है। धरातल पर लोकतंत्र से अभिप्राय यह है कि ऐसी राजनीतिक संरचना जिसमें लोकतंत्र केवल राष्ट्रीय एवं प्रान्तीय स्तरों तक ही सीमित न हो अपितु उसका विस्तार वास्तविक अर्थ में स्थानीय स्तरों तक भी होना चाहिए। इस प्रकार यह पद्धति लोकतंत्र में लोगों की सहभागिता को सही अर्थों में सुनिश्चित करने का माध्यम है। एक ऐसा लोकतंत्र जो केवल निर्वाचित प्रतिनिधियों तक सीमित नहीं होता और जो केवल राष्ट्रीय या प्रान्तीय स्तरों तक संकुचित नहीं होता है तथा जिसमें जनता की सहभागिता प्रत्येक तीसरे या पांचवें वर्ष होने वाले चुनाव के समय ही अभिव्यक्ति नहीं होती है अपितु उनकी सहभागिता उनके अपने दैनिक आचरण से सम्बन्धित सार्वजनिक कार्यों और अपने क्षेत्र, गाँव, कस्बा के दैनिक प्रबन्ध से अभिव्यक्त होती है। इसी प्रकार धरातल पर लोकतंत्र की अवधारणा अनिवार्यतः विकेन्द्रीकरण लोकतंत्र की अवधारणा है जिसमें सार्वजनिक कार्य के प्रबन्ध का आरम्भ और अन्त केवल उच्च स्तर पर ही नहीं होता है अपितु स्थानीय क्षेत्रों में सामान्य लोगों के विस्तृत जाल के माध्यम से होता है। सामान्य लोगों की इस संरचना को न्यूनाधिक रूप में लोगों की लघु लोकतंत्रीय सरकार, लोकतांत्रिक चिन्तन और ग्राम के वास्तविक केन्द्र के रूप में जाना जाता है। संक्षेप में धरातल पर लोकतंत्र की यह अवधारणा केवल लोकतंत्र का मुख दर्शन नहीं है अपितु किसी भी देश की धरती में लोकतंत्र की गहरायी से बीजारोपण का प्रयत्न है।[2]

लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण का वास्तविक अर्थ

लोकतंत्र उस व्यवस्था को कहते हैं जिसमें राज्य की प्रभुसत्ता लोक अर्थात् उस भू भाग के निवासियों में निहित होती है जिस व्यवस्था में देश के समस्त नागरिक शासन के कार्यों में किसी न किसी रूप में भाग लेते हैं और उनकी आवाज अनिवार्यतः कुछ न कुछ महत्व रखती हो। उसे सच्चा प्रजातंत्र कहा जा सकता है। जब राज्य की सत्ता केन्द्र में निहित होती है तो उसे केन्द्रीय सत्ता कहते हैं और जब यही सत्ता शासन के विभिन्न केन्द्रों में बांट दी जाय तो इसे विकेन्द्रित सत्ता कहते हैं।

सभी लोकतांत्रिक देशों में शासन के निर्णय यद्यपि जनता के चुने हुए प्रतिनिधियों द्वारा

---

1. भारतीय संविधान - नीति निर्देशक तत्व अध्याय तीन, अनुच्छेद - 40
2. आर. बी. जैन - पंचायती राज वाल्यूम फ्राम आई, नयी दिल्ली, पृष्ठ 11

लिये जाते हैं किन्तु उनका निष्पादन लोक सेवा द्वारा किया जाता है। शासन के कार्य संचालन का यह सैद्धान्तिक परिप्रेक्ष्य है किन्तु आधुनिक लोकतंत्रीय देशों में नौकरशाही की शक्तियों का इतना अनियंत्रित और असीमित विस्तार हो गया है कि लोकतांत्रिक रूप से चुने गये प्रतिनिधियों की भूमिका कभी-कभी गौण होती प्रतीत होती है। वस्तुतः लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण शासन की शक्तियों का नौकरशाही के विभिन्न स्तरों पर प्रत्यायोजन नहीं है। अपितु लोकतांत्रिक सत्ता का राष्ट्रीय स्तर से नीचे राज्य, जिला, विकास खण्ड और ग्राम स्तर पर विकेन्द्रीकरण द्वारा निर्णय करने की अधिकतम शक्ति जनता में निहित हो तभी सत्ता लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण हो सकता है।

इस परिप्रेक्ष्य में 1957 में केन्द्र सरकार द्वारा सामुदायिक विकास कार्यक्रम के क्रियान्वयन एवं मूल्यांकन हेतु नियुक्त बलवन्त राय मेहता समिति ने भी गहन चिन्तन किया। इस समिति का निष्कर्ष यही था कि 'वास्तविक प्रजातंत्र उस समय फलीभूत होगा जब प्रत्यके गांव में ग्राम सभायें एवं ग्राम पंचायतें स्थापित हो जायेगी और सामान्य जन वास्तविक स्वतंत्रता का अनुभव करेंगे।'[1] लोकतंत्र एक जीवन पद्धति है। राजनीति में इसके प्रयोग की अवधारणा में इसके विकेन्द्रीकरण का विचार भी अन्तर्निहित है। राजनीति में लोकतंत्र के प्रयोग का अभिप्राय केवल राज्य सत्ता में लोगों की भागीदारी का प्रयास है, अपितु सरकार के दैनिक काम-काज में भी सहभागी बनाना भी है। राजनीतिक प्रक्रिया के रूप में लोकतंत्र को परिभाषित करते समय राजनीतिक चिन्तकों ने यद्यपि भिन्न-भिन्न विचार व्यक्त किये हैं किन्तु उन सभी के विश्लेषण में लोकतंत्र में लोगों की अधिकतम सहभागिता का तत्व, सामान्य रूप से अभिव्यक्त हुआ है। प्रसिद्ध विद्वान जे. एस. मिल ने लिखा है कि - **'एक ऐसी सरकार जिसमें सभी लोगों की भागीदारी है, ही सामाजिक राज्य की समस्त आवश्यकताओं को पूर्ण कर सकती है।'**[2] लोगों की सहभागिता लोकतंत्र का हृदयस्थल व सार है। जिस व्यवस्था ने अपनी सरकार के संचालन में लोगों की सहभागिता जितनी अधिक, निरन्तर, सक्रिय, रचनात्मक और निकट की होगी वह व्यवस्था लोकतंत्र के राजनीतिक आदर्श के उतने ही समीप समझी जायेगी। 'लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण लोगों की यह सहभागिता प्राप्त करने का एक सशक्त उपाय है। इसका ध्येय शासन कार्यों में लोगों की अधिकतम और जीवन्त सहभागिता को सुनिश्चित करना होता है।'[3] यहाँ यह यह जिज्ञासा व्यक्त की जा सकती है कि लोकतंत्र की

---

1. रिपोर्ट ऑफ द टीम फॉर स्टडी ऑफ कम्युनिटी डेवलपमेन्ट एण्ड नेशनल एक्टेशन सर्विस, सामुदायिक विकास, सहभागिता, मंत्रालय भारत सरकार - 1957
2. उद्धत मास्टर्स ऑफ पोलिटिकल थाट लैन डब्लू. लेनीस्टर, वाल्यूम, 111
3. इकबाल नारायण डेमोक्रेटिक डिसेंट्रेलाइजेशन : द आइडिया, द इमेज एण्ड द रियल्टी, संकलित - आर. बी. जैन, पृष्ठ 11

अवधारणा में जब विकेन्द्रीकरण का विचार निहित है तो विकेन्द्रीकरण के आरम्भ में लोकतांत्रिक शब्द क्यों लगाया जाता है। विद्वानों ने मत व्यक्त किया है कि 'विकेन्द्रीकरण के पूर्व लोकतांत्रिक शब्द का प्रयोग निरर्थक नहीं है, वस्तुतः लोकतांत्रिक शब्द विकेन्द्रीकरण के उद्देश्य को अभिव्यक्त करता है जो सत्ता के विकेन्द्रीकरण में लोगों के व्यापक, अधिकतम, निकटतम सहयोग की आकांक्षा को अधिक स्पष्टता देता है।'[1] विकेन्द्रीकरण के पूर्व लोकतांत्रिक शब्द के उपयोग करने से इसका अर्थ प्रशासनिक विकेन्द्रीकरण की अवधारणा प्रशासन में कुशलता लाने के विचार से अभिप्रेरित है। प्रशासन में जब शक्तियों का विकेन्द्रीकरण किया जाता है तो उसका उद्देश्य प्रशासन के निचले स्तरों पर निष्पत्ति और प्रशासनिक कर्मिकों की गति वृद्धि के माध्यम से ही उनकी कुशलता बढ़ाने से होता है जब कि लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण का उद्देश्य शासन के कार्यों में सरकार के प्रत्येक स्तर राष्ट्रीय, प्रान्तीय और विशेषतः स्थानीय स्तर पर जनता की अधिकतम सहभागिता प्राप्त करना होता है। प्रशासनिक विकेन्द्रीकरण के प्रशासन के निचले स्तरों पर किसी योजना को अधिक स्वतंत्रतापूर्वक कार्यान्वित करने का अधिकार निहित देखा जा सकता है। इसमें योजना उच्च स्तर के लोगों के द्वारा बनायी जाती है। उसकी क्रियान्वित की प्रक्रिया के नीचे के स्तर की स्वतं त्रता अभीष्ट हो ती है ।

जब कि लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण को स्थानीय स्तर पर लोगों का अपने कल्याण की योजनाएं बनाने व पहल करने तथा स्वायत्ततापूर्वक उन्हें कार्यान्वित करने के अधिकार के रूप में देखा जा सकता है। इस प्रकार लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण को स्थानीय स्तर पर प्रशासनिक विकेन्द्रीकरण की तुलना में अधिक व्यापक है और दोनों में अन्तर उनके उद्देश्य को लेकर किया जा सकता है। लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण जहाँ लोगों की सहभागिता पर बल देता है वहीं प्रशासनिक विकेन्द्रीकरण का उद्देश्य कुशलता को बढ़ावा देना होता है।

लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण के विचार को प्रत्यायोजन या विसकेन्द्रण के समानार्थक समझकर भ्रमित नहीं होना चाहिए। यद्यपि उन तीनों शब्दों में कुछ समान गुण हो सकते हैं। फिर भी ये समानार्थक नहीं है। प्रत्यायोजन या विसकेन्द्रण में सत्ता के उच्च अधिकारी द्वारा अधीनस्थ अधिकारी को हस्तान्तरण होता है जो उस सत्ता के उपयोग के लिए इच्छा के अनुरूप स्वतंत्र नहीं होना चाहिए अपितु उसका निर्वाह उच्च अधिकारी के निर्देशों और मोद या प्रसाद की सीमाओं के अन्तर्गत करना होता है जब कि लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण लोकतांत्रिक सिद्धान्त का विस्तार है। इसमें स्थानीय स्तर पर लोगों का अपने कार्यों के बिना

---

1. उपर्युक्त।

किसी उच्च हस्तक्षेप के प्रबन्ध का अधिकार अन्तर्निहित देखा जा सकता है। वहां प्रत्यायोजन उच्च अधिकारी द्वारा अधीनस्थ अधिकारी को प्रदत्त सुविधा मात्र है। **'लोकतान्त्रिक विकेन्द्रीकरण एक ऐसा सिद्धान्त है जो स्थानीय लोगों को मौलिक सत्ता के उपभोग का अधिकार प्रदान करता है। जब कि प्रशासनिक प्रत्यायोजन या विसकेन्द्रण, किसी भी प्रशासनिक संगठन में प्रशासनिक कुशलता प्राप्त करने का उपागम मात्र है जिसमें अधीनस्थ अधिकारी द्वारा ऐसी सत्ता का उपभोग किया जाता है जो उसे उच्च अधिकारी द्वारा दी गयी है।'**[1]

लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण की अवधारणा पूर्व सोवितय संघ और चीन जैसे साम्यवादी देशों में प्रचलित लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण की प्रक्रिया से भिन्न है। इन साम्यवादी देशों में लोकतंत्र और केन्द्रीय नेतृत्व की शक्तियों के विकेन्द्रीकरण का समामेलन किया गया है। इन देशों की जनता जनतांत्रिक तरीके से प्राथमिक तौर पर अपने प्रतिनिधियों का चयन करती है और अपने शासन की नीति सम्बन्धी व्यापक मुद्दों का चयन, किन्तु इन दोनों देशों की जनता जब प्राथमिक तौर पर व्यापक नीतियों का निर्धारण कर अपने प्रतिनिधियों को चुन देती है तो इस बिन्दु पर उनकी लोकतांत्रिक स्वतंत्रता समाप्त प्राय हो जाती है। इसके पश्चात् निर्वाचित नेतृत्व, जनता द्वारा स्वीकृत व्यापक नीतियों को कार्यान्वित करने हेतु नीति-रीति निर्धारित करता है और आवश्यक आदेश देता है। केन्द्रीय नेतृत्व के आदेशों का कोई विरोध, आलोचना या उनके प्रति कोई संकोच या प्रतिरोध व्यक्त नहीं किया जा सकता है। इस स्तर पर जनता भी अपने प्रतिनिधियों द्वारा निर्धारित रीति-नीति अथवा कार्य प्रणाली के प्रति कोई विरोध करने में सक्षम नहीं है।

जनता के लोकतांत्रिक अधिकार प्राथमिक स्तर पर नीतियों के निर्धारण तक सीमित माने जाते हैं और एक बार स्वीकृत नीतियों के निष्पादन पर केन्द्रीय नेतृत्व का पूर्ण अधिकार और नियंत्रण स्थापित हो जाता है। इस तरह इन साम्यवादी देशों में लोकतंत्र नीतियों के निर्धारण की प्राथमिक प्रक्रिया तक सीमित हैं और तत्पश्चात् की समस्त प्रक्रियाओं पर केन्द्रीय नेतृत्व का केन्द्रीकरण होता है। यद्यपि इस स्थिति में सोवियत संघ के विघटन के पश्चात् परिवर्तन आ गया है किन्तु चीन में स्थिति यथावत है।

लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण में जहाँ शक्तियों का उच्च स्तर से स्थानीय स्तर तक विकेन्द्रीकरण होता है वहाँ लोकतांत्रिक केन्द्रीकरण में शक्तियों का नीचे का लोकतांत्रिक स्तरों से उच्च नेतृत्व की ओर केन्द्रीकरण होता है। विद्वानों ने इस प्रक्रिया को लोकतांत्रिक और लोकप्रिय स्तरों से शक्तियों का केन्द्रीय नेतृत्व के प्रति पूर्ण समर्पण भी कहा है। लोकतांत्रिक

---

1. उपर्युक्त, पृष्ठ 12-13

विकेन्द्रीकरण शासन के उच्च स्तर द्वारा जो शक्तियाँ शासन के नीचे के स्तरों को हस्तान्तरित की जाती हैं उसमें उच्च स्तर पर लोकतांत्रिक भावना विद्यमान रहती है जो नीचे के स्तरों को सत्ता और स्वायत्तता दोनों प्रदान करती है। इस तरह इस प्रक्रिया से सम्पूर्ण लोकतांत्रिक व्यवस्था में प्रत्येक स्तर पर लोकतंत्र की स्थापना का प्रयत्न होता है जब कि लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण में अधिनायकवादी नेतृत्व को लोकतांत्रिक आधार प्रदान करने का प्रयत्न किया जाता है। निष्कर्षतः यह व्यक्त किया जा सकता है कि लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण में जहाँ लोकतंत्र में लोगों की सहभागिता तथा सत्तावाद दोनों पर बल देता है यद्यपि वह बल सत्तावाद पर अधिक होता है।

लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण की विशेषतायें

लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण शब्द शासन के उच्च स्तर से निम्न स्तर की ओर तीन दशाओं में स्वायत्ततापूर्ण हस्तान्तरण का उद्घोष करता है -

(1) राजनीतिक दृष्टि से यह निर्णय करना कि शासन की नीति और कार्यक्रम क्या होंगे?

(2) निर्धारित दायित्वों को पूर्ण करने के लिए आर्थिक संसाधनों के प्रबन्ध का अधिकार हो। तथा

(3) प्रशासनिक दृष्टि से बिना किसी हस्तक्षेप के अपने कार्यों के निर्देशन, पर्यवेक्षण तथा व्यवहारिक आयोजन का अधिकार।

इस प्रकार लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण एक ऐसी धारणा हैं जो शासन के कार्यों और निर्णय में लोगों की भागीदारी का विस्तार करती है। यह धारणा उच्च स्तर से नीचे के स्तर के जनप्रतिनिधियों की सत्ता का, स्वायत्तता सहित, विकेन्द्रीकरण करती है। सत्ता का यह विकेन्द्रीकरण पूर्व इंगित तीन दिशाओं राजनीतिक निर्णय, निर्माण, वित्तीय नियंत्रण और प्रशासकीय प्रबन्ध से होता है।'[1]

प्रशासकीय विकेन्द्रीकरण की विशेषताओं को निम्नांकित प्रकार से व्यक्त किया जा सकता है -

(1) लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण द्वारा नागरिकों को स्थानीय सरकार के प्रबन्ध में अधिकतम और व्यापक सहभागिता सुनिश्चित करता है।

---

1. पाल मेयर - एडमिनिस्ट्रेटिव आर्गनाइजेशन उद्धत, पृष्ठ 16

(2) लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण की प्रक्रिया द्वारा शक्तियों को उच्च स्तर से निम्न स्तर की ओर हस्तांतरित किया जा सकता है।

(3) लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण की प्रक्रिया के तहत सत्ता का विकेन्द्रीकरण किया जाता है तथा इस प्रकार विकेन्द्रीकरण होता है कि जिस तंत्र द्वारा शक्तियों का प्रयोग किया जाय वह जनता द्वारा निर्वाचित हो। यदि वह निर्वाचित तंत्र नहीं है तो विकेन्द्रीकरण तो होगा किन्तु लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण नहीं कहा जा सकता है।

(4) विकेन्द्रीकरण की प्रक्रिया के तहत जो सत्ता निम्न स्तरीय इकाइयों को प्राप्त होती है उसके प्रयोग हेतु नीति निर्माण, कार्यक्रमों के निर्धारण और उनके निष्पादन की रीति-नीति के विनिश्चय तथा आर्थिक संसाधनों के प्रबन्ध में पर्याप्त स्वायत्तता मिलती है।

(5) लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण का यह सिद्धान्त एक सीमा तक निम्न स्तरीय संस्थाओं के दैनन्दिनी कार्यकरण में राज्य सरकार अथवा केन्द्र सरकार के हस्तान्तरण का विरोध करता है। सैद्धान्तिक तौर पर तो यह माना जाता है कि लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण में निम्न स्तरीय संस्थाओं पर उच्च स्तरीय संस्थाओं का नियंत्रण नहीं होना चाहिए। किन्तु यह एक अतिवादी और विशुद्ध सैद्धान्तिक दृष्टिकोण है। व्यवहार में स्थानीय संस्थाओं को निश्चित क्षेत्र में स्वायत्तता प्रदान की जाती है। इस स्वायत्तता के क्षेत्र में अनावश्यक अवठित अथवा अतिरिक्तहस्तक्षेप नहीं किया जाना चाहिए। अन्यथा यह हस्तक्षेप लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण के मूल उद्देश्य पर ही आघात करता है।

पंचायती राज के मौलिक सिद्धान्त

पंचायती राज के तीन मौलिक सिद्धान्त पाये गये हैं-

(1) लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण हेतु प्रस्तावित पंचायती राज की योजना ग्राम से लेकर जिला स्तर तक तीन स्तरीय होनी चाहिए। ये संस्थायें जीवन्त रूप से एक दूसरे से सम्बन्धित होनी चाहिए।

(2) इन संस्थाओं को शक्ति और दायित्वों का वास्तविक हस्तान्तरण होना चाहिए।

(3) इन संस्थाओं को योग्य बनाने के लिए तथा उत्तरदायित्वों के निर्वाह को सरल बनाने के लिए पर्याप्त वित्तीय स्रोत हस्तान्तरित किये जाने चाहिए।

(4) इन संस्थाओं के समस्त विकास कार्यक्रमों के निष्पादन का दायित्व दिया जाय।

पंचायती राज की इस योजना को विकेन्द्रीकरण की दृष्टि से राजस्थान ने सबसे पहले अपनाया। इस योजना का उद्घाटन देश के प्रथम प्रधानमंत्री श्री जवाहरलाल नेहरू ने राजस्थान के नागौर नगर में 2 अक्टूबर, 1959 को एक विशाल जन समूह के समक्ष दीप जलाकर किया। उत्तर प्रदेश ने इस योजना को अपने प्रान्त में 1960-61 को स्थापित किया और 1963 तक अधिकांश राज्यों द्वारा इस योजना को अपना लिया गया।

मेहता समिति द्वारा सुझाया गया ढांचा मूल रूप से ग्रामीण क्षेत्रों के नागरिकों की सरकारी विकास कार्यों में सहभागिता को सुनिश्चित करने की दृष्टि से प्रस्तुत किया गया था। बलवन्त राय मेहता की उक्त योजना को पंचायती राज की त्रिस्तरीय ढांचे के रूप में जाना जाता है। ये तीन स्तर हैं-

(1) ग्राम स्तर पर ग्राम पंचायत।

(2) खण्ड स्तर पर पंचायत समिति (क्षेत्र पंचायत)।

(3) जिला स्तर पर जिला पंचायत (जिला परिषद)।

लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण को साकार करने वाली मेहता समिति द्वारा सुझायी गयी पंचायती राज की यह त्रिस्तरीय योजना प्रायः कुछ अपवादों को छोड़कर देश के अधिकांश राज्यों में अपना ली गयी। तीनों स्तरों की संस्थाओं में अन्तर संस्थात्मक आन्तरिक सम्बन्ध स्थापित किये जाने के सुझाव को अधिकांश राज्यों ने पंचायती राज को लागू करते समय ध्यान में रखा था। बलवन्तराय मेहता समिति ने लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण की इस त्रिस्तरीय योजना के कार्य क्षेत्र, शक्तियों, वित्त, कर्मचारी वर्ग तथा उन पर नियंत्रण इत्यादि का समूचा विवरण अपने प्रतिवेदन में सुझाया था जिसके सान्दर्भिक पक्षों का संक्षिप्त विवरण सम्बन्धित अध्यायों में आवश्यकतानुसार सम्मिलित किया जायेगा।

इस त्रिस्तरीय योजना में सबसे अधिक प्रभावकारी खण्ड स्तरीय निकाय पंचायत समिति को रखा गया है। बलवन्त राय मेहता समिति से पूर्व राजकीय विकेन्द्रीकरण आयोग 1907-09 द्वारा भी तहसील स्तर पर इन सभी प्रकार के एक निकाय के गठन का सुझाव दिया गया था। भारत में जनतांत्रिक विकेन्द्रीकरण या पंचायती राज की प्रमुख संस्थायें निम्न हैं-

(1) ग्राम सभा - लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण के व्यवहारिक पक्ष का यह विश्लेषण अधूरा रह जायेगा यदि 73वें संविधान संशोधन के पश्चात् संविधान में किये गये ग्राम सभा के प्रावधानों का उल्लेख न करें। इस संविदा संशोधन के माध्यम से ग्राम सभा को सावेधानिक स्तर पर प्रदान करते हुए धरातल पर लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण की प्रत्यक्षतम इकाई के रूप

में मान्यता प्रदान की गयी है। ग्राम सभा पंचायती राज की पहली संस्था है। पंचायत क्षेत्र में रहने वाले समस्त नागरिक इस सभा के सदस्य होते हैं। ग्राम सभा सभी राज्यों की पंचायतों में स्थापित नहीं की गयी है जहाँ ग्राम सभाओं की स्थापना हुई है वहाँ वर्ष में ग्राम सभा की दो बैठकें आयोजित की जाती हैं कि वह ग्राम स्तर पर निर्वाचित इकाई ग्राम पंचायत की वर्ष भर की कार्य सूची (एजेन्डा) का निर्धारण करें। बीच में इसकी उपलब्धियों का सामयिक आकलन करते हुए अन्त में उनकी समीक्षा करें। इस तरह ग्राम सभा स्तर या धरातल पर प्रत्यक्ष लोकतंत्र का ऐसा उपकरण है जिससे निर्वाचित निकाय एवं उसके क्रिया-कलापों पर सीधा निगरानी रखने की अपेक्षा की जाती है।

व्यवहार में अनुभूत विकृतियाँ

लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण की अवधारणा पर अपना महत्वपूर्ण प्रतिवेदन प्रस्तुत करते समय स्वयं बलवन्तराय मेहता समिति ने इसकी अन्तर्निहित विसंगतियों, सीमाओं और सफलताओं के सम्भावित खतरों से अवगत थी, समिति की मान्यता थी कि प्रजातांत्रिक विकेन्द्रीकरण की प्रस्तावित योजना को कार्यान्वित कर दिये जाने से प्रशासन की कुशलता में ह्रास हो जायेगा। यद्यपि उनकी मान्यता यह भी थी कि प्रशासनिक कुशलता की यह अवनति, इन संस्थाओं के संस्थागत और संगठनात्मक विकृतियों को दूर कर दिये जाने से समाप्त हो जायेगी। समिति ने इस दिशा में दूसरा भय इन संस्थाओं में भ्रष्टाचार व्याप्त हो जाने के विषय में व्यक्त किया। समिति ने लोगों की अज्ञानता, अधिकारियों की चालाकी और समाज में विकसित होने वाले विशिष्ट अधिकार सम्पन्न समूहों को सम्भावित भ्रष्टाचार के कारकों के रूप में रेखांकित किया था। समिति ने यह भी सम्भावना व्यक्त की थी कि **'लोकतांत्रिक संस्थाओं के चुनाव में समाज और ग्रामीण क्षेत्रों में गुटबाजी को प्रोत्साहन मिलेगा।'**[1]

इन तथ्यों से स्पष्ट हो जाता है कि बलवन्त राय मेहता समिति अपने प्रतिवेदन में प्रस्तावित लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण की क्रियान्वयन की प्रक्रिया के मार्ग में आने वाली कठिनाइयों और उनकी सीमाओं से भलीभाँति अवगत थीं। हमारे राज्यों में मेहता समिति द्वारा प्रस्तावित लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण की पंचायती राज की जो योजना अपने यहां कार्यान्वित की है उनके व्यवहारिक अनुभव से यह सिद्ध हो गया है कि मेहता समिति ने अपने प्रतिवेदन में जिन व्यक्तियों का अनुमान व आंकलन किया था वे सही पायी गयी। वे बिन्दुवार इस

---

1. रिपोर्ट ऑफ दि टीम फाम दी स्टडी ऑफ कम्यूनिटी डेवलपमेन्ट एण्ड नेशनल एक्सटेंशन सर्विस, उद्धत - आर. बी. जैन, पृष्ठ 19-20

प्रकार व्यक्त की जा सकती हैं-

(1) मेहता समिति ने अपने प्रतिवेदन में यह मत व्यक्त किया था कि लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण की योजना कार्यान्वित कर दिये जाने से प्रशासन की कुशलता में ह्रास होगा। वास्तव में देश भर में पंचायती राज संस्थायें प्रशासनिक अकुशलता की प्रतीक बन गयी हैं। ये संस्थायें जनतांत्रिक दबावों के कारण प्राप्त प्रशासनिक कुशलता को तिलांजलि दे बैठी हैं। लोकतांत्रिक रूप से चुने हुए प्रतिनिधि प्रशासनिक कुशलता के किसी मापदण्ड या मर्यादा को स्वीकार करने के लिए तैयार ही नहीं होते हैं।

(2) इन संस्थाओं में व्यापक भ्रष्टाचार फैल गया है। लोकतांत्रिक रूप से चुने हुए प्रतिनिधियों ने नौकरशाहो के साथ ऐसा अनुपम सामंजस्य बिठाया है कि इन संस्थाओं के ये दोनों घटक मिलकर बहुधा भ्रष्टाचार करने और उससे बचने के उपाय ढूँढते रहते हैं।

(3) मेहता समिति द्वारा प्रतिवेदन में किये गये पूर्वानुमान के अनुसार ही लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण की पंचायती राज की योजना कार्यान्वित होने से समय-समय पर होने वाले पंचायती राज चुनावों से ग्रामीण क्षेत्र में सौहार्द्र का वातावरण नष्ट हो गया है और ग्रामीण क्षेत्रों में गुटबाजी का माहौल बन गया है।

(4) पंचायती राज संस्थाओं को उत्तरदायित्व का जो आत्मबोध होना चाहिए था वह भी नहीं हो पाया है।

(5) ग्रामीण क्षेत्रों में सहकारिता के माध्यम से स्वावलम्बन का सपना भी इसलिए अधूरा रह गया कि सहकारिता के आन्दोलन को जन-जन तक पहुँचाने का कार्य पंचायती राज संस्थाओं को दे दिया गया।

ग्रामीण क्षेत्रों महिला सरपंच प्रधान व जिला प्रमुख चुने जाने पर एक नई अनौपचारिक पद सोपान की व्यवस्था स्वतः विकसित हो गयी है जिसमें उन महिलाओं के प्रति अपने परिचय पत्र पर सरपंच पति, प्रधान पति व जिला प्रमुख पति आदि लिखवाकर पारिवारिक सौहार्द्र को बनाये रखने के लिए देश भर में महिला प्रतिनिधि/पदाधिकारी ऐसी स्थिति से जूझती हुई कार्य कर रही हैं।

पंचायती राज की संस्थाओं को सृजित करने के मूल में प्रमुख उद्देश्य लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण की अवधारणा को साकार रूप देना था किन्तु उपर्युक्त अनुभूत कमियों या

---

1. अरगल आर - म्यूनिसिपल गवर्नमेन्ट इन इण्डिया, पृष्ठ 34

विकृतियों के कारण यह सपना पूरी तरह से मूर्तरूप नहीं ले पाया है। अतः आवश्यकता यह है कि इन विकृतियों का यथासम्भव शीघ्र निराकरण किया जाय जिससे देश की जनता गाँधी जी के ग्राम स्वराज और लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण के सपनों को पूर्णतः साकार होता देख सके। पंचायती राज की अब तक की कहानी सफलता की अपेक्षा असफलता ही अधिक है। लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण के व्यवहार का यह पक्ष भविष्य के लिए सर्वाधिक चिन्तन की चेतावनी देता है।

(ख) स्थानीय स्वायत्त शासन की व्यवहारिक स्थिति

यह कहा जा सकता है कि भारत में स्थानीय शासन की जड़ें प्राचीन काल से पायी जाती हैं। फिर भी नगरीय एवं ग्रामीण दोनों ही प्रकार कीं स्थानीय संस्थाओं का व्यवस्थित (अध्ययन) आरम्भ 19वीं शताब्दी से ही माना जाता है। इन संस्थाओं के विकास के बीज विद्वानों ने मानव मन की प्रकृति में माने हैं। स्थानीय सरकार को मानव की मनोवैज्ञानिक और व्यवहारिक आवश्यकता के रूप में रेखांकित किया जा सकता है। मानव की सदैव यह इच्छा रही है जो भी सरकार हो वह उसके स्वयं के द्वारा शासित और अच्छी सरकार होनी चाहिए। मानव प्रकृति से स्वकेन्द्रित होता है वह कभी यह पसन्द नहीं करता है कि उसके सार्वजनिक मामलों का निर्णय कोई और करे। मानव मन की यही इच्छा अतीत काल से स्थानीय संस्थाओं के विकास का अन्तर्निहित दर्शन रही है।

पंचायतें जिन्हें ग्रामीण स्थानीय शासन की सबसे लोकप्रिय इकाई माना ज़ाता है, बहुत पुरानी संस्थायें हैं जो अतीत में अपने आप में बहुत समर्थ इकाइयाँ हुआ करती थीं। प्राचीन काल में इसी पंचायत व्यवस्था के कारण प्रत्येक ग्रामीण समाज अपने आप में एक छोटा सा राज्य था और इसने भारत की जनता को एकता के सूत्र में बहुत अच्छी तरह आबद्ध कर रखा था।

भारतीय स्थानीय शासन के इतिहास को अध्ययन की सुविधा हेतु मुख्य रूप से निम्नलिखित तीन भागों में विभाजित किया जा सकता है-

(1) प्राचीन कालीन स्वशासन का विकास (वैदिक युग से 1647 तक) (मध्यकालीन स्थानीय स्वशासन)

(2) ब्रिटिश कालीन स्थानीय स्वशासन का विकास (1667 से 1947 तक)

(3) स्वतंत्र भारत में (स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद) स्थानीय स्वशासन का विकास (1947 से अब तक)

भारतवर्ष में प्राचीन काल से ही स्थानीय संस्थायें चली आ रही हैं। शोधकर्ताओं के अध्ययन से यह सिद्ध हुआ है कि प्राचीन काल में पंचायतें स्थानीय स्वशासन संस्थाओं एक रूप में कार्यरत थीं। इन्हें ग्रामीण सरकारें कहा जाता था। प्रत्येक गांव की अपनी पृथक पंचायत होती थी जो पूरे गांव का शासन चलाती थी। पंचायतें, उद्योग, व्यापार, प्रशासन जिसमें नागरिक शिक्षा सम्मिलित रहती थी तथा धर्म से सम्बन्धित क्रिया-कलापों का नियमन करती थी। पंचायतों का ग्रामीण जीवन में विभिन्न क्षेत्रों पर नियंत्रण एवं अधिकार था। प्राचीनकालीन में ग्राम पंचायतों के बारे में स्व. प्रधानमंत्री श्री जवाहर लाल नेहरू ने कहा कि - **'इन संस्थाओं के पास विशाल शक्तियाँ थीं। इनके अधिकार न्यायिक एवं प्रशासनिक दोनों प्रकार के थे। इनके सदस्यों को राजाओं के यहाँ बहुत सम्मान मिलता था। पंचायतों के द्वारा ही पैदा की गयी वस्तु पर कर लगाया जाता था और उसमें से पंचायतें ही केन्द्र सरकार को धन देती थी। भूमि का वितरण भी पंचायतों द्वारा किया जाता था। इस प्रकार गांव ही शासन तंत्र की धुरी थे।' चार्ल्स मेटकाफ ने सन् 1830 में ग्रामीण प्रशासन के सन्दर्भ में लिखा था- 'जहाँ कुछ भी नहीं टिकता वहाँ वे टिके रहते हैं। राजवंश एक के पश्चात् एक नष्ट होते हैं, एक क्रान्ति के बाद दूसरी क्रान्ति आती है। हिन्दू, पठान, मुगल, मराठा, सिख और अंग्रेज बारी-बारी से अपना शासन स्थापित करते हैं किन्तु ग्राम समाज ज्यों का त्यों बने रहते हैं। संकटकाल में वह स्वयं को शस्त्र सज्जित तथा अपनी-अपनी किलेबन्दी करते थे। शत्रु की सेना देश में होकर गुजर जाती थी। ग्राम समाज अपनी सीमा में अपने पशुओं को एकत्रित कर लेते थे और शत्रु को बिना उत्तेजित किये निकल जाने देते थे। यदि स्वयं उन्हें भी लूट और विनाश का शिकार बनाया जाता था तो वे अपने विरुद्ध प्रयोग किये गये बल का प्रतिरोध करने में असमर्थ होते थे तो वे भाग कर दूर स्थित शुभचिन्तक गांवों में चले जाते थे। जब तूफान गुजर जाता था तब वह पुनः आकर अपने गांव में बस जाते थे और अपने कामकाज में लग जाते थे। यदि देश कई वर्षों तक लूटपाट हत्याकाण्ड का शिकार बना रहता था जिसके कारण गांव में रहना सम्भव नहीं होता था तो भी जब कभी शान्तिपूर्ण शासन की शक्ति की पुनः स्थापित होती थी। वे बिखरे हुए ग्रामवासी लौटकर पुनः अपने-अपने स्थानों पर आ जाते थे। यह भी हो सकता था कि इस बीच एक पीढ़ी बीत जाये, तो दूसरी पीढ़ी लौटकर गाँव आ जायेगी। पुत्र अपने-अपने पिता का स्थान का ले लेंगे। गाँव पुनः उसी स्थान पर बस जायेगा। मकान जहां थे फिर वहीं बस जायेंगे और उनके वंशज जो गांव से भाग गये थे। पुनः उन्हीं खेतों पर अधिकार कर लेंगे। किन्तु वे तुच्छ सी घटनाओं से डरकर नहीं भाग खड़े होते किन्तु वे शान्ति और उपद्रवों के बीच भी अपने-अपने स्थानों पर डटकर खड़े रहते थे और लूटमार उत्पीड़न का सफलतापूर्वक प्रतिरोध करने के लिए पर्याप्त शक्ति जुटा लेते थे। मेरी धारणा हैं उन ग्रामीण समाजों की जिनमें प्रत्येक अपने आप में एक छोटा सा राज्य था। यह एकता की वह चीज थी जिसमें भारत की जनता को उन सब क्रान्तियों और परिवर्तनों के बीच**

सुरक्षित रखा जिसका समय-समय पर उन्हें शिकार होना पड़ा। उनकी यह एकता बहुत अंशों में उनके प्रमुख, उनकी स्वतंत्रता और आत्मनिर्भरता का कारण रही है।'[1] कहा जा सकता है कि प्राचीन काल में स्थानीय स्वशासन की संस्थाओं का महत्वपूर्ण स्थान रहा है।

स्पष्ट होता है कि प्राचीन भारत में स्थानीय प्रशासन के विद्यमान होने का उल्लेख मिलता है। मैगस्थनीज ने ईसवी पूर्व तीसरी शताब्दी के भारत में एक नगर के शासन का अपने विवरण में उल्लेख किया है। उस विवरण से पता चलता है कि **प्राचीन काल के नगरीय शासन को 5-5 सदस्यों की 6 समितियों में विभाजित किया हुआ था। प्रथम समिति के सदस्य प्राचीन औद्योगिक हस्तकलाओं से सम्बन्धित बातों के लिए उत्तरदायी होते थे। दूसरी समिति के सदस्यों को अपने क्षेत्रों में आने वाले विदेशियों के स्वागत सत्कार का कार्य दिया हुआ था। तीसरी समिति के सदस्य जन्म एवं मृत्यु के अभिलेखों को रखने के लिए उत्तरदायी थे। चौथी समिति व्यापार और वाणिज्य का निरीक्षण करती थी। इस समिति के लोग उचित बाट और माप सुनिश्चित करते थे। पांचवीं समिति निर्मित वस्तु का निरीक्षण करती थी और छठी समिति बिक्री की हुई वस्तु के मूल्य का दसवां भाग बिक्री कर के रूप में वसूल करती थी।'**[2]

इससे यह जानकारी प्राप्त होती है कि प्राचीन भारत में स्थानीय प्रशासन वर्तमान युग की तरह ही ग्रामीण एवं नगरीय शासन में विभाजित हुआ करता था। दोनों ही तरह की स्थानीय प्रशासनिक व्यवस्था पृथक्-पृथक् रूप से संचालित की जाती थी। वैदिक युग में जब नगरों का कोई विशेष स्थान नहीं था। ग्रामीण शासन अधिक महत्वपूर्ण माना जाता था। गांव की पंचायतें जो गांव के लोगों द्वारा संगठित होती थी। प्रशासकीय और न्यायिक कार्यों का निष्पादन करती थी। 'मनु संहिता' में भी राजा और गांव के बीच सम्बन्धों की चर्चा मिलती है और कौटिल्य के अर्थशास्त्र से यह प्रमाणित होता है कि राज्य ग्रामीण जीवन में न्यूनतम हस्तक्षेप करता था। मौर्य काल में शासन की सुविधा की दृष्टि से प्रान्तों को निम्नांकित प्रकार से विभाजित किये हुए था-

(1) जनपद,

(2) स्थानिक,

(3) द्रोण मुख,

(4) स्वार्वटिक,

---

1. जान मूरे - इलीफन्स वेस हिस्टरी ऑफ इण्डिया (लन्दन 1905), पृष्ठ 08
2. द इम्पीरियल गजेटियर ऑफ इण्डिया, बाल्यूम चतुर्थ, आक्सफोर्ड प्रेस 1909, पृष्ठ 282 पर उद्धत।

(5) संग्राम,

(6) ग्राम।

जनपद तथा जिले व मुखिया स्थानिक कहलाता था। ग्राम का अधिकारी ग्रामिक कहलाता था। पांच या दस ग्रामों का अधिकारी गोप कहलाता था।

मौर्य काल में चन्द्र गुप्त मौर्य ने स्थानीय स्वायत्त शासन प्रणाली प्रचलित कर शासन के विकेन्द्रीकरण की नीति अपनायी थी। इस काल में नगर का सबसे बड़ा पदाधिकारी नागरिक कहलाता था। यह नागरिक, गोथ और स्थानिकों की सहायता से नगर का प्रशासन चलाता था। मौर्यकाल के पश्चात् गुप्त युग में भी स्थानीय शासन की रूपरेखा कौटिल्य जैसी ही प्रचलित रही है। इसके पश्चात् राजपूतों के काल में ग्राम पंचायतों का महत्व कुछ कम हो गया। राजपूतकालीन सामन्त व केवल स्थानीय शासन को ही महत्व कम देते थे। अपितु वे केन्द्रीय शासन के नियंत्रण से मुक्त होने का प्रयत्न भी करते रहते थे।

मुगल काल में भी ग्राम स्थानीय स्वशासन के सबसे महत्वपूर्ण निकाय थे। प्रत्येक मुगल प्रान्त अनेक जिलों में विभक्त थे। जिले के नीचे परगना शासन इकाई के रूप में कार्य करते थे। परगनों को पुनः गांवों में बांटा गया था। गांव का प्रबन्ध पंचायतें करती थीं। पंचायतें मुख्यतः गाँवों में सफाई, सुरक्षा, शिक्षा, सिंचाई, विवादों का फैसला आदि कार्य करती थीं। गांव में तीन सर्वाधिक महत्वपूर्ण अधिकारी होते थे।

(1) मुकादम,

(2) पटवारी,

(3) चौधरी।

मुकादम गांव की देखभाल का काम करता था। पटवारी लगान बसूल करता था और चौधरी गांव के मुकदमों का निपटारा करता था। गांव की सुरक्षा हेतु एक चौकीदार होता था। गांव की सुरक्षा का कार्य चौकीदार के सुपुर्द था। इस काल में नगरों का प्रशासन एक अधिकारी के सुपुर्द था जिसे कोतवाल कहते थे। दंड व्यवस्था पुलिस तथा वित्तीय मामलों में उसकी सत्ता सर्वोपरि होती थी। कोतवाल जनता के जानमाल की हिफाजत करता था। दंगों को दबाता था। अपराधों का पता लगाता था। सामाजिक कुरीतियों को मिटाने की कोशिश करता था। लावारिस सम्पत्ति की उचित व्यवस्था करता था। उसकी सहायता के लिए उचित कर्मचारी भी होते थे। इस काल की स्थानीय प्रशासन के विषय में अबुज फजल कृत आइने

अकबरी में विवरण इस प्रकार मिलता है-

'इस पद के लिए उपयुक्त व्यक्ति को ओजस्वी, अनुभवी, क्रियाशील, विचारवान, धैर्यवान, चतुर और दयालु होना चाहिए। उसकी सजगता तथा रात्रिकालीन पहरेदारी के फलस्वरूप नागरिकगण सुरक्षाजनित शान्ति का उपयोग करें और दुरात्मा लोग अनस्तित्व के कीचड़ में पड़े रहें। उसे मकानों तथा बहुशः प्रयुक्त होने वाले मार्गों की पंजिका रखनी चाहिए और नागरिकों को पारस्परिक सहायता के लिए प्रतिज्ञाबद्ध करना चाहिए तथा उन्हें इस प्रकार परस्पर बांध कर रखना चाहिए जिससे वे सुख-दुःख में सार्वजनिक रूप से सम्मिलित हो सकें। उसे चाहिए कि कुछ निवासियों को मिलाकर एक मोहल्ला तथा टोला बना लें और अपने अधीनस्थ कर्मचारियों में से चतुर व्यक्ति को उसके निरीक्षण के लिए नियुक्त कर दें और उससे प्रतिदिन वहाँ आने-जाने वालों की तथा वहाँ जो भी घटनायें घटें उनका एक मुद्रांकित प्रतिवेदन प्राप्त कर लिया करें कि वहाँ के किसी ऐसे अज्ञात निवासी को गुप्तचर नियुक्त करे जिसकी अन्य निवासियों से जान-पहचान न हो और उसके लिखित प्रतिवेदन को गुप्त रखे तथा उनकी सावधानीपूर्वक जांच करे। एक पृथक् सराय की स्थापना करे तथा अनजान आगन्तुकों को उसमें उतारे तथा विविध प्रकार के गुप्तचरों द्वारा उनके सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त करे। विभिन्न वर्गों के लोगों की आय और व्यय का सावधानीपूर्वक अवलोकन करे। उसकी बातचीत ऐसी मधुर होनी चाहिए कि उसकी जागरुकता उसके प्रशासन को गौरवान्वित करने लगे। शिल्पियों की प्रत्येक श्रेणी के लिए एक श्रेणीयुक्त नियुक्त करे और एक व्यक्ति को दलाल बनाये जिसकी देखरेख में क्रय-विक्रय का कार्य सम्पादित किया जाये। इनसे उसे प्रायः प्रतिवेदन प्राप्त करने रहना चाहिए। वीथियों (मोहल्लों) के खुले सार्वजनिक मार्गों का निरीक्षण करे उनके मुहानों पर अवरोधक खड़े करे और उन्हें गन्दा होने से बचाये। कुछ रात बीतने पर लोगों को नगर में प्रवेश करने तथा बाहर जाने से रोके। बेकार लोगों को किसी दस्तकारी में लगाये। उसे चाहिए कि शिकायतों को दूर करे और आम लोगों को दूसरों के मकानों में बलपूर्वक घुसने से रोकें। उसका कर्तव्य है कि चोरों तथा चोरी के माल का पता लगाये अथवा नुकसान के लिए स्वयं जिम्मेदार बने। उसे ऐसा आदेश जारी करना चाहिए कि कोई कर्मचारी हथियारों, हाथियों, घोड़ों, पशुओं, ऊँटों, भेड़ों, बकरियों तथा वाणिज्यिक द्रव्यों के अतिरिक्त अन्य किसी वस्तु पर कर अथवा शुल्क वसूल न करे। प्रत्येक सूबे में एक निश्चित स्थान पर हल्का-सा आयात कर वसूल किया जाना चाहिए। पुराने सिक्कों को गलाने के लिए दे दिया जाये और उन्हें धातु के रूप में कोषागार में लौटा दिया जाये। वह राज्य में प्रचलित सोने और चाँदी के सिक्कों के मूल्य में कोई परिवर्तन न होने दे और प्रचलन में घिसाव (क्षय) के कारण उनमें जो कमी आ जाये उसी मात्रा में पूर्ति कर दे। मूल्यो को घटाने

में अपने विवेक से काम लें और लोगों को नगर के बाहर से खरीद न करने दे। धनी लोगों को अपने उपभोग से ज्यादा वस्तुएं न खरीदने दी जाये। उसे बाँटों की जाँच करते रहना चाहिए जिससे कि सेर तीस दाम से अधिक या कम न होने पाये। उसका कर्तव्य है कि गज (मापक) में कमी-बढ़ी न होने दें। उसे चाहिए कि लोगों को मदिरा बनाने, वितरण करने खरीदने और बेचने न दें, किन्तु साथ ही साथ उसे लोगों के पारिवारिक जीवन की एकान्तता का भी अतिक्रमण नहीं करना चाहिए। उसका कर्तव्य है कि मरे हुए अथवा लापता लोगों की सम्पत्ति की सूची बनाये और उसे अपने संरक्षण में रखें। स्त्रियों और पुरुषों के लिए पृथक्-पृथक् घाट और कुएँ नियत करे। सार्वजनिक जल-मार्गों को भरने के लिए सम्माननीय चरित्र के लोगों को नियुक्त करे और स्त्रियों को घुड़सवारी करने से रोके। उसे आदेश करना चाहिए कि बैल, भैंस, घोड़ा अथवा ऊँट का वध न किया जाये, वैयक्तिक स्वतंत्रता पर प्रतिबन्ध न लगाया जाये और न दासों को बेचा ही जाये। उसे देखना चाहिए कि कोई स्त्री अपनी इच्छा के विरुद्ध जलाई न जाये, न कोई मृत्युदण्ड के योग्य अपराधी सूली पर चढ़ाया जाये और न ही बारह वर्ष से कम आयु के किसी व्यक्ति का खतना किया जाये। इससे अधिक आयु के लोगों के लिए खतने की स्वीकृति दी जा सकती है। धर्मान्धों, कलन्दरों (साधुओं) और बेईमान व्यापारियों को निष्कासित कर दे अथवा उन्हें अनेक कार्यकलाप से रोके, किन्तु इस विषय में उसे सावधानी से काम लेना चाहिए। ईश्वर-भीरु सन्यासियों को न सताया जाये और न नंगे पैर घूमने वाले साधुओं का उत्पीड़न ही किया जाये। कसाइयों, पशुओं का शिकार करने वालों तथा भंगियों के लिए पृथक्-पृथक् मोहल्ले निर्धारित करे और लोगों को ऐसे पाषाण हृदय तथा अवसादकर स्वभाव वाले प्राणियों के सम्पर्क में आने से रोके। उसे चाहिए कि उस व्यक्ति का हाथ काट दे, जो किसी जल्लाद के साथ मदिरा पीता हो और उसकी अंगुली काट दे जो उसके परिवार के साथ बातचीत करता हो, उसे चाहिए कि कब्रिस्तान की स्थापना नगर के बाहर तथा पश्चिम दिशा में निश्चित करे।'[1]

आइने अकबरी में तत्कालीन स्थानीय स्वायत्त शासन और उसके पदाधिकारियों से जो अपेक्षायें की गयी थीं। उनसे यह प्रकट होता है कि जितने भी घटनाक्रम उस समय हुआ करते थे। उन सबके नियमन का दायित्व, शान्तिमय नागरिक जीवन की दृष्टि से स्थानीय प्रमाण और उसमें अधिकारियों पर छोड़ा गया था।

इस प्रकार यह स्पष्ट हो जाता है कि प्राचीन काल में स्थानीय स्वशासन का अस्तित्व

---

1. जेरेट एच. एस. - आइने अकबरी वाल्यूम द्वितीय (कलकत्ता) रावल ऐशियाटिक सोसायटी ऑफ बंगाल 1848, पृष्ठ 43-45। श्रीराम माहेश्वरी, भारत में स्थानीय स्वशासन (लक्ष्मी नारायण अग्रवाल एण्ड सन्स, इलाहाबाद, 1998, पृष्ठ 12-13

था। ब्रिटिश शासकों द्वारा भारत में पूर्व में चली आ रही स्थानीय स्वशासन की पद्धति को नष्ट कर दिया गया था और उसके स्थान पर अपने देश में प्रचलित स्थानीय स्वशासन पद्धति के समान स्थानीय स्वशासन व्यवस्था लागू की गयी थी। फलतः भारतवर्ष में प्राचीन काल से चली आ रही स्थानीय स्वशासन की मौलिकता गुप्त हो गयी।

(ख) ब्रिटिश काल में स्थानीय स्वशासन का विकास

ब्रिटिश काल में स्थानीय स्वशासन के सम्बन्ध में अच्छा विवरण उपलब्ध होता है। विद्वानों का ऐसा मत है कि यद्यपि प्राचीन काल से आज तक भारत में स्थानीय स्वशासन किसी न किसी रूप में विद्यमान रहा है।

तथापि संगठन और कार्य प्रणाली की दृष्टि से उसका प्रादुर्भाव ब्रिटिश शासन के अन्तर्गत ही हुआ है। स्थानीय शासन की इकाइयों को निर्वाचित स्वरूप देना, उसे करारोपण की विस्तृत शक्तियाँ देना और प्रजातंत्र की पाठशाला के रूप में विकसित करने का कार्य ब्रिटिश काल में हुआ है। इस काल में विकसित स्थानीय स्वशासन व्यवस्था पर कुछ पाश्चात्य प्रभाव भी पड़ा है। ग्रामीण स्थानीय प्रशासन की इकाइयों की अपेक्षा इस काल में नगरीय शासन की इकाइयों के विकास पर अधिक ध्यान दिया गया है। स्थानीय शासन का इस काल में आरम्भ सन् 1687 से माना जाता है। जब मद्रास में नगर निगम की स्थापना की गयी। इस तरह ब्रिटिश काल में निर्मित हुआ। स्थानीय शासन, आज लगभग 300 साल पुराना है। ब्रिटिश काल में विकसित स्थानीय प्रशासन के क्रमिक इतिहास को अध्ययन की सुविधा हेतु चार भागों में विभक्त किया जा सकता है-

(1) प्रथम काल (1687 से 1881),

(2) द्वितीय काल (1882 से 1919),

(3) तृतीय काल (1920 से 1937),

(4) चतुर्थ काल (1932 से 1947)

(1) प्रथम काल (1687 से 1881) तक

इस काल में स्थानीय स्वशासन की व्यवस्था अंग्रेजों की साम्राज्यवादी व्यवस्थाओं, आवश्यकताओं की पूर्ति, केन्द्र और प्रान्तीय व्यवस्था को सुविधाजनक बनाने हेतु की गयी थी। ईस्ट इंडिया कम्पनी के शासन काल में सर्वप्रथम 1687 में कोर्ट ऑफ डायरेक्टर्स के

आदेश से चेन्नई (मद्रास) में एक नगर निगम स्थापित किया गया था और निगम को कर लगाने के कुछ अधिकार दिये गये थे। निगम में एक निगमाध्यक्ष, एक नगर वृद्ध (एल्डरमैन) और एक नगर प्रतिनिधि सम्मिलित किया गया था। कर द्वारा एकत्रित धन को वे विभिन्न आवश्यक भवन बनवाने जैसे- एक नगर भवन, एक कारागार, एक स्कूल व्यवस्था, कार्यों व नगर निगम के अधिकारियों, स्कूली कर्मचारियों का वेतन आदि एवं उसके निवासियों की प्रतिष्ठा, हित, शोभा, सुरक्षा तथा प्रतिरक्षा कार्यों में खर्च कर सकते थे। 1726 में सभी प्रेसीडेन्सी शहरों में स्थानीय संस्थाओं का निर्माण कर दिया गया। फलतः मुम्बई और कलकत्ता नगर निगम अस्तित्व में आ गये। 1773 में रेगुलेटिंग एक्ट द्वारा प्रेसीडेन्सी नगरों चेन्नई (मद्रास), मुम्बई (बम्बई) और कोलकाता (कलकत्ता) में जस्टिस ऑफ पीस की नियुक्ति की गयी। इसका प्रमुख कार्य शहर की सफाई और लोगों के स्वास्थ्य की देखभाल करना था। इस अधिनियम के द्वारा निगमों में कुछ परिवर्तन भी किये गये। स्थानीय स्वशासन संस्थाओं में अधिक सुधार लाने एवं उनकी प्रगति को ध्यान में रखते हुए 1793 में पुनः अधिनियम में परिवर्तन किया गया। इस संशोधित अधिनियम द्वारा स्थानीय स्वशासन संस्थाओं को संवैधानिक आधार प्रदान हो गया। इसी अधिनियम के अन्तर्गत भारत में महाराज्यपाल (Governer General) को चेन्नई (मद्रास), मुम्बई (बम्बई), कोलकाता (कलकत्ता) में तीन शान्ति दण्डाधिकारी की नियुक्ति करने का अधिकार दिया गया। इन दण्डाधिकारियों को नगर सफाई, पुलिस व्यवस्था तथा सड़कों के रखरखाव के लिए भवन तथा भूमिकर लगाने का अधिकार दिया गया। मुम्बई (बम्बई) में वहाँ के निवासियों के सहयोग से यह संस्थायें सफलतापूर्वक कार्य करती रहीं। किन्तु कलकत्ता में यह नागरिक दायित्व का निर्वाह करने में यह असफल रही क्योंकि वहाँ के निवासियों ने अधिक कर देने का विरोध किया था। चेन्नई (मद्रास) में कुछ ऐसी ही स्थिति रही। वहाँ नगर परिषद अपने निवासियों की समस्याओं का समाधान करने में काफी सुस्त रही। प्रत्येक शहर में दिन-प्रतिदिन समस्याएं बढ़ती जा रही थीं। प्रशासन उन्हें सुलझाने में असमर्थ था। 1842 में बंगाल अधिनियम पारित हुआ। इस अधिनियम द्वारा बंगाल के जिला नगरों में नगर प्रशासन का विस्तार कर दिया गया। अधिनियम द्वारा यह भी व्यवस्था कर दी गयी कि यदि किसी नगर के दो तिहाई भवन मालिक प्रार्थना करें तो सफाई के लिए एक नगर समिति गठित कर दी जाएगी। यह अधिनियम भी अपने पूर्व अधिनियमों की भाँति निरर्थक सिद्ध हुआ। प्रथम, करारोपण प्रत्यक्ष होने के कारण इसका सर्वत्र विरोध किया गया। द्वितीय- नगर पालिका की स्थापना की मांग नहीं की गयी। यह अनुभव किया गया कि **'1842 का अधिनियम समय से बहुत आगे था चूँकि वह ऐच्छिक सिद्धान्त पर आधारित था, इसलिए उसे दो तिहाई मकान मालिकों की प्रार्थना के बिना कहीं भी लागू नहीं किया जा सकता था। इसके अन्तर्गत लगाये जाने वाले कर प्रत्यक्ष थे। अतः लोगों के**

तत्सम्बन्धी कानून को कहीं भी स्वीकार नही किया गया। उसे केवल एक नगर में ही लागू किया गया और वहाँ भी लोगों से जब कर अदा करने के लिए कहा गया तो उन्होंने न केवल कर देने से इंकार कर दिया, वरन् जब कलक्टर ने कर लगाना चाहा तो उन्होंने इस पर अनधिकृत कर का मुकदमा चला दिया।'[1]

1845 में मुम्बई (बम्बई) की नगर सेवायें एक मण्डल को सौंप दी गयी जिसमें सात सदस्य थे। यही व्यवस्था कलकत्ता नगर पालिका में 1847 में की गयी। वहाँ सात आयुक्तों को नगर विकास के लिए कार्यपालिका शक्तियाँ सौंप दी गयी। इनमें से चार का निर्वाचन एक निश्चित कर देने वालों के द्वारा किया गया था। इन सब व्यवस्थाओं के फलस्वरूप भी समस्याओं को सुलझाने में असमर्थता चलती रही। 1850 में सारे देश के लिए एक अधिनियम बना। इस अधिनियम में प्रत्यक्ष के स्थान पर अप्रत्यक्ष करारोपण का प्रावधान किया गया। इसके अनुसार सम्पूर्ण भारत में स्थानीय स्वशासन संस्थाओं की स्थापना की जा सकती थी। सन् 1856 में मुम्बई (बम्बई) नगर पालिका में कुछ परिवर्तन हुए। सन् 1861 में इण्डिया कौंसिल एक्ट तथा सन् 1862 में अधिनियम द्वारा नगरपालिका शासन में सुधार हेतु परिवर्तन किये गये। इतने परिवर्तन एवं प्रयासों के बावजूद इन अधिनियमों द्वारा स्थानीय स्वशासन में कुछ भी सुधार नहीं हो सका। 1863 में स्थानीय शासन को फिर से प्रोत्साहन मिला। इस वर्ष राजकीय सैनिक स्वास्थ्य आयोग ने अन्य चीजों के साथ-साथ भारतीय नगरों की गन्दी स्थिति के सम्बन्ध में भी चिन्ता प्रकट की। फलस्वरूप अनेक अधिनियम देश के विभिन्न भागों में नगर प्रशासन के विस्तार हेतु पारित किये गये। अब भारत में स्थानीय शासन की स्थापना के सन्दर्भ में ऐच्छिकता के सिद्धान्त का परित्याग कर दिया गया और प्रान्तीय सरकारों को नगर समितियाँ बनाने का अधिकार दे दिया गया। इन समितियों को सफाई, प्रकाश तथा पानी की व्यवस्था का कार्य सौंप दिया गया।

वायसराय लार्ड मिन्टो ने स्थानीय स्वशासन संस्थाओं के क्षेत्र में महत्वपूर्ण सुधार किये। जिनका लक्ष्य साम्राज्यवादी वित्त को बढ़ाना था। लार्ड मिन्टो का सुझाव था कि धन एकत्रित करने के लिए प्रान्तों को कुछ भाग राजस्य का दिया जाय। साथ ही उन्हें शिक्षा, सड़कों का निर्माण, चिकित्सा आदि कार्यों उत्तरदायी ठहराया जाये, ऐसा तभी सम्भव हो सकता था जब स्थानीय संस्थाओं को भी अधिक संगठित किया जाय, उन्हें बढ़े हुए उत्तरदायित्व सौंपे जायें। 1870 में लार्ड मेयो द्वारा एक प्रस्ताव पारित कर स्थानीय क्षेत्रों में स्थानीय स्वशासन लागू किया गया। यही कारण था कि 1870 का वर्ष स्थानीय स्वशासन के लिए बहुत महत्वपूर्ण था। प्रस्ताव में यह भी कहा गया कि इस प्रस्ताव को पूर्णतः लागू करने पर ही स्थानीय स्वायत्त संस्थाओं का विकास एवं जनता का सहयोग प्राप्त हो सकेगा। प्रस्ताव में शक्ति के

विकेन्द्रीकरण पर जोर दिया गया। केन्द्र से कुछ शक्तियाँ और कार्य लेकर प्रान्तों को सौंपे जायें, भारतीयों को प्रशासन में स्थान दिया जाये। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए नगर प्रशासन का क्षेत्र उपयुक्त समझा गया। 1873 में स्थानीय शासन में निर्वाचन व्यवस्था को स्थान दिया गया। सन् 1870 से 1874 तक अनेक प्रान्तों में नगरपालिका अधिनियम पारित किये गये। इन अधिनियमों द्वारा नगर पालिका क्षेत्र का विस्तार किया गया। स्थानीय शासन के मनोनीत सदस्यों का स्थान निर्वाचित सदस्यों ने ग्रहण किया।

प्राचीन काल की स्थानीय स्वशासन संस्थाओं के अध्ययन से ज्ञात होता है कि सन् 1880 तक सरकार ने स्थानीय स्वशासन के क्षेत्र में कई प्रयास किये, परन्तु मुम्बई (बम्बई), कलकत्ता के नगरों, केन्द्र, प्रान्तों एवं उत्तर पश्चिमी प्रान्तों के कुछ कस्बों में ही स्थानीय स्वशासन संस्थायें कुशलतापूर्वक कार्य कर सकीं। सन् 1881 में यह अनुभव किया गया कि स्थानीय सरकारों की प्रगति ने अत्यधिक हस्तक्षेप की नीति अवरोधक है। ऐसा करने पर स्थानीय स्वशासन के ठीक विकास की आशा ही नहीं की जा सकती है।

सन् 1870 के प्रस्ताव को लागू करने के बाद सन् 1881 द्वारा भारत में स्थानीय संस्थाओं की स्थिति इस प्रकार थी, 1870 के बाद काफी उन्नति की गयी है तथा स्थानीय करों आदि से बहुत आय हुई है। कई प्रान्तों में आय का प्रबन्ध स्थानीय संस्थाओं को सौंप दिया गया है। नगर पालिकाओं की संख्या और उपादेयता दोनों बढ़ी हैं।'[35] प्रो. श्रीराम माहेश्वरी ने इस काल की विशेषतायें इस प्रकार गिनाई हैं-[1]

(1) ब्रिटिश । भारत के इस प्रथम काल में स्थानीय शासन की इकाइयों की स्थापना प्रमुख तौर पर ब्रिटिश हितों के सर्व धन हेतु की गयी थी न कि देश के स्वायत्त शासन के विकास के लिए।

(2) इस काल में स्थानीय शासन की इकाइयाँ ब्रिटिश मनोनीत अधिकारियों के वर्चस्व में रही, इनके कार्यकरण से भारतीय जनता अधिक नहीं जुड़ पायी।

(3) इस काल में स्थानीय संस्थाओं की रचना का प्रमुख उद्देश्य ब्रिटिश खजाने को राहत पहुँचाना था।

(2) द्वितीय काल (1882 से 1919 तक)

सन् 1881 तक स्थानीय स्वशासन पूर्णतः अभारतीय रहा था। भारतीय दृष्टिकोण से वह

---

1. श्रीराम माहेश्वरी - लोकल गवर्नमेन्ट इन इण्डिया, ओरियन्ट लोगमैन, दिल्ली - 1976, पृष्ठ 16

बहुत अंशों में न तो स्थानीय था और न ही स्वशासन। इन दिनों भारतीयों में राजनीतिक चेतना जाग्रत हो चुकी थी, जिसके कारण नवीन आकांक्षाओं ने जन्म लिया। लार्ड रिपन भारत के लार्ड मेयो के उत्तराधिकारी बनकर आये। वह स्वभाव से उदारवादी व्यक्ति था। उसे इंग्लैण्ड के शासन का पर्याप्त अनुभव था। उसका विचार था कि स्थानीय शासन की स्थापना हेतु जनता को व्यवहारिक, राजनीतिक शिक्षा देना नितान्त आवश्यक है। वह स्थानीय शासन के निर्वाचित सदस्यों की संख्या बढ़ाने के पक्ष में था। वह स्थानीय शासन को बाह्य (सरकारी) नियंत्रण से मुक्त रखना चाहता था। वह गैर सरकारी सभापति की नियुक्ति स्थानीय शासन से करना चाहता था। लार्ड रिपन ने सर्वप्रथम स्थानीय शासन को स्वशासी बनाने का प्रस्ताव रखा था। अतः उसे ही स्थानीय स्वशासन को स्वशासी बनाने का श्रेय दिया जाता है।

लार्ड रिपन को भारत में स्थानीय शासन का जन्मदाता कहा जाता है। लार्ड रिपन ने सन् 1882 में अपना एक प्रस्ताव जारी किया था। इस प्रस्ताव में स्थानीय स्वशासन के प्रत्येक पहलू पर प्रकाश डालने का प्रयास किया गया था। लार्ड रिपन के प्रस्ताव में निम्नलिखित बातें स्पष्ट की गयी थीं-

(1) स्थानीय स्वशासन की स्थापना प्रशासन की सुविधा हेतु नहीं की गयी है, इसकी स्थापना केवल जनता को व्यवहारिक व राजनीतिक शिक्षा देने के लिए की जा रही है। रिपन सरकार स्थानीय संस्थाओं को लोकप्रिय सरकार बनाना चाहती थी। इन निकायों में अधिकतर निर्वाचित गैर सरकारी सदस्य और अध्यक्ष होने चाहिए।

(2) स्थानीय निकायों पर राज्य का नियंत्रण प्रत्यक्ष न होकर अप्रत्यक्ष होना चाहिए। प्रान्तीय सरकारों द्वारा देखभाल के दो तरीके रखे गये-

(क) कुछ कानूनों को लागू करने में, कर्ज बसूली में, नवीन करारोपण में, सम्पत्ति के विक्रय में तथा धर्म सम्बधी विषयों में सरकार की स्वीकृति लेना आवश्यक हो। एवं

(ख) प्रान्तीय सरकारें खास-खास विषयों में स्थानीय संस्थाओं में हस्तक्षेप करने का अधिकार रखें। विशेष परिस्थितियों में स्थानीय संस्थाओं के निर्णय रद्द करने, उत्तरदायित्व का निर्वाह करने में असमर्थ होने पर प्रान्तीय सरकार को उसे भंग करने का अधिकार होना चाहिए।

(3) सारे देश में स्थानीय संस्थाओं की व्यवस्था की जाये और उनको अपने क्षेत्र में निश्चित उत्तरदायित्व व स्वतंत्र आर्थिक साधन प्रदान किये जाने चाहिए। इसलिए स्थानीय

राजस्व के कुछ साधन स्थानीय निकायों को उपलब्ध करा दिये जायें और उन्हें प्रान्तीय बजट में समुचित अनुदान मिलता रहे। साथ ही इन्हें कर लगाने का अधिकार होना चाहिए। इन्हें अपने बजट पर भी पूर्ण अधिकार दिया जाना चाहिए।

(4) स्थानीय स्वशासन के कर्मचारी स्थानीय निकायों के प्रशासनिक नियंत्रण के अन्तर्गत कार्य करें। सरकार जो कर्मचारी स्थानीय संस्थाओं के कार्य हेतु भेजे, उन्हें स्थानीय शासन का नौकर समझा जाये और वे कर्मचारी उन्हीं के नियंत्रण में रहे।

(5) अन्त में प्रस्ताव में यह प्रावधान रखा गया कि प्रत्येक प्रान्त अपनी परिस्थितियों के अनुरूप प्रस्ताव को लागू करें।

लार्ड रिपन के इस प्रस्ताव में पहली बार भारतीयों को स्थानीय स्वशासन संस्थाओं में भाग लेने का अवसर दिया गया था। वस्तुतः यह एक महत्वपूर्ण कदम था। भारत में स्थानीय स्वशासन संस्थाओं के विषय में विस्तारपूर्वक सोचा गया था। वेंकट रमैया के अनुसार- 'यह इस विषय पर उच्च पदाधिकारियों द्वारा की गयी घोषणाओं में युगान्तरकारी था और भारतीय स्थानीय शासन में आने आने वाले विकास के लिए आधारशिला सिद्ध हुई। यह स्थानीय स्वशासन के विकास में निश्चित कदम था जो राज्य स्वायत्त शासन के विकास में वास्तविक रुचि रखते थे। उनके सामने इसमें एक वास्तविक मार्ग था।'

सन् 1882 में सुरेन्द्र नाथ बनर्जी ने अपने विचार इस प्रकार व्यक्त किये थे। **स्थानीय स्वशासन की रियायत राष्ट्रीय स्वशासन की नहीं बल्कि जैसा कि मैं आशा करने का साहस करता हूँ साम्राज्यीय स्वशासन की प्रस्तावना है।'**[1] लार्ड रिपन के इस प्रस्ताव के आधार पर विभिन्न राज्यों के नये अधिनियम पारित किये गये। शहरों में नगरपालिकाओं और गाँवों में जिला मण्डलों और स्थानीय मण्डलों का गठन किया गया था परन्तु व्यवहार रूप में प्रस्ताव के सिद्धान्तों एवं निर्देशों की अवहेलना हुई। सका प्रमु ख कारण नौ करशाही का अधिकार शक्तिशाली होना था। नौकरशाही की स्थिति मजबूत थी। जिला मजिस्ट्रेटों और उनके अधीनस्थ कर्मचारियों ने सिद्धान्त के अनुसार कार्य नहीं किये। अतः नौकरशाही लार्ड रिपन के इरादों को सफल बनाने में बाधक सिद्ध हुई। यद्यपि स्थानीय स्वशासन की आय में वृद्धि हुई।

सन् 1882 से 1908 के बीच नगरपालिकाओं की आय बढ़कर दुगुनी हो गयी परन्तु लोक सेवकों में कोई विस्तार नहीं हुआ। इसका कारण यह था कि प्रस्ताव में प्रान्तों को

---

1. सुरेन्द्रनाथ बनर्जी - मद्रास जी. ए. नटेशन एण्ड कम्पनी

स्थानीय परिस्थितियों के अनुसार व्याख्या करने की स्वतंत्रता दी गयी थी। अतः उन्होंने वायसराय में उस जैसी उदारता नहीं थी वह राजनैतिक शिक्षा को प्रशासनिक कुशलता की तुलना में सन्तोष प्रकट किया था। परन्तु भावी विकास हेतु कोई कार्यक्रम नहीं पेश किया। इस समय स्थानीय सत्ता के प्रसार को रोकने की प्रवृत्ति ही प्रभावशाली रही।

लार्ड कर्जन ने अपने शासन काल में स्थानीय सरकार के क्षेत्र में अनेक परिवर्तन किये। एक केन्द्रीयकृत नियंत्रण में जोर देते हुए विकास के लिए एक जैसी नीति का समर्थन किया। प्राथमिक शिक्षा को प्रोत्साहन दिया गया।

1907 में भारत और प्रान्तीय सरकार एवं उनकी अधीनस्थ संस्थाओं के मध्य वित्तीय एवं प्रशासकीय सम्बन्धों की जांच के लिए एक आयोग स्थापित किया गया जो राजकीय विकेन्द्रीकरण आयोग कहलाया। आयोग के अध्यक्ष सी. ई. एच. हाबहाउस थे। पांच अन्य सदस्य भारतीय प्रशासनिक सेवा के वरिष्ठ अधिकारी थे। आयोग को यह पता लगाना था कि विकेन्द्रीकरण करके अथवा न करके सरकारी व्यवस्था को सरलीकृत किया जा सकता है अथवा नहीं। आयोग ने अपना प्रतिवेदन 1909 में दिया था। इसके साथ ही शासन के इतिहास में एक अन्य व्यवस्था का आरम्भ हो गया। आयोग की मुख्य सिफारिशें निम्नलिखित थीं-

(1) स्थानीय निकाय की संस्थाओं में निर्वाचित सदस्यों का पर्याप्त बहुमत होना चाहिए।

(2) गांव को स्थानीय स्वशासन की आधारशिला मानना चाहिए। प्रत्येक गांव में पंचायतें हों। नगरीय क्षेत्रों में नगरपालिका का गठन किया जाना चाहिए।

(3) स्थानीय संस्थाओं को अधिक स्वतंत्रता दी जानी चाहिए जिससे उनकी शक्ति का ठीक के विकास हो सके।

(4) प्राथमिक शिक्षा का दायित्व स्थानीय स्वशासन का होना चाहिए तथा उनको आवश्यक सत्ता प्रदान की जानी चाहिए जिससे वह कर निर्धारित कर सकें। और कुछ न्यूनतम धनराशि कोष में जमा कराकर अपना बजट बना सकें।

(5) स्थानीय निकायों पर परामर्श, सुझाव व लेखा परीक्षण द्वारा ही नियंत्रण होना चाहिए।

(6) नगरपालिका अपना अध्यक्ष स्वयं चुने। जिलाधीश स्थानीय जिला परिषद का अध्यक्ष बना रहे।

(7) बड़े नगरों को पूर्णकालिक नियत अधिकारी की सेवायें उपलब्ध करायी जायें। स्थानीय निकायों का अपने कर्मचारियों पर पूर्ण नियंत्रण होना चाहिए।

(8) नगरपालिकाओं की ऋण लेने की शक्ति पर पूर्ण नियंत्रण बना रहना चाहिए। नगरपालिकाओं की शक्ति को पट्टे पर देने अथवा बेचने के लिए सरकार की पूर्ण मंजूरी ली जानी चाहिए।

विकेन्द्रीकरण आयोग के प्रस्ताव मारशील होते हुए भी सजग थे। वे प्रशासनिक सुधार की ओर अधिक उन्मुख थे। प्रतिवेदन में एक बार फिर से इस बात पर जोर दिया गया कि यदि प्रशासन के साथ जनता का सहयोग प्राप्त करना है तो हमें गांवों से प्रारम्भ करना होगा। इसके लिए आवश्यक है कि प्राचीन ग्रामीण व्यवस्था को पुनः आरम्भ किया जाय। विकेन्द्रीकरण आयोग की सिफारिशों को सरकार ने मान लिया था। सन् 1915 में लार्ड होर्डिंग ने वायसराय का पद भार ग्रहण कर लिया था। लार्ड होर्डिंग ने प्रान्तीय सरकारों से प्राप्त प्रतिवेदनों के आधार पर स्थानीय सरकार सम्बन्धी नीति के बारे में अपना निर्णय प्रसारित किया था। इस निर्णय द्वारा भी स्थानीय सरकारों के क्षेत्र में एकरूपता लाने का कोई नवीन प्रयास नहीं किया गया था। सन् 1916 में लार्ड चेम्सफ़ोर्ड के शासन काल में स्थानीय स्वशासन के सन्दर्भ में कई निर्णय लिये गये थे। इन निर्णयों के आधार पर स्थानीय स्वशासन को अपना अस्तित्व बनाये रखना भी कठिन प्रतीत होता था। उसके सफल संचालन में कई बाधायें थीं। मुख्यतः स्थानीय राजस्व की लघुता, लोकजीवन के क्षेत्र में पाये जाने वाला भेदभाव, चुनाव का व्यय और असुविधायें, कर के अन्य तरीकों को काम में लाने में कठिनाई, नगरपालिका क्षेत्रों की भिन्न-भिन्न प्रकृति एवं भारतीयों में अपनी परेशानी को कहने की अरुचि। सन् 1917 में वायसराय ने अपने विचार व्यक्त करते हुए कहा कि 'शहरी एवं ग्रामीण सरकार स्वायत्त सरकार प्रशिक्षण भूमियाँ हैं जहाँ राजनीतिक उन्नति एवं उत्तरदायित्व का सही शुभारम्भ होता है, यही समय है जब उन्नति की दर एवं उत्तरदायित्व को बढ़ाया जा सकता है।' सरकार ने एक घोषणा की थी जिके अनुसार स्थानीय स्वशासी संस्थाओं का विकास उत्तरदायी सरकार की स्थापना करके करने का वायदा किया। इसके अलावा प्रस्ताव में निम्नलिखित बातों को सम्मिलित किया गया था-

(1) गांव में पंचायतों को पुर्नजीवित किया जाना चाहिए।

(2) स्थानीय निकायों में निर्वाचित सदस्यों का बहुमत होना चाहिए।

(3) स्थानीय स्वशासन को मताधिकार का विस्तार करके व्यापक आधार प्रदान किया जाना चाहिए।

(4) स्थानीय निकाय का सदस्य जनता द्वारा निर्वाचित व्यक्ति होना चाहिए।

(5) स्थानीय निकायों को बजट बनाने, कर लगाने तथा कार्यों को स्वीकृत करने की स्वतंत्रता होनी चाहिए।

सन् 1918 तक स्थानीय स्वशासन के क्षेत्र में विशेष प्रगति नही हो सकी। इन्हीं दिनों स्वतंत्रता प्राप्ति के लिए जन आन्दोलन जोर पकड़ने लगा था। फलस्वरूप भारत और ब्रिटेन दोनों को चिन्ता होने लगी थी। सन् 1918 से 1920 तक का समय स्थानीय स्वशासन के क्षेत्र में प्रतीक्षा काल माना जाता है क्योंकि अभी तक संवैधानिक सुधारों की घोषणा नहीं की गयी थी।

(3) तृतीय काल (1920 से 1937 तक)

देश की वर्त्तमान स्थिति को देखते हुए ब्रिटिश सरकार ने भारत शासन अधिनियम 1919 पारित किया। इस अधिनियम को 1920 में लागू किया जाना था। प्रान्तों में द्वैध शासन प्रणाली लागू की गयी थी। कुछ विषय प्रान्तों को हस्तान्तरित किये गये थे। स्थानीय स्वशासन विभाग प्रान्तों के निर्वाचित मंत्रियों के अधीन आ गया था। वे मंत्री को विधानसभा के प्रति उत्तरदायी थे। पहले से अधिक विस्तृत मताधिकार के आधार पर चुने जाते थे। उन्होंने अब प्रत्येक प्रान्त में अपना स्वायत्त शासन का एक विभाग खोला। स्थानीय स्वशासन सरकारें केन्द्र सरकार के नियंत्रण से मुक्त हो गयीं। संयुक्त शासन के क्षेत्र में भी प्रान्त अपनी नीति का अनुसरण करने हेतु स्वतंत्र हो गये। भारतीय शासन अधिनियम 1919 द्वारा स्थानीय स्वशासन के क्षेत्र में नवीन युग प्रारम्भ हुआ। विभिन्न प्रान्तों में जिला एवं नगर पालिकाओं की स्थापना एवं संगठन हेतु कानून बनाये गये। विभिन्न प्रान्तों में स्थानीय स्वशासन के नियम एकरूपता पर आधारित नहीं थे। अतः प्रान्तों में स्थानीय स्वशासन के क्षेत्र में विभिन्नता होना स्वाभाविक था। विभिन्नताओं के रहते हुए भी सभी प्रान्तों में कुछ विषय ऐसे थे जो सभी स्थानीय स्वशासन के क्षेत्रों में एकरूपता बनाए रखने में सहायक थे। जैसे-

(1) स्थानीय स्वशासन को पूर्णतया निर्बाचित करना।

(2) मताधिकार को विस्तृत करना।

(3) स्थानीय संस्थाओं को अधिक शक्ति प्रदान करना।

(4) नियंत्रण को कम करना।

(5) गैर सरकारी अध्यक्ष का चुनाव करना।

(6) अल्पसंख्यकों के हितों का संरक्षण करना, तथा

(7) ग्राम पंचयातों का निर्माण करना।

इन्हीं दिनों जवाहर लाल नेहरू, सरदार वल्लभ भाई पटेल, पुरुषोत्तम दास टण्डन आदि भारतीयों ने नगरपालिकाओं में प्रवेश किया। स्थानीय स्वशासन लोकतंत्र की ओर बढ़ने लगा था परन्तु स्थानीय स्वशासन के प्रशासन में धीरे-धीरे अकुशलता स्थान लेने लगी थी। जिसका मुख्य कारण भ्रष्टाचार का पनपना, पक्षपात, भाई-भतीजावाद को स्थान मिलना, स्थानीय कर्मचारियों का राजनीतिक नेताओं के दबाव में कार्य करना आदि था। परिणामस्वरूप रिश्वतखोरी, बेईमानी का स्थानीय स्वशासन में बोलबाला हो गया। जवाहर लाल नेहरू ने अपनी आत्मकथा में इलाहाबाद नगरपालिका के अध्यक्ष काल के अपने अनुभवों को इस प्रकार उल्लेखित किया है- **'प्रति वर्ष सरकारी प्रस्ताव, अधिकारी और समाचार पत्र नगर पालिकाओं और स्थानीय परिषदों की आलोचना करते हैं तथा उनकी ओर संकेत करते हैं। इससे यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि लोकतांत्रिक संस्थायें भारत के अनुकूल नहीं हैं। उनकी विफलतायें तो स्पष्ट हैं किन्तु उस व्यवस्था की ओर तनिक भी ध्यान नहीं दिया जाता जिसके अन्तर्गत उन्हें काम करना पड़ता है। यह व्यवस्था न तो लोकतांत्रिक है और न ही निरंकुश तंत्रीय, यह दोनों का मिश्रण है। अतः इसमें दोनों के दोष देखने को मिलते हैं। कारण कुछ भी हो। यह सत्य है कि हमारी स्थानीय संस्थायें साधारणतः सफलता और कार्य कुशलता का ज्वलन्त उदाहरण नहीं हैं। चाहे ऐसा होने पर भी वे विकसित लोकतांत्रिक देशों की कुछ नगरपालिकाओं के समक्ष भले ही खड़ी हो सकें। सामान्यतः वे भ्रष्ट नहीं हैं। वे केवल अकुशल हैं। इनकी दुर्बलता केवल कुनबापरस्ती है और उनका दृष्टिकोण गलत है। यह सब कुछ स्वाभाविक है क्योंकि लोकतंत्र की सफलता के लिए जानकार लोकमत और उत्तरदायित्व की गणना की पृष्ठभूमि आवश्यक है। इसके विपरीत हमारे यहां सत्तावाद का वातावरण सर्वत्र व्याप्त है और लोकतंत्र के उपकरणों का अभाव है। सार्वजनिक शिक्षा की कोई व्यवस्था नहीं है और न ही जानकारी पर आधारित लोकमत का निर्माण करने का कोई प्रयत्न है अपितु लोकमत, व्यक्तिगत, साम्प्रदायिक और तुच्छ समस्याओं की ओर आकृष्ट होता रहता है।[1]**

इस काल में स्थानीय स्वायत्त शासन में बहुत कम प्रगति हुई क्योंकि इन संस्थाओं को पर्याप्त धन प्राप्त नहीं हुआ और वित्त पर मंत्रियों का अधिकार नहीं था। धन के अभाव के साथ ही स्थानीय संस्थाओं के कार्यों में वृद्धि हुई। स्वायत्त शासन में साम्प्रदायिकता के विषैले कीटाणुओं ने स्थान बना लिया था। गैर सरकारी अध्यक्षों का अनुचित दबाव एवं करारोपण

---

1. जवाहर लाल नेहरू - एन आटोग्राफी (लन्दन बोडले हैड 1955), पृष्ठ 144

की प्रक्रिया ने स्वायत्त शासन की कार्य प्रणाली को अधिक विषम बना दिया था। सन् 1935 के अधिनियम द्वारा स्थानीय स्वशासन को पूर्णतया राज्य का विषय बना दिया गया था। इस समय प्रान्तीय स्वायत्तता को मान्यता दी गयी। प्रान्तीय स्वायत्तता ने स्थानीय स्वशासन का रूप ही बदल दिया था।

(4) चतुर्थ काल (1938 से 1947) तक

सन् 1935 का भारत शासन अधिनियम, 1937 में लागू किया गया था। सन् 1935 में प्रान्तोंको स्वायत्तता मिली। प्रान्तों में लोकप्रिय मंत्रिमंडलों का निर्माण किया गया। देश में स्वतंत्रता की दिशा में शक्तिशाली पहल हुई जिसका स्थानीय स्वायत्त संस्थाओं पर सकारात्मक प्रभाव पड़ा। स्थानीय संस्थायें अब केवल नाम मात्र की या प्रायोगिक संस्थायें ही नहीं रह गयी थीं अपितु उन्हें स्वायत्त शासन की इकाइयां बनाने की दिशा में एक सही प्रयत्न प्रारम्भ हुआ। इस दिशा में अनुसन्धान किया गया कि स्थानीय स्वायत्त शासन की संस्थायें अकुशल क्यों हैं? सभी प्रान्तों में इन संस्थाओं के अधिक लोकतंत्रीकरण के लिए मतदान की आयु सीमा को घटाया गया और इन संस्थाओं में सरकारी मनोनीत सदस्यों को भी घटाया गया। नगरपालिकाओं के विचार विमर्शकारी और कार्यकारी निकायों को पृथक्-पृथक् किया गया। मध्य प्रदेश, बम्बई तथा उत्तर प्रदेश में नगरपालिकाओं की समस्याओं पर विचार करने तथा उसमें सुधार के लिए सुझाव देने हेतु समितियाँ नियुक्त की गयीं। इस काल में मद्रास में 1930 और 1933 में दो महत्वपूर्ण अधिनियम बनाये गये। जिला बोर्डों के कार्यक्षेत्र का विस्तार किया गया तथा जिलाधीश को जिला बोर्ड का प्रमुख कार्याधिकारी घोषित किया गया। ऐसा कर दिये जाने से जिला बोर्ड मात्र परामर्शदात्री संस्था न रहकर एक प्रमुख प्रशासकीय संस्था बन गये।

बम्बई, उत्तर प्रदेश और मध्य प्रदेश में जो समितियाँ इन संस्थाओं की समीक्षा हेतु नियुक्त की गयी थीं उनके प्रतिवेदन यद्यपि स्वतंत्रता के पूर्व ही प्राप्त हो गये थे किन्तु उनकी सिफारिशों पर स्वतंत्रता के पूर्व ही ध्यान दिया जा सका। 1947 में स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् स्थानीय स्वायत्त शासन के उत्साह में एक ने अध्याय का शुभारम्भ हुआ। विदेशी शासन की अधीनता में काम करने वाली संस्थायें अब स्वाधीन राष्ट्र की संस्थायें बन गयी। इस काल में स्थानीय स्वशासन के क्षेत्र में उभरी प्रमुख प्रवृत्तियों को इस प्रकार रेखांकित किया जा सकता है -

(1) मद्रास और बिहार में सदस्यों के मनोनयन की व्यवस्था को समाप्त कर दिया गया।

(2) नगरपालिकाओं और पंचायतों के कार्यक्षेत्र में विस्तार किया गया।

(3) उत्तर प्रदेश में स्थानीय स्वायत्त संस्थाओं के सदस्यों के निर्वाचन हेतु वयस्क मताधिकार का नियम लागू किया गया।

(4) स्थानीय स्वशासन की संस्थाओं को करारोपण के लिए बाध्य करने हेतु प्रान्तीय सरकारों को अधिकार दिये गये।

(5) स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् स्थानीय स्वायत्त शासन को इसका उचित महत्व देते हुए प्रजातंत्र की आधारशिला के रूप में मान्यता दी गयी।

(6) सभी स्थानीय संस्थाओं पर इस काल में जिलाधीश के माध्यम से प्रान्तीय सरकारों के नियंत्रण को स्थापित किया गया।

(3) स्वतंत्रता पश्चात् भारत में स्थानीय स्वशासन

या

स्वतंत्र भारत में स्थानीय स्वायत्त शासन (1948 से अब तक)

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् भारत में स्थानीय स्वशासन का नवीन युग प्रारम्भ हुआ। ब्रिटिश शासन का अन्त होते ही भारतवर्ष में केन्द्र, प्रान्त और स्थानीय स्तर पर स्थानीय स्वशासन की स्थापना की गयी। ग्राम को शासन की मूल इकाई माना गया। **'26 जनवरी, 1950 को संविधान लागू होने के साथ ही अनुच्छेद 40 में आधारभूत स्तर पर लोकतांत्रिक संस्थाओं के महत्व को मान्यता देते हुए यह कहा गया कि राज्य ग्राम पंचायतों को संगठित करने के लिए उपाय करेगा और उन्हें ऐसी शक्तियाँ और अधिकार प्रदान करेगा जो उन्हें स्वायत्त शासन की इकाई के रूप में कार्य करने हेतु आवश्यक हो।' अतः सन् 1948 में केन्द्रीय स्वास्थ्य मंत्री की अध्यक्षता में प्रान्तों के स्थानीय स्वशासन के मंत्रियों का एक सम्मेलन हुआ। इस प्रकार का सम्मेलन पहली बार हुआ था। सम्मेलन की अध्यक्ष और स्वास्थ्य मंत्री श्रीमती अमृत कौर ने कहा था- 'मेरा विश्वास है कि यह पहला अवसर है जब भारत सरकार ने सम्मेलन बुलाया है। यह तो प्रत्यक्ष है कि अब तक स्थानीय स्वशासन का उत्तरदायित्व वहन करने वालों का कोई सम्मेलन नहीं बुलाया गया क्योंकि यह विषय पूर्णतः प्रान्तीय क्षेत्र के अन्तर्गत था। फिर भी स्थानीय स्वशासन का विषय सामान्य कल्याण के लिए इतना महत्वपूर्ण है कि यदि किसी ऐसे विवाद-स्थल का निर्माण किया जा सके, जहाँ समस्त भारत के वे लोग, जो प्रशासन की इस महत्वपूर्ण शाखा के लिए उत्तरदायी हैं। समय-समय पर मिल सके, विचार विनिमय कर सके और सामान्य हित की समस्याओं पर चर्चा कर सकें तो इससे निश्चय ही लाभ होगा।'**[38]

---

1. श्रीराम माहेश्वरी - लोक गवर्नमेन्ट इन इण्डिया ओरियन्ट लागमैन, दिल्ली 1976, पृष्ठ 23

इस सम्मेलन का उद्घाटन श्री जवाहर लाल नेहरू ने किया था। तब इस पर वह बोले कि **'स्थानीय स्वशासन लोकतंत्र की किसी भी व्याख्या का सच्चा आधार और होना भी चाहिए। हमारा कुछ ऐसा स्वभाव पड़ गया है कि हम उच्च स्तर पर ही लोकतंत्र की बात सोचते हैं निम्न स्तर पर नहीं। यदि नीचे से नींव का निर्माण न किया गया तो सम्भव है कि लोकतंत्र सफल न हो सके।'**[1] सन् 1950 में स्वतंत्र भारत का संविधान लागू हुआ। **संविधान में पंचायती राज व्यवस्था का प्राविधान किया गया और कहा गया कि 'राज्य ग्राम पंचायतों को संगठित करने के लिए कदम उठायेगा और उन्हें इतनी शक्तियाँ और उत्तरदायित्व सौंपेगा जो उनको संयुक्त सरकार की इकाइयों के रूप में कार्य करने योग्य बना सकें।'**[2]

भारत की राष्ट्रीय सरकार ने गांवो के सर्वागीण विकास हेतु 2 अक्टूबर, 1952 को 'सामुदायिक कार्यक्रम' का सूत्रपात किया किन्तु कालान्तर में यह अनुभव किया गया कि नियोजित विकास को गति एवं स्थायित्व प्रदान करने के लिए यह आवश्यक है कि जनता को अपनी आधारभूत आवश्यकताओं के अनुरूप योजनायें बनाने एवं उनके कार्यान्वयन में सक्रिय रूप से सहभागी बनाया जाय। इस हेतु मई, 1954 में दिल्ली में कांग्रेस की एक बैठक में पंचायती राज के लिए एक समिति नियुक्त की गयी। समिति ने यह प्रस्ताव पास किया- 'कार्यकारी समिति विभिन्न राज्यों में पंचायती राज की स्थापना के महत्व को समझती है। यह न केवल प्राचीन भारत की परम्पराओं को बनाये रखने का तरीका है वरन् यह आज की परिस्थितियों में भी उपयुक्त है। आधुनिक राज्य धीरे-धीरे विकेन्द्रीकरण की ओर बढ़ते जा रहे हैं। इस प्रवृत्ति को स्थानीय स्वशासन की संस्थाओं का विकास करके संतुलित करना चाहिए ताकि स्वयं जनता भी अपने प्रशासन में भाग ले सकें तथा सामाजिक जीवन के अन्य पहलुओं- आर्थिक, न्यायिक आदि में भी सक्रियता के साथ भाग ले सकें। यह अच्छी प्रकार से तभी पेश किया जा सकता है जब भारत के गांव में पंचायत का विकास किया जा सके। इन कार्यों को प्रशासनिक कार्यों के साथ-साथ न्यायिक कार्य भी सौंपे जायेंगे।'

सन् 1957 में सामुदायिक विकास योजना एवं राष्ट्रीय प्रसार सेवा के अध्ययन हेतु एक आयोग नियुक्त किया गया। इसके अध्यक्ष बलवन्त राय मेहता थे। अतः इनके ही नाम पर आयोग को बलवन्त राय मेहता आयोग कहने लगे। अतः इस आयोग ने अपनी सिफारिश के आधार पर सन् 1959 में स्थानीय स्वशासन की विधिवत नींव डाली गयी। सर्वप्रथम 2 अक्टूबर, 1954 को राजस्थान के नागौर जिले में स्थानीय स्वशासन की त्रिस्तरीय पंचायतों

---

1. उपर्युक्त
2. भारतीय संविधान अमुसूची - 40

की स्थापना की गयी। अब धीरे-धीरे सभी राज्यों ने पंचायती राज सम्बन्धी कानून बना दिये हैं। ग्रामीण स्थानीय स्वशासन की तुलना में नगरीय स्थानीय स्वशासन की प्रगति धीमी रही है। तृतीय पंचवर्षीय योजना में नगरीय स्थानीय स्वशासन के महत्व को इस प्रकार स्वीकार किया गया है- 'आयोजन के अगले दौर में यथासम्भव अधिकाधिक नगरों और कस्बों को आयोजन की व्यवस्था में अवयवी ढंग से सम्मिलित किया जाय, प्रत्येक राज्य अपने साधन जुटाये और नगरों के निवासियों के लिए पहले से अच्छे जीवन की परिस्थितियों का निर्माण करे।'

वर्ष 1977 में अशोक मेहता समिति का गठन किया गया। इसके गठन का उद्देश्य पंचायती राज संस्थाओं की अवनति के कारणों की समीक्षा करना था। अतः मेहता समिति ने अगस्त, 1978 में 301 पृष्ठों की 132 सिफारिशें प्रस्तुत कीं। इनकी प्रमुख सिफारिशें इस प्रकार हैं-

(1) बलवन्तराय मेहता कमेटी की त्रिस्तरीय पंचायती राज व्यवस्था के स्थान पर द्विस्तरीय शासन प्रणाली की स्थापना करना।

(2) राज्य स्तर के बाद जिला स्तर पर प्रशासनिक बिकेन्द्रीकरण शुरू होना चाहिए।

(3) इस समिति ने राजनीतिज्ञों एवं नौकरशाही के चंगुल से स्वतंत्र रखने हेतु संविधान संशोधन की स्वीकृति दी।

(4) विकास सम्बन्धी कार्यों की योजनायें तैयार करने का उत्तरदायित्व जिला परिषदों को सौंपा जाय।

सन् 1985 में श्री वी. के. राव समिति का गठन ग्राम विकास के लिए विद्यमान प्रशासनिक व्यवस्था की समीक्षा करने तथा गरीबी उन्मूलन कार्यक्रमों की समीक्षा करने हेतु किया गया। इस समिति ने चार सोपान वाली प्रणाली की संस्तुति की। राज्य विकास परिषद, जिला परिषद, पंचायत समिति और मण्ड़ल पंचायत।

देश के विभिन्न राज्यों में ग्रामीण स्थानीय स्वशासन की कार्य-प्रणाली की जांच करने तथा उसेमं सुधार लाने हेतु समितियों का गठन किया गया था। केन्द्र सरकार ने भी इस कार्य हेतु समितियाँ गठित की। पंचायती राज की स्थापना की सिफारिश एक केन्द्र गठित समिति न की थी। केन्द्रीय सरकार ने नगर स्थानीय शासन के कार्यो की जांच एवं सुधार हेतु आवश्यक प्रतिवेदन प्रस्तुत करने के लिए समय-समय पर समितियों की स्थापना करती रही है। अब तक स्थापित प्रमुख समितियाँ इस प्रकार हैं-

(1) स्थानीय वित्त जांच समिति, 1954

(2) नगर प्रशासन के कर्मचारियों के प्रशिक्षण के सम्बन्ध में समिति, 1963

(3) नगरीय स्थानीय निकायों के वित्तीय साधनों की वृद्धि के सम्बन्ध में मंत्रियों की समिति, 1963

(4) ग्रामीण नगरीय सम्बन्धों के विषय में समिति, 1966

(5) नगर प्रशासन कर्मचारियों की सेवा की शर्तों से सम्बन्धित समिति, 1969

कुल मिलाकर स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् मात्र कुछ ही राज्यों में तथा गुजरात, महाराष्ट्र, कर्नाटक, पश्चिम बंगाल के पंचायती राज की सफलता हेतु गम्भीर प्रयास किये गये तथा अन्य राज्यों में सरकारों ने पंचायती राज व्यवस्था को कभी गम्भीरता से नहीं लिया। पंचायतों के संवैधानिक दर्जा प्राप्त न होने के कारण पंचायती राज संस्थाओं का समय-समय पर अतिक्रमण किया जाता रहा है। अतः पंचायतों के महत्व को और अधिक बढ़ाने के लिए यह आवश्यक समझा गया कि उन्हें संवैधानिक दर्जा प्रदान किया जाय। इस ओर सबसे पहले भूतपूर्व प्रधानमंत्री स्व. राजीव गांधी की दृष्टि गयी। गत 40 वर्षों के अनुभव से पायी गयी कमियों को ध्यान में रखते हुए पंचायती राज संस्थाओं को सुनिश्चितता, निरन्तरता और शक्ति प्रदान करने के उद्देश्य से संविधान में 73वाँ संविधान संशोधन अधिनियम 1992 में माध्यम से संशोधन किया गया जो 24 अप्रैल, 1993 से सारे देश में लागू हो गया, फलस्वरूप संविधान की धारा 40 में उल्लेख के अनुसार राज्य सरकारें त्रिस्तरीय पंचायती राज व्यवस्था के लागू करने के लिए बाध्य है।

इसमें कोई अतिशयोक्ति नहीं है कि भारत में स्थानीय स्वशासन का वर्तमान ढांचा ब्रिटिश शासन की देन है। स्वतंत्र भारत के संविधान में स्थानीय स्वशासन का वही रूप रखा गया है जो ब्रिटिश शासन में प्रचलित था। अतः भारत का वर्तमान स्थानीय प्रशासन दो प्रणालियों में विभक्त है -

(1) ग्रामीण क्षेत्र के लिए एवं (2) शहरी या नगरीय क्षेत्र के लिए।

'ग्रामीण क्षेत्र में पंचायती राज व्यवस्था लागू करने के बाद से स्थानीय स्वशासन के तीन स्तर हो गये हैं-

(1) ग्राम स्तर पर ग्राम पंचायत।

(2) खण्ड स्तर पर पंचायत समिति एवं

(3) जिला स्तर पर जिला परिषद।[1]

शहरी क्षेत्र में भी स्थानीय स्वशासन की नयी इकाइयाँ देखने को मिलती हैं। मुख्य रूप से इन इकाइयों को चार भागों में बांटा जा सकता है -

(1) नगर निगम,

(2) नगर पालिकायें,

(3) नगर सुधार न्यास एवं

(4) पोर्ट ट्रस्ट समिति एवं छावनी मण्डल।

स्वतंत्र भारत में प्रचलित स्थानीय स्वशासन को निम्नांकित तालिका से ठीक प्रकार से समझा जा सकता है-

भारत में स्थानीय स्वशासन के इतिहास का निरीक्षण करने पर पता चलता है कि स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद ग्रामीण स्थानीय स्वशासन को नगरीय स्थानीय प्रशासन से पृथक कर दिया गया है। ग्रामीण स्थानीय स्वशासन की समस्याओं का निपटारा केन्द्र व राज्य सरकार मिलकर करते हैं। राज्यों में यह कार्य पंचायती राज विभाग और केन्द्र ने यह कार्य सामुदायिक विकास विभाग के सुपुर्द है। शहरी क्षेत्र में स्थानीय स्वशासन का उत्तरदायित्व पूर्णरूपेण राज्य का है। स्वतंत्र भारत में स्थानीय स्वशासन राज्य सूची का विषय है। विभिन्न राज्यों के द्वारा अपने-अपने क्षेत्रों में कानून बनाये जाते हैं। अतः नामकरण, कार्य प्रणाली आदि में कुछ विभिन्नतायें पायी जाती हैं फिर भी देश की स्थानीय स्वायत्त संस्थाओं में एकरूपता है। इस क्षेत्र में लगातार प्रयास किये जा रहे हैं ताकि सम्पूर्ण भारत में एक रूप स्थानीय स्वशासन की स्थापना की ज सके। 173 वें और 74वें संविधान संशोधन अधिनियमों द्वारा पंचायती राज व्यवस्था और नगर पालिकाओं को संवैधानिक दर्जा दे दिया गया है।
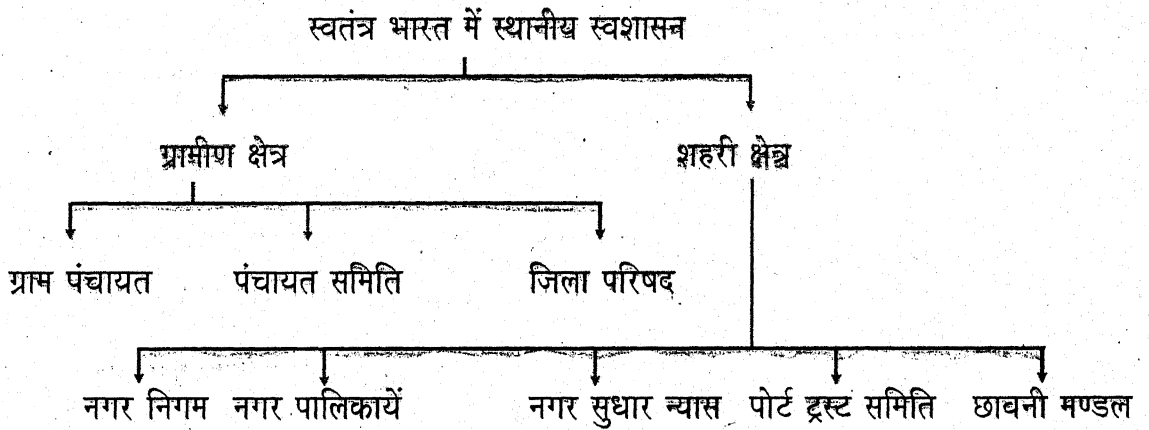
अब सम्पूर्ण भारत में एकरूप स्थानीय स्वशासन स्थापित हो गया है।

73वें व 74वें संविधान संशोधन के बाद स्थानीय शासन का स्वरूप इस प्रकार है-

☆☆☆
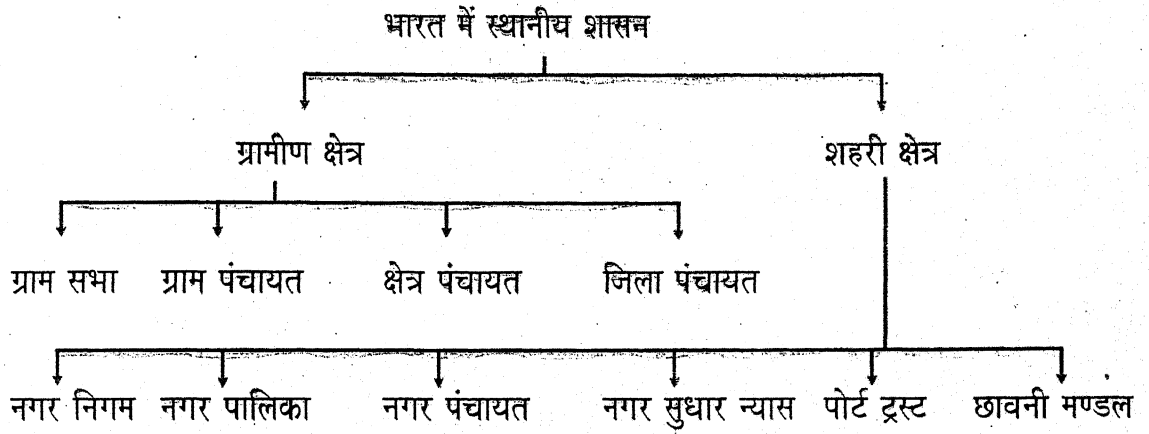
अध्याय तृतीय

अध्याय तृतीय

73वाँ संविधान संशोधन अधिनियम, 1972 द्वारा प्रदत्त स्थिति

➢ (A) *पंचायत परिभाषा*

➢ (B) *पंचायती राज का गठन एवं संरचना*

➢ (C) *निर्वाचन*

➢ (D) *सदस्यों की अर्हतायें एवं निर्बन्धन*

➢ (E) *पंचायतों की शक्तियाँ*

➢ (F) *प्राधिकार एवं उत्तरदायित्व*

☆☆☆

1. अरगल आर - म्यूनिसिपल गवर्नमेन्ट इन इण्डिया, पृष्ठ 34

73वाँ संविधान संशोधन अधिनियम, 1992

ऐतिहासिक भूमिका

भारत एक गांवों का देश है और रहेगा। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् भारत सरकार को ग्रामीण विकास, जन सहयोग हेतु स्थानीय स्वशासन की आवश्यकता महसूस हुई जब 1947 में पंचायतों एवं जिला बोर्डों को स्थानीय शासन की मूलभूत इकाइयों के रूप में स्वीकार किया तथा इसके अतिरिक्त स्थानीय बोर्डों को भी ग्रामीण स्वशासन की एक इकाई माना जो इन दोनों के मध्य में पायी जाती थी। जिसे बाद में विघटित कर दिया गया परन्तु आश्चर्यजनक तथ्य यह है कि स्वतंत्रता आन्दोलन के समय जो नेतागण ग्रामीण स्वशासन अर्थात् ग्राम स्वराज्य की बात करते थे, स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् प्रारूप संविधान में इसका कोई उल्लेख नहीं किया गया था। जब यह मामला संविधान सभा के विचारार्थ आया तो प्रारूप समिति के अध्यक्ष डा. भीमराव अम्बेदकर ने ऐसे विचारों की आलोचना की जो पंचायती राज को भारतीय संविधान का अंग बनाना चाहते थे। डॉ. अम्बेदकर के अनुसार - 'ऐसे विचार का समर्थन करने वाले सदस्य न तो संघ के न ही राज्य सरकारों के पक्षधर है। उनके मतानुसार ऐसें सदस्य भारत में बड़ी संख्या में ग्रामीण सरकारों की स्थापना का सपना देख रहे हैं। ऐसी ग्रामीण सरकारें अथवा 'गणराज्य' पूर्व में भारत की सबसे बड़ी कमी रही है। अतः उन्होंने इस बात पर सन्तोष व्यक्त किया कि प्रारूप संविधान में इन्हें सम्मिलित नहीं किया गया।

डॉ. अम्बेदकर के ऐसे विचार होते हुए भी संविधान सभा के अनेक सदस्य पंचायती राज के सम्बन्ध में किसी न किसी प्राविधान का उल्लेख करने के लिए दबाव बनाते रहे हैं ताकि संविधान और गांव के मध्य खाई को पाटा जा सके तथा साथ ही साथ ग्रामीण शासन पर महात्मा गांधी के विचारों को आत्मसात किया जा सके। अन्त में अत्यधिक दबाव के कारण डॉ. अम्बेदकर को संविधान सभा में एक नये अनुच्छेद को सम्मिलित करने का प्रस्ताव स्वीकार करना पड़ा। यह प्रस्ताव जिसे 22 नवम्बर, 1946 को के. सथानम द्वारा प्रस्तावित किया गया तथा जो प्रारूप संविधान का 31 ए अनुच्छेद बना, को संविधान सभा की निर्विरोध स्वीकृति प्राप्त हुई, अन्ततः इस प्रकार की स्वीकृति प्राप्त कर भारत के संविधान का अनुच्छेद 40 बन गया।

अनुच्छेद - 40

भारतीय संविधान का अनुच्छेद 40 राज्य (जिसके अन्तर्गत केन्द्र और राज्य दोनों सरकारें आती हैं) का आह्वान करता है कि **'वह ग्राम पंचायतों का गठन करें और उन्हें ऐसे अधिकार और सत्ता प्रदान करें जो कि उनके द्वारा स्वशासन की इकाइयों के रूप में कार्य करने के लिए आवश्यक हो।'**[1] यद्यपि यह अनुच्छेद 40 नीति निर्देशक तत्वों के अन्तर्गत आता है। अतः स्पष्ट है कि यह संविधान के योजना के अनुसार वाद योग्य नहीं है, फलस्वरूप केन्द्र सरकार अनुच्छेद 40 में वर्णित संविधान की व्यवस्था को वास्तविक रूप देने के लिए कोई प्रयास नहीं किया गया। यह इसलिए भी किया गया क्योंकि संविधान की सातवीं अनुसूची में, जिसे यदि अनुच्छेद 246 के साथ पढ़ा जाय, स्थानीय शासन को राज्य सूची में रख दिया था। इस प्रकार स्थानीय स्वशासन को राज्य सूची में रखने के कारण केन्द्र सरकार में महत्वपूर्ण कदम उठाने का कोई प्रयास नहीं किया। यही नहीं राज्यों द्वारा भी इस प्राविधान को केवल नाममात्र का सम्मान दिया और अपने इस संवैधानिक दायित्व के प्रति लापरवाही अधिक प्रदर्शित की गयी।

पंचायतें स्वतंत्रता प्राप्ति तक मूलतः ग्रामों में नागरिक कृत्यों, सफाई तथा सड़कों पर प्रकाश आदि कामों को करती थीं। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् उनका विकास शासन तंत्र के रूप में हुआ। 1 अक्टूबर, 1952 में देश में सामुदायिक विकास को विकास का एक तरीका और ग्रामीण विस्तार की एक

\- - - -

एक एजेन्सी बनाया गया। यह कार्यक्रम जनता का कार्यक्रम होकर वास्तव में सरकारी कर्मचारियों द्वारा कार्यान्वित सरकारी कार्यक्रम था। सामुदायिक विकास कार्यक्रम इसलिए विफल रही कि वह हमारी समस्याओं को ग्रामीण भारत की वास्तविकताओं से मेल बिठाने में विफल रही थी। अतएव इन विफलताओं के उपचार के लिए पंचायती राज संस्थाओं की स्थापना विकास एजेन्सियों के रूप में की गयी।

कहा जाता है कि हर युग प्रवर्तक एवं महान व्यक्ति अपने युग की परिस्थितियों की देन होता है। इसी तरह प्रत्येक कार्यक्रम था, आन्दोलन उस समय की परिस्थितियों एवं समस्याओं

1. भारतीय संविधान - अनु. 40, पृष्ठ

के निराकरण के लिए प्रारम्भ होता है। द्वितीय बिश्व युद्ध के बाद विश्व की राजनीतिक स्थिति में बहुत परिवर्तन हुआ। उनके ऐसे देश जो पहले किसी देश के उपनिवेश थे, स्वतंत्र हो गये। ऐसे देशों में अधिसंख्य देश कृषि प्रधान थे। सदियों तक गुलाम रहने के कारण यह देश विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के विकास के लाभ से वंचित रहें। फलस्वरूप अशिक्षा, निर्धनता, बीमारी है। इन देशों की जनता को विरासत में मिली। अशिक्षा के कारण उत्पन्न अन्धविश्वास, रूढ़िवादिता एवं मिथ्या आत्म संतोष के परिणामस्वरूप इन देशों की जनता में न तो अपने निम्न जीवन स्तर को ऊँचा उठाने की आकांक्षा रह गयी थी और न ही जीवन मूल्यों को ग्रहण करने की तत्परता। ऐसी स्थिति में जीवन में व्याप्त जड़ता को मिटाये बिना देश का विकास सम्भव नहीं था क्योंकि किसी देश का विकास वहाँ की जनता के सक्रिय सहयोग पर निर्भर करता है और यह सहयोग प्राप्त होता है जब आन्तरिक भावना से प्रेरित अपने विकास के लिए जनता स्वयं पहल करें। इन्हीं परिस्थितियों एवं आवश्यकताओं ने नये कार्यक्रम को जन्म दिया जो अफ्रीकी समाज में मास एजूकेशन (जन शिक्षा) के नाम से चलाया गया। यही कार्यक्रम आगे चल कर भारत में सामुदायिक विकास कार्यक्रम कहा गया।

सन् 1948 में कैम्ब्रिज में हुए सम्मेलन में इस कार्यक्रम की परिभाषा करते हुए कहा गया कि यह समुदाय की सक्रिय सहभागिता और जहां तक सम्भव हो उसी के पहल पर समुदाय के जीवन स्तर को ऊँचा उठाने के लिए एन आन्दोलन है किन्तु यदि समुदाय में पहल करने की भावना स्वतः उत्पन्न नहीं होती तो ऐसी तकनीकी का प्रयोग किया जाय कि यह भावना जाग्रत एवं प्रेरित हो जिससे इस आन्दोलन को समुदाय का सक्रिय और उत्साहपूर्ण सहयोग प्राप्त हो सके।'

"A movement designed to promote better living for the unable community with the active participation and if possible, on the inititative of the community but if this intiative is not bathk coming spontancously then by the use of Techniques for arousing and stemulating it in order to seause its active and enthusasiastic response to the movement."[1]

कहा जा सकता है कि इस कार्यक्रम का प्रमुख उद्देश्य समुदाय के जीवन स्तर को ऊंचा उठाना था किन्तु इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए पहल समुदाय की और से होनी चाहिए। यदि समुदाय में पहल करने की प्रवृत्ति नहीं है तो ऐसी तकनीकी का प्रयोग होना चाहिए जिससे यह जाग्रत और प्रेरित हो सके। सवाल यह उठता है कि यह कौन सी तकनीकी है जिसका

---

1. B. Mukharjee - Quatation Community Development in India on page # - 01

प्रयोग करने के लिए इस परिभाषा में कहा गया है। जनता के दृष्टिकोण में परिवर्तन कर पहल करने की भावना शैक्षणिक विषय से की जा सकती है और समुदाय के शिक्षण के लिए प्रसार शिक्षा की विधि ही उपयुक्त हो सकती है। प्रसार शिक्षा की विधियों और साधनों का प्रयोग करके ही समुदाय को उच्च जीवन स्तर प्राप्त करने के लिए अभिप्रेरित और सक्रिय किया जा सकता है। इससे स्पष्ट है कि सामुदायिक विकास कार्यक्रम एक आन्दोलन है तो प्रसार शिक्षा उसकी विधि है। जनता में व्याप्त जड़ता को मिटाकर उससे उच्च जीवन स्तर को प्राप्त करने की आकांक्षा उत्पन्न करना ही इस कार्यक्रम का मुख्य उद्देश्य था।

2 अक्टूबर, 1952 को प्रायोगिक दृष्टि से भारत में पचपन सामुदायिक विकास परियोजनाओं की स्थापना के साथ ही सामुदायिक विकास कार्यक्रम का शुभारम्भ हुआ। इस कार्यक्रम में ग्रामीण जनता के उत्साहपूर्ण सहयोग को देखते हुए पूरे देश को इस परियोजना से आच्छादित कर देने का निर्णय शासन द्वारा लिया गया। फलस्वरूप 2 अक्टूबर, 1953 को राष्ट्रीय प्रसार सेवा योजना लागू हुई। इस परियोजना के अन्तर्गत 66,000 आबादी वाले एक सौ गाँवों पर एक विकास खण्ड स्थापित किया गया।

प्रत्येक विकास खण्ड में एक खण्ड विकास अधिकारी, चार, पाँच सहायक विकास अधिकारी और दस ग्राम सेवक के पद रखे गये। ग्रामीण समुदाय के सर्वांगीण विकास हेतु कृषि, पशुपालन, कुटीर उद्योग, शिक्षा, समाज, शिक्षा, सहकारिता, पंचायत तथा जन स्वास्थ्य आदि के कार्यक्रम किये गये। अक्टूबर, 1963 तक सारा उत्तर प्रदेश इस कार्यक्रम से आच्छादित हो गया। कदाचित् किसी अन्य देश में इतने कम समय में इतना व्यापक विकास संगठन नहीं व्यवस्थित किया गया गया। देश में देश के इतिहास में पहली बार गाँवों तक विकास तंत्र फैला। पण्डित जवाहर लाल नेहरू के शब्दों में- **"I think nothing hoppend in any country in the world during the last few years so big in content and so vevolutionary in design as the community porject in India."**[1]

भारत के सामुदायिक विकास कार्यक्रम की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि यह सामुदायिक विकास और प्रचार कार्यक्रम दोनों का समन्वित रूप है। सामुदायिक विकास कार्यक्रम यह इस रूप में था कि समुदाय की सक्रिय सहभागिता और पहल पर समुदाय के सर्वागींण विकास उद्देश्य लेकर चलने वाला एक आन्दोलन है और प्रसार कार्यक्रम इस अर्थ में था कि यह कृषि, स्वास्थ्य, शिक्षा और अन्य वैज्ञानिक तथा तकनीकी ज्ञान को प्रशिक्षित कर्मचारियों के माध्यम से ग्रामवासियों तक पहुंचाने के उद्देश्य की पूर्ति करता है।

---

1. श्री त्रिभुवन प्रसाद - ग्राम विकास एवं सामाजिक न्याय, पृष्ठ 113

"According to Dr. Cart Taylor Indias Programme is unique in the sense that it is both a community development and an Extension Programme in that is develops channel between all heigher centers of information and village and develops traned presonel to carry agriculture healthe education and all other hopes of scientific and technical knowledge to more than two hundred of and seventy five million villages living in hundred of thousands of villages"[1]

इसी तथ्य को बयान में रखते हुए भारत की प्रथम पंचवर्षीय योजना में कहा गया था कि सामुदायिक विकास एक तरीका और ग्राम प्रसार एक माध्यम है जिनके द्वारा पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत गांवों के सामाजिक तथा आर्थिक जीवन में परिवर्तन का क्रम प्रारम्भ करना है। कृषि के वैज्ञानिक ज्ञान को कृषकों तक पहुँचाने के लिए प्रसार सेवा का उद्‌भव अमेरिका में हुआ था। वहाँ इस क्षेत्र में कृषि तथा गृह विज्ञान तक ही सीमित रहा किन्तु भारत में इसका प्रयोग व्यापक अर्थ में हुआ।

"It needs to mentoned here that extension has much under connotation in our programme then it has in foreign countries from where we borrowed the expension because we have combined extention programme, with community development programme."[2]

भारत ने अनुभव किया कि वास्तव में ग्राम जीवन के सभी पक्ष परस्पर सम्बन्धित हैं और यदि प्रत्येक पक्ष को अलग-अलग किया जायेगा तो कभी स्थायी परिणाम नहीं निकलेगा, इसलिए भारत ने प्रसार कार्य को सामुदायिक विकास के माध्यम के रूप में प्रयुक्त किया गया और इन दोनों को अलग करके नहीं देखा जा सकता है। यदि कैम्ब्रिज में सामुदायिक विकास की जो परिभाषा निर्धारित की गयी उस पर दृष्टिपात करें तो हम पाते हैं कि उस परिभाषा में सामुदायिक विकास का प्रमुख उद्देश्य जनता के सक्रिय सहभागिता और यथासंभव उन्हीं की पहल पर समुदाय के जीवन स्तर को ऊंचा उठाना बताया गया है किन्तु यदि जनता में पहल करने की प्रवृत्ति नहीं हो तो ऐसी तकनीक प्रयुक्त करने की सलाह दी गयी जिससे वह जाग्रत और प्रेरित हो सके। जनता में पहल करने की भावना उत्पन्न की जा सके। जनता में पहल करने की भावना शैक्षणिक विधि द्वारा ही उत्पन्न की जा सकती है। समुदाय के शिक्षण के लिए जिस तकनीक की ओर संकेत किया गया वह प्रसार शिक्षा की ही विधि हो सकती

---

1. बी. मुखर्जी - कम्यूनिटी डेवलपमेन्ट इन इण्डिया, पृष्ठ 323
2. बी. मुखर्जी - कम्यूनिटी डेवलपमेन्ट प्रोग्राम, पृष्ठ 33

है। स्पष्ट है कि उक्त परिभाषा के आधार पर भी सामुदायिक विकास एक आन्दोलन है तो प्रसार शिक्षा उसकी विधि है। इसलिए प्रसार शिक्षा का सामुदायिक विकास से अलग करके नहीं देखा जा सकता है।

वास्तविकता यह है कि सामुदायिक विकास कार्यक्रम एक तकनीक भी है और एक आन्दोलन भी है। जब भी यह कार्यक्रम विकसित देशों में केवल कृषक वर्ग और उनकी कुछ समस्याओं से सम्बन्धित होता है तो एक तकनीक मात्र हो जाता है किन्तु जब यह कार्यक्रम किसी विकासशील देश में लाखों ग्रामवासी स्त्री-पुरुषों की समस्त समस्याओं का स्पर्श करता है तो यह एक आन्दोलन बन जाता है।

"Community development programme is both a technique as well as a movement. When it is concerned with only a section of agraicultural population and or conversely with some of their problem as in the advanced countries U.K. and U.S.A. It remains as a technique but when it empraces with in inside areas million of relar man, women and communiting of rual, the tatality of their numerous problems as in India. It gets universalised. It becames a movement."[1]

परिणामतः कहा जा सकता है कि भारत में सामुदायिक विकास कार्यक्रम एक आन्दोलन के रूप में और प्रसार सेवा उसके एक माध्यम के रूप में कार्यरत तकनीक है।

सामुदायिक विकास कार्यक्रम के उद्देश्य

जैसा कि पहले उल्लिखित है कि सामुदायिक विकास कार्यक्रम का प्रमुख उद्देश्य ग्रामीण जनता के जीवन स्तर को उन्हीं के सक्रिय सहयोग एवं पहल पर ऊँचा उठाना है। इसलिए ग्रामवासियों के दृष्टिकोण में परिवर्तन करना सर्वाधिक आवश्यक है।

वी. टी. कृष्णमाचारी के शब्दों में - **'इस प्रकार राष्ट्रीय बिस्तार आन्दोलन का मूल उद्देश्य गांवों में सामाजिक परिवर्तन लाना, नवीन प्रकार की सामाजिक रचना में सहयोग देना तथा ग्रामवासियों के दृष्टिकोण में परिवर्तन लाना है। यह एक जन आन्दोलन है जो आत्म सहायता और सहयोग पर आधारित है।'** [2]

निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि ग्रामवासियों के दृष्टिकोण में परिवर्तन लाना, उसमें

---

1. डॉ. लाल - कम्यूनिटी डेवलपमेन्ट - 1, पृष्ठ 7
2. वी. टी. कृष्णामचारी - भारत में सामुदायिक विकास, पृष्ठ 54

आत्मनिर्भरता की भावना पैदा करना उत्तरदायित्वपूर्ण एवं उत्साही ग्रामीण नेतृत्व पैदा करना ग्रामीण संगठनों एवं संस्थाओं को सुदृढ़ एवं प्रभावी बनाना, कृषि की उन्नत विधियों का प्रसार एवं शिक्षा तथा उद्योग का विकास कर गांवों का आर्थिक विकास करना तथा स्वस्थ जीवन के लिए स्वास्थ्य एवं सफाई की शिक्षा देना आदि इस कार्यक्रम का उद्देश्य है तथा गाँवों का चतुर्मुखी विकास इस कार्यक्रम का मुख्य उद्देश्य है।

स्थानीय संस्थाओं की उपलब्धियाँ

भारत में ग्राम्य विकास की इन संस्थाओं के सिंहावलोकन से स्पष्ट होता है कि देश की बदलती परिस्थितियों के अनुरूप इन संस्थाओं में भी परिवर्तन होता आया है जो किसी भी परिस्थितियों से अनुकूलता के लिए अति आवश्यक स्थित होती है। जहाँ तक उपलब्धियों का प्रश्न है वे भी नगण्य नहीं कही जा सकती हैं। खाद्यान्न उत्पादन का बढ़कर तीन गुना हो जाना और खाद्यान्न उत्पादन की दृष्टि से आत्मनिर्भरता प्राप्त कर लेना साधारण उपलब्धि नहीं है।

कृषि की वैज्ञानिक विधियों का प्रसार, लघु सिंचाई एवं निजी नलकूपों का विस्तार, कृषि यंत्र का अधिकाधिक प्रयोग, वायोगैस संयंत्रों का प्रयोग एवं निर्माण, गाँवों में सड़कों का विस्तारीकरण, गाँवों का विद्युतीकरण, यातायात के लिए सुदूर अंचलों में भी सड़कों का निर्माण, पुल-पुलियों का निर्माण, ग्रामीण आवास, ग्रामीय पेयजल की पूर्ति आदि व्यवस्थायें इन संस्थानों की प्रमुख उपलब्धियाँ हैं। इन पाँच दशकों का समय किसी राष्ट्र के विकास की दृष्टि से बहुत अधिक नहीं कहा जा सकता है। विशेष रूप से जब तब कि लोकतांत्रिक व्यवस्था के अन्तर्गत प्रसार शिक्षा के माध्यम से जनता के दृष्टिकोण में परिवर्तन करके विकास करना हो।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि ये संस्थायें भले ही विकास का वो क्रम न बना सकी हो जो इन्हें प्राप्त कर लेना चाहिए फिर भी इनके द्वारा भारतीय जन सामान्य को राजनीतिक शिक्षा प्राप्त करने का अवसर प्राप्त होता है और इनके द्वारा देश को अच्छा नेतृत्व प्रदान करने वाले नेता प्राप्त होता है। अतः इसको राजनीति की प्रथम पाठशाला कहा जा सकता है।

इनके अतिरिक्त कुछ अन्य मुद्दे ऐसे हैं जिन पर गम्भीरतापूर्वक विचार करने की आवश्यकता है। ग्राम्य विकास कार्यक्रम कुछ विशेष उद्देश्यों को लेकर प्रारम्भ किया गया था। उन उद्देश्यों की पूर्ति में यह कार्यक्रम कहाँ तक सफल रहा है। इस आधार पर इस कार्यक्रम का मूल्यांकन होना चाहिए। **'ऐसा पहला मुद्दा यह है कि कार्यक्रम में जनता की**

भागीदारी का, मेहता समिति की संस्तुति पर पंचायती राज की स्थापना की गयी किन्तु यह पर्याप्त प्रभावी नहीं हुआ। अशोक मेहता समिति तथा अन्य कई समितियों ने अपने प्रतिवेदन प्रस्तुत किये। इस विषय में नवीनतम प्रतिवेदन (1985) श्री जी. वी. राव समिति का है। यह समिति केन्द्र सरकार द्वारा ग्राम्य विकास हेतु प्रशासकीय व्यवस्था पर संस्तुति देने के लिए गठित की गयी।'[1] किन्तु अभी भी स्थिति में कुछ परिवर्तन परिलक्षित नहीं होता हैं। तथ्य यह है कि जब तक ग्रामीण समुदाय में निष्पक्ष, समर्पित एवं कुशल नेतृत्व विकसित नहीं होगा तब तक यह कार्यक्रम स्थायी एवं प्रभावी नहीं हो सकता है।

दूसरा मुद्दा है गांवों में सामुदायिक भावना विकसित करने का। कभी परस्पर सहयोग और भाई-चारे की भावना ही ग्रामीण समुदाय की सबसे बड़ी विशेषता थी किन्तु आज यह स्थिति बिलकुल विपरीत हो चुकी है। यदि सामूहिकता की भावना विकसित नहीं हुई तो गांव का वास्तविक विकास नहीं होगा। तीसरा मुद्दा है कार्य पद्धति का। प्रथम तीन पंचवर्षीय योजना काल में प्रसार शिक्षा की विधि से कार्य होता रहा है जिसका परिणाम हरित क्रान्ति के रूप में सामने आया परन्तु उसके बाद धीरे-धीरे ग्राम्य विकास के कार्यकर्ता अपनी कार्य पद्धति से दूर होते गये। कार्यक्रम की सफलता के लिए प्रसार विधि से कार्य करना अत्यन्त आवश्यक है।

पंचायतीराज के सुदृढ़ीकरण का प्रयास

उपरोक्त घटनाओं के पश्चात् केन्द्र सरकार ने सन् 1989 में पंचायती राज की मुख्य विशेषताओं के सुदृढ़ आधार प्रदान करने हेतु राजीव गांधी सरकार द्वारा 64वें संविधान संशोधन के माध्यम से सशक्त प्रयास किया थ किन्तु यह अधिनियम न बन सका क्योंकि इसको राज्यसभा में पारित नहीं करवाया जा सका। **'दिसम्बर, 1989 में हुए आम चुनाव के परिणामस्वरूप केन्द्र में श्री विश्वनाथ प्रताप सिंह के नेतृत्व में सरकार बनी। इस सरकार ने सितम्बर, 1990 में यहाँ-वहाँ कुछ परिवर्तनों के साथ पुनः लोकसभा में प्रस्तावित किया। दुर्भाग्यवश जनता दल सरकार बिना अपना कार्यकाल पूरा किये ही गिर गयी।'**[2] इस प्रकार देश की जनता को एक बार पुनः चुनावों की अग्नि में न चाहते हुए भी कूदना पड़ा और जून, 1991 में लोकसभा चुनाव सम्पन्न हुए और पुनः कांग्रेस (ई) को सत्ता प्राप्त हुई। चूंकि पंचायती राज एक महत्वपूर्ण कार्य एवं कारण बन चुका था। अतः इस सरकार का भी ध्यान पंचायती राज व्यवस्था की तरफ गया। **'16 सितम्बर, 1991 को तत्कालीन प्रधानमंत्री श्री पी. वी.**

---

1. भारत में ग्राम्य विकास के चार दशक - श्री एस. पी. गुप्ता, पृष्ठ - 130
2. चन्द्र प्रकाश वर्थवाल - स्थानीय स्वशासन, पृष्ठ 180

नरसिंहाराव के समय 72वाँ संविधान संशोधन विधेयक लोकसभा में प्रस्तुत किया गया। पंचायत राज संस्थानों को संवैधानिक मान्यता प्राप्त करने हेतु यह विधेयक 64वें संविधान संशोधन की प्रति थी। संसद सदस्यों की संयुक्त प्रवर समिति के व्यापक अध्ययन के पश्चात् उक्त संविधान संशोधन पर अपना प्रतिवेदन संसद के समक्ष प्रस्तुत किया। 22 दिसम्बर, 1992 को लोकसभा एवं 23 दिसम्बर, 1992 को राज्यसभा में इसे 73वाँ संविधान के रूप में पारित किया। 17 राज्यों के अनुमोदन के पश्चात् 24 अप्रैल, 1993 को यह अधिनियम सम्पूर्ण देश में लागू किया गया।'[1]

20 अप्रैल, 1993 को राष्ट्रपति महोदय की हस्ताक्षर के बाद पुनः क्रमांकित कर 24 अप्रैल, 1993 को यह संविधान (73वां संविधान संशोधन) अधिनियम 1992 के रूप में लागू माना गया। इस पंचायती राज व्यवस्था को संवैधानिक दर्जा प्रदान करने के निम्नलिखित मूलभूत आधार थे -

(1) बिना संवैधानिक मान्यता के पंचायती राज संस्थायें जातिहीन हो गयी थी जिससे यह संस्थायें अपने उद्देश्य से बिल्कुल विपरीत दिशा में उन्मुख थीं।

(2) पंचायती राज शासकों में से जो लोग यह आशा लगाये हुए थे कि ग्रामीण विकास में यह एक काल परिवर्तन की संस्थायें बनेगी तथा समग्र विकास की ज्योति प्रज्ज्वलित करेगी उन्हें ऐसा कुछ दिखाई नहीं पड़ने लगा था। अर्थात् वे आशा के अनुरूप प्राप्त कार्यों का क्रियान्वयन नहीं हो रहा था।

(3) पंचायती राज संस्थायें अपने ही सिद्धान्त एवं क्रियान्वयन को कलंकित करने का कार्य कर रही थी।

(4) ये संस्थायें आशा के अनुरूप कार्य नही कर पा रही थी।

(5) इन संस्थाओं के प्रति प्रशासनिक एवं राजनीतिक स्तर से भी इनके सुदृढ़ आधार एवं क्रियान्वयन हेतु सामान्यतः ऐसा कुछ नहीं हो रहा था जिससे यह आभास होता कि पंचायती राज व्यवस्था के प्रति इनकी उदासीनता में कमी आयी है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि अगर पंचायती राज व्यवस्था को जनता के विकास का आधार बनाना था तो इसमें जनता को प्रत्यक्ष रूप से जोड़ना सबसे महत्वपूर्ण कार्य था क्योंकि इन संस्थाओं को जनता का विश्वास नहीं मिल पा रहा था। यह केवल समाज के एक विशेष वर्ग के लोगों के हाथों में कैद थी। पंचायती राज संस्थाओं की स्वरूप भिन्नता के कारण भी

---

1. सम्पादक - आर. पी. जोशी, रूपा मंगलानी - भारत में पंचायती राज, पृष्ठ 19

अधिकार सम्पन्नता की दृष्टि से राष्ट्रव्यापी एकरूपता का अभाव था। पंचायती राज संस्थाओं में योजना क्रियान्वयन हेतु अपेक्षित स्वायत्तता का अभाव था। इनके पास करारोपण का अधिकार होना चाहिए जिसे यह अधिक सम्पन्नता प्राप्त कर सकें। यही सब ऐसे कारण थे जिनको यह कहा जा सकता है कि पंचायती राज व्यवस्था को संवैधानिक दर्जा प्रदान करने हेतु मांग उठाने का कारण है।

73वें संविधान संशोधन अधिनियम 1992 के द्वारा संविधान में एक नये भाग IX को जोड़ा गया जिसके अन्तर्गत 12 अनुच्छेद - अनुच्छेद 243 से 243 ण तक है। तथा एक नये अनुसूची (ग्यारही) का सृजन करता है।

73वें संविधान संशोधन के अनुसार पंचायती राज संरचना

73वाँ संविधान संशोधन सभी राज्यों को आदेश करता है कि वे अपने यहाँ पंचायती राज की त्रिस्तरीय व्यवस्था की स्थापना करें तथा राज्य सरकारें उसके अभिभावक की तरह इन संस्थानों का मार्ग दर्शन करें। 73वें संविधान संशोधन अधिनियम द्वारा पंचायती राज संस्थाओं को जिला स्तर से नीचे संवैधानिक तौर पर शासन के तीसरे स्तर के रूप में स्थापित किया गया। यह संविधान के भाग तीन के अन्तर्गत नीति निर्देशक तत्व (अनु. 40) में स्वशासित ग्राम पंचायतों की स्थापना करने का जो उद्देश्य रखा गया था उसके बाद उस उद्देश्य की पूर्ति हेतु होने वाला यह पहला कार्य कहा जा सकता है। इस त्रिस्तरीय व्यवस्था को अपनाने में उन राज्यों को अपवाद कहा जा सकता है जिनकी जनसंख्या 20 लाख से ऊपर नहीं है और कहा गया कि यदि ऐसे राज्य चाहते हैं कि उन्हें पंचायती राज की द्विस्तरीय व्यवस्था को अपनाना चाहिए तो स्वतंत्र होंगे और अगर ऐसा करते हैं तो उन्हें मध्य स्तर ही छोड़ने की इजाजत होगी। **'जनपद और ग्राम एक मध्य ऐसा स्तर जो कि राज्य के राज्यपाल द्वारा जनसूचना के मध्य स्तर इंगित किया गया हो।'**[1] अतः कहा जा सकता है कि ग्राम और जनपद स्तर की इकाइयों को बनाये रखना आवश्यक होगा। पंचायती राज के सिद्धान्त के मूर्तरूप देने हेतु लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण को आधार मानकर साधन शक्ति एवं सत्तायुक्त त्रिस्तरीय पंचायती राज के निम्न रूप बनाये गये -

ग्राम स्तर पर ग्राम पंचायत, मध्य स्तर पर पंचायत समिति एवं जिला स्तर पर जिला पंचायत।

---

1. भारतीय संविधान अनु. 243 (भाग - 9)

नामकरण एवं परिभाषायें

भारत गणराज्य के 43वें वर्ष में संसद द्वारा निम्नलिखित रूप में यह अधिनियमित होगा।

(1) संक्षिप्त नाम और प्रारम्भ -

(i) इस अधिनियम का संक्षिप्त नाम तिहत्तरवां संविधान संशोधन अधिनियम 1992 है।

(ii) यह उस तारीख को प्रवृत्त होगा जो केन्द्रीय सरकार, राजपत्र के अधिसूचना द्वारा प्रवृत्त करें।

(2) नये भाग IX का अन्तः स्थापन -

संविधान के भाग 8 के पश्चात् भाग 9 संविधान में अन्तः स्थापित किया जायेगा।

भारत गणराज्य के संविधान में उपबन्धित उपबन्ध

पंचायतें

जहाँ संशोधन अधिनियम पंचायत शब्द का प्रयोग करता है वह विभिन्न स्तरों की पंचायत के नामों के बारे में बहुत कठोर नहीं है। केवल अनुच्छेद 243 में ग्राम सभा नाम का प्रयोग हुआ है। यह परिभाषित करने के लिए कि 'यह ऐसे व्यक्तियों की संस्था है जो उस पंचायत क्षेत्र के अन्तर्गत आने वाले गाँव की मतदाता सूची में पंजीकृत हो।' तथापि इनकी कार्यकारिणी को कोई भी नाम दिया जा सकता है। वास्तव में कुछ राज्यों ने इसे ग्राम पंचायत के नाम से भी सम्बोधित किया है और कुछ राज्यों में इसे इसके अंग्रेजी पर्यायवाची 'विलेज पंचायत' के नाम से जाना जाता है। **'इसके नाम ग्राम पंचायत का अलग-अलग अर्थ निकाला गया है। पंचायत से ग्रामीण क्षेत्रों के लिए अनुच्छेद 243 - ख के अधीन गठित स्वायत्त शासन की कोई संस्था (चाहे वह किसी भी नाम से ज्ञात हो) अभिप्रेत है। पंचायत क्षेत्र से पंचायत प्रादेशिक क्षेत्र अभिप्रेत है। जनसंख्या से ऐसी अन्तिम पूर्ववर्ती जनगणना में अनिश्चित की गयी जनसंख्या अभिप्रेत है जिसके सुसंगत आंकड़े प्रकाशित हो गये हैं। ग्राम से राज्यपाल द्वारा इस भाग के प्रयोजन के लिए लोक अधिसूचना द्वारा ग्राम के रूप में विनिर्दिष्ट ग्राम अभिप्रेत है और इसके अन्तर्गत इस प्रकार विनिर्दिष्ट ग्रामों का समूह भी है।'**[1] इसी प्रकार ग्राम और जनपद स्तर के मध्य पाये जाने वाले स्तर को भी अलग-अलग नामों से जाना गया है। **'मध्यवर्ती स्तर से**

---

1. सम्पादक - शंकर राम - पंचायत राज गाईड -I, पृष्ठ 77

ग्राम और जिला स्तरों के बीच ऐसा स्तर अभिप्रेत है जो किसी राज्य के राज्यपाल द्वारा इस भाग के प्रयोजनों के लिए, लोक अधिसूचना द्वारा मध्यवर्ती स्तर विर्निदिष्ट किया जाय।'[1] जैसे मण्डल परिषद (आन्ध्र प्रदेश) पंचायत समिति (बिहार, हरियाणा, हिमाचल प्रदेश, महाराष्ट्र, उड़ीसा, पंजाब, राजस्थान तथा पश्चिम बंगाल), आंचलिक पंचायत (असम) ताल्लुक पंचायत (गुजरात तथा कर्नाटक), ब्लाक पंचायत (केरल), जनपद पंचायत (मध्य प्रदेश), पंचायत यूनियन कौंसिल (तमिलनाडु) तथा क्षेत्र पंचायत (उत्तर प्रदेश) आदि नामों से पुकारा जाता है। अन्त में जनपद स्तर की पंचायतों से जिला से किसी राज्य का जिला अभिप्रेत है। पंचायत उस गठित संस्था या इकाई से अभिप्रेत है और इसे भी अलग-अलग प्रान्तों में विभिन्न नामों से जानते हैं। आन्ध्र प्रदेश, असम, बिहार, हरियाणा, हिमाचल प्रदेश, कर्नाटक, उड़ीसा, पंजाब, कर्नाटक, राजस्थान तथा पश्चिम बंगाल में जिला परिषद, गुजरात, केरल, तमिलनाडु में डिस्ट्रिक्ट पंचायत तथा मध्य प्रदेश व उत्तर प्रदेश में जिला पंचायत कहते हैं।

पंचायतों का गठन तथा संरचना

73वें संविधान संशोधन के अनुसार पंचायतों में दो प्रकार के सदस्य होंगे, प्रथम निर्वाचित सदस्य, द्वितीय पदेन सदस्य। पदेन सदस्यों को छोड़कर सभी अन्य सदस्य **'पंचायतें क्षेत्र के चुनाव क्षेत्रों से प्रत्यक्ष निर्वाचन के द्वारा चुने जायेंगे और इसके लिए प्रत्येक पंचायत क्षेत्र को निर्वाचन क्षेत्रों में इस प्रकार बांट दिया जायेगा ताकि प्रत्येक चुनाव क्षेत्र में जनसंख्या तथा स्थानों की संख्या के मध्य अनुपात, जहां तक सम्भव हो, पूरे पंचायत क्षेत्र में एक समान हो।'**[1] पंचायती राज संस्थाओं के पदेन सदस्यों के विषय में 73वें संविधान संशोधन में यह व्यवस्था है कि राज्य विधान मण्डल, विधि द्वारा, निम्न के प्रतिनिधित्व की व्यवस्था कर सकता है। **'ग्राम स्तर पर पंचायतों के अध्यक्षों का मध्य स्तरीय पंचायतों में'**[2], **'मध्य स्तर पर पंचायतों के अध्यक्षों का जनपद स्तरीय पंचायतों में।'**[3], **'लोकसभा तथा विधानसभा के सदस्य केवल ग्राम पंचायतों को छोड़कर उन पंचायतों में जो कि पूर्ण अथवा आंशिक रूप से उनके चुनाव क्षेत्र में आती हो।'**[4], वह उसका पदेन सदस्य समझा जायेगा।' **'राज्य सभा एवं विधान परिषद के सदस्य मध्य एवं जनपद स्तर के उन पंचायतों में, जिनके क्षेत्रों में वे मतदाता के रूप में पंजीकृत हों।'**[5] के सदस्य समझे जायेंगे।

---

1. भारतीय संविधान की अनुच्छेद 2432 सी की धारा (2)
2. भारतीय संविधान का अनुच्छेद 243 C की धारा (2) (A)
3. भारतीय संविधान का अनुच्छेद 243 C की धारा (3) (B)
4. भारतीय संविधान का अनुच्छेद 243 C की धारा (3) (C)
5. भारतीय संविधान का अनुच्छेद 243 C की धारा (3) (D)

इस प्रकार स्पष्ट हो जाता है कि ग्राम पंचायत में पदेन सदस्य नहीं होंगे। मध्य स्तरीय पंचायत संस्था में उसके क्षेत्र के अन्तर्गत अवस्थित ग्राम पंचायतों के सरपंच/अध्यक्ष होंगे तथा संसद या राज्य विधान मण्डलों के वे सदस्य जिनके चुनाव क्षेत्रों में उप पंचायत समिति का पूर्ण अथवा आंशिक भाग आना चाहिए तथा संसद तथा राज्य विधान मण्डल के उच्च सदनों में ऐसे सदस्य जो उस पंचायत समिति के क्षेत्र में मतदाता के रूप में पंजीकृत हो। इसी प्रकार जनपद स्तरीय पंचायतों के लिए मध्य स्तरीय पंचायतों के अध्यक्ष (द्वितीय व्यवस्था में ग्राम पंचायतों के अध्यक्ष) तथा संसद एवं राज्य विधान मण्डल के निम्न सदनों के ऐसे सदस्य जिनका निर्वाचन क्षेत्र उस जनपद स्तरीय पंचायत क्षेत्र के अन्तर्गत पूर्ण या आंशिक रूप से आता है। साथ ही संसद एवं राज्य विधान मण्डल के उच्च सदन के ऐसे सदस्य, जो कि उस जनपद स्तरीय पंचायत क्षेत्र में मतदाता के रूप में पंजीकृत हो।

भारतीय संविधान में पंचायतों की संरचना से सम्बन्धित उपबन्धों के अधीन रहते हुए, राज्य का विधान मण्डल विधि द्वारा पंचायतों की संरचना के सम्बन्ध में विधि निर्माण कर सकता है। परन्तु किसी स्तर पर पंचायत के प्रादेशिक क्षेत्र की जनसंख्या और ऐसी पंचायत में निर्वाचन द्वारा भरे जाने वाले स्थानों की संख्या के बीच अनुपात समस्त राज्य में यथासाध्य एक ही होगा। पंचायतों के सभी स्थान पंचायत क्षेत्र के प्रादेशिक निर्वाचन क्षेत्रों से प्रत्यक्ष निर्वाचन द्वारा चुने गये व्यक्तियों से भरे जायेंगे। इस प्रयोजन के लिए प्रत्येक पंचायत क्षेत्र में ऐसी रीति से प्रादेशिक निर्वाचन क्षेत्रों में विभाजित किया जायेगा कि प्रत्येक निर्वाचन क्षेत्र की जनसंख्या और उसको आवंटित स्थानों की संख्या के बीच अनुपात समस्त पंचायत क्षेत्र में यथासाध्य एक ही हो।

निर्वाचन

भारतीय संविधान में वर्णित उपबन्धों के अधीन रहते हुए राज्य विधान मण्डल द्वारा नियत रीति से निर्वाचन सम्पन्न होगा। पंचायती राज व्यवस्था के तीनों स्तरों के सदस्यों का चुनाव प्रत्यक्ष रूप से जनता द्वारा करवाने की बात कही गयी है। **'73वां संविधान संशोधन अधिनियम निष्पक्ष एवं स्वतंत्र चुनाव की व्यवस्था हेतु राज्य निर्वाचन आयोग की स्थापना की जायेगी।'**[1]

राज्य निर्वाचन आयोग की स्थापना राज्य का राज्यपाल राज्य विधान मण्डल द्वारा नियत रीति से करेगा। राज्य निर्वाचन आयोग की स्थापना, निर्देशन, नियंत्रण से सम्बन्धित

---

1. भारतीय संविधान की धारा 243 के

तथा पंचायतों के चुनाव से सम्बन्धित सभी मामलों पर सम्बन्धित राज्य के विधान-मण्डल द्वारा विधि पारित करके निर्धारित किये जाने का प्राविधान है।

ग्राम पंचायत के सदस्यों का निर्वाचन ग्राम पंचायत क्षेत्र के अन्तर्गत आने वाले बयस्क नागरिकों या राज्य निर्वाचन आयोग द्वारा निर्मित उस पंचायत विशेष की निर्वाचक नामावली में वर्णित नागरिकों (पुरुष + महिला) द्वारा अप्रत्यक्ष प्रणाली के साथ गुप्त मतदान द्वारा किया जाता है। विभिन्न राज्यों में पंचायत के लिए भिन्न-भिन्न न्यूनतम व अधिकतम जनसंख्या का प्राविधान है। भारत के लगभग सभी राज्यों द्वारा नवीन प्रावधानों के अनुसार पंचायतों का चुनाव सम्पन्न करवाया जा चुका है। आसाम, तमिलनाडु में जहाँ पंचायतों की न्यूनतम जनसंख्या 300, 500 व अधिकतम जनसंख्या 5,000 निर्धारित की गयी है वहीं इस जनसंख्या के बीच न्यूनतम 5 व अधिकतम 21 सदस्य हो सकते हैं। उड़ीसा एक ऐसा प्रान्त है जहाँ पर चुनाव लड़ने हेतु उड़िया भाषा का अध्ययन करना अनिवार्य कर दिया गया है। राजस्थान में हिन्दी भाषा पढ़ना, लिखना अनिवार्य रखा गया है। चुनाव के बाद सदस्य या अध्यक्ष द्वारा दो से अधिक बच्चे उत्पन्न करने पर उन्हें अयोग्य घोषित करने का प्राविधान रखा गया है। ग्राम पंचायत के सम्बन्धित न्यूनतम व अधिकतम जनसंख्या व सदस्यों की जानकारी से सम्बन्धित जानकारी के चार्ट उपलब्ध हैं -

चार्ट - 1

क्र. सं.	राज्य	न्यूनतम जनसंख्या	अधिकतम जनसंख्या	न्यूनतम सदस्य संख्या	अधिकतम सदस्य संख्या
1.	उत्तर प्रदेश	1000	-	9	15
2.	बिहार	5000	7000	500 पर एक (10)	14
3.	राजस्थान	3000	-	9	अतिरिक्त 1000 जन. तक दो सदस्य
4.	मध्य प्रदेश	-	-	10	10
5.	तमिलनाडु	500	-	5	15
6.	पश्चिम बंगाल	-	-	5	30
7.	पंजाब	2000	10000	5	13
8.	उड़ीसा	2000	10000	11	25
9.	महाराष्ट्र	-	-	7	17
10.	केरल	हर गांव	-	8	15

11.	कर्नाटक	5000	7000	400 पर एक	-
12.	हिमाचल प्रदेश	1000	5000	7	15
13.	हरियाणा	-	-	6	20
14.	गुजरात	3000	-	7	अतिरिक्त 1000 जन. तक दो सदस्य
15.	आन्ध्र प्रदेश	1000	10000	10	-
16.	असम	300	15000	5	21

ग्राम पंचायत अध्यक्ष/सरपंच का चुनाव भी जनता द्वारा सीधे होता है। इसके चुनाव दलगत व्यवस्था के आधार पर नहीं होते हैं। आरक्षण प्राविधान के अनुसार उस पंचायत क्षेत्र का कोई भी महिला/पुरुष, अनुसूचित जाति, जनजाति, पिछड़ा वर्ग, सामान्य वर्ग का नागरिक जो उस पंचायत क्षेत्र के अन्तर्गत करने वाली निर्वाचक नामावली में पंजीकृत हो निर्वाचन में भाग ले सकता है और उस निर्वाचन में सबसे अधिक मत पाने वाले उम्मीदवार को निर्वाचित (अध्यक्ष/सदस्य) घोषित किया जाता है। क्षेत्र पंचायत का एक अध्यक्ष तथा कुछ सदस्य (जो नियत किये गये हों) होते हैं। इन सदस्यो का निर्वाचन क्षेत्र पंचायत के अन्तर्गत आने वाले ग्राम पंचायतों के निर्वाचक नामावली में अंकित व्यक्तियों द्वारा किया जाता है। निर्वाचित सदस्य जो पंचायत क्षेत्र के प्रादेशिक निर्वाचन क्षेत्रों से प्रत्यक्ष निर्वाचन द्वारा चुने जायेंगे। क्षेत्र पंचायत के प्रत्येक सदस्य का प्रादेशिक निर्वाचन क्षेत्र यथासाध्य 2,000 की जनसंख्या पर आधारित होगा। परन्तु पर्वतीय क्षेत्र में 1 किमी. अर्द्धव्यास के क्षेत्र को सदस्य का निर्वाचन क्षेत्र घोषित किया गया है और चुने हुए सदस्यों के द्वारा अपने से पीठासीन अर्थात् प्रमुख या उपप्रमुख का निर्वाचन किया जाता है। प्रमुख के चुनाव में दो या दो से अधिक सदस्य भाग ले सकते हैं और जिन सदस्य को सर्वाधिक मत प्राप्त होते हैं वह निर्वाचित घोषित किया जाता है।

जिला पंचायत के लिए प्रादेशिक निर्वाचन क्षेत्रों के प्रत्यक्ष निर्वाचन द्वारा निर्वाचित सदस्य, प्रत्येक प्रादेशिक निर्वाचन क्षेत्र का विभाजन इस रीति से किया जायेगा कि प्रत्येक प्रादेशिक निर्वाचन क्षेत्र की जनसंख्या यथासाध्य 50,000 होगी तथा 50,000 की जनसंख्या पर एक ही सदस्य होगा। परन्तु पर्वतीय क्षेत्र में 7 किमी. के अर्द्धव्यास क्षेत्र को निर्वाचन क्षेत्र माना गया। भले ही जनसंख्या 50,000 से कम हो। प्रत्येक जिला पंचायत में एक अध्यक्ष (पीठासीन) तथा नियत सदस्य होंगे। सदस्यों का चुनाव उस प्रादेशिक निर्वाचन क्षेत्रों के निर्वाचक नामावली में दर्ज व्यक्तियों द्वारा प्रत्यक्ष मतदान विधि द्वारा किया जायेगा तथा

सर्वाधिक मत प्राप्त करने वाले सदस्यों को निर्वाचित किया जायेगा। अध्यक्ष का चुनाव उस जिला पंचायत के सदस्यों द्वारा अपने बीच से ही किसी को चुनना होता है अर्थात् जो सदस्य अध्यक्ष के चुनाव में सर्वाधिक मत प्राप्त करता है वही अध्यक्ष निर्वाचित घोषित किया जाता है।

इस प्रकार यह स्पष्ट होता है कि पंचायती राज की त्रिस्तरीय व्यवस्था में सदस्यों का चुनाव तो सीधे जनता द्वारा किया जाता है लेकिन '**ग्राम पंचायत को छोड़कर बाकी क्षेत्र पंचायत एवं जिला पंचायत दोनों ही अपने पीठासीन का निर्वाचन सीधे जनता द्वारा न होकर सदस्यों के द्वारा स्वयं किया जाता है।**'[1] जो यह दर्शाता है कि केन्द्र से लेकर जड़ (ग्राम पंचायत) तक लोकतंत्र का विकेन्द्रीकरण एवं जन कार्यों में जनता की सक्रिय सहभागिता लेने का प्रयास किया जाता है।

आरक्षण -

73वाँ संविधान संशोधन अधिनियम सभी प्रकार की पंचायतों में अनुसूचित जाति, अनुसूचित जन जाति, पिछड़ा वर्ग, महिलाओं के लिए आरक्षण की व्यवस्था करता है। '**अनुसूचित जन जाति, अनुसूचित जाति के लिए प्रत्येक पंचायत में कुल निर्वाचित स्थानों में इन वर्गों के लिए उसी अनुपात में स्थान आरक्षित होंगो जो अनुपात उस पंचायत क्षेत्र की जनसंख्या से उस क्षेत्र में अनुसूचित जाति तथा अनुसूचित जनजाति की जनसंख्या का है।**'[2] इसके अलावा अनुच्छेद 243 की धारा (6) के अन्तर्गत राज्य विधान-मण्डल पिछड़े वर्ग के नागरिकों के लिए पंचायत में आरक्षण की व्यवस्था कर सकती है। इस विषय में आरक्षण का नियम तथा सीमा संशोधन का समय निर्धारित नहीं किया गया क्योंकि 73वां संविधान संशोधन अधिनियम के पारित होने के समय पिछड़ा वर्ग के लिए आरक्षण के प्रतिशत पर कुछ आम राय नहीं तय हो पायी थी अर्थात् केन्द्रीय स्तर पर इस विषय में बहस छिड़ी हुई थी।

आरक्षण के विषय में सर्वाधिक महत्वपूर्ण निर्णय महिलाओं के पक्ष में किया गया। भारतीय संविधान यह व्यवस्था करता है कि '**प्रत्येक पंचायत में प्रत्यक्ष निर्वाचन से भरे जाने वाले कम से कम एक तिहाई स्थान महिलाओं के लिए आरक्षित होंगे।**'[3] यह बात गौर के काबिल है कि राजीव गांधी के शासन काल में जब यह संवैधानिक संशोधन प्रस्ताव लाये जाने पर विचार किया जा रहा था तब यह आरक्षण प्रतिशत 30 था किन्तु 73वें संविधान

---

1. भारतीय संविधान का अनु. 243 C की धारा (5) (B)
2. भारतीय संविधान का अनु. 243 D की धारा (1)
3. पूर्वोक्त 243 डी की धारा (2)

संशोधन में यह प्रतिशत 33 हो गया। अर्थात् एक तिहाई कर दिया गया। यह आरक्षण वस्तुतः इस प्रकार लागू किये जाने की व्यवस्था है कि प्रत्येक वर्ग के लिए अर्थात् अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति, पिछड़ा वर्ग (सामान्य) अनारक्षित स्थानों में से एक तिहाई स्थान उसी वर्ग की महिलाओं के लिए आरक्षित होंगे। इस प्रकार किसी पंचायत क्षेत्र के अन्तर्गत जितने पर अनुसूचित जाति के लिए आरक्षित है उनमें से एक तिहाई पद उस श्रेणी की महिलाओं के लिए आरक्षित समझे जायेंगे तथा अन्य वर्गों के लिए भी यही नियम कारगर होगा।

73वें संविधान संशोधन अधिनियम 1992 में वर्णित सभी प्रकार के आरक्षण को लागू करने के लिए स्थानों के चक्रानुक्रम की व्यवस्था की गयी है। यह व्यवस्था उस अव्यवस्था को रोकने के लिए है जिससे एक स्थान, एक ही वर्ग के लिए लगातार बार-बार आरक्षित न रह सकें कि उस क्षेत्र में निवास करने वाले अन्य वर्ग के लोगों को पंचायत की राजनीति का क्षेत्र विरोध के विकास में योगदान करने का अवसर न प्राप्त हो सके। इसलिए कहा गया है कि आरक्षण का प्राविधान पंचायत क्षेत्र में चुनाव क्षेत्रों के चक्रानुक्रम के माध्यम से संचालित होगा।

सभी पंचायतों के पीठासीन (अध्यक्षों) के पद भी सभी वर्गों अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति, पिछड़ा वर्ग तथा अनारक्षित स्थानों के लिए तथा इन्हीं वर्गों के महिलाओं के लिए आरक्षित होंगे। परन्तु आरक्षण विधि सम्बन्धित राज्य विधान-मण्डल द्वारा तय की जायेगी। यद्यपि आरक्षण की सीमा वही होगी जो पंचायत के सदस्यों हेतु तय की गयी है। केवल अपवाद इतना होगा कि जहाँ आरक्षण जनसंख्या के आधार पर होना होगा वहाँ पूरे राज्य की जनसंख्या को ध्यान में रखा जायेगा। इस प्रकार अनुसूचित जातियों, जनजातियों, पिछड़ा वर्गों के लिए उतने ही अध्यक्ष पद (स्थान) आरक्षित होंगे जितने कि पूरे राज्य में इन वर्गों की जनसंख्या का अनुपात राज्य की सम्पूर्ण जनसंख्या से है तथा महिलाओं के लिए अध्यक्ष पदों के एक तिहाई पद आरक्षित होंगे और यह प्रत्येक वर्ग से उसी प्रकार जुड़कर एक तिहाई पद आरक्षित करके किया जायेगा, जैसा कि सीधे निर्वाचन से भरे जाने वाले स्थानों के लिए व्यवस्था की गयी है और अध्यक्ष पदों के स्थानों में भी आरक्षण की व्यवस्था संचालन हेतु चक्रानुक्रम का उसी प्रकार सहारा लिया जायेगा।

अर्हतायें एवं निर्बन्धन -

73वें संविधान संशोधन अधिनियम के अन्तर्गत सदस्य/अध्यक्ष के निर्वाचन में खड़े होने के लिए कुछ अर्हतायें एवं निर्बन्धन निश्चित किये गये हैं जिनके पास में ये योग्यतायें मौजूद

होती हैं। वहीं इनके चुनावों में उम्मीदवार हो सकते हैं।

(1) पंचायती राज व्यवस्था के अन्तर्गत गठित पंचायतों के सदस्य/ग्राम पंचायत अध्यक्ष होने के लिए आवश्यक है कि राज्य विधान मण्डल द्वारा निर्धारित विधि के अनुसार गठित प्रादेशिक निर्वाचन क्षेत्र (जहाँ से वह उम्मीदवार होना चाहता है) के अन्तर्गत निर्वाचक नामावली में नाम दर्ज होना चाहिए।

(2) कोई व्यक्ति एक साथ एक से अधिक पंचायतों (ग्राम पंचायत क्षेत्र, जिला पंचायत) का सदस्य नहीं होना चाहिए।

(3) उसे पागल या दिवालिया न घोषित किया गया हो।

(4) पंचायती राज व्यवस्था के अन्तर्गत ग्राम पंचायत सदस्य/अध्यक्ष क्षेत्र पंचायत पद हेतु 21 वर्ष तथा जिला पंचायत सदस्य/अध्यक्ष व क्षेत्र पंचायत के अध्यक्ष (प्रमुख) पद हेतु 21 वर्ष की उम्र होनी चाहिए। इससे कम उम्र का व्यक्ति निर्वाचन में उम्मीदवार नहीं हो सकता है।

(5) उसको राज्य/केन्द्र सरकार के अन्तर्गत आने वाले लाभ के पद पर नहीं होना चाहिए।

निरहर्तायें

(1) कोई व्यक्ति एक साथ एक या एक से अधिक निर्वाचन क्षेत्रों से एक से अधिक पंचायतों का सदस्य/अध्यक्ष नहीं हो सकता है और ऐसी स्थिति में उस व्यक्ति से एक स्थान अथवा/सभी स्थानों से पदमुक्त होने के लिए नियमों द्वारा कहा जा सकता है। उत्तर प्रदेश पंचायत विधि संशोधन अधिनियम 1994 के प्रारम्भ के पश्चात् हुए प्रथम निर्वाचनों में यदि कोई व्यक्ति एक से अधिक पद के लिए चुना जाता है तो वह निर्वाचन के परिणाम की घोषणा की दिनाङ्क से 60 दिन के भीतर या परिणामों को अलग-अलग दिनाङ्कों में घोषित किया गया हो तो अन्तिम परिणाम की घोषणा के दिनाङ्क से साठ दिन के भीतर एक पद को छोड़कर अन्य पदों से त्याग पत्र प्रस्तुत करेगा।

(2) पंचायत निर्वाचन विवादों का निर्णय करने के लिए सक्षम कोई अधिकारी किसी उम्मीदवार जिसके सम्बन्ध में यह पाया जाय कि उसने भ्रष्टाचार किया है, घोषणा की दिनाङ्क से पांच वर्ष से अधिक किसी अवधि में पंचायतों का सदस्य/अध्यक्ष चुने जाने पर अनर्ह घोषित कर सकता है।

(3) यदि कोई उम्मीदवार किसी मतदाता को अपने पक्ष में मत देने या दिलवाने के एवज में कोई धनराशि, मूल्यवान प्रतिफल या कोई स्थान या नियोजन देने का प्रस्ताव करता है तो उसको अनर्ह घोषित किया जा सकता है।

(4) यदि ऐसे व्यक्ति से मत देता या दिलवाता है जो मत देने का वास्तविक हकदार नहीं हो तो उम्मीदवार को अयोग्य घोषित किया जा सकता है।

(5) यदि राज्य सरकार की राय एवं किसी पंचायत का सदस्य/अध्यक्ष जानबूझकर अपने कर्तव्यों का समुचित पालन न कर रहा हो या करने से इंकार कर रहा हो या अपने अधिकारों का दुरुपयोग करता हो या अपने कर्तव्यों के पालन में अनाचार का दोषी पाया जाय तो उसको स्पष्टीकरण का समुचित अवसर देने के पश्चात् उसको अनर्ह घोषित सकती है।

पंचायतों का कार्यकाल

(1) प्रत्येक पंचायत यदि तत्समय प्रवृत्त किसी विधि के अधीन उसे पहले ही विघटित नहीं कर दिया जाता है तो अपने प्रथम अधिवेशन के लिए नियत तारीख से पाँच वर्ष की अवधि तक, न कि उससे अधिक बनी रहेगी।

(2) तत्समय प्रवृत्त किसी विधि का कोई संशोधन किसी स्तर पर ऐसी पंचायत का जो ऐसे संशोधनों के ठीक पूर्व कार्य कर रही है तब तक विघटन नहीं करेगा जब तक कि खण्ड 1 में विनिर्दिष्ट उसके कार्यकाल का अवसान नहीं हो जायेगा।

(3) किसी पंचायत का गठन करने के लिए निर्वाचन - (क) खण्ड (1) में विनिर्दिष्ट उसके कार्यकाल के अवसान से पूर्व।

(ख) उसके विघटन की तारीख की छह मास की अवधि के अवसान के पूर्व पूरा किया जायेगा।

परन्तु जहां वह शेष अवधि के लिए कोई विघटित पंचायत बनी रहती है। छह मास से कम है वहां ऐसी अवधि के लिए उस पंचायत का गठन करने के लिए इस खण्ड के अधीन कोई निर्वाचन कराना आवश्यक नहीं होगा।

(4) पंचायत के कार्यकाल के अवसान से पूर्व किसी पंचायत के विघटन पर गठित की गयी पंचायत उस अवधि के केवल शेष भाग के लिए बनी रहेगी। जिस अवधि तक विघटित पंचायत खण्ड (1) के अधीन बनी रहती। यदि वह इस प्रकार विघटित नहीं की जाती।

पीठासीन अधिकारी

73वां संवैधानिक संशोधन अधिनियम पंचायती राज की त्रिस्तरीय व्यवस्था में पीठासीन अधिकारियों का उल्लेख करता है **जिसमें 'ग्राम पंचायत स्तर के पीठासीन (प्रधान) का चुनाव सीधे जनता द्वारा किया जायेगा।'**[1] तथा अन्य दो स्तरों (क्षेत्र पंचायत, जिला पंचायत) में अध्यक्षों का निर्वाचन सीधे जनता द्वारा नहीं किया जायेगा वरन् **'उस पंचायत विशेष के निर्वाचित प्रतिनिधियों के द्वारा किया जायेगा।'**[2]

इस प्रकार 73वां संविधान संशोधन ग्राम पंचायत को छोड़कर क्षेत्र पंचायत तथा जिला पंचायत के पीठासीन अधिकारियों के अप्रत्यक्ष चुनाव की व्यवस्था करता है और यह स्पष्ट करता है कि पंचायतों के अध्यक्षों का निर्वाचन केवल निर्वाचित सदस्यों के माध्यम से किया जायेगा। दूसरे शब्दों में इस प्रकार कहा जा सकता है कि पंचायतों के पदेन सदस्यों को पीठासीन अधिकारियों के निर्वाचन में भाग लेने का अधिकार प्रदान नहीं किया गया है।

इसी तरह 73वां संविधान संशोधन अधिनियम इन पंचायतों के अध्यक्षों के निष्कासन का स्पष्ट उल्लेख करता है-

(1) ग्राम स्तरीय पंचायतों के अध्यक्षों के निष्कासन के सन्दर्भ में निष्कासन का प्रस्ताव पहले ग्राम पंचायत के कुल सदस्यों के बहुमत तथा मतदान में भाग लेने वाले सदस्यों के कम से कम दो तिहाई बहुमत से पारित होना आवश्यक है। तब यह प्रस्ताव ग्राम पंचायत के विचारार्थ प्रस्तावित किया जायेगा। इस कार्य के लिए ग्राम सभा की एक विशेष बैठक 15 दिन की सूचना देकर आहूत की जायेगी और इस बैठक में निष्कासन प्रस्ताव उपस्थित या मतदान करने वाले सदस्यों के बहुमत से पारित होना चाहिए। ग्राम सभा के कुल सदस्यों में से 50 प्रतिशत से कम है तो ग्राम पंचायत द्वारा पारित प्रस्ताव स्वतः ही समाप्त समझा जायेगा और 'इस तिथि से एक वर्ष तक अध्यक्ष के निष्कासन का दूसरा प्रस्ताव नहीं लाया जा सकता है।'[3]

(2) मध्य एवं जनपद स्तरीय पंचायतों के अध्यक्षों को भी हटाया जा सकता है। यदि सम्बन्धित पंचायत द्वारा इस आशय का प्रस्ताव **'पंचायत के कुल निर्वाचित सदस्यों के बहुमत तथा उपस्थित या मतदान करने वाले सदस्यों के दो तिहाई बहुमत से पारित हो जाये।'**[1] इस

---

1. भारतीय संविधान के अनु. 243 की धारा (5) (A)
2. भारतीय संविधान के अनु. 243 की धारा (5) (B)
3. भारतीय संविधान का अनु. 243 की धारा (6)

प्रकार नियुक्ति के समान ही मध्य एवं जनपद स्तरों के अध्यक्षों को हटाने में पदेन सदस्यों की कोई भूमिका नहीं होती है।

इस प्रकार यह स्पष्ट होता है कि निर्वाचन एवं निष्कासन का अधिकार 73वें संविधान संशोधन द्वारा एक संस्था अथवा निर्धारण व्यक्तियों को प्रदान किया गया है। पंचायतों के अध्यक्षों के निर्वाचन की विथि को सरल तथा निष्कासन की विधि को जटिलतर कहा जा सकता है।

पंचायतों के पदाधिकारी/पीठासीन - राजनीतिक/प्रशासकीय

स्तर	राजनीतिक पदाधिकारी अथवा जन प्रतिनिधि	प्रशासनिक पदाधिकारी अथवा लोक सेवक
ग्राम पंचायत	प्रधान/सरपंच या उप प्रधान /उपसरपंच	ग्राम सेवक पदेन पंचायत सचिव एवं अन्य कर्मचारी
क्षेत्र पंचायत/पंचायत समिति	प्रमुख/उपप्रमुख	खण्ड विकास अधिकारी एवं प्रसार अधिकारी
जिला पंचायत	अध्यक्ष/उपाध्यक्ष	मुख्य अधिकारी एवं अन्य कार्यपालक अधिकारी

कार्मिक व्यवस्था

संविधान की धारा 40 के अन्तर्गत कहा गया कि यदि पंचायती राज संस्थाओं को स्वायत्त शासन की इकाइयों के रूप में सक्षम बनाना है और 73वें संविधान संशोधन की ग्यारहवीं अनुसूची के 29 विषयों से सम्बन्धित शक्तियोंका विकेन्द्रीकरण करना है तो आवश्यक है कि विभागीय मापदण्डों के अनुरूप पंचायती राज संस्थाओं में अधिकारी एवं कर्मचारियों के पदों की स्थापना की जाय। सामान्यतः राज्य सरकारें पंचायती राज संस्थाओं को उनके कार्यों के अनुसार पर्याप्त स्टाफ की व्यवस्था नहीं कर पाती है और पंचायती राज संस्थाओं द्वारा अतिरिक्त स्टाफ की मांग की जाती है चाहे यह मांग उचित ही क्यों न हो फिर भी राज्य सरकारें पद सृजन की स्वीकृति के साथ शर्त लगा देती है कि इनके वेतन एवं भत्ते पंचायती राज संस्थायें अपने निजी स्रोतों से सृजित आय में से भुगतान करेंगी।

संगठनात्मक स्वरूप

पंचायती राज की त्रिस्तरीय व्यवस्था में निम्नलिखित अधिकारी और कर्मचारी सामान्यतः कार्यरत रहते हैं-

राज्य सेवा के पद

(1) मुख्य कार्य अधिकारी (जिला परिषद)

(2) मुख्य विकास अधिकारी (पंचायत समिति)

(3) मुख्य लेखाधिकारी/लेखाधिकारी

(4) अधिशासी अभियन्ता/सहायक अभियन्ता

(5) वरिष्ठ जिला शिक्षा अधिकारी

(6) अन्य विभागों से प्रतिनियुक्ति पर अधिकारी। जैसे-

- (क) जिला विकास अधिकारी
- (ख) उप मुख्य चिकित्साधिकारी
- (ग) जिला विद्यालय निरीक्षक
- (घ) बेसिक शिक्षा अधिकारी
- (ङ) अधिशासी अभियन्ता नलकूप
- (च) अधिशासी अभियन्ता जल निगम
- (छ) अधिशासी/सहायक अभियन्ता लघु सिंचाई
- (ज) अधिशासी अभियन्ता, ग्रामीण अभियंत्रण सेवा
- (झ) जिला युवा कल्याण अधिकारी
- (ञ) जिला समाज कल्याण अधिकारी
- (ट) कार्यक्रम अधिकारी (बाल विकास परियोजना)
- (ठ) जिला पशुधन अधिकारी
- (ड) जिला कृषि अधिकारी
- (ढ) सहायक पंजीयक सहकारिता
- (ण) जिला भूमि संरक्षण अधिकारी
- (त) जिला उद्यान अधिकारी
- (थ) सहायक निदेशक, मत्स्य
- (द) जिला गन्ना विकास अधिकारी
- (ध) जिला दुग्ध विकास अधिकारी
- (न) जिला पंचायती राज अधिकारी

अधीनस्थ सेवा के पद

(क) सहायक लेखाधिकारी/लेखाकार/कनिष्ठ लेखाकार

(ख) प्रसार अधिकारी (सांख्यिकी प्रगति, शिक्षा, सहकारिता, पशुपालन आदि)

(ग) कनिष्ठ अभियन्ता।

पंचायत समिति तथा जिला परिषद सेवा के मन्त्रालयिक एवं अधीनस्थ पद

(क) वरिष्ठ लिपिक एवं स्टेनो

(ख) कनिष्ठ लिपिक (टंकण) आदि

(ग) वाहन चालक

(घ) ग्राम सेवक एवं पंचायत सचिव

(ङ) प्राथमिक विद्यालय अध्यापक (ग्रामीण क्षेत्रों की प्राथमिक शिक्षा अधिकतर पंचायती राज संस्थाओं को सुपुर्द है।)

(च) हैण्ड पम्प मिस्त्री (जहाँ पम्प साधारण पंचायतो में निहित हैं।)

(छ) गोबर गैस प्लान्ट मिस्त्री (जहाँ सारे कार्य पंचायतों के निहित हैं।)[1]

चतुर्थ श्रेणी पद -

उक्त स्वीकृत पदों के अलावा पंचायत की परिसम्पत्तियों और आवारा पशुओं के रखने हेतु स्थापित काजी हाउस आदि के प्रबन्ध के लिए जिला परिषद के मुख्य कार्यकारी अधिकारी की पूर्व अनुज्ञा संविदा के आधार पर अंशकालिक व्यक्तियों को पंचायती राज की निजी आय से तथा चतुर्थ श्रेणी कर्मचारी को राज्य सरकार से प्राप्त सामान्य अनुदान राशि से भुगतान कर सकेगी।

पदों की संख्या एवं योग्यता

राज्य सरकारों द्वारा समय-समय पर जिला परिषद तथा पंचायत समिति हेतु अधिकारियों एवं कर्मचारियों की संख्या निर्धारित की जाती है। जिला परिषद हेतु निम्न पद स्वीकृत है जिनकी निम्न योग्यतायें होंगी -

(1) मुख्य कार्यकारी अधिकारी - अधिकतर यह अधिकारी राज्य प्रशासनिक सेवा का

---

1. 73वें संविधान संशोधन के अनुपालन हेतु उत्तर प्रदेश पंचायत विधि संशोधन अधिनियम, 1994

सदस्य होता है एवं जिला विकास अधिकारी के नाम से जाना जाता है। बिहार में उपविकास आयुक्त, कर्नाटक में मुख्य सचिव, उत्तर प्रदेश में मुख्य अधिकारी के नाम से जाना जाता है। महाराष्ट्र और गुजरात में चूँकि जिला ग्रामीण विकास अभिकरण एवं जिला परिषद का एक ही मुख्य कार्यकारी अधिकारी होता है इसलिए कलक्टर से समकक्ष या उससे भी वरिष्ठ अधिकारी जिला परिषद में पद स्थापित होता है जो भारतीय प्रशासनिक सेवा का सदस्य होता है। मद्रास (तमिलनाडु) में तो कलेक्टर ही जिला विकास काउन्सिल का मुख्य अधिकारी होता है। महाराष्ट्र में डिप्टी कार्यकारी अधिकारी का भी पद सृजित है।

पंचायतों की शक्तियाँ, प्राधिकार और उत्तरदायित्व

'इस संविधान के उपबन्धों के अधीन रहते हुए राज्य का विधान मण्डल, विधि द्वारा पंचायतों को ऐसी शक्तियां, प्राधिकार प्रदान करेगा जो वह उन्हें पंचायती राज की संस्थाओं के रूप में कार्य करने योग्य बनाने के लिए आवश्यक समझे और ऐसी विधि में पंचायतों को उपयुक्त स्तर पर ऐसी शर्तों के अधीन रहते हुए भी जैसी उसमें विनिर्दिष्ट की जाय, निम्नलिखित के सम्बन्ध में शक्तियाँ और उत्तरदायित्व न्यायगत करने के लिए उपबन्ध किये जा सकेंगे -

(क) आर्थिक विकास और सामाजिक न्याय के लिए योजनायें तैयार करना।

(ख) आर्थिक विकास और सामाजिक न्याय की स्कीमों को, जो उन्हें सौंपी जाये, जिसके अन्तर्गत वे स्कीमें हैं जो ग्यारहवीं अनुसूची में सूचीबद्ध विषयों के सम्बन्ध में हैं। क्रियान्वित करें।[1]

पंचायतों द्वारा कर अधिरोपित करने की शक्ति और पंचायत निधियाँ

भारतीय संविधान में यह उपबन्ध किया है कि 'राज्य का विधान मण्डल विधि द्वारा -

(क) ऐसी प्रक्रिया के अनुसार और ऐसी सीमाओं के अधीन रहते हुए ऐसे कर, शुल्क, पथकर और फीसें उदग्रहीत, संग्रहीत और विनियोजित करके के लिए किसी पंचायत को प्राधिकृत कर सकेगा।

(ख) ऐसे प्रयोजनों के लिए ऐसी शर्तों तथा सीमाओं के अधीन रहते हुए राज्य सरकार द्वारा उदग्रहीत, संग्रहीत ऐसे कर, शुल्क, पथ कर, फीसें, किसी पंचायत को समुनदेशित कर

---

1. भारतीय संविधान का अनु. 243 (छ)

सकेगा।

(ग) पंचायतों के लिए राज्य के संचित निधि में से ऐसे सहायता अनुदान देने के लिए उपबन्ध कर सकेगा और

(घ) पंचायतों द्वारा या उनके ओर से प्राप्त सभी धनों से जमा करने के लिए भी ऐसी निधियों का गठन तथा ऐसी निधियों में से धन का प्रत्याहरण करने के लिए भी उपबन्ध कर सकेगा, जो विधि में विनिर्दिष्ट की जाय या किये जायें।'[1]

वित्तीय स्थिति को पुर्नविलोकन के लिए वित्त आयोग का गठन

भारतीय संविधान में यह उल्लेख है कि -

(1) 'राज्य का राज्यपाल संविधान (तिहत्तरवाँ संविधान संशोधन) अधिनियम 1992 के प्रारम्भ से एक वर्ष के भीतर यथाशक्ति शीघ्र और उसके पश्चात् प्रत्येक पांचवें वर्ष के अवसान पर, पंचायतों की वित्तीय स्थिति का पुर्नविलोकन करने के लिए और

(क) उन सिद्धान्तों की बचत जो निम्नलिखित को शासित करेंगे -

(i) राज्य द्वारा उद्ग्रहीत ऐसे करों, शुल्कों, पथकरों और फीसों के शुद्ध आगमों का राज्य और पंचायतों के बीच वितरण जो इस भाग के अधीन इनके बीच जो वितरित किये जा सकेंगे तथा पंचायतों के बीच सभी स्तरों पर, सभी आगमों पर अपने-अपने अंशों का आवंटन।

(ii) ऐसे करों शुल्कों, पथ करों और फीसों का अवधारण जो पंचायतों का समुदेशित किये जा सकेंगे या उनके द्वारा विनियोजित किये जा सकेंगे।

(iii) राज्य की संचित निधि में से पंचायतों को सहायता अनुदान -

(क) कोई अन्य विषय जो राज्यपाल द्वारा पंचायतों के ठोस वित्त पोषण के हित में वित्त आयोग को विनिर्दिष्ट किया जाय।

(2) राज्य का विधान मण्डल विधि द्वारा आयोग की संरचना अर्हता, जो आयोग के सदस्यों के रूप में नियुक्ति के लिए अपेक्षित होगी और रीति, जिसमें उनके चयन किया जायेगा का उपबन्ध कर सकेगा।

---

1. (पूर्ववत) उपर्युक्त का अनु. 243 (ज)

(3) आयोग अपनी प्रक्रिया अवधारित करेगा और उसे अपने कृत्यों के पालन के लिए ऐसी शक्तियाँ होंगी जो राज्य का विधान मण्डल विधि द्वारा उसे प्रदान करे।

(4) राज्यपाल इस अनुच्छेद के अधीन आयोग द्वारा की गयी प्रत्येक सिफारिश और उसके बारे में की गयी कार्यवाही का स्पष्टीकरण ज्ञापन राज्य के विधान मण्डल के समक्ष रखवायेगा।'[1]

राज्य के लेखाओं की सम्यपरीक्षा

भारत के संविधान के उपबन्धों के अनुसार - 'राज्य का विधान मण्डल, पंचायतों द्वारा लेखे बनाये रखने और उसमें ऐसे लेखों की सम्परीक्षा बनाये रखने के बावत, विधि द्वारा उपबन्ध कर सकेगा।'[2]

पंचायतों के निर्वाचन के सम्बन्ध में उपबन्ध करने की राज्य विधान-मण्डल की शक्तियाँ

भारतीय संविधान के उपबन्धों के अधीन रहते हुए- 'राज्य का विधानमण्डल विधि द्वारा, ऐसे पृथक् प्राधिकारी के जो ऐसी विधि में उपबन्धित किया जाय, अधीक्षण, निदेशन और नियंत्रण के आधीन पंचायतों के निर्वाचन से सम्बन्धित या सशक्त सभी विषयों के बावत उपबन्ध कर सकेगा।'[3]

संघ राज्य क्षेत्रों को लागू होना

संविधान के इस भाग के उपबन्ध संघ राज्य क्षेत्रों को लागू होंगे तथा किसी संघ राज्य क्षेत्र को उसके लागू होने से उनका यह प्रभाव होगा। भारतीय संविधान के अनुच्छेद 239 राज्य के राज्यपाल तथा संघ राज्य क्षेत्र के प्रशासक के प्रति यह निर्देश देता है और राज्य के विधान मण्डल या विधानसभा के प्रति निर्देश, उस संघ राज्य क्षेत्र के सम्बन्ध में जिसमें विधानसभा है, उस विधानसभा के प्रति निर्देश है।

परन्तु राष्ट्रपति लोक अधिसूचना द्वारा यह निर्देश दे सकेगा कि इस भाग के उपबन्ध किसी संघ, राज्य, क्षेत्र या उसके किसी भाग को ऐसे अपवादों और उपान्तरणों के अधीन रहते हुए लागू होंगे जो वह अधिसूचना में विनिर्दिष्ट करे।

---

1. उपर्युक्त अनु. 243 (झ)
2. उपर्युक्त अनु. 243 (ञ)
3. उपरोक्त का अनुच्छेद 243 (ट)

भाग का कतिपय क्षेत्रों में लागू न होना

243 (ङ) (1) इस भाग की कोई बात अनुच्छेद 244 के खण्ड (1) में विर्निदिष्ट अनुसूचित क्षेत्रों और खण्ड (2) में निर्दिष्ट जनजाति क्षेत्रों को लागू नहीं होंगे।

(2) इस भाग की कोई बात निम्नलिखित को लागू नहीं होगी -

(क) नागालैण्ड, मिजौरम और मेघालय के राज्य

(ख) मणिपुर राज्य में ऐसे पर्वतीय क्षेत्र जिनके लिए तत्समय प्रवृत्त किसी विधि के अधीन जिला परिषदें हैं और पश्चिम बंगाल राज्य के दार्जिलिंग जिले के ऐसे पर्वतीय क्षेत्र जिसके लिए तत्समय प्रवृत्त किसी विधि के अधीन दार्जिलिंग गोरखा पर्वतीय परिषद है।

(3) इस संविधान में किसी बात के होते हुए भी -

(क) खण्ड (2) के उपखण्ड (क) में निर्दिष्ट किसी राज्य का विधान मण्डल, विधि द्वारा, इस भाग का विस्तार खण्ड (1) में निर्दिष्ट क्षेत्रों यदि कोई है के शिवाय उस राज्य पर करेगा यदि उस राज्य की विधानसभा इस आशय का एक संकल्प, उस सदन की कुल संख्या के बहुमत द्वारा तथा उस सदन के उपस्थित और मत देने वाले सदस्यों के कम से कम दो तिहाई बहुमत द्वारा पारित कर देती है।

(2) संसद विधि द्वारा भाग के उपबन्धों का विस्तार खण्ड (1) में निर्दिष्ट अनुसूचित क्षेत्रों और जनजाति क्षेत्रों पर ऐसे अपवादों और उपान्तरणों के अधीन रहते हुए, कर सकेगी जो इस विधि में विनिर्दिष्ट किये जायें और ऐसी कोई विधि अनुच्छेद 368 प्रयोजनों के लिए इस संविधान का संशोधन नहीं समझी जायेगी।

विद्यमान विधियों और पंचायतों का बना रहना

संविधान के 73वां संविधान संशोधन अधिनियम 1992 के प्रारम्भ के ठीक पूर्व राज्य में प्रवृत्त पंचायतों से सम्बन्धित किसी विधि का कोई उपबन्ध, जो इस भाग के उपबन्धों से असंगत है। तब तक जब तक कि सक्षम विधान मण्डल द्वारा या अन्य सक्षम प्राधिकारी द्वारा उसे संशोधित या निश्चित नहीं कर दिय जाता या जब तक ऐसे प्रारम्भ से एक वर्ष का अवसान नहीं हो जाता, इनमें से जो भी पूर्वतर हैं, प्रवृत्त बना रहेगा।

परन्तु ऐसे प्रारम्भ से ठीक पूर्व विद्यमान सभी पंचायतें अपने कार्यकाल की समाप्ति तक बनी रहेगी, यदि उन्हें उस राज्य की विधानसभा द्वारा या ऐसे राज्य के विधान मण्डल के

प्रत्येक सदन द्वारा, परित इस आशय के संकल्प द्वारा पहले ही विघटित नहीं कर दिया जाता।'[1]

243 (ण) के अनुसार भारतीय संविधान में किसी बात के होते हुए भी -

निर्वाचन सम्बन्धी मामलों में न्यायालयों के हस्तक्षेप का वर्णन

(क) अनुच्छेद 243 (ट) के अधीन बनायी गयी या बनाये जाने के लिए तात्पर्पित किसी ऐसी विधि को जो निर्वाचन क्षेत्रों के परिसीमन तथा ऐसे निर्वाचन क्षेत्रों को स्थानों के आवंटन से सम्बन्धित हैं। विधि मान्यता किसी न्यायालय में प्रश्न गत नहीं की जायेगी।

(ख) किसी पंचायत के लिए कोई भी निर्वाचन, ऐसी निर्वाचन अर्जी पर ही प्रश्न गत किया जायेगा जो ऐसे प्राधिकारी को और ऐसी रीति से प्रस्तुत की गयी है जिसका राज्य विधान मण्डल द्वारा बनायी गयी किसी विधि द्वारा या उसके अधीन उपलब्ध है अन्यथा नही।

ग्यारहवीं अनुसूई का जोड़ा जाना

(3) भारतीय संविधान में दसवीं अनुसूची के पश्चात् ग्यारहवीं अनुसूची जोड़ी जायेगी अर्थात्

ग्यारहवीं अनुसूची (अनु. 243 (जी)

क्र. सं.	विषय	सम्बन्धित विभाग	समिति का सुझाव
(1)	कृषि एवं कृषि विस्तार	कृषि विभाग	कृषि विस्तार कार्यकर्ताओं को पंचायती राज संस्थाओं के अधीन तकनीकी मार्गदर्शन कृषि विभाग के अधिकारी द्वारा।
(2)	भूमि सुधार एवं भू संरक्षण	कृषि विभाग	जल ग्रहण क्षेत्र के विकास कार्य में पूर्ण रूप से पंचायती राज संस्थाओं की सहभागिता।
(3)	लघु सिंचाई	सिंचाई विभाग	सिंचाई विभाग के अधीन 200 एकड़ तक के तालाबों का नियंत्रण पंचायती राज संस्थाओं को सौंपा जाय। रखरखाव/संचालन हेतु सिंचाई विभाग वांछित तकनीकी सहयोग देने/उक्त हस्तान्तरित तालाबों की आय का

1. उपरोक्त अनुच्छेद 243 . (ढ)

			उपयोग, उस तालाब की मरम्मत एवं उस पर नियोजित स्टाफ पर व्यय की जा सकेगी।
(4)	पशु पालन	पशु पालन विभाग	उप पशु चिकित्सा केन्द्र (सब सेन्टर) पंचायती राज संस्थाओं को हस्तान्तरित किया जाय। इस वर्ष नये खोले जाने वाले लगभग 400 (सब सेन्टर) में नियोजित किये जाने वाले सहायकों का नियोजन भी पंचायती राज संस्थाओं द्वारा।
(5)	मत्स्य पालन	पशुपालन विभाग	डी श्रेणी के मछली पालन तालाबों का साधारण एवं आवंटन आदि का कार्य पंचायती राज संस्थाओं को हस्तान्तरित कर दिया जाय एवं नियोजित स्टाफ भी पंचायती राज संस्थाओं को हस्तान्तरित किया जाय।
(6)	सामाजिक वानिकी	पशु पालन विभाग	ग्राम सभा द्वारा ग्राम वन सुरक्षा समिति की कार्यकारी समिति का चयन किया जाय।
(7)	लघु वन उपज	वन विभाग	कोई निर्णय नहीं
(8)	लघु उद्योग	उद्योग विभाग	कोई निर्णय नहीं।
(9)	उद्योग विभाग	खादी ग्राम एवं कुटीर उद्योग	खादी पर्यवेक्षक का प्रशासनिक नियंत्रण पंचायत समिति के अधीन। खादी ग्रामोद्योग बोर्ड का तकनीकी मार्ग दर्शन।
(10)	ग्रामीण आवास	पंचायती राज विभाग	पूर्व में ही पंचायती राज संस्थाओं द्वारा
(11)	पेय जल	जल स्वास्थ्य अभियांत्रिक विभाग	(1) हैण्ड पम्प साधारण का सम्पूर्ण कार्य, (2) प्रत्येक जिले में एक पेयजल प्रकोष्ठ की स्थापना डी. आर. डी. ए. में जन स्वास्थ्य अभियंत्रण विभाग के सहायक अभियन्ता एवं कनिष्ठ अभियन्ता प्रतिनियुक्ति पर पद स्थापित।
(12)	ईंधन एवं पारा	खाद्य एवं नागरिक आपूर्ति विभाग	कोई निर्णय नहीं।
(13)	सड़क एवं अन्य संचार साधन	सार्वजनिक निर्माण विभाग	अभी चर्चा नहीं हुई।

(14)	ग्रामीण विद्युतीकरण	ऊर्जा विभाग	कोई निर्णय नहीं।
(15)	गैर परम्परागत ऊर्जा स्रोत	ऊर्जा विभाग	एकीकृत ग्रामीण ऊर्जा कार्यक्रम के अन्तर्गत क्रियान्वित किये जा रहे गैर परम्परागत ऊर्जा गतिविधियों तथा स्ट्रीट लाईट्स, घरेलू बिजली आदि का क्रियान्वयन पंचायती राज संस्थाओं के माध्यम से किया जावे।
(16)	गरीबी उन्मूलन कार्यक्रम	ग्रामीण विकास विभाग	पूर्व में ही पंचायती राज संस्थाओं के द्वारा।
(17)	प्राथमिक एवं माध्यमिक शिक्षा	शिक्षा विभाग	प्राथमिक शिक्षा पूर्व में ही पंचायती राज संस्थाओं के पास। माध्यमिक शिक्षा में अभी चर्चा नहीं हुई।
(18)	तकनीकी एवं व्यवसायिक	शिक्षा विभाग	अभी चर्चा नहीं हुई।
(19)	प्रौढ़ एवं अनौपचारिक शिक्षा	शिक्षा विभाग	अभी चर्चा नहीं हुई।
(20)	पुस्तकालय	शिक्षा विभाग	अभी चर्चा नहीं हुई।
(21)	सांस्कृतिक गतिविधियाँ	कला एवं संस्कृति विभाग	अभी चर्चा नहीं हुई।
(22)	मंडी एवं मेले	पंचायती राज विभाग	पूर्व में ही पंचायती राज संस्थाओं द्वारा
(23)	स्वास्थ्य एवं स्वच्छता	चिकित्सा एवं स्वास्थ्य विभाग	(1) मुख्य चिकित्सा एवं स्वास्थ्य अधिकारी प्राथमिक राज विभाग के अधीन। तकनीकी नियंत्रण चिकित्सा निदेशालय का गठन लेकिन प्रशासनिक नियंत्रण जिला परिषद का। (2) उपकेन्द्र एवं अन्य अराजपत्रित कर्म - चरियों की प्रथम नियुक्ति जिला परिषद करेगी।
(24)	परिवार कल्याण	चिकित्सा एवं स्वास्थ्य विभाग	जन स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण के समस्त कार्यक्रमों को प्रभावी ढंग से लागू करने का उत्तरदायित्व पंचायती राज संस्थाओं का होगा।

(25)	महिला एवं बाल विकास	महिला एवं बाल विकास विभाग	(1) आंगनबाड़ी केन्द्रों का पर्यवेक्षण एवं आंगनबाड़ी कार्यकर्ताओं का चयन ग्राम पंचायतों द्वारा। (2) सी. डी. पी. ओ. को अतिरिक्त विकास अधिकारी का दर्जा देते हुए इनका नियंत्रण पंचायती राज संस्थाओं के अधीन। (3) जिला महिला विकास अभिकरण का अध्यक्ष जिला प्रमुख/जिला कलेक्टर कार्यकारी निदेशक।
(26)	समाज कल्याण	समाज कल्याण विभाग	विकलांग एवं अक्षम व्यक्तियों की पहचान ग्राम पंचायत द्वारा।
(27)	अनुसूचित जाति, जनजाति एवं कमजोर वर्गों का कल्याण	समाज कल्याण विभाग	(1) अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जन-जाति के छात्रावासों का पर्यवेक्षण भर्ती समिति एवं प्रबन्धन में पंचायती राज संस्थाओं द्वारा। (2) अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति के बालक/बालिकाओं को शाला में प्रवेश लेने तथा अध्ययनरत रहने पर मिलने वाली छात्रवृत्ति की जानकारी ग्राम समाज में दी जायेगी।
(28)	सार्वजनिक वितरण प्रणाली	खाद्य एवं नागरिक आपूर्ति विभाग	(1) राशन की दुकान का आवंटन वितरित की गयी सामग्री का पूर्ण लेखा-जोखा, राशन की दुकान की समयावधि बढ़ाने एवं निरस्त करने बावत निर्णय राशन की दुकानों का निरस्तीकरण ग्राम सभा में चर्चा कर किया जायेगा। (2) सार्वजनिक वितरण प्रणाली के पर्यवेक्षण हेतु गठित सतर्कता समिति में पंचायती राज़ संस्थाओं को जोड़ा जाय।
(29)	सामुदायिक सम्पत्तियों का रखरखाव	पंचायतीराज विभाग	पूर्व में ही पंचायती राज संस्थाओं द्वारा

वित्तीय स्रोत

संविधान के 73वें संशोधन से पूर्व पंचायतों के पास कार्य तो थे लेकिन इन कार्यों को

सम्पादित करने के लिए धन की व्यवस्था नहीं की गयी थी जो पंचायती राज संस्थाओं को दुर्बल एवं दिशाहीन स्थिति प्रदान कर रही थी और धन जुटाने के स्रोत भी बहुत कम पंचायती राज व्यवस्था को प्रदान किये गये थे और धन की व्यवस्था के लिए उन्हें राज्य सरकारों पर निर्भर रहना पड़ता था। अतः 73वें संविधान संशोधन द्वारा पंचायती राज संस्थाओं को तीन प्रकार से धन जुटाने के साधन इस उपबन्ध के साथ प्रदान किये गये हैं कि राज्य विधान मण्डल विधि द्वारा निम्न व्यवस्था कर सकता है-

(1) 'पंचायत को करों, शुल्क, मार्ग करों तथा फीस अधिरोपित करने, एकत्र करने तथा विनियोजित करने की सत्ता प्रदान कर सकता है।'

(2) राज्य सरकार द्वारा आरोपित तथा एकत्रित करों, शुल्कों, मार्ग करों, फीसों को पंचायतों को प्रदान कर सकता है।'

(3) राज्य के संचित कोष से पंचायतों को सहायक अनुदान देने की व्यवस्था कर सकता है।'[1]

73वें संविधान संशोधन द्वारा एक वित्त आयोग की स्थापना करने का विचार प्रस्तुत करता है जो पंचायतों को वित्तीय स्रोतों के निष्पक्ष वितरण तथा राज्य विधान मण्डल या राज्य सरकारों द्वारा इस सम्बन्ध में किसी स्वेच्छागत कार्यवाही को रोकने के लिए अधिकृत होगा। तदनुसार - **'73वाँ संशोधन लागू होने के एक वर्ष के अन्दर तथा उसके पश्चात् प्रत्येक पांच वर्ष बाद राज्य का राज्यपाल पंचायतों की वित्तीय स्थिति पर पुर्नविचार करने के लिए एक वित्त आयोग की स्थापना करेगा।'**[2]

यह राज्य वित्त आयोग राज्यपाल को यह सलाह देगा कि किन स्थितियों एवं परिस्थितियों एवं किन सिद्धान्तों का अनुपालन किया जाये-

(1) 'राज्य तथा पंचायतों के मध्य राज्य सरकार द्वारा आरोपित करों, शुल्कों, मार्ग करों तथा फीस से प्राप्त शुद्ध आय के वितरण की व्यवस्था तथा इस आय का विभिन्न स्तरों की पंचायतों के मध्य वितरण।

(2) उन करों, शुल्कों, मार्ग करों, फीसों का निर्धारण जो कि पंचायतों द्वारा आरोपित अथवा विनियोजित किये जा सकते हैं।

---

1. उपरोक्त अनुच्छेद 243 (एच)
2. उपरोक्त अनुच्छेद (243 (आई) की धारा (7)

(3) राज्य के संचित कोष से पंचायतों को सहायक अनुदान तथा

(4) पंचायतों के सुदृढ़ वित्त हेतु राज्यपाल द्वारा वित्तीय आयोग को सौंपा गया कोई अन्य मामला।'[1]

73वें संविधान संशोधन द्वारा यह उल्लेख किया गया है कि राज्य का विधान मण्डल विधि द्वारा वित्त आयोग के गठन, आयोग का आकार, आयोग के सदस्यों की संख्या का निर्धारण तथा सदस्यों के चयन का आधार क्या होगा, इनका निर्धारण किया जायेगा।

तदनुसार - **'उपरोक्त आयोग का आकार, उसके चयन की विधि, सदस्यों की संख्या राज्य कानून द्वारा निर्धारित करने की व्यवस्था की गयी है।'**[2]

इस आयोग के कार्य करने की विधि एवं प्रक्रिया के सम्बन्ध में वर्णित है- यह आयोग किस विधि एवं प्रक्रिया से कार्य करेगा, यह उसी आयोग द्वारा स्वयं तय किया जायेगा। आयोग अपना प्रतिवेदन राज्यपाल के सम्मुख प्रस्तुत करेगा जो कि उस प्रतिवेदन को आवश्यक स्पष्टीकरण तथा इस पर तथा कार्यवाही की गयी, के साथ राज्य विधानमण्डल के सामने प्रस्तुत करने के लिए बाध्य है।

पंचायतों को पर्याप्त वित्तीय स्रोत देने के परिणामस्वरूप, पंचायतों पर कठोर वित्तीय नियंत्रण भी आवश्यक हो जाता है। पंचायतों के द्वारा पर्याप्त धन प्राप्त होने के बाद धन के दुरुपयोग की सम्भावना भी बढ़ जाती है। पूर्व प्रधानमंत्री श्री राजीव गांधी ने स्वयं स्वीकार किया था कि 'शासन से एक रुपया चलने के बाद जनता तक पहुंचते-पहुंचते मात्र पन्द्रह पैसे से ही बचते हैं।' अतः धन के दुरुपयोग को रोकने, भ्रष्टाचार को नियंत्रित करने हेतु राज्य विधान मण्डल विधि का निर्माण कर सकता और यह विधि निम्नांकित के आधार पर हो सकती है-

(1) पंचायत के लेखे का अनुरक्षण तथा

(2) इन लेखों का अंकेक्षण।

73वाँ संविधान संशोधन प्रमुख विशेषतायें

संविधान के 73वाँ संविधान संशोधन अधिनियम, 1992 के अनुसार देश में पंचायती

---

1. अनुच्छेद 243 (आई) की धारा (1)
2. अनुच्छेद 243 (आई) की धारा (1)

राज व्यवस्था देश में कानून के रूप में 24 अप्रैल, 1994 से लागू हो गयी और वह उपबन्ध किया गया कि शीघ्र ही सम्पूर्ण देश में ग्राम, क्षेत्र तथा जिला स्तर पर जनप्रतिनिधियों का चुनाव करके नया त्रिस्तरीय जनतांत्रिक संगठन कार्य रूप में लाया जायेगा। इससे पंचायती राज व्यवस्था सुदृढ़ होगी और ग्राम विकास की प्रक्रिया निश्चित रूप से तेज होगी और 73वां संविधान संशोधन इस तरह बहुत सी विशेषताएं समेटे हुए है जो निम्नलिखित प्रकार से पढ़ी जा सकती हैं -

(1) पंचायती राज संस्थाओं को संवैधानिक संस्तर

73वें संविधान संशोधन अधिनियम के शीर्षक द्वारा यह व्यक्त किया गया कि यह अधिनियम पंचायती राज संस्थाओं को संवैधानिक सस्तर प्रदान करने हेतु लाया जा रहा है। उल्लेखनीय है कि अधिनियम का प्रस्ताव संसद के समक्ष 1991 में 72वाँ संविधान संशोधन के रूप में लाया गया था किन्तु पारित होने के समय यह 73वाँ संविधान संशोधन 1992 और परिवर्तित होते-होते इसमें एक वर्ष और समय व्यतीत हो गया। इस प्रकार यह **संविधान संशोधन अधिनियम भारत सरकार के राजपत्र में 24 अप्रैल, 1993 को प्रकाशित और प्रवर्तित हुआ।'**[1]

इस संविधान संशोधन के पश्चात् भारत के संविधान के पूर्ववर्ती भाग 8 के पश्चात् पंचायत शीर्षक नाम से एक नये भाग 9 को जोड़ा गया जिसके माध्यम से संविधान में अनुच्छेद 243 जोड़ते हुए देश में पंचायती राज व्यवस्था से सम्बन्धित आवश्यक तत्वों को जोड़ा गया था, समावेश किया गया था अपितु इसके द्वारा पंचायती राज संस्थाओं को संवैधानिक मान्यता और चुनावों से सम्बन्धित प्रत्याभूति प्रदान की गयी। यह बताना आवश्यक होगा कि इससे पहले भारतीय संविधान में अनुच्छेद 40 के द्वारा नीति निर्देशक तत्वों में पंचायती राज व्यवस्था का उल्लेख किया गया था किन्तु वर्तमान अवस्था में उपर्युक्त व्यवस्था के पश्चात् पंचायती राज संस्थाओं को संवैधानिक मान्यता प्राप्त हो गयी है और सम्पूर्ण देश में पंचायती राज संस्थाओं से सम्बन्धित समस्त कार्य समयानुसार सम्पादित किये जा रहे हैं।

(2) त्रिस्तरीय पंचायतीराज व्यवस्था - 73वें संविधान संशोधन की प्रवर्तन की मंशा के अनुरूप प्रत्येक राज्य में पंचायती राज की त्रिस्तरीय व्यवस्था ग्राम स्तर, मध्यवर्ती स्तर व जिला स्तर पर इन संस्थाओं का गठन किया गया है।

---

1. 73वां संविधान संशोधन अधिनियम अनुच्छेद 243 ए, इस अधिनियम का प्रवर्तन भारत सरकार के गजट में 24 अप्रैल, 1993 को प्रकाशन के साथ हुआ।

इसका अभिप्राय यह है कि अब संविधान के द्वारा प्रत्येक राज्य को पंचायती राज की त्रिस्तरीय व्यवस्था को अपनाने का सामान्य निर्देश प्रदान किया गया है। इन्हें प्राविधानों के अनुसार उन राज्यों को मध्य वर्ती स्तर न गठित करने की छूट प्रदान की गयी है जिनकी आबादी 20 लाख से कम है। सभी राज्य सरकारों को पंचायती राज संस्थाओं के गठन के सम्बन्ध में अधिनियम बनाकर प्राविधान करने की स्वतंत्रता प्रदान की गयी है। इस सन्दर्भ में यह भी कहा गया है कि जहां तक सम्भव हो पंचायती राज संस्थाओं का गठन करते समय राज्यों को यह सुनिश्चित करना चाहिए कि समूचे राज्य स्तर पर गठित की जाने वाली पंचायती राज इकाइयों की जनसंख्या राज्य में यथासम्भव समास्त रहनी चहिए। पंचायती राज संस्थाओं के चुनाव के सम्बन्ध में 73वें संविधान संशोधन में अधिनियम की धारा 243 (C) (2) (3) (4) (5) में विस्तृत प्रावधान किये गये हैं।

(3) चुनाव आरक्षण - 73वें संविधान संशोधन द्वारा पंचायती राज संस्थाओं के निर्वाचन में आरक्षण का प्राविधान स्पष्ट रूप कर दिया गया है लेकिन यह निश्चित नहीं किया गया है कि किस वर्ग को किस मात्रा/प्रतिशत में आरक्षण दिया जायेगा किन्तु अधिनियम कुल आरक्षण सभी वर्गों हेतु 50% निश्चित लक्ष्य बना दिया गया था। अतः सभी राज्यों ने 73वें संशोधन के इस प्राविधान के अनुसार अपने-अपने राज्यों में आरक्षण की व्यवस्था कर दी है।

(4) अनर्हताओं के सम्बन्ध में प्रावधान - पंचायती राज संस्थाओं के सदस्यों की अनर्हताओं/अयोग्यताओं के सम्बन्ध में 73वें संविधान संशोधन अधिनियम में कहा गया है कि सम्बन्धित राज्य में चुनावों की अनर्हताओं से सम्बन्धित प्रवर्तित किसी कानून द्वारा अयोग्य घोषित किये जाने पर व्यक्ति इन संस्थाओं के चुनावों में भाग नहीं ले सकता है। कोई व्यक्ति इन अयोग्यताओं से ग्रस्त है या नहीं इस सम्बन्ध में उठे हुए किसी विवाद का निस्तारण करने के लिए प्राधिकारी की नियुक्ति और प्रक्रिया का सम्बन्धित राज्य विधान मण्डल अधिनियम बनाकर प्रावधान कर सकते हैं।

(5) पंचायती राज संस्थाओं के लेखा व अंकेक्षण के सम्बन्ध में प्रावधान - 73वाँ संविधान संशोधन अधिनियम में यह प्रावधान किया गया है कि विभिन्न स्तरों की पंचायती राज संस्थानों द्वारा रखे जाने वाले लेखा व उसके अंकेक्षण के सम्बन्ध में राज्य विधान मण्डल विधि बनाकर आवश्यक प्रावधान कर सकेंगे।

(6) ग्राम सभा का प्रावधान - 73वाँ संविधान संशोधन यह उल्लेख करता है कि ग्राम स्तर पर ग्राम सभा ऐसी शक्तियों का सद्व्यवहार और शक्तियों का निर्वाह कर सकेगी जो राज्य विधान मण्डल अधिनियम द्वारा विनिश्चित करे। उत्तर प्रदेश में वर्ष में कम से कम दो

बार ग्राम सभा की कार्यवाही का आयोजन करने का प्रावधान है।

पंचायती राज व्यवस्था और उत्तर प्रदेश

पंचायतें हमारे देश की प्राचीन ग्राम प्रशासन की संस्थायें रही हैं जो प्राचीन काल से ही ग्रामों में विधायिका, कार्य पालिका, न्याय पालिका के रूप में कार्य करती रही हैं। स्वतंत्रता प्राप्ति के उपरान्त देश में पंचायती राज व्यवस्था लागू करने के कई प्रयास किये गये। सच्चे अर्थों में लोकतंत्र का परिचालन केन्द्र/राज्य में बैठे 20 व्यक्तियों द्वारा नहीं कराया जा सकता है उसका कार्यान्वयन तभी सफल हो सकता है जब गाँव में बैठा हुआ किसान राज सत्ता में भागीदारी निभाये। भारत में सच्चे लोकतंत्र की प्रथम आवश्यकता गांव है। हर ग्रामीण को उसके गांव में वास्तविक स्वराज का अनुभव कराने के लिए प्रथम प्रयास गांव के प्रशासन के लिए ही किया जाना चाहिए। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद देश में गांव पंचायत तथा स्थानीय स्वशासन संस्थाओं के विकास हेतु बहुत सारे प्रयास किये गये (जिनका वर्णन पीछे किया जा चुका है), अतः उन प्रयासों के साथ उत्तर प्रदेश की जनता ने भी इन संस्थानों के विकसित रूप को प्राप्त करने व अपने विकास का इन्तजाम करने के सरकारी प्रयासों में भागीदारी निभायी। स्वतंत्रता प्राप्ति की पंचायतों से लेकर वर्तमान पंचायती राज व्यवस्था तक के सफलता को पांच चरणों में बांट कर इनका अध्ययन किया जा सकता है-

(1) प्रथम चरण 1947 से 1953 तक

(2) द्वितीय चरण 1953 से 1960 तक

(3) तृतीय चरण 1960 से 1972 तक

(4) चतुर्थ चरण 1973 से 1982 तक

(5) पंचम चरण 1983 से वर्तमान तक

(1) प्रथम काल : 1947 से 1953 तक

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद पंचायती राज व्यवस्था को सुदृढ़ करने हेतु उत्तर प्रदेश में यू. पी. पंचायती राज अधिनियम 1947 दिनांक 7 दिसम्बर, 1947 ई. को गवर्नर जनरल द्वारा हस्ताक्षरित मुद्रा 15.08.1949 से पंचायतों की स्थापना की गयी। 1947 के एक्ट के अनुसार उत्तर प्रदेश की पाँच करोड़ चालीस लाख जनता का प्रतिनिधित्व करने वाली 35,000, पंचायतो ने कार्य करना प्रारम्भ किया, साथ ही लगभग 8 हजार पंचायत अदालतें भी स्थापित की गयी। सन् 1951-52 में पंचायतों की संख्या में आंशिक वृद्धि हुई। इस वर्ष गांव सभाओं

की संख्या 35,919 से बढ़कर 35,943 तथा न्याय पंचायतों की संख्या 8,492 हो गयी। अब पंचायतों ने ग्रामीण जीवन में सुनियोजित स्तर का राष्ट्र निर्माण का कार्य करना आरम्भ किया और इसी वर्ष पहली पंचवर्षीय योजना भी चलायी गयी। योजना की सफलता के लिए शासन द्वारा पंचायती अदालत स्तर पर विकास समितियों के सदस्य मनोनीत किये गये। पंचायती मंत्री विकास समिति का भी मंत्री नियुक्त किया गया। जिला नियोजन समिति में भी प्रत्येक तहसील से एक प्रधान मनोनीत किया गया। सन् 1952-53 में जमींदार विनाश के बाद गांव पंचायतों की स्थापना हुई और गांव सभाओं के अधिकार बढ़ाये गये।

(2) द्वितीय काल : 1953 से 1960 तक

1953-54 में पंचायतो की सक्रियता एवं विभिन्न विकास सम्बन्धी कार्यक्रमों मे उनका सहयोग बढ़ाने के लिए विधान सभा सदस्यों की एक कमेटी का गठन किया गया। इस समिति द्वारा की गयी संस्तुतियों को आधार मानकर उत्तर प्रदेश पंचायती राज अधिनियम, 1954, जो अपने पूर्व अधिनियम संशोधन विधेयक था, को तैयार किया गया जो पंचायतों के दूसरे आम चुनाव 1955 में क्रियान्वित हुआ। इसके द्वारा गांव सभा और समाज के क्षेत्राधिकार को एक कर दिया। इस उद्देश्य की पूर्ति 250 या उससे अधिक जनसंख्या वाले हर गांव में गांव सभा संगठित करने का निश्चय किया गया। अतएव दूसरे आम चुनाव में पंचायतों की संख्या बढ़कर 72,425 हो गयी जिसमें 67,025 मैदान क्षेत्रों में तथा 5,400 पंचायतें पहाड़ी क्षेत्रों में थीं। 1957-58 में पंचायतों के क्षेत्रीय परिवर्तन के कारण उनकी संख्या 72,425 के स्थान पर 72,409 रह गयी जब कि न्याय पंचायतों की संख्या 8,585 रही। 1955 के दूसरे पंचायत चुनावों के बाद पंचायत अदालतों का नाम बदलकर न्याय पंचायत कर दिया गया।

(2) तृतीय चरण : 1961 से 1972 तक

सन् 1960-61 गांव पंचायतों की प्रगति का बहुत ही महत्वपूर्ण वर्ष रहा है। इसी वर्ष उत्तर प्रदेश पंचायत अधिनियम संख्या 3,1961 पारित हुआ। इस अधिनियम द्वारा गांवों को आत्म निर्भर तथा सम्पन्न बनाने के लिए ग्राम पंचायत क्षेत्रों में कृषि उत्पादन तथा समाज कल्याण सभी कार्यों को बहुत हद तक कार्यों में पंयाचतों को भागीदार बनाया गया तथा कृषि उत्पादन व कल्याण उपसमितियों का निर्माण ग्राम सभा स्तर पर किया गया। इसी संशोधन अधिनियम द्वारा ग्राम पंचायतों तथा न्याय पंचायतों की चुनाव पद्धति में आंशिक परिवर्तन किया गया जिसके अनुसार ग्राम सभा के प्रधान का चुनाव गुप्त मतदान प्रणाली द्वारा किये जाने का निश्चय हुआ। 10 फरवरी, 1961 ई. से 7 फरवरी, 1962 के मध्य पंचायतों का तृतीय सामान्य निर्वाचन सम्पन्न हुआ। भारत सरकार के निर्देशानुसार सत्ता के विकेन्द्रीकरण

के सिद्धान्तों के अनुरूप उत्तर प्रदेश क्षेत्र पंचायत तथा जिला पंचायत अधिनियम, 1961 क्रियान्वित किया गया। इस अधिनियम के अनुसार ग्राम सभा, क्षेत्र पंचायत तथा जिला परिषद की इकाइयों को एक सूत्र में बांधा गया। चूंकि पंचायतों के तीसरे आम चुनाव 1961-62 में सम्पन्न हुए। अतः इन चुनावों के पश्चात प्रदेश में ग्राम पंचायतों की संख्या 72,233 तथा न्याय पंचायतों की संख्या 8,594 रही है किन्तु इसके बाद पंचायतों का विकास ठहर सा गया था।

(4) चतुर्थ काल 1972 से 1983 तक

सन् 1972-73 में पंचायतों के चौथे आम चुनाव सम्पन्न हुए। इन चुनावों के उपरान्त ग्राम पंचायतों की संख्या 72,834 तथा न्याय पंचायतों की संख्या 8,792 हो गयी। 30 अक्टूबर, 1971 से पंचायत विभाग के ग्राम स्तरीय कार्यकर्ता पंचायत सेवकों के सरकारी कर्मचारी हो जाने के उपरान्त गांव पंचायतों की गतिविधियों में अपेक्षित सुधार हुआ और तदुपरान्त बड़ी द्रुत गति से गांव पंचायतों में भी ग्रामोपयोगी सत्ता की जड़ें गहरी जमने लगीं। वित्तीय वर्ष 1981-82 के अन्त तक कतिपय संशोधनों के फलस्वरूप प्रदेश में 72,809 गांव तथा 8,791 न्याय पंचायतें कार्य करती रही हैं। गांव पंचायतों का पांचवां सामान्य निर्वाचन वर्ष 1972-73 के उपरान्त मार्च, 1982 से जुलाई, 1982 के मध्य सम्पन्न हुआ। इस सामान्य निर्वाचन में गांव सभाओं की संख्या बढ़कर 74,060 हो गयी। इन चुनावों में इनके मतदाताओं 21 वर्ष से घटाकर 18 वर्ष कर दी गयी। लम्बे समय पश्चातसन 1982 में क्षेत्र समितियों का भी गठन कर दिया गया। यह इस काल की सबसे महत्वपूर्ण सफलता कही जा सकती है।

पांचवां चरण : 1983 से 1994 तक

लम्बे समय तक निष्क्रिय रहने के पश्चात् सन् 1989 में जिला परिषदों का गठन किया गया और पहली बार सन् 1989 में पहली बार प्रदेश में तीनों स्तरों की पंचायतें एक साथ अस्तित्व में आयी और इस चरण में पंचायतों के छठे सामान्य निर्वाचन भी हुए लेकिन केन्द्र सरकार द्वारा 73वें संविधान संशोधन अधिनियम 1992 में पारित किया गया। उसके उपबन्धों के अनुसार चूंकि प्रत्येक राज्य को एक वर्ष के अन्दर पंचायत विधि की स्थापना करके पंचायतें का गठन करना था। अतः उत्तर प्रदेश में भी अन्य राज्यों के समान 73वें संविधान संशोधन के प्रति प्रारम्भिक प्रत्युत्तर बड़ा शिथिल था। इसका एक कारण यह भी था कि जिस समय संशोधन अधिनियम पारित हुआ उस समय उत्तर प्रदेश में अयोध्या की घटना के कारण भारतीय जनता पार्टी की कल्याण सिंह सरकार निष्कासित कर, राष्ट्रपति शासन लगा हुआ था। यद्यपि इन मामलों को देखने के लिए नौकरशाही की समितियाँ गठित की गयी थी किन्तु

इनका कोई विशेष परिणाम नहीं निकला। तब भी कुछ प्रारम्भिक कार्य किया गया और परिणामस्वरूप जब समाजवादी दल व बहुजन समाज दल की सरकार में मुलायम सिंह मुख्यमंत्री बने तो नयी सरकार के विचारार्थ एक प्रकार का प्रारूप तैयार था। प्रारम्भ में संशोधन में राज्य सरकार की तमाम आपत्तियाँ थीं। अन्ततः संशोधन के क्रियान्वयन की विधि द्वारा निर्धारित एक वर्ष की अवधि शीघ्रता से समाप्त हो रही थी। अतः इस अवधि के अन्तिम दिन देर रात्रि में इन संशोधनों से सम्बन्धित आवश्यक कानून राज्य विधान मण्डल द्वारा पारित कर दिये गये। वास्तव में ये वे दोनों सदनों में बिना किसी चर्चा और विचार-विमर्श किये हुए पारित किये गये। इस तरह उत्तर प्रदेश में 73वां संविधान संशोधन पर विधि बनाकर इसे लागू किया गया। इसे उत्तर प्रदेश पंचायत राज संशोधन अधिनियम, 1994 के नाम से जाना जाता है। यह संशोधन अधिनियम 22 अप्रैल, 1994 से लागू हुआ। इसके उपरान्त ग्राम पंचायतों की संख्या 74,377 से घटकर 55,000 लगभग रह गयी। इस संशोधन अधिनियम द्वारा पंचायतों से सम्बन्धित निम्न उपबन्ध किये गये हैं-

73वें संशोधन का क्रियान्वयन

73वें संविधान संशोधन से पूर्व उत्तर प्रदेश में पंचायती राज व्यवस्था निम्नलिखित कानूनों पर आधारित थी-

(1) उत्तर प्रदेश पंचायत राज अधिनियम, 1947

(2) उत्तर प्रदेश क्षेत्र पंचायत एवं जिला पंचायत अधिनियम, 1961

(3) स्वतंत्रता के बाद आने वाले सामान्य अधिनियम इस प्रकार हैं-

उत्तर प्रदेश अधिनियम संख्या 10, 1950

उत्तर प्रदेश अधिनियम संख्या 6, 1952

उत्तर प्रदेश अधिनियम संख्या 18, 1952

उत्तर प्रदेश अधिनियम संख्या 6, 1954

उत्तर प्रदेश अधिनियम संख्या 2, 1955

उत्तर प्रदेश अधिनियम संख्या 19, 1957

उत्तर प्रदेश अधिनियम संख्या 15, 1960

उत्तर प्रदेश अधिनियम संख्या 3, 1961

उत्तर प्रदेश अधिनियम संख्या 9, 1962

उत्तर प्रदेश अधिनियम संख्या 20, 1963

उत्तर प्रदेश अधिनियम संख्या 10, 1965

उत्तर प्रदेश अधिनियम संख्या 27, 1989

उत्तर प्रदेश अधिनियम संख्या 17, 1990

उत्तर प्रदेश अधिनियम संख्या 9, 1994.[1]

73वें संविधान संशोधन के परिणाम स्वरूप उत्तर प्रदेश विधान मण्डल ने उत्तर प्रदेश पंचायत विधि 1947 तथा 1961 के उपरोक्त अधिनियमों को 73वें संशोधन अधिनियम की व्यवस्थाओं के अनुरूप संशोधित करता है और उन्हें एक साथ जोड़ता भी है। 73वें संविधान संशोधन के अनुसार उत्तर प्रदेश में नवीन पंचायती राज व्यवस्था निम्न प्रकार की गयी है-

त्रिस्तरीय संरचना सुरक्षित

73वां संविधान संशोधन त्रिस्तरीय पंचायती राज की व्यवस्था करता है किन्तु वे राज्य अपवाद कहे जा सकते हैं जिनकी आबादी 20 लाख से कम है।

प्रत्येक राज्य में पंचायती राज की ग्राम, मध्य व जिला स्तरों पर त्रिस्तरीय संरचना के गठन का प्राविधान करता है। तदनुसार उत्तर प्रदेश में पंचायतों के त्रिस्तरीय संरचना का गठन किया गया। ग्राम स्तर पर इसे ग्राम पंचायत, (क्षेत्र) मध्य स्तर पर इसे विकास खण्ड या क्षेत्र पंचायत तथा जिला स्तर पर जिला पंचायत नाम दिया गया। इनका आधारभूत विवरण इस प्रकार है-

पंचायतों का आकार एवं संरचना

उत्तर प्रदेश पंचायत संशोधन अधिनियम 1994 के अनुसार त्रिस्तरीय पंचायतों में 73वें संशोधन के अनुरूप इनके आकार एवं संरचना में परिवर्तन किया गया है। तदनुसार पंचायतों की संरचना इस प्रकार परिभाषित की गयी है। पंचायती राज की त्रिस्तरीय व्यवस्था के

---

1. शंकर राम - उत्तर प्रदेश पंचायती राज गाईड - I, पृष्ठ 5

अन्तर्गत ग्राम पंचायत की न्यूनतम जनसंख्या 1,000 निश्चित की गयी है और पर्वतीय क्षेत्रों में जिन ग्राम सभाओं की जनसंख्या 1,000 नहीं है तो राज्य सरकार पूर्व ग्राम सभाओं को ग्राम पंचायत घोषित कर सकती है।[1] प्रत्येक खण्ड के लिए क्षेत्र पंचायत का तात्पर्य उत्तर प्रदेश क्षेत्र पंचायत से है। पंचायत का निर्माण निम्न के मिलने से माना जायेगा। **'क्षेत्र पंचायत का एक प्रमुख होगा, जो इसका पीठासीन होगा और निम्नलिखित से मिलकर बनेगी।'**[2]

(क) खण्ड के ग्राम पंचायतों के समस्त प्रधान।

(ख) निर्वाचित सदस्य, जो पंचायत क्षेत्र के प्रादेशिक निर्वाचन क्षेत्र से प्रत्यक्ष निर्वाचन द्वारा चुने जायेंगे और इस प्रयोजन के लिए पंचायत क्षेत्र ऐसी रीति से प्रादेशिक निर्वाचन क्षेत्रों में विभाजित किया जायेगा कि प्रत्येक प्रादेशिक निर्वाचन क्षेत्र की जनसंख्या यथासाध्य 2,000 हो। प्रादेशिक निर्वाचन क्षेत्र घोषित कर सकता है।

इस पर यह प्रतिबन्ध अतिरोपित किया गया है कि **'राज्य सरकार पर्वतीय जिलों में इसके निमित्त विनिर्दिष्ट ग्राम के केन्द्र से एक किलोमीटर के अर्द्धव्यास के भीतर के क्षेत्र को यद्यपि कि उस क्षेत्र की जनसंख्या दो हजार से कम हो, प्रादेशिक निर्वाचन क्षेत्र घोषित कर सकती है और किसी क्षेत्र पंचायत के प्रादेशिक निर्वाचन क्षेत्र में किसी संघटक ग्राम पंचायत का प्रादेशिक निर्वाचन क्षेत्र भागतः सम्मिलित नहीं किया जायेगा।**[3]

(ग) लोकसभा के सदस्य राज्य विधानसभा के सदस्य जो उन निर्वाचन क्षेत्रों का प्रतिनिधित्व करते हैं जिनमें पूर्णतः या भागतः खण्ड समाविष्ट हैं।

(घ) राज्य सभा के सदस्य व राज्य विधान परिषद के सदस्य जो खण्ड के भीतर निर्वाचकों के रूप में रजिस्ट्रीकृत हैं।

73वें संविधान संशोधन के अनुसार उत्तर प्रदेश पंचायत विधि में यह प्रावधान किया गया कि प्रत्येक जिले के लिए एक जिला पंचायत होगी जिसका नाम उस जिले की जिला पंचायत कार्यालय के नाम पर होगा और उसका संगठन इस प्रकार किया जायेगा - जिला पंचायत का एक अध्यक्ष, जो उसका पीठासीन होगा और निम्न पंचायतों की रचना निम्नलिखित से मिलकर बनेगी।

---

1. उत्तर प्रदेश अधिनियम 1994 द्वारा प्रतिस्थापित
2. उत्तर प्रदेश पंचायत अधिनियम संख्या - 9 धारा 5, 6, 7 और 8 सन् 1994 द्वारा प्रतिस्थापित, पृष्ठ 9
3. अधिनियम संख्या 21 सन् 1995 द्वारा बढ़ाया गया। पृष्ठ 9 उत्तर प्रदेश पंचायत जिला पंचायत अधिनियम 1961 पृष्ठ 9

(क) जिले के सभी क्षेत्र पंचायतों के प्रमुख ।

(ख) निर्वाचित सदस्य, जो जिला पंचायत के प्रादेशिक निर्वाचन क्षेत्रों से प्रत्यक्ष निर्वाचन द्वारा चुने जायेंगे और इस प्रयोजन के लिए पंचायत क्षेत्र ऐसी रीति से प्रादेशिक निर्वाचन क्षेत्रों में विभाजित किया जायेगा कि प्रत्येक प्रादेशिक निर्वाचन क्षेत्र की जनसंख्या यथासाध्य एक ही हो जो लगभग 50,000 हो सकती है लेकिन पर्वतीय क्षेत्रों को अपवाद स्वरूप रखा गया है कि राज्य सरकार विधि द्वारा पर्वतीय जिलों में उसके द्वारा इस निमित्त विनिर्दिष्ट केन्द्र से 7 किमी. के अर्द्धव्यास के भीतर के क्षेत्रों को या उनके बराबर किसी क्षेत्र को जैसा नियत किया जाय, प्रादेशिक निर्वाचन क्षेत्र घोषित कर सकती है किन्तु ऐसे निर्वाचन क्षेत्रों की जनसंख्या 50 हजार से कम हो सकती है।

(ग) लोकसभा के सदस्य व राज्य विधानसभा के सदस्य जो उस निर्वाचन क्षेत्रों का प्रतिनिधित्व करते हैं जिनमें पंचायत क्षेत्र का कोई भाग समाविष्ट है।

(घ) राज्य सभा के सदस्य व राज्य विधान परिषद के सदस्य जो पंचायत क्षेत्र के भीतर निर्वाचकों के रूप में रजिस्ट्रीकृत हैं। (2) उपधारा (i) के खण्ड (क), (ग) और (घ) में उल्लिखित प्रादेशिक निर्वाचन क्षेत्रों का जिला पंचायत के सदस्यों को अध्यक्ष और उपाध्यक्ष के निर्वाचन और उनके विरुद्ध अविश्वास के प्रस्ताव के मामलों को छोड़कर जिला पंचायत की कार्यवाही में भाग लेने और उसकी बैठक में मत देने का अधिकार होगा।

आरक्षण - प्रत्येक पंचायत में अनुसूचित जाति, अनुसूचित जन जाति एवं पिछड़े वर्गों के लिए स्थान आरक्षित होंगे और इस प्रकार आरक्षित स्थानों की संख्या का अनुपात प्रत्येक पंचायत में प्रत्यक्ष मतदान द्वारा भरे जाने वाले स्थानों की कुल संख्या में यथासम्भव वही होगा जो उस पंचायत क्षेत्र में अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति एवं पिछड़े वर्गों का अनुपात उस क्षेत्र की कुल जनसंख्या में है और ऐसे स्थान किसी पंचायत में निम्न भिन्न प्रादेशिक निर्वाचन क्षेत्रों को चक्रानुक्रम से ऐसे क्रम में जैसा नियत किया जाय, आवंटित किया जायेगा।'[1]

पंचायतों की निर्वाचक नामावली

प्रत्येक स्तर की पंचायत के लिए निर्धारित प्रादेशिक निर्वाचन क्षेत्र के अनुसार अलग-अलग निर्वाचक नामावली तैयार की जाती है-

---

1. उत्तर प्रदेश क्षेत्र पंचायत एवं जिला पंचायत अधिनियम 1961, विवेक मिश्रा, पृष्ठ 17

(क) ग्राम पंचायत के लिए प्रत्येक प्रादेशिक निर्वाचन क्षेत्र के लिए निर्वाचक नामावली राज्य निर्वाचन आयोग के अधीक्षण, निर्देशन और नियंत्रण के अधीन तैयार की जायेगी। निर्वाचन नियमावली नियत रीति से प्रकाशित हो जाने पर वह उस प्रादेशिक निर्वाचन क्षेत्र की निर्वाचक नामावली होगी। निर्वाचन नामावली तैयार करने के तर्क में जिसने पहली जनवरी को 18 वर्ष की उम्र पार कर ली हो तथा जो ग्राम पंचायत के किसी प्रादेशिक निर्वाचन क्षेत्र का निवासी हो, वह उस क्षेत्र की निर्वाचक नामावली में रजिस्ट्रीकृत होने का अधिकारी है परन्तु निम्न अनर्हता होगी-

(1) भारत का नागरिक न हो।

(2) विकृत चित्त हो (सक्षम न्यायालय की घोषणा के आधार पर)।

(3) निर्वाचन सम्बन्धी भ्रष्ट आचरण का दोषी करार दिया गया हो।

यदि इस प्रकार की अनर्हता पायी जाती है तो तत्काल नाम निर्वाचक नामावली से काट दिया जायेगा।

प्रत्येक क्षेत्र पंचायत के प्रत्येक प्रादेशिक निर्वाचन क्षेत्र के लिए एक निर्वाचक नामावली होगी। क्षेत्र पंचायत के किसी प्रादेशिक निर्वाचन क्षेत्र के लिए निर्वाचक नामावली ग्राम पंचायत या ग्राम पंचायतों के उतने प्रादेशिक निर्वाचन क्षेत्रों की निर्वाचक नामामली से मिलकर बनेगी जितने कि उस क्षेत्र पंचायत के प्रादेशिक निर्वाचन क्षेत्र में सम्मिलित हैं-

'प्रत्येक जिला पंचायत के प्रत्येक प्रादेशिक निर्वाचन क्षेत्र के लिए एक निर्वाचक नामावली होगी जो कि क्षेत्र पंचायत के उतने प्रादेशिक निर्वाचन क्षेत्रों की निर्वाचक नामावलियो से मिलकर बनेगी जितने जिला पंचायत की उस प्रादेशिक निर्वाचन क्षेत्र के अन्तर्गत समाविष्ट है।'[1]

कार्यकाल

प्रत्येक पंचायत कार्यकाल उसकी प्रथम बैठक के लिए निर्धारित तिथि से पांच वर्ष की अवधि तक होगा यदि उसे धारा 232 के अधीन उसे पहले ही विघटित नहीं कर दिया जाता है। यदि किसी पंचायत के किसी सदस्य का कार्य काल यदि इस अधिनियम के उपबन्धों के अधीन अन्यथा समाप्त न कर दिया जाय तो जिला पंचायत के अवसान तक रहेगा। यदि

---

1. पंचायती राज एक दर्शन - सम्पादक : किसान सेवा समिति, लखनऊ, पृष्ठ 5, 40, 57

किसी अपरिहार्य परिस्थितियों के कारण पंचायतों को पूर्व में विघटित कर दिया जाता है तो नव निर्वाचित संस्था अपने से पूर्व संस्था के अवशेष कार्यकाल का ही उपभोग करेगी। मात्र इस अपवाद के कि यदि पूर्ववर्ती संस्था के कार्यकाल में 6 माह से ही कम बचे हैं तो नव निर्वाचित संस्था पूर्ण पांच वर्ष के लिए कार्यकाल का उपभोग करेगी।

विघटन

1994 के पुर्नगठन के पूर्व पंचायती राज व्यवस्था की दुर्बलताओं में एक यह थी कि इसके अन्तर्गत स्थापित संस्थाओं को राज्य सरकार किसी भी समय विघटित कर सकती थी और राज्य सरकारें इस सत्ता का प्रयोग अक्सर और पूर्ण स्वेच्छा से करती थी। परिणामस्वरूप लम्बे समय तक ग्रामीण इकाइयाँ लुप्त हो गयी। इस पर नियंत्रण लगाने के लिए 73वें संविधान संशोधन ने राज्य सरकार को इस बात के लिए बाध्य कर दिया कि यदि उसे कोई संस्था भंग कर दी जाती है तो भंग करने की तिथि से 6 माह के अन्दर निर्वाचन होने आवश्यक हैं। इस व्यवस्था को उत्तर प्रदेश पंचायत अधिनियम 1994 में भी अपना लिया गया। जैसे कि इससे राज्य सरकार पर विशेष प्रभाव पड़ जायेगा।

अर्हतायें

कोई सदस्य किसी पंचायत का प्रधान या सदस्य चुने जाने के लिए और प्रधान या सदस्य होने के लिए अनर्ह होगा-

(1) यदि राज्य विधान मण्डल के निर्वाचनों के प्रयोजन के लिए तत्समय प्रवृत्त किसी विधि या उसके अधीन अनर्ह होगा परन्तु किसी व्यक्ति ने 21 वर्ष की आयु पूरी कर ली है तथा 25 वर्ष की आयु से कम है तो इस आधार पर अयोग्य नहीं होगा।

(2) वह ग्राम पंचायत या किसी न्याय पंचायत का वैतनिक सेवक हो।

(3) वह किसी राज्य या केन्द्रीय सरकार व ग्राम पंचायत या न्याय पंचायत से भिन्न किसी स्थानीय प्राधिकारी आधीन लाभ का पद धारण करता हो।

(4) वह इन सार्वजनिक लाभ के पदों से दुराचरण के कारण पदच्युत कर दिया गया हो।

(5) उस पर ग्राम पंचायत, क्षेत्र पंचायत या जिला पंचायत का कोई कर, फीस, शुल्क या कोई अन्य देय बकाया हो या वह ग्राम पंचायत के अधीन कोई पद धारण करने के कारण प्राप्त उसके किसी अभिलेख या सम्पत्ति को उसे देने में उसके द्वारा ऐसा किये जाने की अपेक्षा

किये जाने पर विफल रहा हो।

(6) वह अनुन्योचित दिवालिया हो।

(7) वह नैतिक अद्यमता के किसी अपराध के लिए दोषी सिद्ध ठहराया गया हो।

(8) उसे संयुक्त प्रान्त आबकारी अधिनियम 1910 के अधीन तीन माह से अधिक का कारावास का दण्ड दिया गया हो।

(9) उसे निर्वाचन सम्बन्धी किसी अपराध के लिए दोषी ठहराया गया हो।

वित्तीय स्रोत

73वें संविधान संशोधन के अनुसार राज्य विधान मण्डल विधि द्वारा निर्धारित रीति से-

(1) किसी भी पंचायत को करों, शुल्कों, मार्ग करों तथा फीस अधिरोपित करने, एकत्र करने तथा विनियोजित करने की सत्ता प्रदान कर सकता है।

(2) राज्य सरकार द्वारा एकत्रित तथा अधिरोपित करों, शुल्कों, मार्ग करों तथा फीस को पंचायतों को प्रदान कर सकता है।

(3) राज्य के संचित कोष से पंचायतों को सहायक अनुदान देने की व्यवस्था कर सकता है।

उपरोक्त मामलों में राज्य विधान मण्डल से यह अपेक्षा की गयी है कि वह राज्य वित्त आयोग की संस्तुतियों के आधार पर कार्य करेगा जिसकी व्यवस्था 73वें संविधान संशोधन का अनुपालन करते हुए उत्तर प्रदेश पंचायत अधिनियम 1994 में की गयी है। इस प्रकार राज्य के राज्यपाल का यह दायित्व है कि वह 73वें संविधान संशोधन के एक वर्ष के अन्दर तथा उसके पश्चात् प्रत्येक पांच वर्ष बाद राज्य वित्त आयोग की स्थापना करेगा।

पंचायतों के अधिकार तथा कृत्य

73वें संविधान संशोधन अधिनियम के अनुपालन में उत्तर प्रदेश पंचायती राज्य अधिनियम 1994 द्वारा संविधान में ग्यारहवीं अनुसूची के अन्तर्गत आने वाले विषयों पर पंचायतों को प्रभावी और सशक्त बनाने हेतु निम्नलिखित अधिकार सौंपे गये हैं (जिनका विवरण प्रथम अध्याय में किया गया है।)।

☆☆☆

अध्याय चतुर्थ

अध्याय चतुर्थ

जिला पंचायत का गठन एवं विकास

जनपद फतेहपुर के महत्वपूर्ण आंकड़े

- ➢ **(A) *जिला पंचायत फतेहपुर का संक्षिप्त इतिहास***
- ➢ (i) *जनपद फतेहपुर की भौगोलिक स्थिति*
- ➢ (ii) *संरचना*
- ➢ (iii) *जनपद फतेहपुर की सामाजिक स्थिति*
- ➢ (iv) *जनपद फतेहपुर का आर्थिक सर्वेक्षण*
- ➢ **(B) *जिला पंचायत फतेहपुर की संरचना***
- ➢ **(C) *जिला पंचायत फतेहपुर की संगठनात्मक संरचना***
- ➢ **(D) *समितियाँ***
- ➢ (i) *कार्य समिति*
- ➢ (ii) *वित्त समिति*
- ➢ (iii) *शिक्षा एवं जन स्वास्थ्य समिति*
- ➢ (iv) *कृषि उद्योग एवं निर्माण समिति*
- ➢ (v) *समता समिति*
- ➢ (vi) *अन्य समितियाँ*
- ➢ (vii) *समितियों का संगठन*
- ➢ (viii) *समितियों का कार्यकाल और निर्वाचन पद्धति*

➢ (ix) *उप समितियां*

➢ **(E) *आरक्षण***

➢ **(F) *जिला पंचायत की निर्वाचक नामावली***

➢ **(G) *मत का अधिकार***

➢ **(H) *कार्यकाल***

➢ **(I) *अर्हता एवं निर्बन्धन***

➢ **(J) *अध्यक्ष एवं उपाध्यक्ष***

➢ (i) *अध्यक्ष, उपाध्यक्ष पद का आरक्षण*

➢ (ii) *कार्यकाल*

➢ (iii) *कार्य*

➢ **(K) *अधिकारी एवं कर्मचारी***

☆☆☆

जनपद – फतेहपुर
के
महत्वपूर्ण आंकड़े

जनपद – फतेहपुर

जनपद फतेहपुर के महत्वपूर्ण आंकड़े

जनपद फतेहपुर के भौतिक आंकड़े

क्र. सं.	मद	इकाई	अवधि	विवरण
1.	**भौगोलिक क्षेत्रफल**	वर्ग किमी.	2001	4152
2.	**जनसंख्या**			
	1. कुल	संख्या	2001	2308384
	(क) ग्रामीण	संख्या	2001	2070634
	पुरुष (ग्रामीण)	संख्या	2001	1094343
	महिला (ग्रामीण)	संख्या	2001	976291
	(ख) नगरीय	संख्या	2001	237750
	पुरुष (नगरीय)	संख्या	2001	125259
	महिला नगरीय	संख्या	2001	112491
	पुरुष-स्त्री अनुपात	संख्या	2001	1000-822
	2. अनु. जाति/जनजाति की संख्या			
	कुल	संख्या	2001	578537
	(क) ग्रामीण	संख्या	2001	544376
	पुरुष (ग्रामीण)	संख्या	2001	286404
	महिला (ग्रामीण)	संख्या	2001	257792
	(ख) नगरीय	संख्या	2001	34161
	पुरुष (नगरीय)	संख्या	2001	18121
	महिला नगरीय	संख्या	2001	16040

3.	**साक्षरता**	संख्या	2001	---
	कुल	संख्या	2001	1062431 (56.30%)
	(क) ग्रामीण	संख्या	2001	920014 (54.59%
	पुरुष (ग्रामीण)	संख्या	2001	607390 (67.91%)
	महिला (ग्रामीण)	संख्या	2001	312624 (39.52%)
	(ख) नगरीय	संख्या	2001	142417 (70.54%)
	पुरुष (नगरीय)	संख्या	2001	83436 (78.24%)
	महिला नगरीय	संख्या	2001	58981 (61.91%)
4.	**जनसंख्या घनत्व**	प्रति वर्ग (किमी.)	2001	556
5.	**कुल कर्मकर**	संख्या	2001	869612
	(क) कृषक	संख्या	2001	312613
	(ख) कृषि श्रमिक	संख्या	2001	126068
	(ग) पारिवारिक	संख्या	2001	22033
	(घ) अन्य कर्मकार	संख्या	2001	133721
	(च) सीमान्त कर्म कर	संख्या	2001	275177
6.	**जनपद में धर्मानुसार जनसंख्या**	संख्या	2001	2308384
	(क) हिन्दू	संख्या	2001	1997175
	(ख) मुस्लिम	संख्या	2001	307047
	(ग) ईसाई	संख्या	2001	930
	(घ) सिक्ख	संख्या	2001	1528
	(च) बौद्ध	संख्या	2001	493
	(छ) जैन	संख्या	2001	261
	(ज) अन्य	संख्या	2001	22
	(झ) धर्म नहीं बताया	संख्या	2001	928

7.	**तहसील**	संख्या	---	3
8.	**सामुदायिक विकास खण्ड**	संख्या	--	13
9.	**न्याय पंचायत/राजस्व ग्रामों की**	संख्या	--	132/1516
10.	**ग्राम पंचायत**	संख्या	--	789
11.	**कुल ग्रामों की संख्या**	संख्या	--	1522
	आबाद ग्राम/आबाद आवासीय मकानों की संख्या	संख्या	---	1353/325545
	गैर आबाद/विद्युतीकृत ग्रामों की संख्या	संख्या	---	169/ लगभग 1800
	नगर पंचायत	संख्या	--	5
	नगर पालिका परिषद	संख्या	--	2
12.	**पुलिस स्टेशन**	संख्या	--	20
13.	**रेलवे स्टेशन (हाल्ट)**	संख्या	--	13
14.	**कुल डाक घर**	संख्या	--	254
15.	**राष्ट्रीयकृत बैंक**	संख्या	--	50
	ग्रामीण बैंक शाखायें/ प्रारम्भिक कृषि ऋषि सहकारी समिति	संख्या	--	32/115
	एल. डी. बी.	संख्या	--	4
16.	**सस्ते गल्ले की दुकान**	संख्या	---	1032

17.	**शीत भण्डार**	संख्या	--	10
18.	**कृषि/कृषक/कृषि मजदूर**	--	--	41390/155154
	(क) शुद्ध बोया गया क्षेत्रफल	हेक्टे.	2004-05	290361
	(ख) एक बार से अधिक बोया गया क्षेत्रफल	हेक्टे.	2004-05	116325
	(ग) शुद्ध सिंचित क्षेत्रफल	हेक्टे.	2004-05	189404
	(घ) सकल सिंचित क्षेत्रफल	हेक्टे.	2004-05	269145
19.	**कृषि उत्पादन**		2004-05	
	खाद्यान्न	मी. टन	2004-05	648329
	गन्ना	मी. टन	2004-05	416158
	तिलहन	मी. टन	2004-05	12161
	आलू	मी. टन	2004-05	1523
	प्रमुख फसलें गेहूं, चना, अरहर, आलू, धान, मटर आदि			
	प्रमुख खनिज - मौरंग			
20.	**नहरों की लम्बाई**	किमी.	2005-06	1523
	कुल टेलों की संख्या	संख्या	2005-06	135
	कुल राजकीय नलकूप	संख्या	2005-06	601
	कार्यशील नलकूप	संख्या	2005-06	504
21.	**प्राथमिक विद्यालय**	संख्या	2005-06	2117
	उच्च प्राथमिक विद्यालय	संख्या	2005-06	576
	माध्यमिक विद्यालय/महाविद्यालय	--	2005-06	220/16
	औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थान	संख्या	2005-06	2
	पॉलीटेक्निक	संख्या	2005-06	1

22.	**ऐलोपैथिक चिकित्सालय / औषधालय**	संख्या	--	77
	आयुर्वेदिक/यूनानी चिकित्सालय	संख्या	--	35
	होम्योपैथिक चिकित्सालय	संख्या	--	42
	पशु चिकित्सालय	संख्या	--	40

23. प्रमुख नदियां - गंगा, यमुना

प्रमुख पर्यटन स्थल- भिटौरा, असनी, शिवराजपुर

प्रमुख ऐतिहासिक स्थल - भिटौरा,

असनी, शिवराजपुर, बावनी इमली, हसवा

24.	**जनपद के लोकसभा सदस्यों की संख्या**	-	01
	जनपद के राज्यसभा सदस्यों की संख्या	-	01
	जनपद के विधानसभा सदस्यों की संख्या	-	06

25.	**तारघर**	-	86
	कार्यरत कम्पनी	-	111
	प्रमुख उद्योग - चावल, दाल, स्टील, चमड़ा, धागा		
	पंजीकृत कारखाने	-	25
	हस्तशिल्प - मिट्टी तथा लकड़ी के खिलौने		
	पारिवारिक उद्योग	-	11186

❖

फतेहपुर जिला पंचायत का संक्षिप्त इतिहास

फतेहपुर जिला एवं जिला पंचायत के इतिहास का अध्ययन करने हेतु आवश्यक है कि हम सर्वप्रथम फतेहपुर के बसाये जाने के कारण एवं उद्देश्य का अध्ययन करें और इसी के साथ कालक्रमानुसार जिला पंचायत के इतिहास पर दृष्टिपात करते जायें। इस तरह दोनों के इतिहास के अध्ययन में सहजता एवं सुगमता होगी।

इतिहास जानने हेतु आवश्यक है कि सर्वप्रथम 'फतेहपुर' नामकरण पर विचार किया जाय। यह एक विचारणीय प्रश्न है एवं जिज्ञासा उत्पन्न करता है। कि हम जिस जनपद के निवासी हैं उसका फतेहपुर नाम किस प्रकार पड़ा होगा। फतेहपुर दो शब्दों से मिलकर बना है। फतेह और पुर फतेह आ अर्थ होता है विजय और पुर का अर्थ होता है स्थान। इस प्रकार अर्थ होता है- विजय प्राप्ति का स्थान। **'राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ के सदस्य अब इसे विजय नगर कहते हैं, अब तो जिज्ञासा में और अधिक वृद्धि होती है क्योंकि फतेह मुस्लिम काल का सूचक है और विजय हिन्दू काल का सूचक स्पष्ट प्रतीत होता है।'**[1]

इसी प्रकार अगर किसी देश, नगर, गांव, जनपद, कस्बे के नाम के पीछे नाम के अर्थानुसार कोई न कोई घटना अवश्य छिपी रहती है। इतिहास का ही अध्ययन करने से उस क्षेत्र के अतीत का गौरव एवं उस समय की राजनीतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक दशाओं का ज्ञान होता है।

अतः प्रस्तुत शोध प्रबन्ध में फतेहपुर जनपद के इतिहास एवं नामकरण के सम्बन्ध में इतिहास की खोज करने का प्रयास किया गया है। हमारे पास इतिहास की जानकारी करने हेतु मुख्यतया तीन साधन हैं-

'(1) लिपिबद्ध इतिहास अथवा घटनाओं के विवरण आदि।

(2) अवशिष्ट ऐतिहासिक चिन्ह मूर्तियां, शिलालेख, ईटें आदि।

(3) परम्परागत प्रचलित जन श्रुतियाँ, लोक कथायें आदि।'[2]

'फतेहपुर जनपद के नामकरण एवं इतिहास के सम्बन्ध में विभिन्न जनश्रुतियाँ जनता के बीच प्रचलित हैं। जैसे एक जन श्रुति है कि 'अरुगढ़िया राजा सीतानन्द के ऊपर फतेह प्राप्त

---

1. समवाय - डॉ. ओउम प्रकाश अवस्थी, पृष्ठ 10
2. समवाय - डॉ. ओउम प्रकाश अवस्थी, पृष्ठ 10

करने के उपरान्त सुल्तान इब्राहीम शाकी ने इस नगर का नाम फतेहपुर रखा किन्तु परम्परागत विचार की कोई पुष्टि उपलब्ध नहीं है।'[1]

इसी तरह कुछ लोगों से यह जनश्रुति सुनने में आई कि बंगाल के सुल्तान अलाउद्दीन ने इसका नामकरण एवं निर्माण किया।

दूसरी जनश्रुति यह है कि इस नगर का नामकरण बंगाल के सुल्तान अलाउद्दीन के सिपहसालार फतेहमन्द खाँ ने किया है, इसकी पुष्टि डेन्डासई में हिन्दू मन्दिर में लगे प्रस्तर खण्ड पर खुदे हुए वर्णन को आधार मानते हैं, जिसमें लिखा है -

'बहम्बुल शाह शहन्शाह गेती,
सनीनहफतहह नह सहज हिजरत।
अलाउद्दीन जलालुल्लाह सुल्तान वः
फतहमन्द खाँ फुरमर्द फरमान।'

(एक उर्दू के अध्यापक ने इसका अर्थ इस प्रकार बताया कि लिखा है- ईश्वर की कृपा एवं सर्वशक्ति सम्पन्न शासक की छाया तथा विश्व के राजाओं के राजा सुल्तान अलाउद्दीन ने 910 हिजरी में फतेहमन्द खाँ के फतेहपुर नगर बसाने हेतु फरमान दिया।)

शेख दलेलुल्लाह साहब ने इस मूलक के 34 वर्ष पूर्व 2 नवम्बर, 1850 ई. में तबका चौथा सुल्तान शाकी नाम से अप्रकाशित शीर्षक में लिखते हैं कि 'आवाम में मशहूर है यह फतेहपुर कस्बा आजाद करदा सुल्तान शाकी इब्राहीम जौनपुरी का है। मगर खुलासा तजकरी सादात से मालूम होता है - कि आजाद करदा सुलतान अलाउद्दीन बंगालवी का है। इसलिए यह तबका चौथा लिखा है। हाल यह है कि निजामिया (तत्कालीन उपलब्ध ऐतिहासिक पुस्तक से वाजय होता है कि तबका अहल इस्लाम, सलातीन देहची अहद कुतुबुद्दीन ऐबक में बंगाला बराबर हुकूमत सानातीन देहली से चला। आप के अहद मुहम्मद तुगलक शाह को सरकार कीर तरफ से या मालिक कमरुद्दीन सिपहसालार कद्र खां अपने आका कद्र खाँ को मार कर हुकूमत हुक्काम सलातीन देहली किता करके खुद अपने में सुल्तान फकरुद्दीन मुखातिब किया। व मलिक अली मुबारक ने अपने को सुल्तान अलाउद्दीन करार देकर सुल्तान फखरुद्दीन का 741 हिजरी (1340 ई.) में मार के बंगाला व लखगैती तमाम सुमालिक शाकी का सुल्तान हुआ। उस जमाने से इक्कीस इकतीस (साफ नहीं पढ़ा गया) सुल्तान तबका

---

1. फतेहपुर का मुहात, पृष्ठ 110 पर लिखा है।

बंगाला के ... सुल्तान अलाउद्दीन सानी दलक सुल्तान रहे, सुल्तान अलाउद्दीन सानी 929 हिजरी (1531 ई. में मरा द नूसीर शाह बेटा उसका बादशाह हुआ। बाद उसके नसीर शाह 11 साल सल्तनत किया फिर उसे सल्तनत मुर्न्तकिल होके सल्तनत बंगाला हुकूमन शेरशाह में आप के अल्किता सजातीन बंगालियान हो के देहली फिर मुरज्ञा हुआ।'[1]

इस प्रकार यह जनश्रुति प्रचलित है कि फतेहपुर इब्राहीम शाकी जौनपुरी का बसाया हुआ है किन्तु एक अन्य जनश्रुति यह भी है कि सुल्तान अलाउद्दीन बंगालवी का बसाया हुआ है। इसमें सुल्तान अलाउद्दीन ने सुल्तान फ़खरुद्दीन को मार कर 741 ई. में राजा हुआ और अपनी एक विजय को यादगार बनाने हेतु उसने यह कस्बा (बस्ती) को बसाने का आदेश दिया व विजय के नाम पर फतेहपुर इसका नामकरण किया।

फतेहपुर बस्ती तीन भागों में आबाद हुई है।

(1) फतेहपुर जनपद में फतेहपुर सदर ही (खास ही) नहीं थी। अठगढ़िया राजा सतानन्द के आठ किले थे। मऊ, सथरियांव, कोराई, सोनीपुर, वलोनी, बेरागढ़ीवा, दीदा शाह, जपुर अंसारी (अन्सार गढ़) शहर के मध्य में स्थित है। सातवां किला जी टी रोड के किनारे स्थित नवाब साहब का किला और कुसुम्भा थे। राजा सतानन्द स्वयं मऊ, मुतलका, मिटऊपुर खोशना में रहता था तथा अन्य सात किले में उसके वंशधर रहते थे। राजा के द्वारा सुल्तानपुर सादात और हाजीपुर गंगा आबाद किया गया।

उपर्युक्त विचार से यह स्पष्ट हो जाता है कि फतेहपुर नाम की बस्ती इससे पहले नहीं थी और यह भी स्पष्ट हो जाता है कि इस भूभाग पर अठगढ़िया राजा सतानन्द या उसके वंशधरों का साम्राज्य था। इस प्रकार इन जनश्रुतियों से यह बात उभरती है-

(i) इस बस्ती को दो बार अलग-अलग समयों में बसाया गया। पहली बार इस क्षेत्र में हिन्दू राजा (अठगढ़िया) सतानन्द को हराये जाने की विजय ख्याति को बनाये रखने हेतु फतेहपुर नाम से बस्ती आबाद की गयी। इस प्रकार फतेहपुर बस्ती आबाद होने के काल को जानने हेतु दोनों शासकों इब्राहीम शाकी और अलाउद्दीन बंगालवी के शासन काल और उनके शासन काल में हुई घटनाओं के कारण कालक्रम को आधार बनाया जा सकता है।

इस भूभाग पर 1519 ई. के पूर्व तक हिन्दू राजा सतानन्द था उसके वंशधरों का शासन

---

1. शेख दलेलुल्लाह - तबका चौथा सुल्तान शाकी मासे 2 No. y 1850 उल्लिखित है।

था जो नन्द वंश के गुजारेदार मालूम होते हैं। इस हिन्दू राजा ने मुस्लिम शासकों के मध्य तीन बार 1340-41 ई., 1406-07 ई. और 1518-19 ई. के मध्य युद्ध हुए। पहली बार अलाउद्दीन बंगालवी, दूसरी बार इब्राहीम शाकी जौनपुरी, तीसरी बार अलाउद्दीन हुसैन बंगालवी के मध्य युद्ध हुआ, जिसमें राजा तीनों बार हारा।'[1]

इस प्रकार मालूम होता है कि हर बार अठगढ़िया राजा के हारने पर नवीन बस्ती बसाये जाने के विषय में किसी प्रकार का उल्लेख और जनश्रुति नहीं मिलती है लेकिन 1540-41 ई. में फतेहपुर नाम की बस्ती बसाये गयी। यह कहा जा सकता है कि किन्तु इसके साथ पूर्व में अलाउद्दीन का नाम जुड़ा होने के कारण यह बस्ती इसके पहले भी बसायी गयी, यह भी कहा जा सकता है। भले ही इस बस्ती में कुछ गिने चुने घर ही क्यों न रहे हों और जब पुनः अठगढ़िया राजा सम्पन्न एवं शक्तिशाली हुए उन्हें उजाड़ या बर्बाद कर दिये होंगे। एक निष्कर्ष यह भी निकलता है कि **'फतेहपुर नाम की बस्ती प्रथम बार इब्राहीम शाकी जौनपुरी के समय में 1406-07 ई. के आस-पास स्थानीय अठगढ़िया राजा सीतानन्द या सतानन्द या उसके वंशधरों को हराकर विजय स्मृति में बसायी गई प्रतीत होती है।'**[2]

इब्राहीम शाकी जौनपुरी के बाद अलाउद्दीन द्वितीय बंगालवी से अठगढ़िया राजा के हारने का विवरण प्राप्त होता है और **'1519 ई. या उसके कुछ पूर्व अलाउद्दीन द्वितीय बंगालवी के समय में अठगढ़िया राजा पूरी तरह परास्त करके नष्ट कर दिये गये। तब यह बस्ती भली प्रकार फतेहपुर नाम से दूसरी बार बसायी गयी।'**[3] और यह वर्तमान तक बना हुआ है क्योंकि इसका विरोध करने वाला कोई भी स्थानीय राजा या सामन्त जिन्दा नहीं रहे थे।

निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि फतेहपुर जनपद अठगढ़िया राजा पर विजय प्राप्ति के बाद विजय स्मृति को बनाये रखने हेतु फतेहपुर नाम से बस्ती बसायी गयी।

अंग्रेजों के शासन काल तक फहेतपुर की बस्ती में काफी वृद्धि हो गयी थी और यह क्षेत्र कानपुर और इलाहाबाद के बीच होने के कारण दोनों ही जिलों में सम्मिलित था तथा 18वीं शताब्दी के आखिरी वर्षों में फतेहपुर नाम से जिला बनाने हेतु जनता ने अंग्रेजी सरकार से समय-समय पर मांग करती रही किन्तु सफलता 1814 ई. में प्राप्त हुई।' 'सन् 1814 ई. में फतेहपुर को जिला बनाकर भिटौरा में संयुक्त मजिस्ट्रेटी की स्थापना की गयी। भिटौरा में आवागमन व जिले के सिरे में होने के कारण जनमानस को होने वाली कठिनाइयों को देखते

---

1. समवाय - डॉ. ओउम प्रकाश अवस्थी, पृष्ठ - 15
2. पूर्ववत्
3. पूर्ववत्

हुए सन् 1825 में संयुक्त मजिस्ट्रेटी कार्यालय फतेहपुर में स्थापित कर दिया गया। **"31, अगस्त, 1826 ई. को कानपुर और फतेहपुर, इलाहाबाद जिलों में सम्मिलित सीमावर्ती गांवों तेरह परगनों में विभक्त कर फतेहपुर में सम्मिलित कर दिया गया। यह जिला गवर्नर लार्ड रमव्हर्स्ट के समय में स्थापित किया गया।'**[1] कर्नल एम्सव्हर्स्ट के प्रयासों तथा जनता की मांग के अनुसार - **'इलाहाबाद जनपद के छः थाने फतेहपुर, हथगांव गाजीपुर, कड़ा, हसवा, एकडला और कानपुर जनपद के चार थाने बिन्दकी, अमौली, खजुहा और कोड़ा को शामिल कर लिया गया।'**[2] इस तरह इन कानपुर और इलाहाबाद से अलग हुए क्षेत्र को 13 परगनों बाद में विकास खण्डों में विभाजित किया गया। इस तरह फतेहपुर जनपद अपना पूर्ण उद्भव को 31 अगस्त, 1826 को प्राप्त कर सका था। कुछ परिवर्तनों को छोड़कर आज तक अपने उसी स्वरूप को संजोये हुए है।

फतेहपुर जनपद की भौगोलिक स्थिति

जनपद फतेहपुर गंगा यमुना के बीच दो आबा के क्षेत्र में स्थित है जो इसे विशेष पहचान एवं समृद्धि प्रदान करता है। **'यह जनपद 25-26 से 26-27 उत्तरी एवं 8-14 से 85-20 पूर्वी देशान्तर के मध्य स्थित है।'**[3] यह जनपद चतुर्भुज प्रकार का आकार ग्रहण किये हुए है। उत्तर में पावन गंगा, दक्षिण में यमुना के साथ-साथ पाण्डु, रिन्द, ससुर खदेरी नदियों से युक्त फतेहपुर जनपद उत्तर में उन्नाव, रायबरेली, दक्षिण में चित्रकूट, बांदा, हमीरपुर, पूरब में कौशाम्बी तथा पश्चिम में कानपुर नगर तथा कानपुर देहात की सीमाओं को रेखांकित करता है। जनपद की भौगोलिक पूर्व से पश्चिम लम्बाई 100 किमी. तथा उत्तर से दक्षिण की चौड़ाई 40 किमी. है। **'जनपद का भौगोलिक क्षेत्रफल 4152 वर्ग किमी. है जो प्रदेश के क्षेत्रफल का 1-4 प्रतिशत तथा मण्डल के क्षेत्रफल का 27.0 प्रतिशत है।'**[4] क्षेत्रफल के दृष्टिकोण से फतेहपुर जनपद का प्रदेश में बयालिसवां तथा मण्डल में दूसरा स्थान है। प्रदेश की राजधानी लखनऊ से जिला मुख्यालय की दूरी 122 किमी. है। **'जनपद की कुल जनसंख्या 18,99,240 है जो प्रदेश की जनसंख्या का 1.70 प्रतिशत है। जनपद का घनत्व 457 वर्ग किमी. है। इसके सापेक्ष राज्य का जनसंख्या घनत्व 473 प्रति वर्ग किमी. है।'**[5] फतेहपुर जनपद में तीन तहसीलें खागा, बिन्दकी

---

1. फतेहपुर और स्वतंत्रता संघर्ष - लोकनाथ पाण्डेय, पृष्ठ - 29
2. प्रगति परिक्रमा फतेहपुर, 2004 - सम्पादक - प्रेमलाल, पृष्ठ 13-14 सूचना एवं जन सम्पर्क विभाग, फतेहपुर
3. फतेहपुर प्रगति परिक्रमा - सम्पादक - प्रेमलाल, पृष्ठ 19
4. सामाजार्थिक समीक्षा जनपद फतेहपुर - अर्थ एवं संख्याधिकारी कार्यालय फतेहपुर।
5. पूर्ववत्, पृष्ठ 1

और फतेहपुर है जिनके माध्यम से प्रशासनिक तथा राजस्व के कार्य सम्पन्न किये जाते हैं। **'जनपद के अन्तर्गत कुल 1516 ग्रामों में 1352 ग्राम आबाद तथा 164 गैर आबाद हैं। इसमें फतेहपुर तहसील में कुल 529 ग्राम हैं जिसमें 51 गैर आबाद, खागा तहसील में 564 ग्राम हैं जिसमें 83 गैर आबाद तथा बिन्दकी में 424 ग्राम हैं जिनमें 30 गैर आबाद ग्राम हैं।'**[1]

फतेहपुर जनपद के अन्तर्गत 4152 वर्ग किमी. क्षेत्रफल आता है जो फतेहपुर जनपद की तीनों तहसीलों में इस प्रकार क्रमशः बंटा हुआ है- फतेहपुर तहसील 38.2 प्रतिशत, खागा 30.2 प्रतिशत क्षेत्रफल, बिन्दकी 31.6 प्रतिशत क्षेत्रफल है। फतेहपुर जनपद के अन्तर्गत आने वाले 1516 ग्राम कुल 13 विकास खण्डों में विभाजित है जिसके द्वारा पंचायती राज व्यवस्था को संचालित किया जा रहा है। फतेहपुर तहसील के अन्तर्गत 5 विकास खण्ड (तेलियानी, बहुआ, भिटौरा, हसवा और असोथर) है। बिन्दकी तहसील के अन्तर्गत 4 विकास खण्ड (अमौली, देवमई, खजुहा व मलवां) है। खागा तहसील के अन्तर्गत भी 4 विकास खण्ड (विजयीपुर, ऐराया, हथगाम व धाता) आते हैं।

फतेहपुर जनपद में दो नगर पालिकायें तथा पांच नगर पंचायतें हैं। नगर पालिका में बिन्दकी, फतेहपुर हैं तथा नगर पंचायतें खागा, बहुआ, किशनपुर, हथगांव एवं जहानाबाद है। **'जनपद में 132 न्याय पंचायत तथा 789 ग्राम पंचायते हैं।'**[2] जनपद के अन्तर्गत 5 कृषि उत्पादन विकास मण्डियां हैं जिनमें खागा और बिन्दकी प्रदेश स्तर की विकास मण्डिया हैं।

संरचना (जनपद की भौगोलिक संरचना)

फतेहपुर जनपद दो आबा क्षेत्र होने के कारण अधिकतर जमीन समतल पायी जाती है। दो नदियों के मध्य स्थित होने के कारण जल निकासी की कोई समस्या नहीं है क्योंकि उत्तर में गंगा तथा दक्षिण में यमुना नदी जल निकासी में सहयोग करती है।

'खनिज की दृष्टि से फतेहपुर जनपद खनिज विहीन है। गंगा नदी से बालू तथा यमुना नदी से मौरंग प्राप्त होती है जो फ़तेहपुर जनपद की आय का मुख्य स्रोत है।'[3] फतेहपुर से यमुना की मौरंग की आपूर्ति कानपुर, रायबरेली, प्रतापगढ़, सुल्तानपुर, लखनऊ, बाराबंकी व फैजाबाद में की जाती है।

---

1. सामाजार्थिक समीक्षा जनपद फतेहपुर - अर्थ एवं संख्याधिकारी कार्यालय फतेहपुर।
2. पूर्ववत्, पृष्ठ 2
3. पूर्ववत्, पृष्ठ 2
3. पूर्ववत्, पृष्ठ 3

जनपद में अनेक प्रकार की मिट्टी पायी जाती है जो गंगा और यमुना नदियों से प्रभावित है। गंगा नदी के किनारे बलुअर मिट्टी तथा दक्षिण दिशा की ओर जैसे-जैसे जाते हैं दोमट मिट्टी प्राप्त होती है किन्तु दक्षिण में यमुना नदी के आस-पासही भूमि में जल निकासी की समस्या होने के कारण ऊंची-नीची है तथा पथरीली है। इन दोनों नदिओं के मध्य भाग में मटियार भूमि पायी जाती है जिसमें चिकनी मिट्टी ही अधिक होती है। जनपद में प्राप्त मिट्टी के भाग को क्षेत्रफल के दृष्टिकोण से निम्न ग्राफ के माध्यम से देख सकते हैं -

क्रम संख्या	मिट्टी की किस्म	कुल भूमि का प्रतिशत
(1)	बलुई एवं भूड़	2%
(2)	दोमट	47%
(3)	मटियार	7%
(4)	सांगी	15%
(5)	कावर	12%
(6)	बलुई एवं कछार	5%
(7)	चाचर व अन्य	12%

भूगर्भ जल - बढ़ती जनसंख्या, पीने के पानी, आवासीय सिंचाई तथा औद्योगिक उद्देश्यों के लिए इसकी बढ़ती मांग के कारण जल की कमी की समस्या स्थानीय स्तर पर भी महसूस की जा रही है। **'दिनांक 1-1-92 की स्थिति के अनुसार जनपद फतेहपुर में 10,950 लाख घन मीटर भूमिगत जल उपलब्ध है जिसमें 4,710 लाख घन मीटर जल का उपयोग हो रहा है जो कुल उपलब्ध मात्रा का 43 प्रतिशत है।'**[1] इसमें दिनोंदिन वृद्धि सम्भव है।

(2) फतेहपुर जनपद की सामाजिक स्थिति

फतेहपुर जनपद की सामाजिक स्थिति बहुत हद तक भारतीय सामाजिक स्थिति से मेल खाती है। फतेहपुर जनपद के अन्तर्गत विभिन्न जाति, धर्म, लिंग, भाषा, आर्थिक स्थिति से सम्पन्न लोग निवास करते हैं तथा भारतीय संस्कृति की विशेषताओं को अपने में समेटे हुए है।

---

1. सामाजार्थिक समीक्षा जनपद फतेहपुर - अर्थ एवं संख्याधिकारी कार्यालय फतेहपुर।

जनगणना 2001 के प्राप्त आंकड़ों के अनुसार जनपद फतेहपुर में 23,08,384 व्यक्ति तथा 1991 में जनपद की कुल जनसंख्या 18,99,241 थी। दस वर्ष पहले दसक में 21.54 प्रतिशत जनसंख्या की वृद्धि हुई। प्रदेश की जनसंख्या वृद्धि दर 27.4 तथा मण्डल की वृद्धि दर 25.95 रही। इन दोनों की अपेक्षा जनपद फतेहपुर की जनसंख्या वृद्धि कर काफी कारण हैं। जनपद फतेहपुर की विभिन्न दशकों में जनसंख्या वृद्धि दर निम्न रही है -

विवरण - जनसंख्या वृद्धि विभिन्न दशकों में[1]

वर्ष	जनसंख्या दशक	दशकों में वृद्धि
1951-61	10,65,768	18.06
1961-71	12,78,254	19.94
1971-81	15,72,421	23.01
1981-91	18,99241	20.78
1991-2001	23,08,384	21.54

जनपद की जनसंख्या में ग्रामीण आबादी का अनुपात ज्यादा है तथा नगरीय आबादी बहुत कम है। जनपद की वर्ष 1991 की जनसंख्या के अनुसार नगर में जनसंख्या 1,83,013 थी जो कुल जनसंख्या का 9.9 प्रतिशत है। प्रदेश में नगरीय जनसंख्या का प्रतिशत 17.95 तथा मण्डल में 25.2 प्रतिशत है जो प्रदेश तथा मण्डल स्तर को देखते हुए बहुत कम है। वर्ष 2001 की जनगणना के अनुसार नगरीय जनसंख्या 2,37,750 थी जो जनपद की कुल जनसंख्या का 10.30 प्रतिशत है। इस प्रकार देखते हैं कि वृद्धि होने के बाद भी नगरीय जनसंख्या ग्रामीण जनसंख्या के औसत से बहुत कम है। विभिन्न दशक वर्षों के ग्रामीण एवं नगरीय जनसंख्या का विवरण इस प्रकार है-[2]

वर्ष	कुल जनसंख्या	ग्रामीण जनसंख्या	नगरीय जनसंख्या	दशक वृद्धि प्रतिशत में
1991	12,78,254	12,06,346	74,908	8.5
1981	15,72,421	1,43,129	1,41,292	9

---

1. घटना चक्र जनसंख्या एवं नगरीकरण, जुलाई- 2004, पृष्ठ 18
2. उपर्युक्त

1991	18,99,241	17,11,228	1,88,013	9.9
2001	23,08,3854	20,70,634	2,37,750	10.30

प्रदेश तथा मण्डल स्तर की तरह जनपद फतेहपुर में आबादी के अनुसार महिलाओं की संख्या पुरुषों की अपेक्षा बहुत कम है। पिछले कुछ वर्षों में महिला पुरुष जनसंख्या अनुपात में बहुत कमी आयी है। वर्ष 1981 की जनगणना के अनुसार जनपद में प्रति हजार पुरुषों पर 862 स्त्रियाँ थीं तथा 1991 की जनगणना के अनुसार महिलाओं की जनसंख्या प्रति हजार पुरुष पर 882 थीं किन्तु पिछली जनगणना 2001 के अनुसार प्रति हजार पुरुष पर 983 महिलायें थीं। इसका विवरण इस प्रकार है-[1]

वर्ष	कुल जनसंख्या	पुरुष	महिलायें	लिंगानुपात
1971	12,78,254	6,72,491	6,05,763	-
1981	15,72,421	8,29,389	7,43,032	862
1991	18,99,241	10,09,369	8,89,872	882
2001	2,38,384	12,19,602	10,88,782	893

महिलाओं की संख्या में कमी लगातार जनगणना आंकड़ों के अनुसार वृद्धि दर्ज की जा रही है किन्तु इसके बाद भी जनसंख्या में लगातार तीव्र वृद्धि के कारण महिलाओं की जनसंख्या में लगातार कमी दर्ज की जा रही है। महिलाओं की संख्या कम होने का प्रमुख कारण गरीबी तथा दहेज जैसी सामाजिक बुराइयों के कारण समाज का उनके प्रति उपेक्षित दृष्टिकोण उत्तरदायी है जिसके फलस्वरूप कन्या भ्रूण हत्या, नवजात स्त्रीलिंग में शिशुओं की उपेक्षा करने के कारण अत्यधिक बाल मृत्यु दर अधिक रहती है। सामाजिक सोच तथा समाज में महिलाओं की उपेक्षित स्थिति में सुधार करके इस सामाजिक बुराई से मुक्ति प्राप्त कर सकते हैं।

जनपद फतेहपुर में मात्रृभाषा के अनुसार जनसंख्या

जनगणना 2001 के अनुसार फतेहपुर जनपद में मात्रृभाषा के आधार पर निम्नलिखित जातियाँ तथा उक्त संख्या में निवास करती है-

---

1. घटनाचक्र - जनसंख्या एवं नगरीकरण जुलाई, 2004, पृष्ठ 19

[1]क्रम संख्या	निवासी	भाषा	संख्या	कुल जनसंख्या में प्रतिशत
(1)	हिन्दू	हिन्दी	17,90,833	94.29
(2)	उर्दू	"	1,08,041	5.69
(3)	पंजाबी	"	207	0.01
(4)	बंगाली	"	60	0.00
(5)	अन्य	-	66	0.00
योग	**कुल योग**	-	**18,99,207**	**100.00**

जनपद फतेहपुर धर्म के अनुसार जनसंख्या

जनपद फतेहपुर में धर्म के आधार पर 2001 की जनगणना के अनुसार निम्न जातियाँ तथा संख्या में निवास करती हैं -[2]

क्रम सं.	प्रमुख धर्म सम्प्रदाय	कुल जनसंख्या	ग्रामीण जनसंख्या	नगरीय जनसंख्या	प्रतिशत
(1)	हिन्दू	19,97,175	18,36,137	1,61,038	86.52
(2)	मुस्लिम	3,07,047	2,31,349	75,798	13.3
(3)	ईसाई	930	654	276	0.04
(4)	सिक्ख	1528	1085	443	0.07
(5)	बौद्ध	493	442	51	0.02
(6)	जैन	261	71	190	0.01
(7)	अन्य	22	22	0	0.00
(8)	धर्म नहीं बताया	928	875 5	4	0.04
	योग	**23,08,384**	**20,70,634**	**2,37,750**	**100.00**

जनपद में अनुसूचित जाति तथा जनजाति की जनसंख्या में वृद्धि हुई है। अनूसूचित जाति तथा जनजाति की जनसंख्या निम्नवत् तालिका में वर्णित है -

---

1. सांख्यिकी आकड़े संख्या कार्यालय फतेहपुर, पृष्ठ 30
2. उपर्युक्त, पृष्ठ 39

वर्ष	अनुसूचित जाति	अनुसूचित जन जाति
1971	3,01,895	-
1981	3,73,086	निम्न में जनजाति के आंकड़े भी सम्मिलित हैं।
1991	4,69,453	-
2001	5,78,070 (25.04%)	467 मात्र है (0.02%)

साक्षरता - जनपद फतेहपुर की कुल साक्षरता 35.85 प्रतिशत व्यक्ति साक्षर है जब कि प्रदेश में 2001 की जनगणना के अनुसार साक्षारता दर 53.5% है जिसमें पुरुष साक्षारता 68.8% तथा महिला साक्षारता 42.2% है। प्रदेश की तरह ही जनपद स्तर पर भी प्रमुख साक्षरता महिला साक्षरता की अपेक्षा अधिक है। पिछले दशकों में साक्षरता के जनपद स्तर पर विवरण को निम्न तालिका से जान सकते हैं -

साक्षरता प्रतिशत[1]

वर्ष	पुरुष	स्त्री	योग	पुरुष	स्त्री	योग
1971	2,13,248	53,890	2,67,126	31.7	8.9	20.0
1981	3,15,728	92,707	4,08,435	38.1	12.5	26.0
1991	4,85,788	1,93,128	6,80,912	59.9	27.2	44.7
2001	6,91,826	3,71,605	10,63,431	68.8%	42.2 5	3.3%

जनपद फतेहपुर का आर्थिक सर्वेक्षण - जनपद फतेहपुर एक पिछड़ा हुआ जनपद है। उत्तर प्रदेश की औद्योगिक राजधानी कानपुर से जुड़े होने के बाद भी यह जनपद अपना औद्योगिक एवं व्यवसायिक विकास नहीं कर सका है। जनपद फतेहपुर राजनीतिक रूप से भी उतना सक्षम नहीं हो सका कि प्रदेश या केन्द्र स्तर पर फतेहपुर जनपद के स्तर से विशेष सुविधायें मुहैया करा सके। जनपद फतेहपुर की आय के प्रमुख स्रोतों में निम्नलिखित हैं-

व्यापार कर, मोटर स्प्रिट बिक्री कर, राज्य आबकारी शुल्क, स्टाम्प तथा निबन्ध शुल्क, मोटर वाहनों व कर एवं माल तथा पानी कर, मनोरंजन कर, विद्युत देयों की वसूली तथा मुख्य देयों के अन्तर्गत भू राजस्व तथा सिंचाई तथा विविध देयों की वसूली से आय प्राप्त

1. घटना चक्र - जनसंख्या एवं नगरीकरण, अप्रैल, 2004, पृष्ठ 19

होती है। 2005-06 में विभिन्न आय के स्रोतों से निम्न आय प्राप्त हुई है -

वर्ष 2005-06 के अन्तर्गत आय के स्रोत[1]

	मद	प्राप्त आय (हजार में) लाख में
(1)	सम्पत्ति एवं विक्रय कर	16.00
(2)	लाइसेन्स	35.00
(3)	मृत पशु शव निस्तारण केन्द्र	8.50
(4)	मत्स्य आखेट	2.00
(5)	सम्पत्ति से आय (दुकान, भवन)	4.70
(6)	नौकाघाट	17.00
(7)	मेला एवं प्रदर्शिनी	35.00
(8)	काजी हाउस, कृषि एवं न्यायालय	0.50
(9)	जिलानिधि से आय	3.00

इस जनपद के अन्तर्गत दो नगर पालिका परिषद, 5 नगर पंचायतें, 1 जिला पंचायत है जो सम्पूर्ण जनपद में विभिन्न करों का एकत्रीकरण एवं परिव्यय का कार्य करती है। जिस प्रकार हम देखते हैं कि जनपद में प्रत्येक वस्तु के दो मूल्य होते हैं- प्रथम नगरीय दूसरा ग्रामीण। उसी तरह विभिन्न लघु उद्योगों या मजदूरी की दरें भी दो तरह की ग्रामीण एवं नगरीय होती हैं जिसका निम्नतालिका के माध्यम से जनपद फतेहपुर में दी जाने वाली दरों को देखा जा सकता है -[2]

क्रम सं.	मद का नाम	इकाई	पुरुष नगरीय	महिला नगरीय	ग्रामीण पुरुष	ग्रामीण महिला
(1)	बढ़ई	प्रतिदिन	100	....	90	....
(2)	राज मिस्त्री	,,	140	...	135	...
(3)	अकुशल मजदूर खेतिहर मजदूर	,,	60	50	60	50

---

1. यह आंकड़े जिला पंचायत फतेहपुर चतुर्मासिक समीक्षा पुस्तिका से हैं।
2. सर्वेक्षण कार्य के अनुसार (सर्वेक्षण निजी या लगभग 50 ग्रामों व 6 नगरों से)

(1)	हल चलाना	,,	...	...	60	...
(2)	निराई गुड़ाई	,,	....	....	40	20
(3)	फसल कटाई	,,	...	....	50	40
(4)	अन्य खेती के कार्य	,,	...	...	60	50

चूँकि फतेहपुर को सन् 1914 में जनपद का आकार दिया जा चुका था। अतः संयुक्त प्रान्त डिस्ट्रिक्ट बोर्ड एक्ट 1992 के तरह जनपद फतेहपुर में भी सन् 1919 में द्वितीय विश्व युद्ध की समाप्ति के बाद डिस्ट्रिक्ट बोर्ड का गठन किया गया तथा **'सन् 1920 में श्री मन्नू लाल श्रीवास्तव इसके पहले चेयर मैन नियुक्त किये गये।'**[1] सन् 1920 से 1923 तक वह इसके अध्यक्ष रहे। सन् 1882 में लार्ड मेयो के स्थान पर लार्ड रिपन ने ले लिया था। लार्ड रिपन उदारवादी दृष्टिकोण के थे। उनके प्रस्ताव से ग्रामीण एवं नगरीय मामलों के प्रशासन के लिए स्थानीय निकायों की एक श्रृंखला प्रस्तुत की। इसने पूरे प्रदेश में जनपद स्तर पर बोर्डों की स्थापना की संस्तुति की जो कि दो स्तरों में विभाजित होंगे। जिला बोर्ड तथा ताल्लुका बोर्ड। इन बोर्डों के दो तिहाई सदस्य निर्वाचित तथा एक तिहाई सदस्य मनोनीत होते थे। अन्त में इन स्थानीय निकायों को कर लगाने का अधिकार दिया जाना था जिनकी पूर्ति सहायक अनुदान द्वारा की जानी थी। इसके कारण रिपन को भारत में स्थानीय शासन का जनक माना जाता है तथा अनेक प्रान्तों ने रिपन के इस प्रस्ताव को लागू करने हेतु कानून बनाये। फिर भी इतना उदार दृष्टिकोण होते हुए भी बहुत से प्रान्तों ने उदासीनता बरकरार रखी। अतः लार्ड रिपन के प्रस्ताव का उद्देश्य पूर्ण नहीं हो सका।

लार्ड रिपन प्रस्ताव के पश्चात 1909 में रायल कमीशन के विकेन्द्रीकरण पर अपना प्रस्ताव प्रस्तुत किया। इस प्रतिवेदन को स्थानीय शासन के इतिहास में बहुत महत्वपूर्ण मील का पत्थर माना जाता है क्योंकि इसने प्रत्येक गाँव में पंचायत स्थापित करने की संस्तुति की तथा जो पूर्व में स्थानीय ग्रामीण एवं नगरीय संस्थायें कार्य कर रही थीं उन्हें और अधिक अधिकार प्रदान करने की संस्तुति की तथा इन संस्थाओं के सभी सदस्य निर्वाचित करने की संस्तुति की।

इस प्रतिवेदन से उदासीन राज्यों में भी स्थानीय शासन को जीवन मिला। परन्तु शासकीय अरुचि तथा 1914 में हुई प्रथम विश्व युद्ध के कारण यह जोश भी ठण्डा हो गया।

---

1. जिला पंचायत स्मारिका सन् 1994, सम्पादक - विप्लव तिवारी, पृष्ठ

भारत ने प्रथम विश्व युद्ध में ब्रिटेन की सहायता की। इस कारण राष्ट्रवादी आन्दोलनों में विस्तार के कारण ब्रिटिश शासकों को ऐसे कदम उठाने पड़े जिससे प्रशासन के कार्यों में भारतीयों की सहभागिता में वृद्धि हो सके व धीरे-धीरे स्वशासन का विकास हो सके। सन् 1919 के भारत शासन अधिनियम के फलस्वरूप ग्रामीण स्थानीय शासन को कुछ प्रोत्साहन मिला। इसी समय सम्पूर्ण देश में जिला बोर्डों तथा ताल्लुका बोर्डों का गठन किया गया। अब धीरे-धीरे स्थानीय शासन सम्पूर्ण देश में अपना विकास कर रहा था कि द्वितीय विश्व युद्ध के कारण एक बार पुनः शिथिलता व्याप्त हो गयी।

'फतेहपुर डिस्ट्रिक्ट बोर्ड का गठन सन् 1919 में किया जा चुका था इसके पहले अध्यक्ष श्री मन्नू लाल श्रीवास्तव थे, जिनका निर्वाचन सन् 1920 में हुआ था एवं इसके दूसरे अध्यक्ष श्री कृष्ण कुमारतिवारी (जिनका कार्यकाल 1023-25 तक रहा है)[1] डिस्ट्रिक्ट बोर्ड फतेहपुर सन् 1936 के पहले तक साधारणतः अंग्रेजी शासन विधान के अनुसार कार्य करता रहा किन्तु सन् 1936 में भारत शासन अधिनियम 1935 के अनुसार प्रथम डिस्ट्रिक्ट बोर्ड के चुनाव सम्पन्न होने थे। उस समय सन् 1936 के निर्वाचन में सम्पूर्ण जनपद से सदस्य निर्वाचित होने थे। उनका निर्वाचन सम्पन्न हुआ और निम्नलिखित 23 सदस्य विजयी हुए-

(1) ठा. रोशन सिंह

(2) सूबेदार मेजर भगवान सिंह

(3) बाबू हसरत अली

(4) बाबू विशुनमान सिंह

(5) चौधरी रामेश्वर सिंह

(6) चौधरी कल्लू सिंह

(7) श्री हरपाल सिंह

(8) श्री भोदूराम

(9) चौधरी रघुनाथ सहाय

(10) श्री मजहरूल हसन

---

1. स्मारिका जिला पं चायत फते हपु र सन्1994 - सम्पादक - विप्लव तिवारी, पृ छVI

(11) ठा. सूरजपाल सिंह

(12) पं. कृष्ण कुमार तिवारी

(13) पं. मन्नू लाल

(14) पं. विशम्भरनाथ दुबे

(15) पं. सोहन लाल द्विवेदी

(16) श्री हसन खाँ

(17) चौ. द्वारिका सिंह

(18) ठा. विशेषर सिंह

(19) मो. अब्दुल हमीद

(20) ठा. शिवराज सिंह

(21) पं. दीन दयाल उपाध्याय

(22) मो. मोइनुद्दीन खाँ

(23) मुसम्मात वहीदन खाँ

स्वाधीनता प्राप्ति का समय नजदीक था, अतः कल्पना की जा सकती है कि जनता का उत्साह किस चरम पर रहा होगा। सदस्यों के चुनाव के उपरान्त बोर्ड के अध्यक्ष का चुनाव सम्पन्न होना था। **'जिसमें अध्यक्ष पद हेतु ठा. रोशन सिंह (सदस्य डिस्ट्रिक्ट बोर्ड) व राजा असोथर श्री विश्वनाथ सिंह प्रत्यासी थे।'**[1] सदस्य भी वरिष्ठ एवं अभिजात वर्गों से थे। अतः दोनों ही जिले की प्रमुख हस्तियां थीं। सदस्य चाहते थे कि अध्यक्ष का चुनाव निर्विरोध हो जाय लेकिन ऐसा नहीं हुआ। चुनाव होना था और हुआ भी। जिसमें ठाकुर रोशन सिंह मात्र एक मत से विजयी निर्वाचित हुए।'[2] जनवरी सन् 1936 को ठा. रोशन सिंह डिस्ट्रिक्ट बोर्ड के चेयरमैन निर्वाचित घोषित किये गये।' एक जनश्रुति है -

ठा. रोशन सिंह के उदार व्यक्तित्व एवं सहृदयशीलता के विषय में चर्चित हैं कि अध्यक्ष

---

1. उपरोक्त, पृष्ठ 19
2. उपरोक्त, पृष्ठ 20

का चुनाव होना था। ठा. रोशन सिंह और राजा साहब श्री विश्वनाथ सिंह प्रत्यासी थे। राजा साहब के धर्मगुरु पंडित जी (वैद्य जी) मतदाता थे। वह संकटपूर्ण स्थिति में थे कि मतदान किसके पक्ष में करें। एक तरफ राजा साहब के राजगुरु तथा राज्य के नागरिक थे। ठा. रोशन सिंह ने पंडित जी (वैद्य जी) ऐसी स्थिति में देखा तो उनसे न रहा गया। उन्होंने वैद्य जी को बुलाया और कहा कि वैद्य जी आप अपना मत राजा साहब को ही दें। आप उनके धर्मगुरू हैं नहीं तो राजा साहब के साथ विश्वासघात होगा। तब वैद्य जी ने अपना मत राजा साहब को दिया।

एक अन्य घटनाक्रम के अनुसार ठा. रोशन सिंह के अध्यक्ष बनते ही 26 जनवरी, 1936 का दिन नजदीक था, महात्मा गांधी राष्ट्रीय आन्दोलन के प्रणेता थे। उनके आदेशानुसार कि सम्पूर्ण देश में 26 जनवरी धूमधाम से मनायी जाय। बस इसी के साथ सम्पूर्ण देश में 26 जनवरी का उल्लास फैल गया। ठा. रोशन सिंह भी गांधीवादी विचारधारा के व्यक्ति थे। अतः उन्होंने भी डिस्ट्रिक्ट बोर्ड में 26 जनवरी का पर्व उल्लास के साथ मनाने का निर्णय किया और उन्होंने अत्यन्त शौर्य एवं बुद्धि का परिचय देते हुए 'डिस्ट्रिक्ट बोर्ड फतेहपुर में लगे यूनियन जैक के झण्डे को नीचे उतार कर तिरंगा झण्डा फहरा दिया। जब कि उस समय ब्रिटिश हुकूमत थी।' ऐसा करना मौत को बुलावा देना भी हो सकता था किन्तु बिना किसी लाग लपेट के उन्होंने ऐसा किया। लोगो में भी हर्षध्वनि एवं तालियों से उनका स्वागत किया और लगता है कि अंग्रेजों की भी नींव हिल चुकी थी तभी तो उनके विरुद्ध कोई कदम उठाने की हिम्मत नहीं जुटा सके और उनके इस कार्य से फतहेपुर जनपद का सिर गर्व से ऊँचा उठ गया। ठा. रोशन सिंह जीवन पर्यन्त भारतीय स्वतंत्रता की प्राप्ति तथा फतेहपुर जनपद के विकास हेतु कार्यक्रम संचालित करते रहे। डिस्ट्रिक्ट बोर्ड फतेहपुर अपने इसी गौरवमयी अतीत के साथ सन् 1947 तक कार्य करता रहा। उस काल के प्राप्त साधनों के अनुसार अपनी जनता को आवश्यकतानुसार साधन-सुविधायें मुहैया कराता रहा। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारतीय संविधान में अनुच्छेद 40 द्वारा नीति निर्देशक सिद्धान्तों के अन्तर्गत पंचायतों के गठन पर जोर दिया गया था। अतः उत्तर प्रदेश सरकार ने पंचायती राज व्यवस्था को लागू करने हेतु **संयुक्त प्रान्त पंचायत राज अधिनियम 1947 लागू किया किन्तु इसके अन्तर्गत पंचायती राज व्यवस्था दो स्तरीय ही लागू की गयी थी।**'[1] इसमें मध्यवर्ती संगठन विकास खण्ड का नाम शामिल नहीं था। **'इसका गठन सर्वप्रथम क्षेत्र समिति तथा जिला परिषद अधिनियम 1961 के द्वारा किया गया।**'[2] तथा संयुक्त प्रान्त पंचायत राज अधिनियम 1949 द्वारा डिस्ट्रिक्ट बोर्ड को

---

1. उत्तर प्रदेश क्षेत्र पंचायत तथा जिला पंचायत अधिनियम, 1961 - विवेक मिश्रा - पृष्ठ 157
2. उपर्युक्त

अन्तरिम जिला परिषद घोषित कर दिया गया था। इस अधिनियम के तहत ही फतेहपुर जनपद में भी स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद डिस्ट्रिक्ट बोर्ड फतेहपुर को अन्तरिम जिला परिषद घोषित किया गया और स्थानीय स्वशासन के निर्धारित कार्यों को संचालित करता रहा है। इस प्रकार अन्तरिम जिला परिषद 1947 से सन् 1962 तक कार्य करती रही है।

जिला स्तर पर गठित अन्तरिम जिला परिषद के पास डिस्ट्रिक्ट बोर्ड की परिसम्पत्तियाँ तथा कर्मकारी तथा कार्य करने की अस्थायी रूप रेखा अन्तरिम जिला परिषद के पास साधन के रूप में मौजूद थे। आय के साधन भी अपर्याप्त रूप में किन्तु आवश्यक कार्यों को सम्पादित करने हेतु मौजूद थे। यह व्यवस्था प्रदेश स्तरीय होने के कारण जनपद फतेहपुर में भी संचालित होती रही। इस व्यवस्था को या इनके द्वारा संचालिका विकास कार्यक्रमों को अपर्याप्त कहा जा सकता है क्योंकि ये संगठन अपने स्थापना के उद्देश्य को पूरा नहीं कर पा रहे थे। इसके लिए ये संगठन के लिए स्वंय उत्तर प्रदेश सरकार जिम्मेदार थी तथा निम्नलिखित कारण थे-

(1) अपर्याप्त वित्तीय साधन

(2) अपर्याप्त कर्मचारी तथा अधिकारी

(3) कर्मचारियों की अकुशलता

(4) जनता में जागरुकता की कमी आदि।

इन सब कमियों को दूर करने हेतु प्रदेश सरकार उत्तर प्रदेश क्षेत्र समिति तथा जिला परिषद अधिनियम 1961 का निर्माण किया और इस नयी व्यवस्था के अन्तर्गत अन्तरिम जिला परिषद से अन्तरिम शब्द हटा दिया गया और जिला परिषद कहा जाने लगा। इस व्यवस्था में पंचायती राज संस्थाओं को पूर्णतः प्रजातांत्रिक तथा जनता के प्रति जवाबदेह बनाने पर जोर दिया गया। पूर्व में क्षेत्र समिति तथा जिला परिषद के चुनाव समय से सम्पन्न नहीं होते थे अतः इसी नयी व्यवस्था में यह प्रावधान किया गया कि 'क्षेत्र पंचायत तथा जिला परिषद के चुनाव बाध्यकारी होंगे। उन्हें प्रत्येक पांच वर्ष बाद चुनाव कराना पड़ेगा '**नये अधिनियम में धारा 8 व धारा 20 के अन्तर्गत यह प्रावधान किया गया कि क्षेत्र पंचायत तथा जिला परिषद के चुनाव प्रत्येक पांच वर्ष में कराना अनिवार्य है। यह भी प्राविधानित है कि यदि किसी क्षेत्र समिति या जिला परिषद को किसी कारणों से विघटित कर दिया जाता है तो उस दशा में छः माह के अन्दर कराना अनिवार्य है।'**[1]

---

1. पूर्ववत्, पृष्ठ 157

इस सब प्रयासों के बाद भी पंचायती राज व्यवस्था अपने उद्देश्य की पूर्ति में सफल नहीं रही। इसके संगठन जनता की आवश्यकताओं की पूर्ति करने में विफल साबित हुए। सन् 1961 में फतेहपुर जनपद में कार्यरत अन्तरिम जिला परिषद को जिला परिषद नाम दिया गया तथा यह भी अपने पूर्व संगठन की भाँति अपने पैरों पर खड़ा नहीं हो सका बल्कि इसे दूसरों के सहारे की सदैव आवश्यकता बनी रही। इसका कारण कुछ भी रहा हो किन्तु इतना निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि जिला परिषदों को कार्य तो बता दिये गये थे किन्तु उनकी आय के स्रोत उन्हें स्वयं खोजने थे और जो धन या आय उन्हें उपलब्ध करायी गयी थी वह इतनी कम थी कि उससे उनके कर्मचारियों का वेतन भत्ते की पूर्ति नहीं हो पाती थी। कहा जा सकता है कि उन्हें कर्तव्य तो गिना दिये गये थे किन्तु अधिकारों से दूर रखा गया था। इन्हीं समस्याओं को देखते हुए केन्द्र सरकार को संवैधानिक दर्जा देकर इन समस्याओं को अधिकार प्रदान करने पर विचार किया होगा। अतः सन् 1972 में कांग्रेस सरकार ने संविधान में 73वाँ संविधान संशोधन करके सम्पूर्ण भारत में एकस्वरूप की संवैधानिक स्थानीय निकाय संगठित करने का प्रयास किया।

73वें संविधान संशोधन 1992 द्वारा स्थानीय स्वायत्त संस्थाओं को संवैधानिक संस्थाओं का दर्जा दिया गया तथा स्थानीय स्वशासन को राज्य सूची में डालते हुए राज्यों को यह आदेश दिया कि सम्पूर्ण भारत में त्रिस्तरीय पंचायती राज व्यवस्था को अपने राज्य की परिस्थितियों के अनुसार लागू किया जाय।

इस अनिवार्यता के कारण उत्तर प्रदेश सरकार ने भी पंचायती राज पर अधिनियम का निर्माण किया जिसे उत्तर प्रदेश क्षेत्र पंचायत तथा जिला पंचायत अधिनियम 1994 कहते हैं। इसके अन्तर्गत सम्पूर्ण प्रदेश में पंचायती राज संस्थाओं को त्रिस्तरीय स्वरूप दिया गया। ग्राम स्तर पर ग्राम पंचायत, मध्य स्तर पर क्षेत्र पंचायत तथा जिला स्तर पर जिला पंचायत कहा गया। जिला पंचायत जो जिला परिषद का प्रतिरूप होगी। अतः फतेहपुर जनपद में भी यह व्यवस्था लागू हुई और जिला परिषद का स्थान जिला पंचायत ने ले लिया। अतः सन् 1994 से वर्तमान समय तक यही व्यवस्था संचालित हो रही है। उत्तर प्रदेश क्षेत्र पंचायत तथा जिला पंचायत के अन्तर्गत यह व्यवस्था इस प्रकार संचालित की जा रही है -

(1) पंचायतों का संगठन और संरचना।

(2) अनुसूचित जातियों, जनजातियों, पिछड़े वर्गों के व्यक्तियों के पदों में तथा महिलाओं के लिए स्थानों का आरक्षण।

(3) पंचायतों का 5 वर्ष का कार्यकाल।

(4) राज्य सरकार को किसी पंचायत को कतिपय परिस्थितियों में विघटित करने के लिए सशक्त करना।

(5) सरकार द्वारा राज्य निर्वाचन आयोग के अधीक्षण निदेशन और नियंत्रण के अधीन प्रत्येक तीन स्तरीय पंचायतों की निर्वाचक नामावली तैयार करना तथा उनके लिए सभी निर्वाचनों का संचालन।

(6) प्रत्येक पंचायत के लिए निधि की स्थापना।

(7) पंचायतों के कृत्यों, शक्तियाँ और उत्तरदायित्व।

(8) पंचायतों को कर, फीस इत्यादि उदग्रहीत करने हेतु सशक्त करना।

(9) पंचायतों की वित्तीय स्थिति का पुर्नविलोकन करने, राज्य और पंचायतों के बीच उदग्रहणीय करके पथकर, फीस इत्यादि के शुद्ध आगमों के वितरण को नियमित करने वाले सिद्धान्तों के सम्बन्ध में राज्यपाल को सिफारिश देने हेतु वित्तीय आयोग का गठन।'[1]

(1) जिला पंचायत फतेहपुर की संरचना

उत्तर प्रदेश क्षेत्र पंचायत तथा जिला पंचायत अधिनियम, 1994 के अधीन फतेहपुर जिला पंचायत निम्न प्रकार से संघटित की गयी है -

(1) फतेहपुर जिला पंचायत एक निगमित निकाय है।

(2) फतेहपुर जिला पंचायत कार्यालय पंचायत एक्ट 1994 के अनुसार ऐसे स्थान पर स्थित है जो राज्य सरकार द्वारा सुनिश्चित है या जहाँ पर डिसट्रिक्ट बोर्ड अन्तरिम जिला परिषद, जिला परिषद कार्यालय स्थित रहे हैं।

(3) नया जिला बनने पर जब तक कि नयी जिला पंचायत का उस जिले में निर्माण नहीं हो जाता है तब तक उस क्षेत्र में पूर्ण स्थापित जिला पंचायत कार्य करती रहेगी।

(4) धारा 18 की उपधारा (1) क से घ में निर्दिष्ट सदस्यों में किसी की रिक्ति होने पर किसी जिला पंचायत के संघटन और पुनस्संघटन पर कोई बाधा नहीं पहुंचेगी।

---

1. उपर्युक्त, पृष्ठ 164

(5) जिला पंचायत का संगठन उत्तर प्रदेश सरकार के गजट में अधिसूचित किया जायेगा।

(2) जिला पंचायत फतेहपुर की संगठनात्मक संरचना

उत्तर प्रदेश क्षेत्र पंचायत और जिला पंचायत अधिनियम, 1994 के अन्तर्गत निम्नलिखित को मिलाकर जिला पंचायत का निर्माण किया जायेगा-

(क) जिला पंचायत फतेहपुर का एक अध्यक्ष होगा जो उसका पीठासीन होगा तथा एक उपाध्यक्ष हो। उसके निम्नलिखित सदस्य होंगे -

(ख) जिले के समस्त क्षेत्र पंचायतों के प्रमुख, फतेहपुर जिला पंचायत के अन्तर्गत 13 क्षेत्र पंचायतें आती हैं। अर्थात् 13 क्षेत्र पंचायतों के प्रमुख जिला पंचायत के पदेन सदस्य होंगे।[1]

(ग) 'जिला पंचायत के प्रादेशिक निर्वाचन क्षेत्रों से प्रत्यक्ष निर्वाचन द्वारा निर्वाचित सदस्य, प्रत्येक प्रादेशिक निर्वाचन क्षेत्र का विभाजन इस रीति से किया जायेगा कि प्रत्येक निर्वाचन क्षेत्र की जनसंख्या 50 हजार होगी तथा 50 हजार की जनसंख्या पर एक ही सदस्य होगा। परन्तु पर्वतीय क्षेत्र में 7 किमी. के अर्द्धव्यास के क्षेत्र को निर्वाचन क्षेत्र माना गया, भले ही जनसंख्या 50 हजार से कम हो।' **फतेहपुर जिला पंचायत को 41 निर्वाचन क्षेत्रों में बांटा गया है अर्थात् कुल 41 निर्वाचित सदस्य हैं।'**[2]

(घ) लोक सभा तथा राज्य विधान सभाओं के वे सदस्य जो उस जिला पंचायत हेतु निर्वाचित क्षेत्रों का प्रतिनिधित्व करते हैं जिसमें उस जिला का कोई भाग समाविष्ट है। फतेहपुर जिले के अन्तर्गत एक लोकसभा तथा छह विधानसभा सदस्य होते हैं अर्थात् इस तरह के कुल सात पदेन सदस्य होते हैं।

(ङ) राज्यसभा के सदस्य और राज्य विधान परिषद के सदस्य जो पंचायत के भीतर निर्वाचक के रूप में भी रजिस्ट्रीकृत हैं। फतेहपुर जिला पंचायत के अन्तर्गत एक राज्य सभा सदस्य व एक विधान परिषद सदस्य रजिस्ट्रीकृत हैं।

---

1. उत्तर प्रदेश क्षेत्र पंचायत और जिला पंचायत अधिनियम 1994, सम्पादक - अजय राज, पृष्ठ 28
2. उत्तर प्रदेश नयी पंचायती राज व्यवस्था एक दर्शन, किसान सेवा समिति, सम्पादक एवं प्रकाशन - 1, पृष्ठ 56
   जिला निर्वाचन कार्यालय के अनुसार

इस तरह क्षेत्र पंचायतों के 13 प्रमुख, एक लोकसभा व 6 राज्य विधानसभाओं के सदस्य/राज्यसभा व एक राज्य विधान परिषद, 6 सदस्य तथा 41 निर्वाचित सदस्यों को मिलाकर जिला पंचायत का गठन किया जाता है। फतेहपुर जिला पंचायत के कुल सदस्यों की संख्या 63 है।

इसके वर्तमान सदस्य इस प्रकार हैं -[1]

	प्रतिनिधि का नाम	क्षेत्र
(1)	श्री महेन्द्र निषाद	लोकसभा सदस्य, फतेहपुर
(2)	श्री खान गुफरान जाहिदी	राज्यसभा सदस्य, फतेहपुर
(3)	श्री आनन्द लोधी	विधानसभा सदस्य फतेहपुर
(4)	श्री मो. शफीर	" " खागा
(5)	श्री मदन गोपाल वर्मा	" " जहानाबाद
(6)	श्री अयोध्या पाल	" " हसवा
(7)	श्री अमरजीत सिंह जनसेवक	" " बिन्दकी
(8)	श्रीमती कृष्णा पासवान	" " किशनपुर
(9)	श्री यज्ञदत्त शास्त्री	विधान परिषद सदस्य इलाहाबाद, झाँसी, निर्वाचन क्षेत्र (शिक्षक विधायक)
(10)	श्री छग्गू लाल	निर्वाचित प्रतिनिधि, बैगावा
(11)	श्रीमती केतकी यादव	" संवत
(12)	श्री राजकुमार मौर्य	" रजीपुर छिवलहा
(13)	श्री अखिलेश मौर्य	" शहजादपुर खागा
(14)	श्रीमती पैकर जहाँ	" मोहम्मदपुर गौती
(15)	श्रीमती अकबरी बेगम	" सुल्तानपुर घोस
(16)	श्री जगनायक सिंह	" रायपुर भसरौल
(17)	श्री छोटे लाल	" गढ़ा
(18)	श्रीमती सुमन देवी	" टेनी

1. जिला पंचायत कार्यालय के अनुसार

(19)	श्री नरसिंह पटेल	” खैरई
(20)	श्री भूदेव	” तेन्दुवा
(21)	श्रीमती रीता देवी	” डेन्डासही
(22)	श्री सत्येन्द्र सिंह	” धाता
(23)	श्रीमती जितनी देवी	” मवई गनेशपुर
(24)	श्रीमती मधुलता	” जगुरावा
(25)	श्री अभिषेक प्रताप सिंह	” भिटौरा
(26)	श्री मदार बक्स	” सनगांव
(27)	श्री वासुदेव	” - -
(28)	श्री ब्रजेन्द्र प्रताप सिंह	” मकनपुर
(29)	श्रीमती पूनम पटेल	” मोहनखेड़ा
(30)	श्रीमती रेखा सिंह चौहान	” ललौली
(31)	श्री विपिन सिंह	” बेसड़ी
(32)	श्रीमती रूपरानी यादव	” औरेई
(33)	श्रीमती सुदामा देवी	” थरियांव
(34)	श्री अमरदीप सिंह	” शाह
(35)	श्री विकास सिंह	” शाखा
(36)	श्री मनोज कुमार	” मौहार
(37)	श्री ओउम प्रकाश गिहार	” रमवा पन्थुवा
(38)	श्रीमती शान्ती देवी	” गुनीर
(39)	श्री देवेन्द्र कुमार	” जाफराबाद
(40)	श्री अवरुद्ध यादव	” मलवा
(41)	श्रीमती राजकुमारी पटेल	” बकेवर
(42)	श्रीमती राईसा खातून	” मुसाफा
(43)	श्री सत्यदेव कुरील	” अकबरपुर नसीरपुर
(44)	श्रीमती प्रमिला गुप्ता	” अमौली
(45)	श्री नरेश उमराव	” चाँदपुर

(46) श्री लाल बहादुर ” बिजौली

(47) श्री मदन कोरी ” भडराव

(48) श्री कप्तान सिंह ” ज़ाफरगंज

(49) श्री शमीम मियां ” तपनीगंज

इसके अतिरिक्त 13 क्षेत्र पंचायतों के प्रमुख भी जिला पंचायत फतेहपुर के पदेन सदस्य होते हैं किन्तु 'क्षेत्र पंचायत प्रमुखों, लोकसभा, राज्य सभा तथा विधानसभा/परिषद के सदस्यों को अध्यक्ष तथा उपाध्यक्ष के निर्वाचन में तथा उनके विरुद्ध आने वाले अविश्वास प्रस्तावों पर मत देने का अधिकार नहीं होता है।'[1] किन्तु अन्य साधारण कार्यों में मत देने का अधिकार प्राप्त होता है।

समितियाँ- जिला पंचायत के अन्तर्गत कार्यों को सम्पादित करने हेतु प्रत्येक निर्वाचन सम्पन्न होने के बाद या नवीन जिला पंचायत के गठित होने पर निम्नलिखित समितियाँ कार्य करती हैं -[2]

(क) कार्य समिति

(ख) वित्त समिति

(ग) शिक्षा एवं जन स्वास्थ्य समिति

(घ) कृषि उद्योग एवं निर्माण समिति

(ङ) समता समिति।

फतेहपुर जिला पंचायत का संगठनात्मक स्वरूप

---
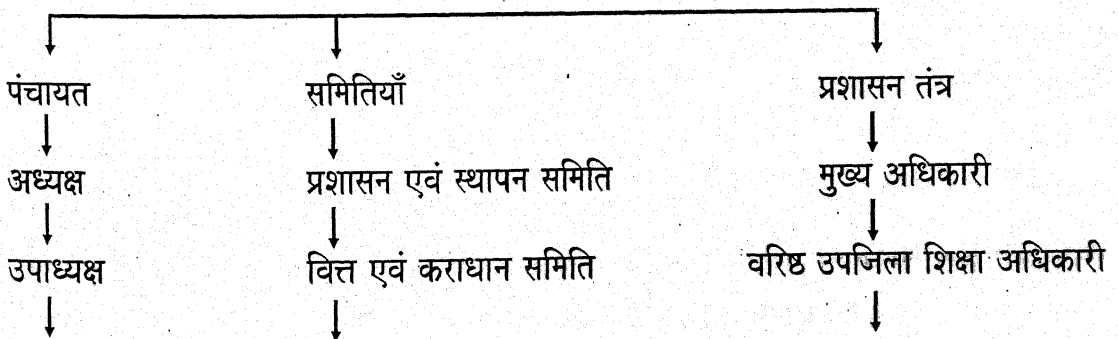
1. एक दर्शन - किसान सेवा समिति, पृष्ठ 56
2. उपरोक्त, पृष्ठ 65
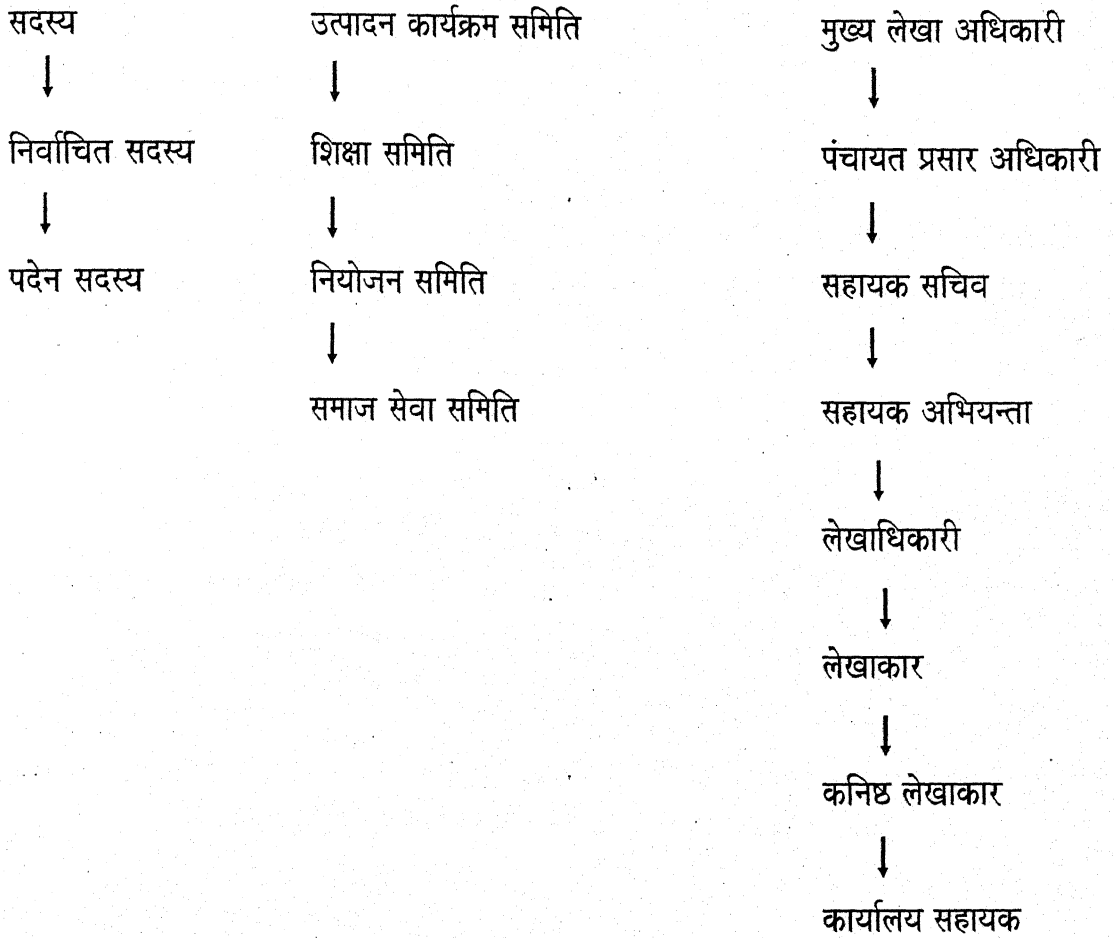
एक नियोजन समिति कार्य करती है जिसमें निम्न सदस्य सम्मिलित होते हैं-

(क) अध्यक्ष जो समिति का सभापति होता है।

(ख) उपाध्यक्ष जो समिति का उपसभापति होता है।

(ग) मुख्य अधिकारी जो समिति का मुख्य सचिव होगा।

(घ) जिला स्तर के सभी अधिकारी सदस्य होते हैं।

अन्य समितियाँ - 'जिला पंचायत विनियोग द्वारा सम्पूर्ण जनपद अथवा जनपद के किसी भाग में अपने कर्तव्यों के पालन में अपनी सहायता हेतु कोई अन्य समितियाँ स्थापित कर सकती है और यदि राज्य सरकार किसी विशेष समिति की स्थापना की अपेक्षा करे तो अवश्य स्थापित कर सकती है।'[1] इस प्रकार गठित की गयी किसी समिति को जिला पंचायत अपने समस्त अधिकार अथवा कोई विशेष अधिकार प्रतिनिहित कर सकती है। इसके अतिरिक्त

1. पूर्ववत्, पृष्ठ 66

किसी ऐसे कार्य हेतु जो जिला पंचायत से अपेक्षित हो उसके लिए अपने सदस्यों से एक या एक से अधिक परामर्श समिति गठित कर सकती है।

समितियों का संघन

(क) कार्य समिति का संघटन - जिला पंचायत कार्य समिति के अन्तर्गत निम्नलिखित व्यक्तियों को सम्मिलित कर सकती है -[1]

(i) अध्यक्ष होंगे।

(ii) उपाध्यक्ष होंगे।

(iii) वित्त समिति, शिक्षा समिति, जन स्वास्थ्य समिति, कृषि उद्योग एवं निर्माण समिति, समता समिति के सभापति होंगे।

फतेहपुर जिला पंचायत में सन् 2006 के निर्वाचन में 41 सदस्य होने के कारण 6 सदस्य कार्य समिति के लिए निर्वाचित किये गये हैं। जिला पंचायत का अध्यक्ष कार्य समिति का अध्यक्ष तथा जिला पंचायत का उपाध्यक्ष कार्य समिति का भी उपाध्यक्ष होता है तथा मुख्य अधिकारी कार्य समिति का मुख्य सचिव होता है।

(ख) अन्य समितियों का संघटन - जिला पंचायत की अन्य समितियों के संघटन हेतु जिला पंचायत सदस्य अपनी संख्या 40 होने पर 6 सदस्य तथा 40 से अधिक होने पर 9 सदस्य निर्वाचित करती है तथा जिला पंचायत के अध्यक्ष, उपाध्यक्ष, वित्त समिति, शिक्षा एवं जन स्वास्थ्य समिति का पदेन सदस्य तथा सभापति और उपसभापति होते हैं।

समितियों का कार्यकाल और उनकी निर्वाचन पद्धति

प्रत्येक समिति का कार्यकाल जिला पंचायत के कार्यकाल तक होता है और '**समिति के सदस्यों का निर्वाचन एकल संक्रमणीय मत पद्धति द्वारा जिला पंचायत द्वारा नियत की जाने वाली रीति से होता है**।'[2] किन्तु ये निर्वाचित सदस्यों में से प्रति वर्ष एक तिहाई सदस्य समिति से निवृत्त होने तथा नियत रीति के अनुसार नये सदस्य सम्मिलित किये जायेंगे। समितियों के अधिकार एवं कर्तव्य उत्तर प्रदेश क्षेत्र पंचायत जिला पंचायत अधिनियम, 1994 द्वारा निश्चित किये गये हैं।

---

1. पूर्ववत्, पृष्ठ 66
2. पूर्ववत्, पृष्ठ 67

उपसमितियाँ - प्रत्येक समिति को यह अधिकार होता है कि वह अपने से सम्बन्धित किसी भी विषय को सम्पादित करने हेतु एक अथवा एक से अधिक उपसमितियों का निर्माण कर सकती है। 'उपसमिति का संघटन तथा कार्यकाल समिति द्वारा निश्चित किया जाता है।'[1]

(घ) आरक्षण - प्रत्येक जिला पंचायत में अनुसूचित जाति तथा अनुसूचित जनजाति एवं पिछड़े वर्गों के व्यक्तियों के लिए उत्तर प्रदेश क्षेत्र पंचायत एवं जिला पंचायत अधिनियम, 1994 के अन्तर्गत प्राविधानित आरक्षण लागू किया गया है। इस प्रकार आरक्षित स्थानों की संख्या का अनुपात जिला पंचायत के प्रत्यक्ष निर्वाचन द्वार भरे जाने वाले स्थानों की कुल संख्या में यथासाध्य वही होगा जो उस पंचायत क्षेत्र में अनुसूचित जातियों की या उस क्षेत्र में अनुसूचित जनजातियों की या उस क्षेत्र में पिछड़े वर्गों की जनसंख्या का उस क्षेत्र की कुल जनसंख्या में भाग होगा और ऐसे स्थान जिला पंचायत में भिन्न-भिन्न प्रादेशिक निर्वाचन क्षेत्रों को चक्रानुक्रम में जनसंख्या के अवरोही क्रम में आवंटित किये जाते हैं। उत्तर प्रदेश सरकार के अधिनियम के अनुसार- 'फतेहपुर जिला पंचायत के निर्वाचन 2006 में निम्न प्रतिशत में आरक्षण प्राविधानित था।'[2]

अनुसूचित जनजाति - 2%

अनुसूचित जाति - 21%

पिछड़ा वर्ग - 27%

महिला आरक्षण - 1/3% (कुल सदस्यों में)

प्रतिबन्ध यह है कि पिछड़े वर्गों का आरक्षण 27% से अधिक नहीं होगा और यदि आंकड़े उपलब्ध हों तो नियत विधि के अनुसार सर्वेक्षण करके उनकी जनसंख्या अवधारित की जा सकती है। 'अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों के लिए स्थानों का आरक्षण संविधान के अनुच्छेद 334 में विनिर्दिष्ट अवधि की समाप्ति पर प्रभावी नहीं रहेगा।'[3]

'जिला पंचायत की कुल सदस्य संख्या के एक तिहाई पद महिलाओं के लिए आरक्षित

---

1. पूर्ववत्, पृष्ठ 67
2. जिला निर्वाचन कार्यालय के अनुसार
3. उत्तर प्रदेश क्षेत्र पंचायत अधिनियम, 1994

किये गये हैं।

जो चक्रानुक्रम के आधार पर प्रत्येक निर्वाचन में भिन्न-भिन्न प्रादेशिक निर्वाचन क्षेत्र होंगे।'[1]

अधिनियम में यह प्रावधान किया गया है कि अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति, पिछड़े वर्गों तथा महिलाओं के लिए आरक्षित स्थानों के अतिरिक्त अनारक्षित स्थानों पर भी चुनाव लड़ने में कोई प्रतिबन्ध नहीं होगा।

(E) जिला पंचायत की निर्वाचक नामावली

(i) प्रत्येक जिला पंचायत के प्रत्येक प्रादेशिक निर्वाचन क्षेत्र के लिए एक निर्वाचक नामावली होगी।

(ii) जिला पंचायत की निर्वाचक नामावली उसके अन्तर्गत आने वाले प्रादेशिक निर्वाचन क्षेत्रों या क्षेत्र पंचायत के उतने प्रादेशिक निर्वाचन क्षेत्रों की निर्वाचक नामावली से मिलकर बनेगी।

'प्रतिबन्ध यह है कि जिला पंचायत के किसी निर्वाचन के लिए नामांकन करने के अन्तिम दिनाङ्क के पश्चात् और उस निर्वाचन के पूर्ण होने के पूर्व निर्वाचक नामावली में किया गया कोई सुधार निष्कासन या परिवर्धन उस निर्वाचन के प्रयोजन के लिए ध्यान में नहीं रखा जायेगा।'[2]

मत का अधिकार - जिला पंचायत अधिनियम 1994 द्वारा या उसके अधीन अन्यथा उपबन्धित के सिवाय प्रत्येक व्यक्ति जिसका नाम तत्समय जिला पंचायत के प्रादेशिक निर्वाचन क्षेत्र के लिए निर्वाचक नामावली में सम्मिलित है, उसके किसी निर्वाचन में मत देने का अधिकारी है और जिला पंचायत के सदस्य पद हेतु या किसी अन्य पद में निर्वाचित होने के अर्ह माना जायेगा।

'प्रतिबन्ध यह है कि कोई व्यक्ति जिसने 21 वर्ष की उम्र पूरी कर ली है। जिला पंचायत के सदस्य के रूप में तथा पदाधिकारी के रूप में निर्वाचित होने के लिए अर्ह होगा।'[3]

---

1. पूर्ववत् , पृष्ठ 31
2. पूर्ववत् , पृष्ठ 31
3. पूर्ववत् , पृष्ठ 31

कार्यकाल - प्रत्येक जिला पंचायत का कार्यकाल उसकी प्रथम बैठक से पांच वर्ष की अवधि तक माना जाता है। अगर उसे किसी कारण से पहले ही विघटित नहीं कर देते हैं। किसी जिला पंचायत के किसी सदस्य का कार्यकाल यदि इस अधिनियम के उपबन्धों के अधीन समाप्त न कर दिया जाय तो जिला पंचायत के कार्यकाल के अवसान तक होगा।

जिला पंचायत का संघटन करने के लिए निर्वाचन

'(क) इस अधिनियम की उपधारा (1) में विनिर्दिष्ट उसके कार्यकाल के अवसान के पूर्व।

(ख) उसके विघटन की दिनाङ्क से छह मास की अवधि के अवसान के पूर्व।

पूरा किया जायेगा।'[1]

परन्तु इस अधिनियम में यह व्यवस्था दी गयी है कि यदि शेष अवधि जिसके लिए यह बनी रहती है, छह मास से कम है तो निर्वाचन सम्पन्न करने का कोई प्रावधान नहीं है तथा किसी जिला पंचायत के विघटन के बाद पुर्नसंगठित जिला पंचायत पूर्व जिला पंचायत के शेष भाग का ही उपयोग करेगी।' यदि कोई व्यक्ति जो पूर्व विघटित जिला पंचायत का सदस्य था तो विघट के बाद वह सदस्य न रहेगा।'[2]

(E) अर्हतायें एवं निर्बन्धन

जिला पंचायत पंचायती राज व्यवस्था के मतदाता की सूची में मतदाता के रूप में रजिस्ट्रीकृत प्रत्येक व्यक्ति ऐसे पंचायती राज संस्था के पंच या यथास्थिति, सदस्य के रूप निर्वाचन के लिए अर्हित होगा। यदि ऐसा व्यक्ति[3]

(i) वह जिला पंचायत या किसी न्याय पंचायत का वैतनिक सेवक है।

(ii) वह किसी राज्य/किन्द्र सरकार के अधीन लाभ का पद धारण करता है।

(iii) यदि वह किसी राज्य/सरकार या किसी स्थानीय प्राधिकारी या किसी पंचायती राज संस्था द्वारा सेवा से दुराचरण के कारण पदच्युत कर दिया गया हो।

---

1. उपर्युक्त, पृष्ठ 32
2. उपर्युक्त, पृष्ठ 32
3. उत्तर प्रदेश पंचायती राज अधिनियम, 1994, एक दर्शन - किसान सेवा समिति, पृष्ठ 5

(iv) वह अनुन्योचित दिवालिया हो।

(v) वह नैतिक अधमता के किसी अपराध के लिए दोषी सिद्ध ठहराया गया हो।

(vi) उस पर ग्राम पंचायत, जिला पंचायत, क्षेत्र पंचायत का कोई कर, फीस, शुल्क या कोई अन्य देय बकाया हो या वह जिला पंचायत के अधीन कोई पद धारण करने के कारण प्राप्त उसके किसी अभिलेख या सम्पत्ति के उसे देने में उसके द्वारा ऐस किये जाने की अपेक्षा किये जाने पर विफल रहा हो।

(vii) वह राज्य विधान मण्डल के निर्वाचन प्रयोजनो के लिए तत्सम्भव प्रवृत्त किसी विधिद्वारा या उसके अधीन अनर्ह हो। परन्तु यदि किसी व्यक्ति ने 21 वर्ष की उम्र पूरी कर ली है तथा 25 वर्ष से कम है तो इस आधार पर अनर्ह नहीं होगा।

(viii) उसे आवश्यक वस्तु अधिनियम 1955 के अधीन दिये गये किसी आदेश का उल्लंघन करने के लिए तीन माह की अधिक की अवधि के कारावास दण्ड दिया गया हो।

(ix) उसे एसोसिपल एम्प्लाइज एक्ट 1947 के अधीन दिये गये किसी आदेश का उल्लंघन करने के कारण 6 माह से अधिक की अवधि के कारावास या निर्वासन का दण्ड दिया गया हो।

(x) उसे संयुक्त प्रान्त आबकारी अधिनियम 1910 के अधीन तीन मास से अधिक का कारावास दण्ड दिया गया हो।

(xi) उसे स्वापक औषधि और मनः प्रभावी पदार्थ अधिनियम, 1885 के अधीन किसी अपराध हेतु दोषी सिद्ध ठहराया गया हो।

(xii) उसे निर्वाचन सम्बन्धी किसी अपराध हेतु दोषी सिद्ध ठहराया गया हो।

(xiii) उसे संयुक्त प्रान्त सामाजिक निर्योग्यताओं का निराकरण अधिनियम, 1947 या सिविल अधिकार संरक्षण अधिनियम 1955 के अधीन दोषी सिद्ध ठहराया गया है।

परन्तु उक्त 4, 6, 7, 8, 9, 10, 11, 12, 13 के अधीन अनर्हता की अवधि ऐसे दिनाङ्क से जिसे नियत की जाय 5 वर्ष की होगी। प्रतिबन्ध यह है कि जैसी भी स्थिति हो बकाये का भुगतान कर दिये जाने पर या अभिलेख या सम्पत्ति दे दिये जाने पर उक्त भाग 5 के अधीन अनर्हता न रह जायेगी?

जिला पंचायत का कोई सदस्य उसका सदस्य न रह जायेगा यदि उस सदस्य से सम्बन्धित प्रविष्टि जिला पंचायत की किसी प्रादेशिक निर्वाचन क्षेत्र की निर्वाचन नियमावली से निकाल दी जाय। यदि कोई जिला पंचायत का सदस्य न रह जाय तो वह किसी ऐसे पद जिस पर वह जिला पंचायत का सदस्य/अध्यक्ष होने के कारण निर्वाचित या नियुक्त हुआ है। बना न रहेगा।

(F) अध्यक्ष एवं उपाध्यक्ष -

प्रारम्भ से ही जिला परिषद में एक अध्यक्ष होता है जिसका निर्वाचन जिला परिषद के सदस्यों द्वारा अपने बीच से गुप्त मतदान प्रणाली द्वारा चुनाव किया जाता है। उत्तर प्रदेश में अध्यक्ष एवं उपाध्यक्ष के निर्वाचन की यह व्यवस्था की गयी है कि 'जिला परिषद के सदस्यों द्वारा आनुपातिक प्रतिनिधित्व की एकल संक्रमणीय मतदान पद्धति द्वारा मतपत्रों पर मार्किंग करके किया जाता है।'[1] जिला परिषद के निर्वाचित सदस्य अपने में से दो सदस्यों को क्रमशः अध्यक्ष या उपाध्यक्ष चुनते हैं और जब-जब अध्यक्ष/उपाध्यक्ष के पदों में आकस्मिक रिक्ति हों तब अपने में से ही किसी सदस्य को अध्यक्ष/उपाध्यक्ष चुनते हैं।'[2]

अध्यक्ष/उपाध्यक्ष के पद का आरक्षण - राज्य में अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति, पिछड़े वर्गों तथा महिलाओं के लिए स्थान उसी रीति से आरक्षित किये जाते हैं जिसका प्राविधान 73वें संविधान संशोधन में किया गया है। इस प्रकार अध्यक्ष तथा उपाध्यक्ष पद पर आरक्षण प्रदेश स्तर से 21% अनुसूचित जाति, 2% अनुसूचित जनजाति तथा 27% पिछड़ा वर्ग एवं 33% या 1/3 एक तिहाई पद महिलाओं के लिए चक्रानुक्रम के अवरोध क्रमानुसार आरक्षित किये जाते हैं।'[3] फतेहपुर जिला पंचायत चुनाव 2006 के अनुसार यही आरक्षण अध्यक्ष पद पर लागू हुआ और फतेहपुर जिला पंचायत का अध्यक्ष पद (सामान्य जाति) अनारक्षित रहा है। किन्तु सन् 2001 के जिला पंचायत चुनाव में यह पद महिला अनुसूचित जाति को भी आरक्षित कर दिया था।

अध्यक्ष एवं उपाध्यक्ष का कार्यकाल

अध्यक्ष/उपाध्यक्ष का चुनाव जिला परिषद की पूरी अवधि के लिए होता है परन्तु

---

1. द उत्तर प्रदेश जिला परिषद रूल 1963, रूल नं० 16
2. 73वाँ संविधान संशोधन विधेयक, 1994
3. उत्तर प्रदेश क्षेत्र पंचायत जिला पंचायत अधिनियम, 1994

अध्यक्ष/उपाध्यक्ष का पद इससे पहले भी रिक्त हो सकता है। प्रथम - अध्यक्ष स्वयं किसी कारणवश त्याग पत्र दे दे, द्वितीय- अविश्वास प्रस्ताव द्वारा।

(क) जब अध्यक्ष स्वयं किसी व्यक्तिगत या सामाजिक कारण से पद छोड़ देता है तब उसके कार्यों का निर्वहन उपाध्यक्ष करता है और यह अधिनियम यह प्रतिबन्ध करता है कि अध्यक्ष पद का चुनाव छह (6 माह) के अन्दर सम्पन्न हो जाना चाहिए और वह शेष अवधि के लिए होगा।

(ख) 'उत्तर प्रदेश पंचायती राज अधिनियम 1994 के अनुसार अध्यक्ष/उपाध्यक्ष के पद पर नियुक्ति के एक वर्ष बाद अविश्वास प्रस्ताव लाया जा सकता है। अविश्वास प्रस्ताव हेतु आवश्यक है कि दो तिहाई सदस्य इसके पक्ष में हों और अविश्वास प्रस्ताव पास नहीं होता है तो उस तिथिसे एक वर्ष की अवधि तक अविश्वास प्रस्ताव नहीं लाया जा सकता है।'[1]

(iii) अध्यक्ष/उपाध्यक्ष के कार्य

सामान्यतः जिला पंचायत का अध्यक्ष ही जिला पंचायत की बैठकों की सभापतित्व करता है तथा बैठने का संचालन करता है। जिला परिषद/पंचायत के अधीन पंचायत समितियों का पर्यवेक्षण एवं निरीक्षण का कार्य करता है। अध्यक्ष अपना प्रतिवेदन जिला परिषद की बैठकों में रखता है, जिला पंचायत सचिव के बारे में अपनी राय जिलाधीश को भेजता है जिसे जिलाधीश अपने प्रतिवेदन के साथ जोड़ देता है। 73वें संविधान संशोधन 1992 के अधीन उत्तर प्रदेश क्षेत्र पंचायत एवं जिला पंचायत अधिनियम, 1994 के अन्तर्गत निम्न शक्तियां व कर्तव्य दिये गये हैं -

(क) जिला पंचायत की बैठक बुलाना, अध्यक्ष और संचालन करना।

(ख) जिला पंचायत के वित्तीय और कार्य पालन, प्रशासन पर सम्पूर्ण पर्यवेक्षण रखना और जिला पंचायत के समक्ष उससे सम्बन्धित वे समस्त प्रश्न रखना जिनके बारे में उसे प्रतीत हो कि उन पर उसके आदेश अपेक्षित हैं।

(ग) मुख्य अधिकारी और उसके माध्यम से सभी अधिकारियों और अन्य कर्मचारियों को जिनकी सेवायें राज्य सरकार द्वारा जिला पंचायत के नियंत्रण में रखी गयी है। पर प्रशासनिक पर्यवेक्षण और नियंत्रण रखना।

---

1. पूर्ववत्

(घ) जिले के अन्दर प्राकृतिक आपदाओं से प्रभावित होने वाले लोगों को तुरन्त सहायता पहुँचाने हेतु मुख्य अधिकारी से परामर्श करके अधिनियम के अन्तर्गत राशि स्वीकृत करना तथा जिला पंचायत की स्वीकृति हेतु अगली बैठक में प्रस्ताव रखना।

(ङ) पंचायतों द्वारा हाथ में ले ली गयी योजनाओं और उत्पादन कार्य में मार्ग दर्शन और सहयोग करना।

(च) जिले में कार्यों का निरीक्षण करना, पंचायत समितियों, उनके अध्यक्षों उनके विकास अधिकारियों को दिशा निर्देश और सहयोग प्रदान करना।

(छ) प्रत्येक वर्ष की समाप्ति पर मुख्य अधिकारी के कार्यों का विवरण प्रदेश सरकार को प्रेषित करना, वहाँ उसे मुख्य कार्यपालक अधिकारी के गोपनीय प्रतिवेदन के साथ संलग्न करना।

(G) अधिकारी तथा कर्मचारी का सेवक

जिला पंचायत फतेहपुर में उत्तर प्रदेश क्षेत्र पंचायत एवं जिला पंचायत अधिनियम के अधीन निम्निलिखित अधिकारी एवं सेवक कार्यरत हैं-

(1) मुख्य अधिकारी

(2) अपर मुख्य अधिकारी

(3) वित्त अधिकारी

(4) स्वास्थ्य अधिकारी

(5) कार्य अधिकारी

(6) अभियन्ता

(7) कर अधिकारी

(8) शिक्षा अधिकारी

(9) सिंचाई अधिकारी

(10) पंचायतराज अधिकारी

(11) पशु धन अधिकारी

(12) कृषि अधिकारी

(13) सहकारिता अधिकारी।[1]

राज्य सरकार के यथास्थिति अपरजिला मजिस्ट्रेट नियोजन या नियोजन अधिकारी, जिला स्वास्थ्य अधिकारी, जिला विद्यालय निरीक्षक, जिला पंचायत राज अधिकारी, सहायक अभियन्ता (लघु सिंचाई), जिला पशुधन अधिकारी, जिला कृषि अधिकारी तथा जिला सहायक निबन्धक क्रमशः जिला पंचायत के अधीन क्रमशः मुख्य अधिकारी, स्वास्थ्य अधिकारी, सिंचाई अधिकारी, पशु धन अधिकारी, कृषि अधिकारी तथा सहकारिता अधिकारी के पद धारण करेंगे।

इसके अतिरिक्त जिला पंचायत फतेहपुर के अन्तर्गत कुछ अन्य कर्मचारी एवं सेवक कार्यरत हैं जो इस प्रकार हैं -

(1)	श्री गंगाचरन	-	अनुभागीय मुख्य लिपिक
(2)	श्री रमाकान्त दीक्षित	-	प्रथम श्रेणी लिपिक
(3)	श्री राम भजन द्विवेदी	-	लेखाकार
(4)	श्री जगत कल्याण	-	कैशियर
(5)	श्री राम सजीवन	-	प्रथम श्रेणी लिपिक
(6)	श्री विजय प्रताप सिंह	-	प्रथम श्रेणी लिपिक
(7)	श्री देवीदीन	-	द्वितीय श्रेणी लिपिक
(8)	श्री सूर्यभान	-	राजस्व समाहर्ता
(9)	श्री चन्द्रपाल सिंह	-	राजस्व समाहर्ता
(10)	श्री जगजीत सिंह	-	राजस्व समाहर्ता
(11)	श्री वकील अहमद	-	राजस्व समाहर्ता
(12)	श्री सोहन लाल	-	राजस्व समाहर्ता
(13)	श्री अनूप कुमार	-	राजस्व समाहर्ता

---

1. पंचायती राज व्यवस्था एक दर्शन - किसान सेवा समिति, पृष्ठ 67-68

(14) श्री कमाल अहमद - ड्राइवर

(15) श्री कालीचरण - ड्राइवर

(16) श्री सर्वेश कुमार - बैक्सीनेटर

(17) श्री सत्येन्द्रपाल सिंह - बैक्सीनेटर

(18) श्री वीरेन्द्र प्रताप सिंह - बैक्सीनेटर

(19) श्री अनिल कुमार - बैक्सीनेटर

(20) श्री राम किशोर वर्मा - सेवक

(21) श्री गणेश प्रसाद - सेवक

(22) श्री जगन्नाथ - सेवक

(23) श्री सुखलाल - सेवक

(24) श्री हीरालाल - सेवक

(25) श्री रामकृष्ण - सेवक

(26) श्री जागेश्वर - सेवक

(27) श्री सीताराम - सेवक

(28) श्री राम कुबेर पाल - सेवक

(29) श्री विनोद कुमार - सेवक

(30) श्री ठाकुर प्रसाद - सेवक

(31) श्रीमती शान्ती देवी - स्वीपर[1]

ये कर्मचारी तथा सेवक गण प्रत्येक कार्य दिवस में जिला पंचायत फतेहपुर में अपनी सेवायें मुहैया कराते हैं।

❖

---

1. त्रैमासिक समीक्षा पुस्तिका - जिला पंचायत फतेहपुर, पृष्ठ 14, 15

अध्याय पंचम

अध्याय पंचम

नियंत्रण एवं पर्यवेक्षण सम्बन्धी कार्य

➢ (1) *शिक्षा सम्बन्धी कार्य*

➢ (A) *प्राथमिक एवं उच्च प्राथमिक विद्यालयों की स्थापना एवं रख-रखाव।*

➢ (B) *स्कूल पूर्व शिक्षा हेतु अनौपचारिक शिक्षा केन्द्रों का संचालन।*

➢ (C) *शिक्षा मित्र योजना का कार्यान्वयन।*

➢ (D) *सर्व शिक्षा अभियोन योजना का क्रियान्वयन।*

➢ (2) *चिकित्सा एवं स्वास्थ्य सम्बन्धी कार्य।*

➢ (A) *सामुदायिक एवं प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों की स्थापना व रखरखाव।*

➢ (B) *आयुर्वेदिक, होम्योपैथिक एवं यूनानी स्वास्थ्य केन्द्रो की स्थापना व रखरखाव।*

➢ (C) *प्रतिरक्षीकरण, टीकाकरण कार्यक्रम का क्रियान्वयन।*

➢ (3) *स्वास्थ्य, शिक्षा सम्बन्धी क्रियाकलाप।*

➢ (4) *जिला पंचायत द्वारा संचालित परिवार कल्याण कार्यक्रम।*

➢ (5) *कार्य शिविरों का आयोजन।*

➢ (6) *पर्यावरण, प्रदूषण नियंत्रण सम्बन्धी कार्य।*

➢ (7) *जिला पंचायत की उपविधियाँ बनाने का अधिकार।*

➢ (8) *विद्युत वितरण एवं चोरी पर नियंत्रण।*

➢ (9) *निरीक्षण, प्रवेश एवं तलाशी सम्बन्धी कार्य।*

☆☆☆

अध्याय - पंचम

नियंत्रण एवं पर्यवेक्षण सम्बन्धी कार्य

जिला पंचायत फतेहपुर को केन्द्र/राज्य सरकारों के आदेशों, अधिनियमों, अध्यादेशों के द्वारा नियंत्रण सम्बन्धी कार्य सौंपे गये हैं तथा विभिन्न अधिनियमों के माध्यम से इसे उत्तरदायी बनाया गया है। पंचायतों को सौंपे गये समस्त विभागों के अधिकारों के कार्यों पर नियंत्रण एवं नियमन का अधिकार सौंपा गया है। 'विभिन्न अधिनियमों द्वारा जिला पंचायतों को उस जिला पंचायत के अन्तर्गत नियंत्रणाधीन किसी भी स्थावर सम्पत्ति, निर्माण, कार्य या चल रहे निर्माण कार्य, पंचायतों के अधीन चल रहे विद्यालयों, अस्पतालों, औषधालयों, टीका केन्द्रों, कुक्कुटशालाओं में प्रवेश करेंगे और उसके निरीक्षण के लिए अधिकृत किया गया है। वह इन संस्थाओं में किसी भी अभिलेख, रजिस्टर व अन्य किसी दस्तावेजों की जांच करने के लिए सक्षम हैं।'[1]

प्रत्येक संगठन सरकारी, गैर सरकारी, सार्वजनिक या निजी जो भी हो पर्यवेक्षण एक महत्वपूर्ण व्यवस्था है संचालन की। किसी कार्य को नियमाधीन समयानुकूल, कुशलतापूर्वक, उचित ढंग से सम्पादित करवाने हेतु पर्यवेक्षण या नियंत्रण एक उक्ति है। इससे कार्य में तीव्रता, कार्यकर्ता में रुचि एवं ईमानदारी उत्पन्न करने में सहायता प्राप्त होती है। किसी भी कार्य एवं संस्था को गति प्रदान करने हेतु आवश्यक है कि उसका पर्यवेक्षण किया जाय तथा उसके कर्मचारियों पर नियंत्रण रखा जाय जिससे उनका मार्ग दर्शन होत है। पर्यवेक्षण एवं नियंत्रण से कर्मचारी सदैव अपने कार्य को नियंत्रित ढंग से सही समय में करने के लिए प्रेरित होता है। कर्मचारी यह अनुभव करते हैं कि नियमानुकूल उचित ढंग से कार्यवाही नहीं की जायेगी तो उसे जिला पंचायत के उच्च अधिकारियों द्वारा नियंत्रित किया जा सकता है। पर्यवेक्षण एक साधन है। पर्यवेक्षण यदि पूर्वाग्रहपूर्ण या जतन पूर्ण न हो तो अपने अधीनस्थ कर्मचारियों को कार्य के सम्बन्ध में उचित मंत्रणा एवं मार्ग दर्शन करता है जिससे कर्मचारियों

---

1. भारत में स्थानीय प्रशासन - अशोक शर्मा, पृष्ठ 167

की कार्य क्षमता में वृद्धि महसूस होती है। विलियम ने पर्यवेक्षण के सम्बन्ध में लिखा है - 'यह एक प्रक्रिया है जिसके द्वारा कर्मचारियों को उनकी आवश्यकता के अनुसार सीखने तथा अपने ज्ञान तथा कौशल का सर्वोत्तम प्रयोग करने तथा योग्यताओं का सुधार करने में किसी पदाधिकारी की सहायता प्राप्त होती है ताकि अपने कार्य को अधिक प्रभावशाली ढंग से कर सकें और जिससे उन्हें स्वयं तथा अभिकरण को अधिकाधिक सन्तोष प्राप्त होता रहे।'[1]

राष्ट्रीय विस्तार सेवा की परियोजना और कार्यक्रमों की जांच करने के बाद बलवन्त राय मेहता अध्ययन दल ने अपने प्रतिवेदन में यह सिफारिश की थी कि 'जनतांत्रिक विकेन्द्रीकरण की योजना अपनायी जाय, जिसमें जनपद स्तर पर निगरानी एवं नियंत्रण की व्यवस्था हो।'[2] 1957 में बलवन्त राय मेहता प्रतिवेदन के प्रकाशित होने के पश्चात् भारत की ग्रामीण अर्थव्यवस्था में कई तरह के परिवर्तन हो गये हैं जो उस समय की परिस्थितियों से बिल्कुल मेल नहीं खाती है। अतः अब समय इनकी व्यापक समीक्षा करना तथा इनके भविष्य का मूल्यांकन करना आवश्यक है।

जिला पंचायत ग्रामीण स्तर के स्थानीय स्वशासन की सरकारी एवं गैर सरकारी सदस्यों से मिलकर बनने वाली एक संवैधानिक संस्था है जिसका हर कार्य दो समूहों के द्वारा पर्यवेक्षित एवं नियंत्रित किया जाता है।

(1) प्रथम- उनके द्वारा प्रत्येक कार्य पर्यवेक्षित एवं नियंत्रित किया जाता है, जो काम करने के लिए धन या आदेश अग्रसारित करते हैं।

(2) दूसरा - उनके द्वारा भी यह कार्य पर्यवेक्षित एवं नियंत्रित किये जाते हैं जिनके लिए यह कार्य किये जाते हैं।'[3]

प्रथम श्रेणी में सरकार के उच्च अधिकारियों को सम्मिलित किया जायेगा। इस सम्बन्ध में बिहार सरकार के सामुदायिक विकास एवं पंचायती राज विभाग के सचिव ने सरकार के सभी सचिवों, अध्यक्षों, प्रमण्डलीय आयुक्तों एवं जिलाधिकारियों को प्रेषित करते हुए अपने पत्रांक 1624 C.D.P. दिनांक 2 मार्च, 1994 में कहा है कि 'निर्देशानुसार मुझे यह कहना है कि जिलों में पंचायती राज के प्रारम्भ के परिणामस्वरूप जिला परिषद (पंचायत) के निरीक्षण,

---

1. एन. विलिमसन - सुपर शेसन - प्रिंसिपल एण्ड मेथड़, पृष्ठ 3
2. बलवन्तराय मेहता अध्ययन दल के प्रतिवेदन से
3. उपरोक्त

पर्यवेक्षण एवं मार्ग निर्देशन की पर्याप्तता को सुनिश्चित करने की आवश्यकता महसूस की जा रही है। इसके अन्तर्गत कहना है कि जिला पंचायत की संस्थापना करने तथा उन्हें विकास के कार्यों को सौंप देने से सरकार उन संस्थानों से समुचित ढंग से कार्य सम्पादन तथा उन्हें प्रावैधिक मार्ग दर्शन और उन्हें सहायता उपलब्ध कराने के उत्तरदायित्व से मुक्त नहीं हो जाती है। अतः प्रावैधिक विभागों एवं सम्बद्ध पदाधिकारी उन संगठनों को सौपे गये कार्यों या स्कीमों के सही आयोजन प्रारम्भ, निष्पादन या संघारण और उनके स्थानीय कर्मचारियों को प्रतिबाध्य पर्यवेक्षण एवं मार्ग दर्शन उपलब्ध कराने में सहायता देते रहेंगे। सरकार के प्रत्येक विभाग के विभिन्न कोटियों के पदाधिकारियों के निरीक्षण और दौरों के लिए मापदण्ड निर्धारित किये गये हैं। इस आदेश के अनुसार जिला पंचायत को यह अधिकार सौंपा गया है कि पंचायतों से सम्बद्ध विभागों के कार्यों या सकीमों के निष्पादन और संघारण में आवश्यक प्रावैधिक सहायता, मार्ग दर्शन और पर्यवेक्षण तथा नियंत्रण करना होगा और ऐसा करते हुए गाँवों और क्षेत्रों के कार्यों के निरीक्षण एवं नियंत्रण पर बल दिया जाना चाहिए और इस सन्दर्भ में इन निकायों के निरीक्षण अभिलेखों को देखा जा सकता है तथा जिला पंचायत स्तर पर सम्बद्ध विभागों के प्रावैधिक कार्मिकों के काम के सम्बन्ध में प्रवर प्रावैधिक पदाधिकारियों द्वारा भलीभांति जांच की जानी चाहिए।

'जिला पंचायत फतेहपुर के अन्तर्गत जरौली असोथर में बन रहे पम्प कैनाल का जिला पंचायत अध्यक्ष एवं मुख्य अधिकारी ने 18-02-2007 को निरीक्षण किया और उन्होंने प्रमुख अभियन्ता से कार्य के सम्बन्ध में जानकारी ली, तथा कार्य के धीमी गति पर उन्हें तथा उनके कर्मचारियों को आड़े हाथों लिया। कार्य को तीव्र गति से करवाने तथा शीघ्र पूरा करने हेतु आदेशित किया।'[1]

पर्यवेक्षण कार्य को उचित ढंग से सम्पादित करवाने के लिए यह अति आवश्यक है कि पर्यवेक्षक निरीक्षण करते वक्त पूर्वाग्रहरहित, विवेकपूर्ण एवं निष्ठावान जब कार्य करता है तब कर्मचारियों में कार्य के प्रति लगाव, उत्साह एवं समय से पूरा करने के प्रति लगनशीलता में वृद्धि होती है तथा जो कर्मचारी कार्य में रुचि नहीं रखता उसकी आसानी से पहचान की जा सकती है तथा दण्डित किया जा सकता है। निरीक्षण कर्ता को अपना दृष्टिकोण सामान्य एवं स्पष्ट रखना चाहिए जिससे कार्यकर्ताओं के उचित एवं अनुचित में अन्तर नहीं रह जाता और लगनशील कर्मचारी दण्डित हो सकता है और जो कर्मचारी कार्य में रुचि नहीं रखता है वह

---

1. दैनिक पत्र दोआबा वार्ता - 19-02-2007

दण्डित होने से बच सकता है जिससे लगनशील कर्मचारी की कार्यक्षमता प्रभावित होती है एवं मनोबल गिरता है। दूसरी तरफ पर्यवेक्षक के पूर्वाग्रह ग्रसित होने के गलत कर्मचारी अनुचित प्रश्रय पाता है एवं उसके गलत करने की प्रवृत्ति में वृद्धि होती है जिससे कार्य उचित ढंग से नहीं हो पाता है और कर्मचारी नियंत्रणविहीन हो जाता है। अन्ततः यह कहा जा सकता है कि पर्यवेक्षक अगर दूरदर्शी एवं लगनशील है तो वह उचित निर्णय ले सकता है जिससे गलत व्यक्ति दण्डित एवं उचित व्यक्ति प्रोत्साहित होगा।

जिला पंचायत की वास्तविक कार्य पद्धति सरकारी एवं गैर सरकारी सदस्यों के समन्वय पर निर्भर है। सामान्य रूप से यह कहा जा सकता है कि जन प्रतिनिधि होने के नाते अध्यक्ष का यह कर्तव्य है कि इस बात का सदैव ख्याल रखे कि उसके पंचायत क्षेत्र का अधिक से अधिक विकास हो। साथ ही साथ अपने जिला पंचायत के अन्तर्गत आने वाली कठिनाइयों के राज्य सरकार के सामने प्रस्तुत करे एवं जिला पंचायत में प्रस्ताव पारित कराकर सम्बन्धित अधिकारियों का ध्यान आकर्षित कराता है और दूसरी ओर कोई भी संस्था ग्रामीण विकास हेतु जो कार्य करती है उन सबसे कहीं ज्यादा यह जिला पंचायत विकास के कार्य करती है।

जिला पंचायत ने अपने कार्यक्षेत्र के अन्तर्गत सम्बद्ध विभागों के कर्मचारियों एवं कार्यों के पर्यवेक्षण एवं नियंत्रण का अधिकार दिया गया है। निम्न विभागों में फतेहपुर जिला पंचायत द्वारा किये गये पर्यवेक्षण एवं नियंत्रण के कार्य इस प्रकार हैं -

(A) शिक्षा से सम्बन्धित कार्य

उत्तर प्रदेश क्षेत्र पंचायत एवं जिला पंचायत अधिनियम, 1994 के अधीन जिला पंचायतों को प्राथमिक एवं उच्च प्राथमिक शिक्षा से सम्बन्धित कार्य सम्पादित करने हेतु उपबन्ध किये गये हैं। इससे पहले प्राथमिक शिक्षा का कोई स्थानीय प्रशासन नहीं था। शिक्षा व्यक्तिगत उद्यमों एवं धार्मिक समाजों के साथ केन्द्र/राज्य सरकारों के हाथ में निहित थी और केन्द्र/राज्य द्वारा अनुदान देकर इन शिक्षा संस्थानों की सहायता की जाती थी किन्तु इसके पश्चात् केन्द्र/राज्य सरकारों ने एक के बाद एक शिक्षा सम्बन्धी प्राविधान करके शिक्षा को स्थानीय सरकारों ने एक के बाद एक शिक्षा सम्बन्धी प्राविधान करके शिक्षा को स्थानीय सरकारों के नियंत्रणाधीन कर दिया। प्राथमिक एवं उच्च प्राथमिक शिक्षा सम्बन्धी कार्य जिला परिषद कों सौप दिये गये हैं। शिक्षा के सम्बन्ध में विभिन्न कार्य किये गये हैं जो निम्नलिखित हैं -

(a) प्राथमिक विद्यालयों की स्थापना तथा रखरखाव।

(b) प्राथमिक अध्यापकों से सम्बन्धित कार्य।

(c) उच्च प्राथमिक विद्यालयों की स्थापना तथा रखरखाव व अध्यापकों की व्यवस्था।

(d) स्कूल पूर्व शिक्षा हेतु आंगनबाड़ी केन्द्रों का संचालन।

(e) अनौपचारिक शिक्षा की व्यवस्था।

(f) शिक्षा मित्र योजना का क्रियान्वयन।

(g) सर्व शिक्षा अभियान योजना का क्रियान्वयन।

(h) प्राथमिक शिक्षा से सम्बन्धित कार्य पंचायत निधि से।

(i) सत्ता के विकेन्द्रीकरण के सम्बन्ध में पंचायतों की परिसम्पत्तियों का हस्तान्तरण।

(1) प्राथमिक एवं उच्च प्राथमिक विद्यालयों की स्थापना तथा रखरखाव

प्राथमिक एवं उच्च प्राथमिक विद्यालयों की स्थापना एवं रखरखाव की जिम्मेदारी जिला पंचायत को दी गयी है। केन्द्र/राज्य सरकारों द्वारा प्रदत्त अनुदान या अपने साधनों से अर्जित आय के मूल भाव से प्राथमिक एवं उच्च प्राथमिक विद्यालयों की स्थापना करेगा। प्राथमिक विद्यालयों की स्थापना हेतु प्रत्येक 500 की आबादी को लक्ष्य माना गया तथा एक प्राथमिक विद्यालय की स्थापना हेतु लगभग 3 लाख रुपये का प्रावधान किया जाता है। 'पंचायती राज विभाग के आदेश 3467 - 33 - 1-99-222/99 दिनांक 01 जुलाई, 1999 के द्वारा पंचायतों को वित्तीय एवं प्रशासनिक अधिकारों का प्रतिविधायन करते हुए बेसिक शिक्षा के सम्बन्ध में प्राथमिक शिक्षा तथा उच्च प्राथमिक विद्यालय को पंचायतों के प्रशासनिक नियंत्रण में करते हुए विद्यालयों से सम्बन्धित परिसम्पत्तियों के हस्तान्तरण तथा उनके रखरखाव व पठन-पाठन सामग्री एवं नये तथा विद्यमान विद्यालयों के निर्माण हेतु धनराशि पंचायतों को हस्तान्तरित किये जाने की व्यवस्था की गयी है। अतिरिक्त कक्षा कक्ष के निर्माण भी पंचायतों के माध्यम से कराये जाने की व्यवस्था की गयी है तथा यह निर्णय लिया गया कि इससे सम्बन्धित धन पंचायतों को उपलब्ध कराया जायेगा।'[1] यह भी निर्देश दिया गया कि 'बेसिक शिक्षा समिति के अधिनियम के अन्तर्गत गठित ग्राम शिक्षा समिति को समाप्त कर दिया जायेगा तथा पंचायत

---

1. सत्ता के विकेन्द्रीकरण से सम्बन्धित शासनादेशों का संकलन - पंचायती राज विभाग, उत्तर प्रशासन शासन (अगस्त 1999) पृष्ठ 293

राज अधिनियम के अन्तर्गत गठित शिक्षा समिति कार्य करेगी।'[1]

उपर्युक्त विवरण के सन्दर्भ में प्राथमिक एवं उच्च प्राथमिक शिक्षा से सम्बन्धित निम्नलिखित योजनाओं की धनराशि पंचायतों को हस्तान्तरित किये जाने का प्रावधान किया गया है -

(1) विद्यालय के रखरखाव हेतु नियत धनराशि।

(2) पठन-पाठन सामग्री हेतु धनराशि।

(3) नये विद्यालयों के निर्माण तथा विद्यमान विद्यालयों के रखरखाव हेतु धनराशि का हस्तान्तरण।

(4) अतिरिक्त कक्षा कक्ष निर्माण हेतु धनराशि।

(5) शिक्षा विभाग के अन्य कार्यक्रम जिनकी धनराशि पूर्व में ग्राम स्तरीय समिति को व्यय करने हेतु उपलब्ध करायी जाती रहेगी।

(6) शिक्षा मित्रों के मानदेय हेतु धनराशि का समय से पंचायतों को हस्तान्तरण।'[2]

इन सब कार्यों के लिए पंचायतों को हस्तान्तरित धनराशि अगर खर्च नहीं की गयी है तो यह सब जिला पंचायत की जिला निधि को हस्तान्तरित कर दिया जाता है।

प्राथमिक एवं उच्च प्राथमिक विद्यालयों में अध्यापकों की आवश्यकतानुसार व्यवस्था, स्थानान्तरण तथा समायोजन आदि का अधिकार जिला पंचायत को सौंप दिया गया है। प्राथमिक एवं उच्च प्राथमिक विद्यालयों के अन्तर्गत कार्यरत प्रधानाध्यापकों एवं शिक्षकों को पंचायतों के नियंत्रणाधीन किया गया है। इस सम्बन्ध में राज्य शासन के आदेश संख्या 1642/33-1-99 दिनांक 12-4-99 के अन्तर्गत यह आदेशित किया गया है कि 'बेसिक शिक्षा परिषद द्वारा संचालित प्राथमिक एवं उच्च प्राथमिक विद्यालयों के प्रधानाध्यापकों/ शिक्षकों के स्थानान्तरण/समायोजन का कार्य जिला पंचायत की शिक्षा समिति द्वारा सम्पादित किया जायेगा।'[3] प्रदेश में प्राथमिक एवं उच्च प्राथमिक विद्यालयों में प्रधानाध्यापकों एवं शिक्षकों के स्थानान्तरण में एकरूपता बनाये रखने तथा प्रत्येक विद्यालय में अध्यापकों की तैनाती सुनिश्चित करने हेतु मार्गदर्शी सिद्धान्त अपनाये गये हैं। बेसिक शिक्षा परिषद के प्राथमिक

---

1. उपरोक्त
2. उपरोक्त
3. उपरोक्त, पृष्ठ 277

तथा उच्च प्राथमिक विद्यालयों में कार्यरत अध्यापकों के स्थानान्तरण हेतु निम्नलिखित मार्ग दर्शी सिद्धान्त अपनाये जाते हैं-

(1) स्थानान्तरण जिला परिषद स्तर पर किये जायेंगे ।

(2) एक जनपद से दूसरे जनपद में स्थानान्तरण बेसिक शिक्षा परिषद द्वारा किये जायेंगे। इसके लिए जिला पंचायत द्वारा प्रस्ताव भेजा जायेगा। जिसमें रिक्तियां ग्रह जनपद तथा पिछली तैनाती आदि का उल्लेख हो।

(3) स्थानान्तरण केवल 15 मई से 15 जून के बीच किये जायेंगे इसके लिए जिला पंचायत द्वारा प्रस्ताव भेजा जायेगा तथा इस अवधि के बाद स्थानान्तरण केवल बेसिक शिक्षा परिषद के पूर्व अनुमोदन के पश्चात ही किये जा सकेंगे।

(4) तथा प्रत्येक वर्ष 15 मई तक छात्रों की संख्या के आधार पर प्रत्येक विद्यालय में मानकों के अनुसार अध्यापकों की संख्या निर्धारित कर दी जायेगी। प्रत्येक जनपद तथा विद्यालय के लिए अध्यापकों की संख्या निर्धारण के आधार पर छात्र संख्या होगी।

(5) स्थानान्तरण करते समय यह ध्यान रखा जायेगा कि किसी विद्यालय में स्वीकृति से अधिक अध्यापक न तैनात हो यदि स्वीकृति संख्या से अधिक अध्यापक तैनात होते है तो उत्तरदायित्व बेसिक शिक्षा अधिकारी का होगा तथा उस शिक्षक का वेतन आहरित नहीं किया जायेगा।

(6) प्राथमिक विद्यालयों में अध्यापकों की कमी होने पर भी प्रत्येक विद्यालय में दो अध्यापक तैनात किये जायेंगे। यह भी प्रयास किया जायेगा कि उक्त दो अध्यापकों में से कम से कम एक महिला अध्यापक हो तथा उच्च प्राथमिक विद्यालय में तीन अध्यापक तैनात किये जायेंगे।

(7) किसी भी वर्ष में स्थानान्तरण जिले में अध्यापकों की कुल संख्या के 15 प्रतिशत से अधिक किसी भी अवस्था में नहीं किये जायेंगे।

(8) स्थानान्तरण केवल प्रशासनिक आवश्यकता पर व्यक्तिगत अनुरोध या स्कूलों में अध्यापकों के Equitable Distribution उद्देश्य से ही किये जायेंगे। सामान्य स्थानान्तरण नहीं किये जायेंगे। ग्राम शिक्षा समिति के प्रस्ताव पर भी अध्यापकों का स्थानान्तरण किया जा सकेगा। यह एक उचित प्रशासनिक आधार होगा। इसके अतिरिक्त गम्भीर शिकायत प्राप्त

होने पर भी स्थानान्तरण पर विचार किया जा सकेगा।

(9) पति-पत्नी को एक ही स्थान पर समायोजित करने का प्रयास किया जायेगा। लेकिन इस प्राविधान से उन्हें एक स्थान पर तैनात किंये जाने का अधिकार प्राप्त नहीं होता है।

(10) मान्यता प्राप्त संघ के राज्य स्तर पर, मण्डल स्तर पर व जिला स्तर के अध्यक्ष, सचिव को सामान्यतः उनके पद ग्रहण करने के दो वर्ष तक स्थानान्तरित नहीं किया जायेगा। यदि अपरिहार्य कारणों से ऐसा करना अनिवार्य हो तो बेसिक शिक्षा परिषद की पूर्व अनुमति प्राप्त की जायेगी।

(11) इन नियमों के प्रयोजन हेतु बेसिक शिक्षा परिषद का तात्पर्य Poorhood in Session से है। परिषद द्वारा ये अधिकार परिषद के अध्यक्ष अथवा किसी अन्य अधिकारी को प्रतिनिधित्व नहीं किये जायेंगे।

(12) नगर से ग्रामीण क्षेत्र में, ग्रामीण क्षेत्र से नगर में स्थानान्तरण नहीं किये जायेंगे।

(13) इस नियमावली के प्राविधानों के पालन का उत्तरदायित्व सम्बन्धित जिला बेसिक शिक्षा अधिकारी का होगा। यदि किसी विद्यालय में स्वीकृत संख्या से अधिक अथवा दो अध्यापकों से कम तैनात हो जाते हैं तो उसका दायित्व भी बेसिक शिक्षा अधिकारी का होगा।

(14) स्थानान्तरण आदेश केवल सम्बन्धित जिला बेसिक शिक्षा अधिकारी के हस्ताक्षरों से जारी होंगे।'[1]

जनपद में विकासखण्डवार मान्यता प्राप्त शिक्षण संस्थाओं में स्तरवार विद्यार्थी (संख्या)[2]

वर्ष / विकास खण्ड	कक्षा 1 से 5 तक				कक्षा 6 से 8 तक			
	छात्र		छात्राएं		छात्र		छात्राएं	
	कुल	अ. जा./ जन जा.	कुल	अ. जा./ जन जा.	कुल	अ. जा./ जन जा.	कुल	अ. जा./ जन. जा.
1	2	3	4	5	6	7	8	9
2003-04	176187	61728	158310	54578	84572	20858	45851	12178
2004-05	187262	57518	167408	51185	96732	22215	51415	13639
2005-06	187262	57518	167408	51185	96732	22215	51415	13639

1. पूर्ववत्, पृष्ठ 278
2. सांख्यिकी पत्रिका फतेहपुर 2006-07, पृष्ठ 13

1. देवमई	9004	2874	8551	2586	3420	1207	2031	900
2. मलवां	13820	402	13155	5034	5563	1404	3664	1220
3. अमौली	9868	2431	9119	2254	5830	946	2530	528
4. खजुहा	11372	3122	11325	3169	6905	1834	4982	1077
5. तेलियानी	10998	4359	10218	3913	4957	1247	2473	761
6. भिटौरा	13697	4830	12960	4543	5122	1455	3267	1006
7. हसवा	16894	5577	15970	5345	7168	1527	4488	1495
8. बहुआ	11554	4125	10386	3789	3979	1133	2204	842
9. असोथर	15039	3205	13090	2899	4341	890	2586	569
10. हथगाम	15686	5067	12943	4259	8828	2323	6356	1351
11. ऐरायां	11750	4186	10597	3726	7562	1710	3326	725
12. विजयीपुर	11700	4741	11235	4299	3123	693	1453	274
13. धाता	14551	2704	12528	1536	5479	1832	2519	792
योग ग्रामीण	**165933**	**52623**	**152077**	**47352**	**72277**	**18201**	**41879**	**11540**
योग नगरीय	**21329**	**4895**	**15331**	**3833**	**24455**	**4014**	**9536**	**2099**
योग जनपद	**187262**	**57518**	**167408**	**51185**	**96732**	**22215**	**51415**	**13639**

जनपद में विकासखण्डवार मान्यता प्राप्त शिक्षण संस्थाओं में शिक्षक (संख्या)[1]

वर्ष/विकास खण्ड	प्राथमिक विद्यालय		उच्च प्राथमिक विद्यालय		माध्यमिक विद्यालय	
	कुल	स्त्रियां	कुल	स्त्रियां	कुल	स्त्रियां
1	**2**	**3**	**4**	**5**	**6**	**7**
2003-04	3699	1164	1232	413	1967	20
2004-05	3530	1105	1723	506	2073	30
2005-06	3530	1105	1723	506	2073	398

1. सांख्यिकी पत्रिका फतेहपुर वर्ष 2006-07, पृष्ठ 96

1.	देवमई	276	66	146	44	160
2.	मलवां	133	26	54	11	148
3.	अमौली	317	74	157	23	200
4.	खजुहा	404	111	173	49	105
5.	तेलियानी	273	97	107	51	145
6.	भिटौरा	105	36	60	12	120
7.	हसवा	212	125	132	98	70
8.	बहुआ	218	61	81	15	90
9.	असोथर	216	18	89	14	63
10.	हथगाम	286	41	200	11	80
11.	ऐरायां	149	33	50	7	60
12.	विजयीपुर	158	8	54	1	82
13.	धाता	111	7	78	23	160
	योग ग्रामीण	**2858**	**703**	**1381**	**359**	**1483**
	योग नगरीय	**672**	**402**	**342**	**147**	**590**
	योग जनपद	**3530**	**1105**	**1723**	**506**	**2073**

फतेहपुर जनपद में प्राथमिक एवं उच्च प्राथमिक विद्यालयों का वर्षवार विवरण[1]

वर्ष	प्राथमिक विद्यालय	उच्च प्राथमिक विद्यालय	कुल योग
2002-03	1896	482	2378
2003-04	1906	562	2468
2004-05	2117	576	2693
2005-06	--	--	--
2006-07	--	--	--

1. सांख्यिकी पत्रिका वर्ष वार फतेहपुर

(II) स्कूल पूर्व शिक्षा हेतु अनौपचारिक केन्द्रों का संचालन

73 वें संविधान संशोधन के उपरान्त अनपढ़ लोगों को साक्षर बनाने के लिए जिन अनौपचारिक शिक्षा केन्द्रों की स्थापना की गयी थी- 'इस क्रम में शासन द्वारा यह निर्णय लिया गया कि अनौपचारिक शिक्षा योजना के अन्तर्गत जो कार्य बेसिक शिक्षा अधिनियम के तहत गठित ग्राम शिक्षा समिति को सौंप दिये गये थे, वे पंचायती राज अधिनियम 1947 के अन्तर्गत संचालित पंचायतों के द्वारा सम्पन्न किये जायेंगे।'[1]

अतः जो अधिकार और कर्तव्य ग्राम शिक्षा समिति को सौंपे गये थे लेकिन वर्ष 1999 के उपरान्त इन सभी शक्तियों का प्रयोग पंचायतें करेंगी। अनौपचारिक शिक्षा केन्द्रों के अन्तर्गत शिक्षा से वंचित बच्चों तथा बूढ़ों को साक्षर बनाने का प्रयास किया जाता रहा है।

(III) शिक्षा मित्र योजना का क्रियान्वयन

प्रदेश में प्राथमिक शिक्षा के सार्वभौमीकरण के लक्ष्य की ओर अग्रसर होने के प्रयासों के अन्तर्गत शासन ने ग्रामीण क्षेत्रों में शिक्षित युवा पीढ़ी को शिक्षा के प्रसार में स्वेच्छा, उनकी सहभागिता सामुदायिक सेवा के क्षेत्र में पंचायतों द्वारा प्राप्त करने के लिए शिक्षा मित्र योजना की रचना की। वस्तुतः यह योजना मुख्य रूप से ग्रामीण शिक्षित युवा वर्ग को अपने ही ग्राम में शिक्षा के आलोक को सामुदायिक सेवा के रूप में प्रज्वलित करने हेतु उन्हें उत्प्रेरित करने के लक्ष्य को दृष्टिगत रखते हुए आरम्भ की गयी है।

शासन ने उपर्युक्त योजना के अन्तर्गत शिक्षा मित्रों की आवश्यकता के आंकलन, चयन तथा योजना के कार्यान्वयन से सम्बन्धित अन्य महत्वपूर्ण बिन्दुओं के सम्बन्ध में कार्यवाही निम्नलिखित मार्ग निर्देशों के अनुसार प्रसस्त करने का निर्णय लिया गया है।

(1) शिक्षा मित्र की आवश्यकता का आकलन

प्रदेश के विभिन्न जिलों में शिक्षा मित्र का आकलन एवं संख्या का निर्धारण विश्वबैंक वित्त पोषित परियोजनाओं से आच्छादित जनपदों में राज्य परियोजना निदेशक द्वारा तथा शेष जनपदों में शिक्षा (वे) शासन द्वारा पूरे प्रदेश के लिए निर्धारित संख्या के आधार पर किया जायेगा तथा साथ ही साथ यह भी ध्यान में रखा जायेगा कि प्रत्येक विद्यालय में अध्यापक-छात्र अनुपात 1 : 40 का अनुसरण हो तथा किसी भी विद्यालय में अध्यापक

---

1. शासनादेशों का संकलन - वर्ष 1999 पंचायती राज विभाग, लखनऊ, पृष्ठ 275

शिक्षा-मित्र का अनुपात 3 : 2 का होगा।'[1] शिक्षा मित्र की तैनाती उन्हीं विद्यालयों में होगी जहाँ पहले से एक नियमित अध्यापक कार्यरत हो। दूसरा शिक्षा मित्र सम्बन्धित विद्यालय में तभी तैनात किया जायेगा जब विद्यालय में पहले से ही नियमित अध्यापक कार्यरत हो और अध्यापक छात्र संख्या 1 : 40 के आनुपातिक आधार पर शिक्षा मित्र की आवश्यकता हो। दो से अधिक शिक्षा मित्रों को एक विद्यालय में नहीं रखा जायेगा। उपर्युक्त प्रक्रिया एवं रोस्टर का कड़ाई से पालन किया जायेगा।

(2) योजना के आच्छादन हेतु विद्यालयों का चिन्हांकन

योजना अन्तर्गत शिक्षा मित्रों की जनपदवार आवश्यकता का निर्धारण शिक्षा निदेशक (बे) एवं राज्य परियोजना निदेशक, बेसिक शिक्षा परियोजना द्वारा करा लिये जाने के उपरान्त विद्यालयों का चिन्हांकन शासनादेश दिनांक 26 मई 1999 द्वारा गठित जिला स्तरीय समिति द्वारा किया जायेगा।' जिला स्तरीय समिति द्वारा शिक्षा मित्रों की व्यवस्था करने हेतु शिक्षा निदेशक (बे) परियोजना निदेशक द्वारा सम्बन्धित जनपद के लिए निर्धारित शिक्षा मित्रों की संख्या के आधार पर ग्राम पंचायतों, जहाँ प्राथमिक विद्यालयों को शिक्षा मित्र की व्यवस्था अपेक्षित हो, का चिन्हांकन ऐसे एकल अध्यापकीय विद्यालयों, जो जनपद के दुर्गम क्षेत्रों में स्थित हो और अध्यापकों की कमी के कारण जहां पठन-पाठन में समस्या रही हो, को वरीयता प्रदान करते हुए विद्यालयों के चयन हेतु संस्तुति की जायेगी।'[2]

(3) ग्राम शिक्षा समिति द्वारा शिक्षा मित्रों के चिन्हांकन की प्रक्रिया

जिला स्तरीय समिति द्वारा योजना के अच्छादन हेतु विद्यालयों का चिन्हांकन हो जाने के उपरान्त सम्बन्धित ग्राम शिक्षा समिति अपनी ग्राम पंचायत की प्रादेशिक सीमा के अन्तर्गत अवस्थित विद्यालय हेतु शिक्षा-मित्र की व्यवस्था हेतु प्रस्ताव पारित कर यह निर्णय लेगा कि समिति सम्बन्धित विद्यालय में शासन द्वारा निर्धारित मानकों के अन्तर्गत शिक्षा मित्र की व्यवस्था हेतु सहमत हैं।

उपर्युक्त प्रस्ताव के पारित हो जाने के उपरान्त ग्राम शिक्षा समिति शिक्षा मित्र ही व्यवस्था के लिए इच्छुक अभ्यर्थियों के आवेदन पत्र आमंत्रित करने की सार्वजनिक सूचना

---

1. पूर्ववत्, पृष्ठ 281
2. पूर्ववत्, पृष्ठ 281

ग्राम पंचायत के सूचना पटल पर तथा ग्राम पंचायत क्षेत्र में अन्य उपयुक्त माध्यमों से प्रसारित करेगी। सूचना के प्रकाशन, प्रसारण की तिथि से 10 दिन की समयावधि में इच्छुक अभ्यार्थियों के आवेदन पत्र ग्राम पंचायत द्वारा प्राप्त किये जा सकेंगे।

ग्राम शिक्षा समिति द्वारा उस ग्राम पंचायत में जिसकी प्रादेशिक सीमा में विद्यालय अवस्थित है। के निर्धारित अर्हताधारी अभ्यार्थियों के ही आवेदन पत्र आमंत्रित करेगी। विशेष परिस्थितियों में यदि किसी गांव में अर्ह अभ्यार्थी उपलब्ध न हो तो सम्बन्धित न्याय पंचायत से अर्ह अभ्यर्थी चिन्हांकित किये जा सकेंगे।

(4) शिक्षा मित्रों की अर्हतायें - जिला पंचायतों द्वारा संचालित प्राथमिक विद्यालयों में शिक्षा मित्र के पद पर कार्य करने हेतु निम्नलिखित योग्यताधारी महिला पुरुष अभ्यर्थी ही आवेदन कर सकते हैं।

1. शिक्षा मित्र (पुरुष/महिला) की न्यूनतम शैक्षिक योग्यता उत्तर प्रदेश माध्यमिक शिक्षा परिषद द्वारा इण्टरमीडिएट परीक्षा उत्तीर्ण अथवा राज्य सरकार द्वारा इसके समकक्ष मान्यता प्राप्त कोई अन्य अर्हता होगी।

2. उक्त ग्राम शिक्षा समिति प्रस्ताव पारित कर निर्णय लेने से पूर्व जिस गांव में विद्यालय अवस्थित है, उसमें निर्धारित अर्हताधारी महिला-पुरुष को चिन्हित करेगी।

3. शिक्षा मित्र की न्यूनतम आयु 18 वर्ष तथा अधिकतम आयु 30 वर्ष होगी।'[1] ग्राम शिक्षा समिति द्वारा यह सुनिश्चित किया जायेगा कि शिक्षण कार्य करने योग्य सक्षम स्थानीय अर्ह व्यक्ति का चयन किया जा रहा है।

4. समिति द्वारा सदस्यों के सामने उपलब्ध अर्ह व्यक्तियों में सर्वाधिक अंक (प्रतिशत) प्राप्त महिला-पुरुष का चयन किया जायेगा।

5. शिक्षा-मित्रों का चयन - (क) ग्राम शिक्षा समिति शिक्षा मित्रों के चयन हेतु बैठक आहूत करेगी; जिसमें समिति के सदस्यों की कुल संख्या के दो तिहाई सदस्यों की उपस्थिति अनिवार्य होगी।

(ख) 'समिति के सदस्यों के सम्मुख उपलब्ध अर्ह व्यक्तियों की सूची प्रस्तुत की जायेगी।

---

1. पूर्ववत्, पृष्ठ 281

यह सूची उनके द्वारा हाईस्कूल व इण्टरमीडिएट परीक्षाओं के प्राप्त कुल अंकों के प्रतिशत के औसत अंकों के आधार पर निर्मित की जायेगी तथा सूची में अधिक अंक प्राप्त करने वाले का नाम पहले रखा जायेगा।'[1]

(ग) विद्यालय में कुल रखे जाने वाले शिक्षा मित्रों में 50% महिलायें होंगी। इनका भी चयन ऊपर दी गयी व्यवस्था के आधार पर होगा।

(घ) अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों, अन्य पिछड़े वर्गों एवं अन्य श्रेणियों के आरक्षण हेतु प्रचलित नियमों/निर्देशों का पालन यथावत सुनिश्चित किया जायेगा।

(ङ) ग्राम शिक्षा समिति के सभापति/सचिव के निकट सम्बन्धी का चयन शिक्षा मित्र के रूप में नहीं होगा।

6. शिक्षा मित्र का कार्यकाल - शिक्षा मित्र का कार्यकाल सामान्यतया किसी शिक्षा सत्र में माह मई के अन्तिम दिवस को स्वतः समाप्त हो जायेगा। शिक्षा मित्र के शिक्षण कार्य तथा आचरण से सन्तुष्ट होने की स्थिति में समिति द्वारा अगले शिक्षा सत्र के लिए चिन्हित किया जा सकता है।

'किसी भी शिक्षा मित्र का कार्य व आचरण सन्तोषजनक न होने की दशा में शिक्षा समिति के दो तिहाई बहुमत से लिखित प्रस्ताव पारित कर सत्र के मध्य में भी समिति शिक्षा मित्र को किसी भी समय हटा सकती है।'[2] इस सम्बन्ध में शिक्षा समिति का निर्णय अन्तिम होगा और इस तरह हटाये गये शिक्षा मित्र को पुनः इस रूप में कार्य करने का अवसर नहीं दिया जायेगा।

7. शिक्षा मित्र की मानदेय - शिक्षा मित्र को 2250 रुपये प्रतिमाह का नियत मानदेय ग्राम शिक्षा समिति द्वारा भुगतान किया जायेगा। भुगतान ग्राम शिक्षा निधि के माध्यम से किया ज़ायेगा। जिला स्तरीय समिति के अनुमोदन के उपरान्त मानदेय हेतु अपेक्षित धनराशि हस्तान्तरित होगी। शिक्षा सत्र के मध्य में हटाये जाने वाले शिक्षा मित्र को उस माह का वेतन देय होगा जिस माह उसके विरुद्ध शिक्षा समिति द्वारा हटाये जाने के सम्बन्ध में निर्णय लिया जाता है।

---

1. पूर्ववत्, पृष्ठ 282
2. पूर्ववत्, पृष्ठ 282

8. शिक्षा मित्रों का प्रशिक्षण - ग्राम पंचायत द्वारा चयनित तथा जिला समिति द्वारा अनुमोदित शिक्षा मित्र को जिला शिक्षा एवं प्रशिक्षण संस्थान में एक माह का प्रशिक्षण प्रदान किया जायेगा। यह प्रशिक्षण शिक्षा मित्र को सफलतापूर्वक प्राप्त करना अनिवार्य होगा। इसके पश्चात् ही ग्राम शिक्षा समिति द्वारा पारित प्रस्तावानुसार शिक्षा मित्र को शिक्षा कार्य करने की अनुमति प्रदान की जायेगी। इस प्रशिक्षण अवधि के लिए उसे 2250 के स्थान पर 400 रुपये का मानदेय देय होगा।

यदि शिक्षा मित्र का अगले शिक्षा सत्र के लिए चयन कर लिया जाता है तो आगामी सत्र में 15 दिन का पुर्नबोधात्मक प्रशिक्षण सफलतापूर्वक प्राप्त करना अनिवार्य होगा। पुर्नबोधात्मक प्रशिक्षण में उसे 200 रुपये का मानदेय दिया जायेगा।'[1]

उपर्युक्त प्रशिक्षण अवधियों में जिला शिक्षा एवं प्रशिक्षण संस्थान द्वारा उन्हें निःशुल्क भोजन एवं आवास की सुविधा प्रदान की जाती है।

निर्दिष्ट अर्हता, अधिमानी अर्हता एवं आयु सीमा के अन्तर्गत आने वाले अभ्यर्थी शिक्षा मित्र के रूप में शिक्षण से सम्बन्धित सामाजिक कार्य के लिए अपनी सेवायें सुलभ कराये जाने से पूर्व निर्दिष्ट प्रारूप एक में आवेदन पत्र अपनी शैक्षिक/प्रशिक्षण अर्हता, आयु एवं जाति सम्बन्धी प्रमाणपत्रों के साथ प्रस्तुत करेंगे। शैक्षिक/प्रशिक्षण योग्यता के प्रमाण पत्रों के साथ उनके द्वारा हाईस्कूल, इण्टमीडिएट तथा बी. एड./एल. टी. परीक्षा की अंकतालिकायें तथा प्रमाण पत्र अनिवार्य रूप से प्रस्तुत किये जायेंगे।

शिक्षा मित्र को अकादमिक सहायता, न्याय पंचायत संसाधन केन्द्र/विकास खण्ड संसाधन केन्द्र द्वारा प्रदान की जायेगी तथा उनका शैक्षिक पर्यवेक्षण प्रमुखतः इन केन्द्रों के समन्वयस्कों द्वारा किया जायेगा। न्याय पंचायत संसाधन केन्द्र/सरगना स्कूल पर प्रत्येक माह आयोजित होने वाली एक दिवसीय कार्यशाला/बैठक में शिक्षा मित्र का प्रतिभाग करना अनिवार्य होगा। इस एक दिवसीय कार्यशाला में ब्लाक संसाधन केन्द्र/न्याय पंचायत संसाधन केन्द्र समन्वयक द्वारा प्रत्येक शिक्षा मित्र से शिक्षण कार्य में उनके अनुभव, समस्याओं तथा आवश्यकताओं की जानकारी प्राप्त कर उसकी समस्याओं का निराकरण कर दिया जायेगा। यदि कोई समस्या ऐसी है जिसका समाधान समन्वयक के स्तर से सम्भव नहीं है तो उसकी जानकारी सहायक बेसिक शिक्षा अधिकारी के माध्यम से की जायेगी तथा इस सम्बन्ध में

---

1. रानीपुर बहेरा ग्राम पंचायत में कार्यरत शिक्षा मित्र से जानकारी के अनुसार

वरीयता से कार्यवाही कर निदान किया जायेगा। शिक्षा मित्र पर पूर्ण नियंत्रण ग्राम शिक्षा समिति का होगा और वे इसके प्रति उत्तरदायी भी होंगे। किन्तु शिक्षा मित्र अपने शिक्षण दायित्वों का निर्वाह विद्यालय के प्रधान अध्यापक/प्रभारी प्रधानाध्यापक के नियंत्रण एवं निर्देशन में करेंगे। ग्राम शिक्षा समिति के पदाधिकारी/सहायक बेसिक शिक्षा अधिकारी प्रति उपविद्यालय निरीक्षक अथवा किसी अन्य अधिकारी द्वारा स्कूल के निरीक्षण/पर्यवेक्षण के समय स्कूल के अन्य अध्यापकों की भाँति शिक्षा मित्र भी पूर्ण रूप से जवाबदेह होंगे।

'विकास खण्ड संसाधन केन्द्र/न्याय पंचायत संसाधन केन्द्र समन्वयक तथा सहायक बेसिक शिक्षा अधिकारी/प्रति उपविद्यालय निरीक्षक द्वारा शिक्षा मित्र के शिक्षण कार्य के सम्बन्ध में पर्यवेक्षण टिप्पणी प्रस्तुत कर दी जायेगी। यदि शिक्षा मित्र के विरुद्ध लगातार टिप्पणी आती है तब ग्राम शिक्षा समिति उक्त शिक्षा मित्र की निर्धारित प्रक्रिया के अनुसार चयन कर सकती है।

9. अनुदान की व्यवस्था - इस योजना के अधीन शिक्षा मित्र के मानदेय तथा प्रशिक्षण पर होने वाले व्यय की धनराशि को एकमुश्त सम्बन्धित जनपद के जिला बेसिक शिक्षा अधिकारी को निदेशक सभी के लिए शिक्षण परियोजना तथा गैर परियोजना जनपदों में शिक्षा निदेशक (बेसिक) द्वारा अनुदान के रूप में उपलब्ध कराया जायेगा। जिला बेसिक शिक्षा अधिकारी, जिलाधिकारी की अध्यक्षता में गठित समिति की स्वीकृति के उपरान्त धनराशि का आगणन निर्धारित दर पर आगामी 31 मई तक के लिए किया जायेगा तथा एक किश्त स्वीकृत कर दिये जाने पर आगामी किश्त पूर्व स्वीकृत किश्त के उपभोग प्रमाण पत्र प्राप्त होने के बाद ही स्वीकृत की जायेगी।

जिला शिक्षा समिति को यह अधिकार होगा कि 'ग्राम शिक्षा समिति द्वारा शिक्षा मित्र योजना के अधीन स्वीकृत अनुदान की धनराशि के दुरुपयोग की शिकायत प्राप्त होने पर अनुदान की दूसरी किश्त के हस्तान्तरण को रोक दे अथवा पूर्व में स्वीकृत धनराशि की नियमानुसार वसूली करायें।'[1] उक्त में ग्राम शिक्षा समिति का तात्पर्य ग्राम पंचायत की शिक्षा समिति से है।

सर्व शिक्षा अभियान योजना का क्रियान्वयन

उत्तर प्रदेश सरकार में प्रदेश में व्याप्त निरक्षरता को समाप्त करने के लिए सर्व शिक्षा

---

1. शासनादेश 1999, पृष्ठ 284

अभियान योजना संचालित करने का फैसला किया। इस संकल्प के तहत 6-11 वर्ष की आयु के सभी बच्चों को प्रार्थना विद्यालयों में दीक्षित कराना है जिससे प्राथमिक शिक्षा के सार्वभौमीकरण के लक्ष्य को प्राप्त किया जा सके। लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए आवश्यक है कि बच्चों को स्कूलों में नामाङ्कन प्रक्रिया को अत्यधिक गति प्रदान करने के लिए इसे अभियान का स्वरूप प्रदान किया जाय तथा बच्चों के नामाङ्कन प्रक्रिया को गति देने हेतु निम्नलिखित प्रयास किये जाने चाहिए।

(i) सर्वप्रथम प्राथमिक विद्यालयों के सीमान्तर्गत (कैचमेन्ट एरिया में) निवास करने वाले 6-11 वर्ष की आयु के ऐसे बच्चों का चिन्हाकंन कर लिया जाय जो विद्यालय नहीं जा रहे हैं।

(ii) चिन्हांकित बच्चों का निकट के प्राथमिक विद्यालय में नामाङ्कन सुनिश्चित कराया जाय।

(iii) शत प्रतिशत नामाङ्कन को सुनिश्चित करवाने हेतु यह आवश्यक होगा कि जनपद को सेक्टर में बांट लिया जाय तथा प्रत्येक सेक्टर में नामाङ्कन की कार्यवाही सुनिश्चित कराने के लिए एक जनपद स्तरीय अधिकारी को उत्तरदायित्व सौंपा जाय। इस अधिकारी के अधीन विभिन्न विभागों के ग्राम स्तरीय तथा विकास खण्ड स्तरीय कर्मचारियों को भी इस कार्य में सम्बद्ध किया जाय।

(iv) प्राथमिक शिक्षा के सम्बन्ध में पंचायतों को दिये गये अधिकार तथा कर्तव्यों को निर्धारित कर दिया गया है कि वे अपने-अपने क्षेत्रों के स्कूल न जाने वाले बच्चों को प्राथमिक विद्यालय में नामाङ्कित करायें। अतः इस विषय में ग्राम पंचायतों तथा जिला पंचायत को भी उत्तरदायी माना जाये। इस क्षेत्र में कार्यरत विभिन्न स्वयंसेवी संस्थाओं को भी भागीदारी दी जाय।'[1]

उपर्युक्त कार्य को समयाबद्ध ढंग से पूरा करने के लिए निर्देश जारी किये जाते हैं। वर्ष 2005-06 में इस कार्य को पूरा करने हेतु निम्न दिनांक तय की गयी थी -

6-11 वर्ष की आयु के स्कूल न जाने वाले बच्चों का चिन्हांकन	-	10 अगस्त तक
तथा इनका नामाङ्कन	-	31 अगस्त तक

---

1. शासनादेश पंचायती राज विभाग उत्तर प्रदेश शासन, पृष्ठ 290

उपर्युक्त छात्रों के नामाङ्कन हो जाने के उपरान्त यह भी सम्भव है कि प्राथमिक विद्यालयों में अध्यापकों की कमी महसूस की जाने लगे जिसके लिए जिला पंचायत के अन्तर्गत गठित जिला शिक्षा समिति के आज्ञानुसार ग्राम पंचायत के अन्तर्गत गठित जिला शिक्षा समिति के आज्ञानुसार ग्राम पंचायत की शिक्षा समिति द्वारा दो शिक्षा मित्रों की नियुक्ति की जा सकती है। अगर ऐसे गांव या मजरे हैं जहां एक किलोमीटर की परिधि में कोई परिषदीय विद्यालय नहीं है और वहां पर 6-11 वर्ष की आयु के 30 बच्चों को शिक्षा देने हेतु उपलब्ध हैं तो वहाँ पर उन्हें कक्षा-1 एवं कक्षा -2 की शिक्षा हेतु शिक्षा गारन्टी योजना के अन्तर्गत शिक्षा केन्द्र स्थापित कर आचार्य जी की संविदा पर ग्राम पंचायत द्वारा नियुक्ति की जा सकती है।'[1] तथा इस बात का विशेष ध्यान रखना है कि जिन बच्चों का नामाङ्कन स्कूलों में हो चुका है। वह स्कूल छोड़कर न जाने पायें और इस कार्य में ग्राम पंचायतों की विशेष भूमिका का निर्वाह सुनिश्चित करना चाहिए।

शत-प्रतिशत नामाङ्कन के लक्ष्य को पूरा करने के लिए आवश्यक है कि चलाये जा रहे अभियान का समय-समय पर अनुश्रवण किया जाय। इसके लिए यह उपयुक्त होगा कि 11 अगस्त को स्कूल न आने वाले बच्चों के चिन्हांकन की समीक्षा कर ली जाय। इसी प्रकार सितम्बर के प्रथम सप्ताह में शत प्रतिशत नामाङ्कन की समीक्षा कर ली जाय तथा सितम्बर माह के अन्त तक चलाये गये अभियान के सन्दर्भ में विस्तृत रिपोर्ट जिला शिक्षा समिति को उपलब्ध करायें। साथ ही साथ यह भी आवश्यक है कि नामाङ्कन की प्रत्येक माह समीक्षा की जाय जिससे बच्चों की स्कूल छोड़ने की प्रवृत्ति पर अंकुश लगाया जा सके।

प्राथमिक शिक्षा से सम्बन्धित कार्यक्रमों का क्रियान्वयन पंचायत निधि से[2]

'पंचायती राज विभाग के आदेश संख्या 346/33-1-99-222-99 के द्वारा पंचायतों को प्रशासनिक एवं वित्तीय अधिकारों का प्रतिनिधायन करते हुए बेसिक शिक्षा के सम्बन्ध में प्राथमिक शिक्षा तथा उच्च प्राथमिक शिक्षा व अनौपचारिक शिक्षा के अन्तर्गत कार्यरत प्रधानाध्यापक/शिक्षण/अनुदेशक को पंचायतों के प्रशासनिक नियंत्रण में करते हुए विद्यालयों से सम्बन्धित परिसम्पत्तियों के हस्तान्तरण तथा उनके रखरखाव व पठन-पाठन सामग्री एवं नये तथा विद्यमान विद्यालयों के निर्माण हेतु धनराशि पंचायतों को हस्तान्तरण की व्यवस्था

---

1. पूर्ववत्, पृष्ठ 290
2. पूर्ववत्, पृष्ठ 293

की गयी है।' अतिरिक्त कक्षा कक्ष का निर्माण भी पंचायतों के माध्यम से कराये जाने की व्यवस्था की गयी है। साथ ही यह निर्णय लिया गया है कि इससे सम्बन्धित निधि ग्राम पंचायतों को उपलब्ध करायी जाय।

पंचायत राज विभाग के इस आदेश के उपरान्त बेसिक शिक्षा अधिनियम के अन्तर्गत गठित शिक्षा समिति को भंग कर दिया गया तथा पंचायत राज अधिनियम के अन्तर्गत गठित शिक्षा समिति कामकाज सम्पादित करेगी।

उपरोक्त के विषय में प्राथमिक शिक्षा के सम्बन्ध में निम्नलिखित परियोजनाओं की धनराशि पंचायतों को हस्तान्तरित कराये जाने की कार्यवाही की गयी है-

(1) विद्यालय के रखरखाव हेतु तय धनराशि।

(2) पठन-पाठन सामग्री हेतु तय धनराशि।

(3) नये विद्यालयों तथा विद्यमान विद्यालयों के निर्माण हेतु धनराशि।

(4) अतिरिक्त कक्षा कक्ष के निर्माण हेतु तय धनराशि।

(5) शिक्षा से विभाग के अन्य कार्यक्रमों से सम्बन्धित धनराशि भी पंचायतों की उपलब्ध करायी जायेगी (जो शासन द्वारा देय होगी)

निम्न इंगित बिन्दुओं के लिए निर्गत धनराशि अगर किसी कारण से खर्च नहीं की गयी है तो उस धनराशि को ग्राम पंचायत निधि को हस्तांतरित कर दिया जायेगा। यहां यह स्पष्ट कर देना होगा कि प्राथमिक शिक्षा से सम्बन्धित उक्त समस्त बिन्दुओं हेतु निर्गत धनराशि का प्रयोग ग्राम निधि से ग्राम प्रधान तथा सचिव के संयुक्त हस्ताक्षरों से खर्च किया जायेगा।

विद्यालय भवन का निर्माण हेतु धन का हस्तान्तरण अतिरिक्त कक्षा कक्ष के निर्माण हेतु धन का हस्तान्तरण जिला पंचायत अपने जिला निधि से करेगी। निर्माण कार्य के अतिरिक्त अन्य शैक्षणिक कार्यों हेतु धन का हस्तान्तरण जिला शिक्षा समिति की संस्तुति के बाद किया जाता है। प्राथमिक एवं उच्च प्राथमिक विद्यालयों के भवनों की डिज़ाइन सबके लिए शिक्षा योजना के अनुरूप रखना आवश्यक है। इस सम्बन्ध में जो भवन डिजाइन धनराशि परियोजना जनपदों तथा गैर परियोजना जनपदों हेतु स्वीकृत हो चुके हैं। उनका निर्माण पूर्व स्वीकृत लागत के अनुसार कराया जायेगा।

सत्ता विकेन्द्रीकरण के सम्बन्ध में पंचायतों को परिसम्पत्तियों का हस्तान्तरण

पंचायती राज संस्थाओं को और अधिक अधिकार सम्पन्न बनाकर प्रभावी बनाये जाने के उद्देश्य से बेसिक शिक्षा अधिनियम 1992 में व्यापक संशोधन किये गये हैं। परिषदीय विद्यालय भवन, परिसम्पत्तियों को पंचायतों को हस्तान्तरित किया गया है।' बेसिक शिक्षा परिषद के विद्यालयों की उपर्युक्त धाराओं में परिभाषित परिसम्पत्तियों, पंचायतीराज अनुभाग-1 के आदेश संख्या 3467/33-1-99-222/99 के निर्देशों के अनुशीलन में जनपद स्तर पर गठित निम्न समिति द्वारा निर्धारित अवधि में हस्तान्तरित की जायेगी-

(1) जिलाधिकारी - अध्यक्ष

(2) जिला बेसिक शिक्षा अधिकारी - सदस्य

(3) जिला पंचायत राज अधिकारी - सदस्य संयोजक'[1]

हस्तान्तरित होने वाली समस्त परिसम्पत्तियाँ (चल, अचल परिसम्पत्ति) का प्रथक-प्रथक विवरण स्थायी पंजिका में रखा जायेगा। जहाँ तक विद्यालय की अचल परिसम्पत्ति का सम्बन्ध है, का हस्तान्तरण जिलाधिकारी द्वारा विस्तृत प्रचार-प्रसार के बाद एक निश्चित तिथि को सम्बन्धित पंचायत को हस्तान्तरित किया जायेगा। विद्यालय की परिसम्पत्ति का किसी भी दशा में पंचायत द्वारा विक्रय नहीं किया जा सकता है तथा विद्यालय क्षेत्र में कोई व्यवसायिक निर्माण नहीं किया जा सकता है। विद्यालय की चल सम्पत्ति का विवरण भी एक पंजिका में रखा जायेगा। इसके नष्ट होने वाली वस्तुओं को निर्धारित अवधि में खारिज करने के लिए वर्ष में एक बार शिक्षा समिति से अनुमति लेकर विभागीय निर्देशानुसार कार्यवाही की जायेगी। नवीन क्रय वस्तु का विवरण तुरन्त पंचायत की पंजिका में निर्दिष्ट किया जायेगा। विद्यालय की सम्पत्ति की सुरक्षा व इसका पूर्ण विवरण रखने के लिए सम्बन्धित प्रधानाध्यापक उत्तरदायी होगा।

(B) चिकित्सा एवं स्वास्थ्य

किसी भी ग्राम, जिला, राज्य या देश की जनसंख्या का उस देश के विकास से सीधा सम्बन्ध होता है। विकास की गति और जनसंख्या के मध्य सन्तुलन बना रहे, इसके लिए सरकारों द्वारा विभिन्न प्रकार के स्वास्थ्य एवं चिकित्सा कार्यक्रम संचालित कर रखे गये हैं।

---

1. पूर्ववत्, पृष्ठ 299

चूँकि 73वें संविधान संशोधन द्वारा पंचायतों को अधिकार सम्पन्न बना दिया गया है और चिकित्सा एवं स्वास्थ्य विभाग को भी पंचायतों के अधीन कर दिया गया है क्योंकि जिस प्रकार स्वास्थ्य का सीधा सम्बन्ध जनता अर्थात् व्यक्तियों से होता है। भारत की अबाध बढ़ती जनसंख्या तथा रोगियों की बढ़ती संख्या को ध्यान में रखते हुए भी 'जनता के स्वास्थ्य से सम्बन्धित कार्य पंचायतों को सौंपे गये हैं।'[1] अतः फतेहपुर जिला पंचायत भी अपने चिकित्सा एवं स्वास्थ्य सम्बन्धी कार्यों का संचालन कर रही है जिसकी स्थिति को बहुत अच्छा तो नहीं कहा जा सकता है किन्तु उपयोगी अवश्य ही कहा जा सकता है। जिला पंचायत फतेहपुर स्वास्थ्य एवं चिकित्सा कार्यों पर निरीक्षण एवं मार्गदर्शन के माध्यम से सम्पूर्ण व्यवस्था पर नियंत्रण रखती है। जिला पंचायत फतेहपुर द्वारा निम्नलिखित प्रकार से स्वास्थ्य एवं चिकित्सा सम्बन्धी कार्यों को सम्पादित कर रही है-

(a) सामुदायिक और प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों, औषधालयों, उपकेन्द्रों की स्थापना और रखरखाव।

(b) आर्युर्वेदिक, होम्योपैथिक, यूनानी औषधालयों की स्थापना और रखरखाव।

(c) प्रतिरक्षीकरण, टीकाकरण कार्यक्रम का क्रियान्वयन।

(d) स्वास्थ्य शिक्षा क्रिया कलाप परिवार कार्यक्रम।

(e) पंचायत समितियों और पंचायतों की सहायता से स्वास्थ्य शिविरों का आयोजन।

(f) पर्यावरण प्रदूषण के विरुद्ध उपाय।'[2]

(a) सामुदायिक और प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों की स्थापना और रखरखाव

चिकित्सा, स्वास्थ्य, परिवार कल्याण मंत्रालय के अन्तर्गत पंचायतों को सामुदायिक और प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों की स्थापना एवं रखरखाव का कार्य दिया गया है जिसके लिए राज्य सरकार तथा केन्द्र सरकार द्वारा समय-समय पर धन उपलब्ध कराया जाता है तथा इनके संचालन हेतु पंचायतों के पूर्ण नियंत्रण में रखा गया है। जिला पंचायत फतेहपुर के द्वारा भी सामुदायिक एवं प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों की स्थापना की गयी है। नये तथा विद्यमान स्वास्थ्य

---

1. पूर्ववत्, पृष्ठ 146
2. भारत में स्थानीय प्रशासन - सरोज चोपड़ा, पृष्ठ 127

केन्द्रों हेतु धनराशि तथा रखरखाव हेतु धनराशि समय पर आवंटित की जाती है जो सीधे ग्राम पंचायत की निधि में जाता है तथा ग्राम पंचायत द्वारा चिकित्सा केन्द्रों की स्थापना एवं रखरखाव हेतु धनराशि खर्च की जाती है। जिला पंचायत फतेहपुर द्वारा निम्नलिखित सामुदायिक एवं प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों का रखरखाव एवं नियंत्रण का कार्य किया जा रहा है-

क्रम सं.	नाम	संख्या
(1)	सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्र	05
(2)	प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र	56
(3)	औषधालय	16"[1]

(b) आर्युवेदिक, होम्योपैथिक, यूनानी स्वास्थ्य केन्द्रों की स्थापना और रखरखाव

सामुदायिक एवं प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों की भाँति ही जिला पंचायत फतेहपुर द्वारा आर्युवेदिक, यूनानी एवं होम्योपैथिक स्वास्थ्य केन्द्रों की स्थापना की गयी है तथा उनके रखरखाव हेतु स्टाफ की व्यवस्था की गयी है। बीच-बीच में पंचायत के अधिकारी निरीक्षण एवं पर्यवेक्षण के द्वारा इनकी व्यवस्था को देखते रहते हैं। जो निम्न है-

क्रम सं.	नाम	संख्या
(1)	आर्युवेदिक	25
(2)	होम्योपैथिक	42
(3)	युनानी	06"[2]

(c) प्रतिरक्षीकरण टीकाकरण कार्यक्रम का क्रियान्वयन

फतेहपुर जिला के पंचायत द्वारा चिकित्सा एवं स्वास्थ्य कार्यक्रमों के अन्तर्गत प्रतिरक्षीकरण टीकाकरण कार्यक्रम संचालित किया जा रहा है।' 73वें संविधान संशोधन के अन्तर्गत की गयी व्यवस्था के अनुरूप पंचायती राज व्यवस्था के अधीन चिकित्सा, स्वास्थ्य

---

1. सामाजिक समीक्षा वर्ष 2006 जनपद फतेहपुर, पृष्ठ 26 (संख्याधिकारी कार्यालय फतेहपुर)
2. पूर्ववत्, पृष्ठ 26

एवं परिवार कल्याण विभाग के जिला पंचायत स्तर पर मातृ एवं शिशु कल्याण उपकेन्द्रों को जिला पंचायत को हस्तान्तरित करने का आदेश जारी करती है।''[1]

सम्पूर्ण भारत के समान ही फतेहपुर जिला पंचायत द्वारा प्रतिरक्षीकरण टीकाकरण कार्यक्रम में सहभागिता का निर्वाह किया जा रहा है तथा टीकाकरण के अन्तर्गत 6 जान लेवा बीमारियों से बच्चों की रक्षा की जाती है।

(1) तपेदिक/क्षयरोग/टीबी

(2) गलाघोंटू/डिप्थीरिया

(3) काली खाँसी

(4) टिटनेस

(5) पोलियो

(6) खसरा

रोगों से प्रतिरक्षण प्रदा करने के सम्बन्ध में जिला पंचायत से अपेक्षायें

- *सभी बच्चों को एक वर्ष की आयु के पहले बी. सी. जी. के टीके लगवाने हेतु कार्यक्रम तैयार करवाना।*
- *छः सप्ताह से एक वर्ष की आयु के सभी शिशुओं को डी. पी. टी. वैक्सीन के तीन टाँके लगवाने तथा पोलियो की तीन खुराक पिलाने हेतु कार्य योजना तैयार करवाना।*
- *9-12 महीने की आयु वाले शिशुओं को खसरा वैक्सीन का एक टीका लगवाने तथा विटामिन 'ए' के घोल की व्यवस्था करने के सम्बन्ध में।*
- *सभी गर्भवती महिलाओं को टिटनेस आक्साईड के दो टीके लगवाने की व्यवस्था करना।*
- *स्कूली बच्चों को डी. टी-टी. टी. के टीके लगवाने की सलाह देने हेतु कार्यक्रम।*
- *महिला स्वास्थ्य कार्यकर्ता की नियुक्ति तथा उसके सहयोग से प्रतिरक्षण कार्यक्रम की योजना इस प्रकार बनाना कि कोई भी बच्चा टीकाकरण से वंचित न रह जाये।*
- *अपेक्षित रिकार्ड रखना और प्रदेश स्तर पर रिपोर्ट भेजना।*[2]

---

1. शासनादेशों का संकलन (पंचायती राज विभाग उत्तर प्रदेश) वर्ष 1999, पृष्ठ 145
2. विकेन्द्रीकरण के अन्तर्गत पंचायतों को सौंपी गयी योजनायें (एक परिचय) पंचायती राज विभाग, उत्तर प्रदेश, पृष्ठ 62

प्रतिरक्षण सूची

लाभार्थी	आयु	वैक्सीन	खुराक
गर्भवती महिलायें	गर्भ का पता चलते ही एक माह बाद	टी. टी., टी. टी.	प्रथम खुराक, दूसरी खुराक
शिशु 0 - 1 वर्ष	डेढ़ माह	B.C.G.	एक
		D.P.T.	प्रथम
	ढाई माह	पोलियो	द्वितीय
	ढाई माह	D.P.T.	द्वितीय
	साढ़े तीन माह	पोलियो	तृतीय
	साढ़े तीन माह	DPT	तृतीय
	9 माह	पोलियो	एक
	9 माह	मिजिल्स	प्रथम
		विटामिन 'ए' का घोल	
बच्चे	16-24 माह	D.P.T.	बूस्टर
	16-24 माह	पोलियो	बूस्टर
	16-24 माह	V. ए	II
	24-30 माह	V. ए	III
	30-36 माह	V. ए	IV
	36-42 माह	V. ए	V
स्कूली बच्चे	5 बच्चे	D.T.	बूस्टर
	10 बच्चे	T.T.	बूस्टर
	16 वर्ष	T.T.	बूस्टर

(c) स्वास्थ्य शिक्षा क्रियाकलाप

लोगों को अपने स्वास्थ्य के प्रति जागरुक करने का अर्थ फतेहपुर जिला पंचायत द्वारा किया जा रहा है। स्वास्थ्य शिक्षा के सम्बन्ध में विभिन्न प्रकार के क्रियाकलाप एवं योजनायें संचालित की जा रही हैं। मनुष्य के शरीर में जीवाणुओं तथा विषाणुओं के शरीर में प्रवेश करने व उनकी संख्या बढ़ने के कारण शरीर मे रोग पैदा होते हैं। सामान्य तौर पर रोग फैलाने वाले जीवाणु आँखों से दिखाई नही देते हैं। यदि शरीर में रोगाणुओं के मुकाबले आवश्यक रोग प्रतिरोधक क्षमता पहले से विद्यमान है। तो वे इन रोगाणुओं को नष्ट कर देते हैं तथा व्यक्ति स्वस्थ्य बना रह सकता है किन्तु यदि शरीर में रोग प्रतिरोधक क्षमता नहीं है तो रोगाणुओं की संख्या बढ़ने लगती है और व्यक्ति बीमार पड़ जाता है। शरीर में रोग प्रतिरोधक क्षमता की वृद्धि एवं रोग फैलाने वाले रोगाणुओं के प्रति जागरुक करने के लिए

स्वास्थ्य शिक्षा सम्बन्धी विभिन्न कार्य योजना को संचालित करना तथा समय-समय पर फैलने वाले रोगों एवं महामारी के प्रति जनता को जागरुक करना तथा आवश्यक निर्देश जारी करना। स्वास्थ्य शिक्षा के सम्बन्ध में निम्नलिखित कार्य संचालित किये जा रहे हैं-

(1) जब एक समाज के बहुत सारे लोग एक साथ बीमार पड़ जायें तो महामारी के अन्तर्गत उस रोग के बचाव के उपाय एवं दवाओं का प्रचार-प्रसार एवं आवश्यक उपचार प्रणाली से सामान्य जनता को परिचित कराने हेतु विभिन्न उपाय करना।

(2) संचारी रोग की सूचना तत्काल पंचायतों द्वारा नजदीक के प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र के चिकित्साधिकारी को उपलब्ध कराना।

(3) चिकित्साधिकारी द्वारा दिये गये दिशा निर्देशों के अनुसार रोग के नियंत्रण एवं रोकथाम हेतु कार्य करना।

(4) स्वास्थ्य कार्यकर्ता महिलाओं की नियुक्ति करना तथा उनके अपने कार्य के प्रति प्रशिक्षित करवाने की व्यवस्था करना।

(5) जिला पंचायत द्वारा अपने अधीन क्षेत्र में विभिन्न स्वास्थ्य शिक्षा सम्बन्धी कार्यक्रम आयोजित करना तथा उसमें लोगों की सहभागिता सुनिश्चित करना।

(6) विभिन्न परिवार नियोजन कार्यक्रमों का क्रियान्वयन।

(7) टीकाकरण कार्यक्रम के संचालन हेतु वैक्सीन की व्यवस्था।

(8) पोलियो कार्यक्रम के अन्तर्गत प्रचार-प्रसार तथा कार्यक्रम की सफलता हेतु जन सहयोग के लिए स्थानीय नेतृत्व से सहायता प्राप्त करना।

(9) मातृत्व एवं शिशु स्वास्थ्य हेतु विभिन्न कार्यक्रमों का संचालन तथा प्रचार-प्रसार।

(10) पानी से फैलने वाले रोगों के प्रति जागरुक करना तथा साफ पानी की व्यवस्था करना।

(11) पानी के सही भण्डारण के तरीकों के बारे में अवगत कराना।

(12) पानी को जीवाणु रहित बनाने के बारे में सलाह देना।

(13) गन्दे पानी, कूड़े कचरे के सही निस्तारण की व्यवस्था करना तथा लोगों को इनसे होने वाली बीमारियों के प्रति जागरुक करने हेतु प्रचार-प्रसार।

(d) जिला पंचायत द्वारा संचालित परिवार कल्याण कार्यक्रम

जिला पंचायत फतेहपुर द्वारा परिवार कल्याण कार्यक्रम चलाये जाने का प्रमुख उद्देश्य जनसंख्या वृद्धि में नियंत्रण है। "इसके प्रमुख साधन परिवार परिसीमन की विधियों तथा नसबन्दी के द्वारा जन्म दर में कमी लाने के साथ-साथ माताओं, बच्चों के स्वास्थ्य संरक्षण सम्बन्धी सेवायें जैसे- गर्भावस्था में समुचित देखभाल, गर्भवती माताओं की टिटनेस के दो टीके, सुरक्षित प्रसव की व्यवस्था तथा प्रसवोत्तर उपचार प्रदान करना है।"[1] जिससे जन सामान्य सुरक्षित प्रसव एवं स्वस्थ माता-पुत्र के प्रति सजग होकर छोटे परिवार-सुखी परिवार की विचारधारा को स्वतः स्वीकार कर सके। इसके लिए जिला पंचायत के निम्नलिखित उत्तरदायित्व होते हैं-

(1) छोटे परिवार की अवधारणा के प्रति लोगों को सचेत करना तथा छोटे परिवार की अवधारणा को स्वीकार करने के साधनों को उपलब्ध कराना।

(2) दो बच्चों के जन्म के बीच अन्तर रखने और परिवार के आकार को सीमित रखने के विषय में उपयुक्त गर्भ निरोधक अपनाने की जानकारी हेतु साधनों का प्रचार-प्रसार।

(3) गर्भ निरोधन की विभिन्न विधियों के विषय में फैली भ्रान्तियों को दूर करने हेतु विकास खण्ड स्तर पर/ग्राम पंचायत स्तर पर कार्यशालाओं का आयोजन करना।

(4) नसबन्दी हेतु इच्छुक व्यक्तियों को प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों में अथवा अन्य सेवा केन्द्रों को उपर्युक्त व्यवस्था के अनुसार संचालित करना।

(5) गर्भ निरोधक विधियों को अपनाने वाले दम्पतियों के लिए महिला स्वास्थ्य कार्यकर्ता के द्वारा फालोअप सेवायें प्रदान करवाना।

(6) परिवार कल्याण कार्यक्रम में रुचि रखने वाले सामुदायिक/सामाजिक कार्यकर्ताओं की सहभागिता को सुनिश्चित करना।

---

1. विकेन्द्रीकरण के अन्तर्गत पंचायतों को सौपी गयी योजनायें (पंचायती राज विभाग उत्तर प्रदेश), पृष्ठ 59

(7) परिवार नियोजन से सन्तुष्ट लाभार्थियों को उत्प्रेरक के रूप में प्रयोग करने हेतु सन्दर्भित करना।

(8) आवश्यक रिकार्ड रखना तथा अपेक्षित रिपोर्ट शासन को भेजना।

(e) पंचायत समितियों तथा ग्राम पंचायतों की सहायता से कार्य शिविरों का आयोजन

चिकित्सा एवं स्वास्थ्य विभाग के कार्यों के अन्तर्गत जिला पंचायत का यह कर्तव्य है कि वह स्वास्थ्य एवं चिकित्सा से सम्बन्धित कार्यों के कुशल संचालन एवं जनता को जागरुक करने के उद्देश्य से विभिन्न प्रकार के कार्य शिविरों का आयोजन करें तथा जो विकास खण्ड स्तर पर ग्राम पंचायत स्तर पर आयोजित की जाय व जनता की सहभागिता को सुनिश्चित करने हेतु अपने अधीन अधिकारियों एवं कर्मचारियों का प्रयोग कर सकती है। कार्य शिविर विभिन्न उद्देश्यों के अलग-अलग स्थान पर आयोजित किये जा सकते हैं-

(1) सामुदायिक/प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों में पुरुष/महिला नसबन्दी हेतु कार्य शिविरों का आयोजन।

(2) टीकाकरण कार्यक्रम के प्रचार-प्रसार हेतु कार्य शिविरों का आयोजन।

(3) गर्भ निरोधक साधनों के प्रचार-प्रसार हेतु कार्य शिविरों का आयोजन।

(4) कूड़े-कचरे एवं गन्दे पानी से होने वाली बीमारियों से रक्षा हेतु आवश्यक जानकारी प्रदान करने हेतु कार्य शिविरों का आयोजन।

(5) संचारी रोगों तथा उनसे बचाव आदि के सन्दर्भ में कार्य शिविरों का आयोजन।

(6) एड्स जैसे लाईलाज तथा बचाव के साधनों की उचित जानकारी प्रदान करने हेतु कार्य शिविरों का आयोजन।

(7) सुरक्षित प्रसव, स्वस्थ माता एवं पुत्र के स्वास्थ्य के प्रति लोगों में जागरुकता लाने हेतु कार्य शिविरों का आयोजन।

(8) अन्य चिकित्सकीय कार्य शिविरों का आयोजन।

(f) पर्यावरण प्रदूषण के विरुद्ध उपाय

शुद्ध पर्यावरण जीवन का अनिवार्य अंग है। इसलिए यह प्रत्येक व्यक्ति को उपलब्ध

कराना जिला पंचायत की नैतिक जिम्मेदारी होती है क्योंकि पर्यावरण प्रदूषण का अर्थ है 'मानवीय कारणों द्वारा स्थानीय स्तर पर पर्यावरण की गुणवत्ता में ह्रास/चूक विभिन्न समुदाय वर्ग के लोग प्रदूषण को विभिन्न दृष्टिकोणों से देखते हैं। यथा- भूगोलवेत्ता मुख्य रूप से पर्यावरणीय समस्या के रूप में, समाज विज्ञानी सामाजिक समस्या के रूप में, अर्थशास्त्री आर्थिक समस्या के रूप में पारिस्थितिकविद पारिस्थितिकीय समस्या के रूप में आदि। अतः पर्यावरण प्रदूषण विभिन्न रूपों में परिभाषित किया जाता है।'[1] इस पर्यावरण प्रदूषण विशिष्ट प्रदूषक तथ कई प्रदूषकों द्वारा प्रदूषित क्षेत्रों के आधार पर वर्गीकरण किया जाता है- (1) जल प्रदूषण, (2) वायु प्रदूषण, (3) स्थलीय प्रदूषण।

इस प्रकार उत्पन्न पर्यावरणीय प्रदूषण को क्रियान्वित करने हेतु जिला पंचायत द्वारा निम्नलिखित उपाय किये जाते हैं -

(1) समाज के प्रत्येक वर्ग के लोगों, सरकारी संस्थानों, सरकारी कर्मचारियों, अधिकारियों, राजनीतिज्ञों, उद्योगपतियों आदि को इन सभी प्रकार के प्रदूषणों से होने वाले घातक परिणामों के प्रति जागरुक करना।

(2) वर्तमान परिदृश्य में बढ़ रहे पर्यावरण प्रदूषण के स्तरों की जाँच के लिए व्यापक सर्वेक्षण तथा अध्ययन हेतु उपाय व प्रदूषण की नियमित मानीटरिंग की जाती है। इस तरह से प्राप्त सूचनाओं के आधार पर प्रदूषण भावी स्तर तथा उसे होने वाले सूचनाओं के आधार पर प्रदूषण भावी स्तर तथा उससे होने वाले कुप्रभावों की समय से पूर्व सुधार सम्भव हो जाता है तथा प्रदूषण से होने वाले भयावह खतरे से जनता को आगाह किया जा सकता है।

(3) पर्यावरण प्रदूषण के प्रति जागरुकता तथा होने वाले घातक प्रभावों से जन सामान्य को जागरुक करने हेतु पर्यावरणीय कार्य शिविरों का आयोजन किया जाता है।

(4) जिला पंचायत फतेहपुर पर्यावरण को प्रदूषण मुक्त बनाये रखने हेतु वाहनों के साथ पर्यावरण से सम्बन्धित कागजात निर्माण करवाता है।

(5) वायु मण्डल में सकल प्रदूषण भार को घटाने के लिए सक्रिय प्रयास किया जाता है।

---

1. पर्यावरण भूगोल - सविन्द्र सिंह, पृष्ठ 418

(6) पर्यावरण को प्रदूषण मुक्त बनाने के लिए सड़कों, तालाबों, नहरों या अन्य सार्वजनिक स्थानों में जिला पंचायत फतेहपुर द्वारा पेड़ लगवाये जा रहे हैं।

(7) जिला पंचायत अपने क्षेत्रान्तर्गत कूड़े-कचरे से जैविकर खाद का निर्माण करवाती है जिसे होने वाली पर्यावरणीय क्षति नहीं हो पाती है।

(8) जल निकासी की उचित व्यवस्था हेतु नालों का निर्माण करवाती है तथा गांवों के जल के निकास को तालाबों में डालने का प्रयास करती है।

(9) जिला पंचायत फतेहपुर तालाबों का निर्माण कार्य करती है जिससे जलका उचित निकास सम्भव है।

जिला पंचायत की उपविधियाँ बनाने का अधिकार तथा नियंत्रण

जिला पंचायत किसी भी पंचायत या स्वयं अपने लिये इस अधिनियम और इसके अधीन बनाये गये नियमों के सुसंगत उपविधियाँ बनाने के लिए प्राधिकृत की गयी हैं।"[1] तथा जिले के स्वास्थ्य सुरक्षा और सुविधा की समुन्नति या अनुरक्षण के प्रयोग से और खण्ड तथा जिले में इस अधिनियम के प्रशासन को आगे बढ़ाने के निमित्त इस अधिनियम और किसी नियम के सुसंगत उपविधियाँ बना सकती है। "जिला परिषद द्वारा बनायी गयी कोई उपविधि तब तक प्रभावी नहीं होगी जब तक कि वे राज्य सरकार द्वारा मंजूर न कर ली जाय और राज्य सरकार द्वारा मंजूर की गयी ये उपविधियाँ उनके राजपत्र में प्रकाशन होने पर प्रवर्तन होगी।"[2]

"जिला पंचायतें उपविधि बनाने के अधिकार की व्यापकता पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना अपने उक्त अधिकार का प्रयोग निम्नांकित सूची में वर्णित कोई उपविधि बना सकती है।"[3]

क - निर्माण

(क) धारा 164 की उपधारा (2) के खण्ड (घ) के सन्दर्भ में किसी विशिष्ट प्रकार के परिवर्तन हो महत्वपूर्ण परिवर्तन 'घोषित करना।

---

1. उत्तर प्रदेश पंचायती राज अधिनियम, 1994, पृष्ठ 108
2. पूर्ववत्, पृष्ठ 108
3. उत्तर प्रदेश पंचायतीराज अधिनियम, 1994, पृष्ठ 108

(ख) यह नियत करना कि तदर्थ निर्दिष्ट की गयी दर से शुल्क देने पर नक्शे तथा निर्दिष्तया प्राप्त की जा सकती है।

(ग) धारा 166 के सन्दर्भ में यह अवधि निश्चित करना चाहिए जिसमें स्वीकृति मान्य रहेगी।

(घ) नियंत्रित ग्राम्य क्षेत्र के भीतर किसी नियत क्षेत्र में उन इमारतों के, जो बनायी या न बनायी जा सकती हो, प्रकार और विवरण तथा वे प्रयोजन, जिनके लिए कोई ईमारत बनायी या न बनायी जा सके, नियत करना।

(ङ) वे परिस्थितियाँ नियत करना जिनमें नियंत्रित ग्राम्य क्षेत्र में कोई मन्दिर, मस्जिद, गिरजाघर या अन्य पवित्र ईमारत निर्मित, पुर्ननिर्मित या परिवर्तित की जा सके या न की जा सके।

(च) इमारतों के या उनके किसी वर्ग के निर्माण, पुर्ननिर्माण या परिवर्तन के सम्बन्ध में निम्नांकित विषयों में सब या कोई नियत करना-

(i) 'बाहरी अथवा विभाजक दीवारों, छतों तथा फर्श के निर्माण एवं अग्नि स्थानों, चिमनियों, नालियों, शौचालयों, संडासों, मूत्रालयों तथा नलकूपों की स्थिति तथा उनके निर्माण में प्रयुक्त सामान और इनके निर्माण की रीति नियत करना।''[1]

(ii) 'ऐसी सबसे ऊपरी मंजिल की, जो मनुष्यों के रहने या भोजन पकाने के कामों के लिए अभिप्रेत हो उसे छत की ऊंचाई तथा ढाल नियत करने के सम्बन्ध में।'[2]

(iii) नींव की सतह तथा चौड़ाई, सबसे निचली मंजिल की सतह और निर्माण का स्थायित्व, ईमारत में बनायी जाने वाली मंजिलों की संख्या तथा ऊंचाई नियत करने के सन्दर्भ में।'[3]

(iv) कोई ऐसा अन्य विषय जिसका ईमारत के संवातंन या स्वच्छता पर प्रभाव डाले तथा कुछ आवश्यक साधनों के परिवर्तन के परिप्रेक्ष्य में नियत करना।'[4]

(6) नियंत्रित क्षेत्र के भीतर किसी भूमि पर किसी घेरे, दीवार, मेड़, तम्बू, तिरपाल या

---

1. पूर्ववत्, पृष्ठ 108
2. पूर्ववत्, पृष्ठ 108
3. पूर्ववत्, पृष्ठ 108
4. पूर्ववत्, पृष्ठ 108

अन्य संरचना का चाहे वह किसी भी प्रकार की हो निर्माण किसी ऐसी नीति से विनियमित करना जिसका इस अधिनियम में विशेष रूप से व्यवस्था नहीं की गयी है।

(ख) नालियाँ, सण्डास, नलकूप आदि के सन्दर्भ में विधि नियत करना

किसी ऐसी रीति जिसकी इस अधिनियम में विशेष रूप से व्यवस्था नहीं की गयी है। नालियों, संवातन की नालिकाओं तथा पाइपों, सण्डासों, जल प्रक्षालित तथा अन्य शौचालयों, मूत्रालयों, नलकूपों तथा अन्य जल उत्सारण केन्द्रों के निर्माण, परिवर्तन, अनुरक्षण, परिरक्षण, सफाई तथा मरम्मत आदि के लिए उपविधि का निर्माण करने का अधिकार पंचायतों को प्राप्त है तथा इनके निषेध के सम्बन्ध में भी विधि नियत की जा सकती है।

(ग) सड़कें - वे शर्तें विनियमित करना जिन पर धारा 181 के अधीन जिला पंचायत द्वारा अस्थायी रूप से सड़कों के अध्यासन के सम्बन्ध में विधि नियत करने का अधिकार तथा धारा 176 के अधीन दी जाने वाली सूचनाओं,, नक्शों का निर्धारण।

(घ) बाजार, वधशालाओं, भोजन विक्रय आदि के सम्बन्ध में

पंचायतों द्वारा स्वीकृत लाइसेंस के बिना या स्वीकृत लाइसेंस की शर्तों की अमान्यता के अनुसरण से अथवा किसी स्थान की पशुओं के वधशाला के रूप में अथवा मानव भोजन के प्रयोग में लाये जाने वाले मांस, मछली के विक्रय के लिए बाजार या दुकान के रूप में प्रयोग करने पर जिला पंचायत उपविधि बनायी जाती है के सम्बन्ध में स्वीकृति, अस्वीकृति, निलम्बन आदि का निर्णय भी नियत किया जा चुका है।

बाजारों, बधशालाओं, अश्वशालाओं, शिविर भूमियों, सरायों, आटा चक्कियों, नानबाई की दुकानों, निर्दिष्ट खाद्य या पेय पदार्थों की तैयारी या विक्रय के लिए स्थानों अथवा विक्रय या किराये के लिए पशुओं का अथवा ऐसे पशुओं का जिनसे प्राप्त पदार्थ बेचे जाते हों।' रखने या प्रयुक्त करने के लिए चयनित स्थानों तथा सार्वजनिक समागम के स्थानों की स्थापना के लिए और उसके विनियमन तथा नियंत्रण के लिए तथा उसमें समुचित रूप से स्वच्छता से व्यापार के संचालन हेतु विधि नियत करने का अधिकार है।

'शर्तें जिनके अधीन तथा परिस्थितियाँ जिनमें और क्षेत्र तथा स्थान जिनके सम्बन्ध में उपशीर्षक के प्रयोजनों के लिए लाइसेन्स स्वीकृत, अस्वीकृत, निलम्बित किये जा सके, वापस किये जा सके, उपविधि तय करना तथा ऐसे लाइसेंसों के लिए देय राशि निश्चित करना जिला पंचायत द्वारा स्वीकृत लाइसेन्स के बिना या इस प्रकार स्वीकृत लाइसेंस की शर्तों की

अनुसरण से अन्यथा व्यापार के उल्लिखित साधनों पर निषेध लगाने हेतु उपविधि का निर्माण।'[1]

(ङ) क्षोभ कर व्यवसाय - जब कोई शर्त पेट्रोलियम एक्ट 1934 तथा उसके अधीन बनाये गये नियमों की किसी बात से असंगत मालूम हो तो जिला पंचायतें द्वारा स्वीकृत लाइसेंस के बिना या इस प्रकार स्वीकृत लाइसेन्स की शर्तों के अनुसरण में या किसी स्थान विशेष के व्यवसाय विशेष हेतु निषेध करना जो कार्य निम्नलिखित हो सकते हैं-

(1) चमड़ा या चमड़े की वस्तुओं के (व्यवसाय) निर्माण पर निषेध हेतु उपविधि का निर्माण करना।

(2) चरबी या गन्धक पिघलाने हेतु निषेध करना।

(3) साबुन बनाने, तेल उबालने, ईट, खपरैल या चौके मिट्टी के बर्तन या चूना जलाना या पकाने हेतु निषेध करना।

(4) सूखी घास, भूसा, पुआल, लकड़ी, कोयला या भयानक रूप से ज्वलनशील वस्तुओं के संग्रह पर रोक।

(5) पेट्रोलियम या किसी अन्य प्रकार के ज्वलनशील पदार्थ या स्प्रिट के संग्रह पर रोक।

(6) रुई या रुई के क्षेप के संग्रह पर रोक।

(7) मांसोच्छिद, स्क्रू, हड्डियाँ, अंतड़ियों या चिथड़ों को उबालने या उनके संग्रह पर रोक हेतु विधि का निर्माण जिला पंचायत द्वारा किया जा सकता है।"[2]

(च) सार्वजनिक सुरक्षा और सुविधा हेतु

जिले की ग्राम्य क्षेत्र की सीमाओं के अन्तर्गत 'भाड़े पर उठाये' जाने के लिए अथवा 'भाड़े पर चलने वाले वाहनों, नावों या पशुओं के मालिकों या चालकों पर अथवा बोझा ले जाने वाले व्यक्तियों पर लाइसेंस लेने का आधार प्रतिरोपित करने के लिए तथा ऐसे लाइसेंसों के लिए शुल्क निर्धारित करने के लिए अथवा वापस लिये जाने के लिए तथा सड़कों पर किसी प्रकार के यातायात को निषेध करने के लिए"[3] अगर आवश्यक हो तो उपविधि का

---

1. पूर्ववत्,
2. पूर्ववत्, पृष्ठ 110
3. पूर्ववत् , पृ 110-111

निर्माण जिला पंचायत द्वारा किया जा सकता है।

सार्वजनिक सुरक्षा और सुविधा की दृष्टि से किसी ऐसे कार्य का निषेध, परिवर्तन जिससे लोक संकट पैदा हो सकता हो या पैदा होने की सम्भावना हो इसके लिए उपविधि का निर्माण किया जा सकता है एवं पेयजल की व्यवस्था एवं विनियमन हेतु विधि बनायी जा सकती है।

(छ) रोग की रोकथाम या स्वच्छता

स्वच्छता तथा स्वच्छता संरक्षण शीर्षक के अन्तर्गत अगर किसी उपविधि व निर्माण न किया गया हो तो ऐसी स्थिति में वासग्रहों की रजिस्ट्री तथा उनके निरीक्षण तथा अति भीड़ होने की रोकथाम करने हेतु तथा उसमें किसी संक्रामित रोग के फैलने की दशा में दिये जाने वाले नोटिस नियत करना सामान्यतः वासग्रहों के समुचित विनियमन की व्यवस्था करना, रोगों की रोकथाम तथा स्वच्छंता के उद्देश्य से ऐसे कार्य का निषेध करना जिससे लोक कण्टक पैदा होने की सम्भावना हो, के शीर्षक के अन्तर्गत जिला पंचायत उपविधि का निर्माण कर सकती है।

(ज) प्रकीर्ण

प्रकीर्ण के अन्तर्गत कोई जिला पंचायत निम्नलिखित विषयों पर उपविधियों का निर्माण कर सकती है -

(1) पंचायत क्षेत्र के अन्तर्गत जन्म, मरण, विवाहों की रजिस्ट्री, जनगणना करने और जो इनको प्रभावी बनाने हेतु आवश्यक हो अनिवार्यतः दिये जाने की व्यवस्था करना।

(2) ग्राम्य क्षेत्र के भीतर किसी भी वस्तु को चाहे वह सरकारी हो या पंचायतों की हो उनकी क्षति को रोकने के लिए उपविधि का निर्माण करना।

(3) किसी ऐसे कार्य के प्रति सजग रहना जिससे लोक कण्टक पैदा होने का डर रहता तो उसके निषेध या विनियमन हेतु उपविधि किन्तु ऐसा पहले ही किसी अन्य अधिनियम के अन्तर्गत न किया गया हो।

(4) पंचायत क्षेत्र के अन्तर्गत हाट, बाजार, मेलों, प्रदर्शिनी की व्यवस्था करना तथा उनसे उदग्रहीत किये जाने वाले शुल्क तय करना।

(5) औषधीय भेषजों के विक्रय तथा औषध योजन के लिए लाईसेन्स देने की व्यवस्था करना।

(6) सार्वजनिक रूप से अपना व्यवसाय करने वाली दाइयों की रजिस्ट्री और नियंत्रण के उपाय करना।

(7) प्रसूति केन्द्रों, शिशु कल्याण केन्द्रों की स्थापना और उनके अनुरक्षण के लिए व्यवस्था करना।

(8) निर्धन, गृह, अनाथालय, पुस्तकालय, शरणालय, पशु चिकित्सालय, बाजार, निरीक्षण गृह, सार्वजनिक पार्क या उद्यान तथा अन्य सार्वजनिक संस्थायें विनियमित करना।

नियमों तथा उपविधियों के उललंघन पर दण्ड की व्यवस्था

नियम बनाने के परिप्रेक्ष्य में राज्य सरकार तथा उपविधि हेतु जिला पंचायत नीति प्राधिकारी की स्वीकृति से यह आदेश जारी कर सकती है कि इनका उल्लंघन कर्ता अर्थ दण्ड से दण्डनीय होगा तथा यह दण्ड एक हजार रुपये तक हो सकता है। तथा यह ज्ञात होने पर कि वह लगातार उल्लंघन करता जा रहा है तो यह अर्थदण्ड दोष सिद्धि के बाद 50 रुपये प्रतिदिन के हिसाब से हो सकता है या तीन माह की कारावास की सजा हो सकती है।"[1]

जिला पंचायत द्वारा बनाये गये उपविधियों की पुष्टि आदि

जिला पंचायत द्वारा निर्मित उपविधियाँ तब तक प्रभावी न हो सकेंगे जब तक कि राज्य सरकार ऐसे विनियमनों की पुष्टि नहीं कर देती है। जिला पंचायत का उपविधि बनाने का अधिकार इन नियमों के अधीन है कि 'उपविधि तब तक मान्य न होगी जब तक कि नियत प्राधिकारी उसकी पुष्टि न कर दे और वे गजट में प्रकाशित न हो जाय। उपविधि की पुष्टि में नियत प्राधिकारी तथा विनियमन की पुष्टि में स्वयं राज्य सरकार उसके स्वरूप में परिवर्तन कर सकती है।"[2]

फतेहपुर जिला पंचायत की उपविधियों का विवरण

फतेहपुर जिला पंचायत ने अपने क्षेत्र के अन्तर्गत स्थानीय आवश्यकता एवं कार्य आवश्यकता को देखते हुए अपने उपविधि बनाने के अधिकार का प्रयोग किया है। जिसका विवरण निम्नलिखित है-[3]

---

1. पूर्ववत्, पृष्ठ 111
2. पूर्ववत्, पृष्ठ 113
3. त्रैमासिक प्रतिवेदन बर्ष 2007, जिला पंचायत फतेहपुर उत्तर प्रदेश, पृष्ठ 9

क्रम सं.	वर्तमान में लागू उपविधियों की संख्या	उन उपविधियों की संख्या जो पांच वर्ष से अधिक पुरानी हैं	वो उपविधियां जिनक 5 वर्ष के अन्दर संशोधन हुआ है	उपविधियाँ जो संसाधन की प्रक्रिया में हैं	अभियुक्ति
1	2	3	4	5	6
2	8	4	4	0	-
योग	10	7	8	5	6

(d) विद्युत वितरण एवं चोरी पर नियंत्रण

जिला पंचायत फतेहपुर ग्रामीणं विद्युतीकरण हेतु शासन की मंशा के अनुरूप उत्तर प्रदेश क्षेत्र पंचायत, जिला पंचायत अधिनियम 1994 के द्वारा प्राप्त अधिकार के अन्तरगत ग्रामीण विद्युतीकरण कार्यक्रम का संचालन कर रही है।" ग्रामीण क्षेत्र में अधिक से अधिक ग्रामों के विद्युतीकरण एवं प्रगति का मूल्यांकन करती है।"[1] एवं ग्रामों के निवासियों की श्रेणी के अनुसार उन्हें विद्युत कनेक्शन दिलवाना जैसे- गरीबी रेखा से नीचे का जीवन यापन करने वाले लोगों के लिए 'कुटीर ज्योति योजना के अन्तर्गत निःशुल्क कनेक्शन तथा बिल में कमी इत्यादि।"[2] इसी प्रकार अन्य निवासियों तथा व्यापारिक लोगों को उनके अनुसार कनेक्शन दिलवाने का कार्य इत्यादि है। विद्युत चोरी को रोकने हेतु जिला पंचायत द्वारा अपने अधीन कर्मचारियों के माध्यम से पर्यवेक्षण कार्य कराया जाता है तथा दोषियों को दण्ड हेतु न्यायोचित प्रक्रिया से गुजरना पड़ता है। यह दण्ड 1 लाख रुपये तक आर्थिक तथा तीन वर्ष का सश्रम कारावास भी हो सकता है।

(e) पंचायती राज व्यवस्था से सम्बन्धित विभागों, कर्मचारियों एवं अधिकारियों के कार्यों पर नियंत्रण

भारत में सभी राज्यों के द्वारा पंचायती राज व्यवस्था को अपनाया गया है। प्रायः अधिनियम यह प्रावधान करते हैं कि पंचायती राज व्यवस्था के अन्तर्गत जिले के लगभग सभी प्रमुख विभागों के अधिकारी व कर्मचारियों के हन्तारण (जिला पंचायत), पंचायती राज प्रणाली को कर दिया गया है। अतः जिला पंचायत संविधान की अनुसूची 11 के अधीन उल्लखित विभागों के कागज-पत्रों, अभिलेख एवं सम्पत्तियों पर स्वयं या अपने अधीन नियत

---

1. भारत में स्थानीय प्रशासन - अशोक शर्मा, पृष्ठ 170
2. पूर्ववत्,

प्राधिकारियों द्वारा अवलोकन कर सकती है तथा आवश्यकता पड़ने पर अभिलेख अपने कार्यालय में मंगा सकते हैं। "राज्य सरकार के पंचायती राज विभाग को यह अधिकार होता है कि पंचायती राज की विभिन्न संस्थाओं के कुशल कार्यकरण को सुनिश्चित करने की दृष्टि से उन संस्थाओं के कामकाज को निर्देशित कर सकते हैं। आवश्यकता पड़ने पर उसी प्रकार का निर्णय लेने अथवा न लेने का निर्देश दे सकते हैं। अथवा किसी भी प्रकार की पत्रावली को अपने यहां मंगवा सकते हैं।"[1]

तथा जिला पंचायत के प्राधिकारी इन विभागों के कार्यालयों का एवं उनके कार्यों का नियमित पर्यवेक्षण एवं निरीक्षण कर सकते हैं। राज्य सरकार ने इस हेतु कुछ प्रपत्र जारी किये हैं जिनमें विभिन्न सूचनाओं की पूर्ति करते हुए ऐसा निरीक्षण प्रतिवेदन प्राधिकृत अधिकारियों द्वारा राज्य सरकार को भेजा जाता है। जिला पंचायत के अधीन वे विभाग जो ग्रामीण विकास से सम्बन्धित कार्य करते हैं तथा वे विभाग जो कुछ परियोजनायें कार्यान्वियन हेतु इन संस्थाओं को देते हैं। पंचायती राज संस्थाओं से किसी भी प्रकार की सूचनाएं मांग सकते हैं। अतः जिला पंचायत विभागों से यह सूचनायें एकत्रित करके अपने पास सुरक्षित कर लेती है।

जिला पंचायत से पंचायती राज और ग्रामीण विकास एवं पंचायत निदेशालय के द्वारा जो भी सूचनायें मंगायी जाती हैं उनमें सामान्यतः ऐसा देखने में आया है कि एक विभाग वही सूचनायें या आंकड़े मंगाता है जो पहले एक विभाग द्वारा मांगी जा चुकी है। अतः कहा जा सकता है कि "राज्य सरकार स्तर पर भी ऐसा कोई प्रयास नहीं किया गया है कि पंचायती राज संस्थाओं के कामकाज को विनियमित करने की दृष्टि से जो संस्थागत नियंत्रण किया जाता है उसमें एक रूपता, तारतम्य और समन्वय बना रहे। वैसे भी विभिन्न विभागों के बारे में प्राधिकारी, पंचायत समिति या जिला पंचायतों में प्रतिनियुक्ति पर आते हैं जिससे इन संस्थाओं में उनके निष्ठापूर्ण कार्य करने में अवरोध पैदा होते रहते हैं।"[2] पंचायती राज संस्थाओं द्वारा जो संस्थागत नियंत्रण किया जाता है उसमें इस नियंत्रण की प्रकृति विकासकाय न होकर नियामकीय होती है।

जिला पंचायत द्वारा सम्बन्धित विभागों के कार्मिकों पर नियंत्रण में प्रायः उत्तर प्रदेश जिला पंचायत एवं क्षेत्र पंचायत अधिनियम में प्रावधान परिलक्षित किये जाते हैं। इन

---

1. पूर्ववत्, पृष्ठ 318
2. पूर्ववत्, पृष्ठ 318

प्रावधानों के माध्यम से विभागों में इन कर्मचारियों एवं अधिकारियों की संख्या, स्तर और सेवा शर्तों का निर्धारण किया जाता है जो अधिकारी एवं कर्मचारी इस संख्या में प्रतिनियुक्ति पर लिये जाते हैं। उनकी प्रति नियुक्ति की शर्तें भी इन संस्थाओं से बिना विचार-विमर्श किये राज्य सरकारों द्वारा नहीं निर्धारित की जाती है। पंचायती राज संस्थाओं द्वारा अपने प्रशासकीय नियंत्रण में "नीति और प्रशासन"[1] दोनों पर नियंत्रण सम्मिलित है। इस प्रकार के नीतिगत एवं प्रशासन से सम्बन्धित नियंत्रण का उद्देश्य इन विभागों के उस ढांचे में कार्यशील रखना होता है जिन उद्देश्यों हेतु इन विभागों की स्थापना की गयी होती है। इन नियंत्रण का उद्देश्य यह होता है कि इन संस्थाओं के जो नियुक्त पदाधिकारी हैं उनकी शक्तियों पर जिला पंचायत द्वारा लोकतांत्रिक मर्यादा रखी जा सके। पंचायती राज संस्थाओं द्वारा अधीन विभागों पर निम्न उपागमों, विधियों के माध्यम से प्रशासकीय, वित्तीय एवं कार्मिक प्रशासन पर नियंत्रण रखती है।

1. निरीक्षण एवं जांच - प्रायः सभी विभागों के कामकाज पर नियंत्रण रखने के लिए जिला पंचायत उनका सामान्य या आकस्मिक निरीक्षण करते हुए जांच कर सकती है। यह एक ऐसा तरीका है जिनके माध्यम से इन विभागों पर संस्थागत प्रशासनिक, तकनीकी एवं वित्तीय सभी प्रकार का नियंत्रण सम्भव हो जाता है। यह सर्वविदित है कि प्रत्येक अधीनस्थ विभाग पर जिला पंचायत के प्रशासनिक अधिकारियों के द्वारा निरीक्षण एवं जांच के माध्यम से नियंत्रण रखा जा सकता है। इस प्रकार निरीक्षण करने वाले ये प्रशासनिक अधिकारी सभी दृष्टियों से यह जांच करते हैं कि अधीनस्थ विभाग अपने गणित उद्देश्यों को प्राप्त करने के दिशा में निरन्तर कार्य कर रही है या नहीं है जिनको प्राप्त करने की अपेक्षा उनसे की जाती है। वे अपने निरीक्षण के दौरान यह बात ध्यान में रखते हैं कि उनके गठन के लिए पारित अधिनियमों या उपबन्धों में दिये गये उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए ये विभाग कार्य संचालित कर पा रहे है या नहीं? तथा निरीक्षण के दौरान यह भी ध्यान दिया जाता है कि अधीनस्थ विभाग के अधिकारियों एवं कर्मचारियों द्वारा किये जा रहे कार्यों के विवरण उनके द्वारा किये जा रहे दौरों के प्रतिवेदन, उनके द्वारा व्यय की जा रही लागत, उनके द्वारा दिये जा रहे आदेश एवं निर्देशों तथा उनके नियंत्रण में काम कर रहे कर्मचारियों के अभाव अभियोगों आदि का निरीक्षण करती है तथा इसके सम्बन्ध में अधीनस्थ विभागों को दिया निर्देश प्रदान

---

1. इकबाल नारायण सुशील कुमार, पी. सी. माथुर एण्ड एसोसिएट्स - पंचायती राज एडमिनिस्ट्रेशन ओल्ड कन्ट्रोल्स एण्ड न्यू चैलेन्जेज - द इण्डियन इंस्टीट्यूट ऑफ पब्लिक एडमिनिस्ट्रेशन नयी दिल्ली, 1970, पृष्ठ 79

करते हैं। निरीक्षण आमतौर पर दो प्रकार के होते हैं। नियमित या आकस्मिक। नियमित निरीक्षण प्रायः अधिकृत अधिकारी द्वारा किया जाता है तथा आकस्मिक निरीक्षण सम्बन्धित अधिकारी जब भी ऐसा चाहे कर सकते हैं।

यद्यपि जिला पंचायत के निरीक्षण करने वाले पदाधिकारियों के विषय में सामान्य तौर पर यह देखा जाता है कि वे अपने लिए निर्धारित न्यूनतम निरीक्षणों को भी पूरा नहीं कर पाते हैं। प्रारम्भ में तो वह उत्साह के साथ कार्य करते हैं फिर कुछ समय पश्चात् उनके उत्साह में कमी आने लगती है और वे अपने कर्तव्य के प्रति उदासीन रहने लगते हैं। विचारकों की मान्यता है कि प्रभावी निरीक्षण विशेष तौर पर आकस्मिक निरीक्षण के माध्यम से अधीनस्थ विभागों के कार्यकुशलता में निर्णायक सुधार लाया जा सकता है।

(ii) सामान्य निर्देशों द्वारा - पंचायत राज अधिनियम जिला पंचायत को यह अधिकृत करता है कि वे अधीनस्थ विभागों के कामकाज में सुधार उनके नियम संगत संचालन को सुनिश्चित करने हेतु समय-समय पर सामान्य दिशा निर्देश जारी कर सकती है। अपने इस अधिकार का प्रयोग करते समय जिला पंचायत के वे विभाग जो किसी न किसी रूप में पंचायतों से जुड़े होते हैं, की आवश्यक आदेश, निर्देश, परिपत्रों के माध्यम से देते रहते है। "पंचायती राज संस्थाओं के विषय में विश्लेषकों का यह अनुभव रहा है कि इनके द्वारा जारी किये जाने वाले इस प्रकार के निर्देशों के निष्पादन के प्रति इन विभागों के अधिकारियों में उन्हें किसी प्रकार की चुनौती देने का रुझान व्यक्त नहीं किया है।"[1]

(iii) कर्तव्यों के निर्वाह में विफल रहने पर

पंचायती राज संस्थाओं से जिन कार्यों को पूरा करने की अपेक्षा की जाती हैं तो यदि वे अपने अधीन विभागों से यह कार्य पूरा नहीं करवा पाते हैं तो वे इसके लिए एक निश्चित अवधि निर्धारित की जा सकती है। अगर ये विभाग फिर भी कार्य को पूरा नही कर पाते तो जिला पंचायत उस कार्य को किसी दूसरे पदाधिकारी या संस्था को दे सकती है तथा व्यय राशि प्रथम विभाग या पदाधिकारी को दिये जाने वाले धनराशि से काटा जा सकता है। उत्तर प्रदेश पंचायत राज अधिनियम 1994 में भी पंचायत समिति या जिला पंचायत के इस प्रकार के व्यतिक्रम की स्थिति में कर्तव्यों की पालना कराने हेतु शक्ति जिला पंचायत में निहित भी की गयी है।"[2]

---

1. पूर्ववत्, पृष्ठ 16
2. उत्तर प्रदेश क्षेत्र पंचायत एवं जिला पंचायत अधिनियम, 1994, धारा 24

(e) जिले के घाटों, मेलों, बाजारों पर नियंत्रण - राज्य सरकार द्वारा बनाये गये नियमों के अधीन रहते हुए जिला पंचायत फतेहपुर जनपद के अन्दर आने वाले घाटों, मेलों, बाजारों पर नियमन एवं नियंत्रण रखती है। "राज्य सरकार की स्वीकृत से जिला पंचायत मेलों, बाजारों, घाटों, प्रदर्शनियों के लिए शुल्क चाहे वह प्राधिकार के अन्तर्गत की जाती हो या अन्यथा जिनमें जनसाधारण के सम्मिलित होने की अनुमति हो और जिनमें जिला पंचायत सर्वसाधारण के लिए सफाई सम्बन्धी या अन्य सुविधाओं की व्यवस्था करती हो शुल्क अधिगृहीत करेगी।"[1]

फतेहपुर जिला पंचायत के अन्तर्गत आने वाले घाटों, मेलों, बाजारों के लिए राज्य सरकार द्वारा तदर्थ बनाये गये किसी अधिनियम के अधीन रहते हुए जिला पंचायत द्वारा किसी ऐसे मेलों, बाजारों में जो उसके द्वारा स्थापित किया गया हो जिसका वह अनुरक्षण या प्रबन्ध करती हो निम्नलिखित शुल्कों, करों में से एक या अधिक आरोपित कर सकती है।

(क) ऐसे मेलों, बाजारों में अपना व्यवसाय कर रहे दलालों, आढ़तियों, तौलों या मापकों, दुकानदारों पर लाइसेन्स शुल्क लगा सकती है।

(ख) बिक्री हेतु ऐसे मेलों, बाजारों में माल लाने वाले वाहनों, लद्दू पशुओं या कुलियों पर पथ कर।

(ग) ऐसे मेलों, बाजारों में बिक्री के लिए माल प्रदर्शित करने के लिए या उसमें किसी ईमारत, संरचना का प्रयोग करने के लिए बाजार शुल्क।

(घ) ऐसे पशु बाजारों में बेचे जाने वाले पशुओं पर शुल्क"[2]

(ङ) जिले के घाटों, बालू, मौरंग, नौका, मछली घाटों का एक वर्ष हेतु संविदा के आधार पर किराये में देना।

(च) घाटों से उत्पादित माल को ले जाने वाले साधनों पर विभिन्न शुल्क अधिरोपित किये जा सकते हैं।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि जिला पंचायत के क्षेत्र के अन्तर्गत आने वाले मेलों,

---

1. पूर्ववत्, पृष्ठ 73
2. पूर्ववत्, पृष्ठ 73

बाजारों, घाटों पर उस जिला पंचायत का अधिकार होता है। वह उनके व्यवस्थित संचालन हेतु व्यवस्था करती है तथा व्यवस्था के बदले शुल्क वसूल करती है तथा उनका निरीक्षण एवं पर्यवेक्षण भी समय-समय पर कर सकती है।

निरीक्षण, प्रवेश, तलाशी आदि

निरीक्षण का अधिकार - अध्यक्ष, मुख्य अधिकारी तथा संकल्प द्वारा तदर्थ प्राधिकृत होने पर (जिला पंचायत) का कोई अन्य सदस्य अधिकारी या कर्मचारी और इसी प्रकार प्रमुख खण्ड विकास अधिकारी या खण्ड विकास अधिकारी द्वारा तदर्थ प्राधिकृत (क्षेत्र पंचायत) का कोई अन्य अधिकारी किसी इमारत या भूमि पर निरीक्षण या सर्वेक्षण करने या किसी ऐसे निर्माण कार्य को निष्पादित करने के उद्देश्य से जिसे निष्पादित करने के लिए यथास्थिति (जिला पंचायत) या (क्षेत्र पंचायत)। इस अधिनियम द्वारा या नियमों या उपविधियों द्वारा प्राधिकृत हो, अथवा जिसे निष्पादित करना (जिला पंचायत) या (क्षेत्र पंचायत) के लिए इस अधिनियम के किन्हीं उपबन्धों या नियमों या उपविधियों के प्रयोजन के लिए अथवा उनके अनुसरण में आवश्यक हो, सहायकों या अभिकों के साथ या उनके बिना प्रवेश कर सकता है। प्रतिबन्ध यह है कि -

(i) जब तक किसी इस अधिनियम में या नियमों या उपविधियों में स्पष्ट रूप से अन्यथा व्यवस्थित न हो। सूर्यास्त या सूर्योदय के बीच प्रवेश नही किया जायेगा। तथा

(ii) जब कि इस अधिनियम में या उपविधियों में स्पष्ट रूप से है। अन्यथा व्यवस्थित न हो मनुष्यों के रहने पर प्रभुत्व किसी इमारत में सिवाय उस दशा के जब अध्यासी ने सम्मति दे दी हो - अध्यासी को अपने ऐसे प्रदेश के अभिप्राय का कम से कम चार घण्टे पूर्व लिखित नोटिस दिये बिना प्रवेश नहीं किया जायेगा। तथा

(iii) प्रत्येक अवस्था में और उस दशा में भी जब किसी भू गृहादि में अन्यथा बिना नोटिस के प्रवेश किया जा सकता है। पर्याप्त नोटिस दिया जायेगा जिससे किसी ऐसे कक्ष से जो स्त्रियों के लिए ही रहने वाली स्त्रियां वहां से हटकर भू-गृहादि के किसी ऐसे दूसरे भाग में चली जायें जहां उनकी गोपनीयता में बाधा डालने की आवश्यकता न हो।

(iv) प्रवेश किये गये भू गृहादि के अध्यवासियों को सामाजिक तथा धार्मिक प्रथाओं का सदैव यथोचित ध्यान रखा जायेगा।

प्रवेश का अधिकार - धारा 222 उपबन्धों के अधीन निरीक्षण करने के या तलाशी लेने के प्रयोजन के निमित्त प्रवेश करने के लिए प्राधिकृत किसी व्यक्ति के लिए यह वैध होगा कि वह किसी दरवाजे, फाटक या अन्य अवरोध को खोले या खुलवाये-

(i) यदि वह ऐसे प्रवेश, निरीक्षण या तलाशी के प्रयोजन के लिए उनका खोलना आवश्यक समझे। तथा

(ii) यदि स्वामी या अध्यासी अनुपस्थित हो उपस्थित होने पर वह ऐसे दरवाज़े, फाटक या अवरोध को खोलने से इंकार करे।

☆☆☆

अध्याय षष्ठम

अध्याय - षष्टम्

जिला पंचायत फतेहपुर के वित्त एवं उद्योग सम्बन्धी कार्य

- (A) *जिले के आर्थिक विकास हेतु योजनायें तैयार करना।*
- (B) *योजनाओं का बजट निर्धारित करना।*
- (C) *जिला पंचायत की आय के लिए स्रोत खोजना।*
- (D) *वार्षिक प्रशासनिक रिपोर्ट पेश करना।*
- (E) *लघु उद्योगों के विकास हेतु प्रयत्न।*
- (F) *लघु उद्योगों के विकास हेतु बैंकों से ऋण प्रदान करवाना।*
- (G) *सन्* 2007-08 *जिले के बजट में किये गये प्रावधान*

☆☆☆

जिला पंचायत फतेहपुर के वित्त एवं उद्योग सम्बन्धी कार्य

सभी प्रकार के संगठनों चाहे वे राष्ट्रीय स्तर, राज्य स्तर या फिर स्थानीय स्तर के ही क्यों न हो। इन सभी को अपने कार्य एवं उद्देश्यों की पूर्ति हेतु वित्त की आवश्यकता होती है। यही कारण है कि वित्त किसी भी संस्था/ संगठन की रीढ़ माना जाता है। वित्त के अभाव में अच्छी से अच्छी प्रकार की योजनायें दम तोड़ देती हैं। वित्तीय महत्व को देखते हुए लापड़ जार्ज ने एक बार कहा था कि 'वित्त ही प्रशासन है।' महान राजनीतिज्ञ चिन्तक एवं अर्थशास्त्री चाणक्य ने यह माना था कि 'सभी उद्यम वित्त पर निर्भर हैं। अतः कोषागार के प्रबन्ध के प्रति सर्वाधिक ध्यान दिया जाना चाहिए।' शासन के किसी भी कार्य को सम्पन्न करने के लिए कुछ साधनों की आवश्यकता होती है। उनमें से सर्वाधिक महत्वपूर्ण साधन वित्त है।

लोक कल्याणकारी राज्य की अवधारणा की स्वीकारोक्ति के बाद ही लोक प्रशासन के कार्यों में भारी वृद्धि हुई है। यही कारण है कि भारत में भी स्थानीय प्रशासन के कार्यों में भारी वृद्धि हो गयी है किन्तु यह भी सत्यता ही है कि पंचायती राज संस्थायें अपने कार्यों में असफलता मिलने के बाद आलोचना की पात्र हो जाती हैं। इस स्थिति का प्रमुख कारण वित्तीय अक्षमता जिसके फलस्वरूप साधनों की कमी है। पंचायती राज संस्थाओं के क्षेत्रों के अन्तर्गत बढ़ती जनसंख्या और उनके अनुसार उभरती आवश्यकता आवश्यक निधि के अभाव में पूरी नहीं हो पाती है।

स्थानीय शासन की समस्याओं को वित्त के अभाव में समस्याओं का सामना करना पड़ता है। इसका मूल कारण स्थानीय शासन तथा उच्चतर शासन में एक तात्विक अन्तर का होता है। राष्ट्रीय सरकार को संघीय ढांचे के अन्तर्गत राज्य स्तर पर राज्य सरकार को वित्तीय संसाधनों का आवंटन संविधान ने किया है और इन दोनों शासकीय स्तरों को उनके वित्तीय प्रबन्ध, व्यय के स्रोत और करारोपण के स्पष्ट अधिकार प्रदान किये गये हैं किन्तु स्थानीय स्तर पर गठित व्यवस्था को 73वें संविधान संशोधन के बाद भी पंचायती राज्य व्यवस्था, जो संविधान का हिस्सा है किन्तु इस स्थिति के बाद भी पंचायती राज व्यवस्था के आय के कोई

पृथक् स्रोत चिन्हित नहीं किये गये हैं। अतः शासन के इस तीसरी इकाई को आय हेतु कोई प्रथक करारोपण, आय, व्यय के स्रोत और वित्तीय प्रबन्ध के कोई स्पष्ट स्रोत नहीं मिल सके हैं।' 73वें संविधान संशोधन के उपरान्त एक बात यह सकारात्मक हुई कि केन्द्र राज्य के मध्य वित्तीय संसाधनों के विनियमन के लिए जिस तरह वित्त आयोग का गठन किया जाता है, उसी तरह ग्रामीण एवं नगरीय स्थानीय शासन की संस्थाओं के मध्य वित्तीय विनिमय हेतु राज्य वित्त आयोग का गठन कर दिया गया है।"[1] अब पंचायती राज संस्थायें करारोपण आदि के सन्दर्भ में राज्य वित्त आयोग की अनुशंसा पर अनुरूप राज्य सरकार द्वारा दिये गये दिशा-निर्देशों के अनुसार काम करती है। ये संस्थायें जो भी नये कर अपने क्षेत्र में आरोपित करना चाहेगी, इसके लिए उन्हें राज्य वित्त आयोग के मार्ग दर्शकों का ध्यान रखने के अतिरिक्त राज्य सरकार की पूर्व अनुमति भी लेनी होगी।

यहाँ पर यह उल्लेखनीय है कि वित्तीय प्रबन्ध के संचालन हेतु जिला पंचायत स्तर पर पृथक् तंत्र या कार्मिक वर्ग उपलब्ध कराया गया है। जिला परिषद स्तर पर मुख्य कार्यकारी अधिकारी अपने अधीनस्थ लेखा कर्मचारियों की सहायता से वित्तीय प्रशासन का संचालन करता है। जिला पंचायत के वित्त एवं उद्योग सम्बन्धी कार्यों का अध्ययन निम्न बिन्दुओं के अन्तर्गत किया जा सकता है -

(1) जिला पंचायतों की आय के लिए स्रोत खोजना।

(2) वार्षिक प्रशासनिक रिपोर्ट पेश करना।

(3) सरकार द्वारा दिये गये वित्तीय संसाधनों को उद्ग्रहीत करना।

(4) लघु उद्योगों के विकास हेतु प्रयत्न।

(5) लघु उद्योगों के विकास एवं प्रबन्ध हेतु बैंकों से ऋण प्रदान करवाना।

(6) जिले के आर्थिक विकास हेतु योजनायें तैयार करना।

(7) योजनाओं का बजट निर्धारित करना।

(8) जिला योजना का निर्माण करना।

---

1. भारत में स्थानीय प्रशासन - अशोक शर्मा, पृष्ठ 242

(1) जिला पंचायत की आय के स्रोत खोजना

जिला पंचायत फतेहपुर का सर्वप्रमुख कार्य अपने लिए आय के स्रोत खोजना है क्योंकि इसकी वित्तीय स्थिति अधिक से अधिक केन्द्र/राज्यों द्वारा प्रदत्त अनुदानों पर निर्भर करती है। जिला पंचायत फतेहपुर के बढ़ते कार्यों की संख्या को दृष्टिगत रखने पर जो धन देयों से प्राप्त होता है वह उसके उद्देश्यों की पूर्ति हेतु अपर्याप्त होता है। भारत में स्थानीय निकायों की वित्तीय स्थिति एवं समस्याओं पर विचार करने के लिए समय-समय पर समितियों एवं आयोगों का गठन किया गया है। इनमें काले समिति मुम्बई, उत्तर प्रदेश स्थानीय सरकार अनुज्ञाय समिति, स्थानीय सरकार एवं समन्वय समिति मैसूर, कलकत्ता निगम जांच समिति, स्थानीय वित्त जांच समिति, मिनिस्टर्स कमेटी आन आंग्लमेटेंशन ऑफ फाइनेन्सेज ऑफ अरबन लोकल डीम तथा ग्रामीण नगरीय सम्बन्ध समिति के नाम विशेष तौर पर लिये जा सकते हैं। इन समितियों ने अपने-अपने प्रतिवेदन में स्थानीय संस्थाओं के वित्त के सन्दर्भ में अपनी सिफारिशें प्रस्तुत की हैं।

स्थानीय शासन की संस्थाओं को वित्त कर, अनुदान तथा ऋणों से प्राप्त होता है। ऐतिहासिक पुर्नविलोकन करने पर ज्ञात होता है कि भारत वर्ष में सर्वप्रथम भारत शासन अधिनियम, 1919 के अन्तर्गत जो 1921 में लागू किया गया था। निम्नलिखित स्थानीय कर सम्मिलित किये गये थे -

"(1) पथ कर

(2) भूमि कर

(3) भवन कर

(4) वाहन एवं नौका पर कर

(5) पशु कर

(6) चुंगी वसूली

(7) सीमान्त कर

(8) घरेलू नौकरों पर कर

(9) व्यापार, व्यवसाय, आजीविका पर कर

(10) निजी हाटों पर कर

(11) जल कर, विद्युत कर, रोशनी कर, सफाई कर आदि अन्य कर।"[1]

श्रेष्ठ कार्यों के निष्पादन हेतु जिला पंचायतों को उनकी कार्य कुशलता में वृद्धि हेतु प्रोत्साहन अनुदान की अनुशंसा भी प्रथम राज्य वित्त आयोग 1995 में की थी। इस कार्य हेतु राज्य सरकार राज्य स्तर पर एक समिति गठित करती है। जिसकी संस्तुति के आधार पर अपने कार्यकरण में श्रेष्ठ प्रथम, द्वितीय व तृतीय जिला पंचायतों को 8, 5 व 2 लाख रुपया पुरस्कार स्वरूप प्रोत्साहन राशि वितरित की जाती है।

इन अनुशंसाओं के पूर्व जिला पंचायतों को कोई अनुदान प्राप्त नहीं होता था अपितु उन्हें अपने कार्यों के संचालन के लिए अधीनस्थ पंचायत समितियों के अंशदान पर निर्भर रहना पड़ता था। यहाँ यह भी उल्लेखनीय है कि जिलों में स्थापित जिला ग्रामीण विकास अभिकरणों को केन्द्र सरकार द्वारा कतिपय कार्यक्रम, उनके लिए आवंटी राशि सहित, ग्रामीण क्षेत्रों में कार्यान्वयन के लिए सौंपे जाते हैं। उत्तर प्रदेश राज्य वित्त आयोग ने अपने प्रतिवेदन में यह अंकित किया है कि केन्द्र द्वारा प्रायोजित ऐसी योजनाओं में से पर्यवेक्षणीय प्रयोजनों में से कुछ राशि जिला परिषदों को भी प्राप्त होती है। आयोग के आंकड़े यह दर्शाते हैं कि इस प्रकार की राशि का सर्वाधिक हिस्सा पंचायत समितियों और उससे कम ग्राम पंचायतों को तथा सबसे कम जिला परिषदों (पंचायतों) को मिलता है।"[2]

(स) उधार, ऋण एवं दान से प्राप्त आय - 'अधिनियम में सामान्य प्रावधान यह किया गया है कि कोई भी पंचायती राज संस्था तत्समय प्रवृत्त किसी विधि के अधीन रहते हुए, राज्य सरकार के अनुमोदन से अपने उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए सरकार से, बैंक से या अन्य वित्तीय संस्थाओं से उधार ले सकती है।"[3]

पंचायती राज संस्थाओं के लिए वित्त निगम - पंचायती राज संस्थाओं को अपने उद्देश्य एवं विकास की पूर्ति के लिए पर्याप्त धन की आवश्यकता होती है तथा इन कार्यों के सापेक्ष आय की मात्रा कम होती है और एक राज्य के अन्तर एक से अधिक जिला पंचायतों के मध्य आय में परिमाणात्मक अन्तर पाया जाता है। जिला पंचायतों को अपने साधनों के

---

1. भारत में स्थानीय प्रशासन - अशोक शर्मा, पृष्ठ 238
2. प्रथम राज्य वित्त आयोग, 1995, पृष्ठ 146-147
3. पूर्ववत्

सटीक उपयोग के लिए तकनीकी और वित्तीय परामर्श की आवश्यकता भी होती है। इन्हीं सब स्थितियों का अनुभव करते हुए प्रथम राज्य "वित्त आयोग ने जिला पंचायत की तकनीकी और वित्तीय परामर्श को दृष्टिगत रखते हुए एक राज्य वित्त निगम स्थापित करने का सुझाव दिया।"[1] आयोग ने यह भी सुझाया कि इस तरह के वित्त निगम आन्ध्र प्रदेश, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र में निगम पूर्णतः कार्यरत है। राज्य सरकार ने इन कार्यों का अध्ययन कराकर निगम को पंचायतों को वितरित किये जाने वाले ऋण एवं सहायता के नियम निर्मित करें तथा इस निगम को राज्य सरकार द्वारा एक निश्चित धनराशि प्रत्येक वर्ष अंशदान के रूप में प्रदान करे। इसी प्रकार वित्तीय संस्थाओं के लिए सहायता राशि, उनका अंशदान तथा ऋण से भी यह संस्थान अपने संसाधन विकसित करें था पंचायतों को दिये गये ऋण से प्राप्त ब्याज भी इस संस्थान के वित्तीय आधार को मजबूत करेगा।

अशोक मेहता समिति द्वारा जिला पंचायतों की आय को बढ़ाने हेतु दिये गये सुझाव

फतेहपुर जिला पंचायत की आय के साधन (स्रोत)

फतेहपुर जिला पंचायत की आय के स्रोतों में दो तरह के स्रोत सम्मिलित हैं- (i) सम्पूर्ण उत्तर प्रदेश की जिला पंचायतों के लिए नियत आय के स्रोत। (ii) फतेहपुर जिला पंचायत के स्थानीय आय के स्रोत।

नीचे दोनों ही प्रकार के आय के स्रोत तथा उनसे होने वाली वार्षिक आय का विवरण दिया गया है-

क्रम सं.	स्रोत का नाम	आय	अनुमानित आय 2005-06 (लाख में)
1.	विभव एवं सम्पत्ति कर	-	16.00
2.	मृत पशु शव निस्तारण केन्द्र	-	8.50
3.	मत्स्य आखेट	-	2.00
4.	दुकानों एवं भवनों से प्राप्त आय	-	4.70
5.	नौका से प्राप्त आय	-	17.00
6.	लाइसेन्स द्वारा प्राप्त आय	-	35.00

1. पूर्ववत्, पृष्ठ 150

7.	मेला, प्रदर्शनियों से होने वाली आय	-	--
8.	हाट, बाजार, तहबाजारी तथा बालू घाट से होने वाली आय	-	35.00
9.	काजी हाउस, तरु पालन, कृषि से होने वाली आय	-	1.15
10.	जिला निधि से प्राप्त धनराशि	-	3.00
11.	भू राजस्व अनुदान	-	0.55
12.	दशम् वित्त आयोग से प्राप्त अनुदान	-	---
13.	ग्यारहवें वित्त आयोग से प्राप्त अनुदान	-	188.56
14.	राज्य वित्त आयोग से प्राप्त अनुदान	-	210.73
15.	D.R.D.A. से प्राप्त अनुदान	-	---
16.	सांसद/विधायक निधि से प्राप्त अनुदान	-	---
17.	आंचलिक निधि से प्राप्त अनुदान	-	---
18.	अन्य साधनों से प्राप्त होने वाली अनुदान राशि	-	9.65
19.	पड़ाव, अड्डा से प्राप्त आय	-	—
20.	G.J.R.Y. तथा रोजगार गारन्टी योजना	-	—
	योग	**-**	**205.76**

भारत सरकार द्वारा गठित अशोक मेहता समिति का सुझाव था कि पंचायती राज संस्थाओं के आय के समुचित साधन होने चाहिये। जिला पंचायतों को कर लगाने का अधिकार होना चाहिये। करारोपण सम्बधी समस्याओं के निदान हेतु राज्य सरकारों को प्रयास करना चाहिए। राज्य सरकारों द्वारा पंचायतों के वित्तीय नियम हेतु उदार रूप अपनाना चाहिये। राज्य को कार्यकारी बीमा अन्य संस्थाओं के वित्तीय एवं प्रशासनिक हस्तक्षेप को समाप्त करने का प्रयास करना चाहिये।

उत्तर प्रदेश प्रथम राज्य वित्त आयोग का गठन 1994 में किया गया तथा अपना प्रतिवेदन 1996 को सरकार को सौप दिया । सभी राज्यों में राज्य वित्त आयोग का गठन राज्यपाल द्वारा किया जाता है। वित्त आयोग का कार्यकाल पाँच वर्षो का निर्धारित किया

गया है। आयोग का मुख्य कार्य राज्य के पंचायती राज्य संस्थाओं को दी जाने वाली वित्तीय सहायता के सन्दर्भ में सुझाव प्रस्तुत करना हैं । वित्त आयोग के सदस्यों की संख्या का निर्धारण राज्यों के द्वारा स्वयं किया जाता वित्त आयोग के सदस्यों की नियुक्ति करते समय निम्न बातें ध्यान में रखना चाहिये-

(1) सार्वजनिक कार्यो का अनुभव हो।

(2) उच्च न्यायालय का न्यायाधीश बनने की योग्यता रखता हो।

(3) सरकारी वित्त एंव लेखा का ज्ञान हो।

(4) प्रशासन और वित्तीय प्रशासन की अनुभव हो।

(5) अर्थशास्त्र का विशेष ज्ञान हो।

उत्तर प्रदेश वित्त आयोग के समय-समय पर संख्या निर्धारित की गयी हो। तथा उनका कार्यकाल वित्त आयोग के कार्यकाल के समय तक रहता हो राज्य सरकार द्वारा बीच में ही उनके कार्यकाल को खत्म किया जा सकता हैं तथा 6 माह तक उनका कार्यकाल बढाया जा सकता है।

(ख) जिला पंचायत फतेहपुर का बजट प्रस्तुत करने का अधिकार -

पंचायती राज्य संस्थायें 73वें संविधान द्वारा सूचित स्वायन्तशासी संस्थाएं हैं। तथापि सभी अन्य सरकारी संस्थाओं की भांति ही इनमें बजट निर्माण लेखा संधारण तथा अंकेक्षण की व्यवस्था प्रवर्तित होती है। उत्तर प्रदेश पंचायत सन् अधिनियम की धारा 110 में जिला पंचायत के बजट के विषय में प्रावधान किए गये हैं । वार्षिक बजट किसी भी संस्था के आय व्यय का पूर्वानुमान होता है। जिसका तैयार किया जाता है। किसी भी संस्था के सुचारु रूप से संचालन हेतु आवश्यक होता है।[1] विभिन्न राज्यों में पंचायती राज संस्थाओं के वित्तीय व्यवस्थाओं के अवलोकन से यह स्पष्ट होता हैं। कि वित्तीय प्रशासन के संचालन के लिए प्राय जिला पंचायत स्तर पर सचिव अपने अधीनस्थ लेखा कर्मचारियों की सहायता से वित्तीय प्रशासक नियमन संचालन और नियंत्रण करता है। इस तरह स्पष्ट हो जाता है कि संस्था वित्तीय प्रशासन हेतु स्थानीय स्तर पर प्रशासकीय या संगठन की स्थापना की जा सकती है।

---

1. उत्तर प्रदेश क्षेत्र पंचायत व जिला पंचायत अधिनियम 1994 की धारा 110 में।

पंचायती राज संस्था की बजट निर्माण एवं लेखा सम्परीक्षा प्रणाली

पंचायती राज संस्थायें यद्यपि संविधान द्वारा सृजित स्वायत्तशासी संस्थायें हैं। तथापि सभी सरकारी संस्थाओं की भाँति ही इसमें बजट निर्माण, लेखा संघारण और अंकेक्षण की व्यवस्था प्रवर्तित होती है। राजस्थान पंचयती अधिनियम की धारा 94 में सभी पंचायती राज संस्थाओं अर्थात् ग्राम पंचायतों, पंचायत समितियों तथा जिला पंचायतों को वार्षिक बजट के विषय में प्रावधान किये गये हैं।''[1] वार्षिक वजट किसी भी संस्था की आय व्यय का पूर्वानुमान होता है जिसको तैयार किया जाना किसी भी संस्था के कुशल संचालन हेतु आवश्यक होता है।

विभिन्न राज्यों में पंचायती राज संस्थाओं क वित्तीय प्रशासन के अवलोकन से यह तथ्य स्पष्ट होता है कि वित्तीय प्रशासन के संचालन के लिए प्रायः जिला पंचायत स्तर पर पृथक तंत्र की स्थापना नहीं की गयी है। प्रारम्भ में वित्त से सम्बन्धित कार्य जिला पंचायत के वस्तुओं द्वारा और वर्तमान में भी यही प्रणाली द्वारा कार्य किया जाता है तथा जिला पंचायत का सचिव अपने अधीनस्थ लेखा कर्मचारियों की मदद से वित्तीय प्रशासन का नियमन संचालन और नियंत्रण होता है।''[2] इस तरह यह स्पष्ट है कि वित्तीय प्रशासन के लिए जिला पंचायत स्तर पर किसी विशिष्ट संस्था या इकाई की स्थापना नहीं की गयी है। ऐसा इसलिए भी है कि जिला पंचायत स्वयं मध्यम स्तर पर कार्य करती है कि इस हेतु बढ़े पृथक प्रशासकीय तंत्र या संगठन की स्थापना व्यवहारतः सम्भव नहीं है।

जिला पंचायत का बजट निर्मित तथा पारित करने का अधिकार

जिला पंचायत की कार्य समिति नियत रीति से वित्त समिति के परामर्श से धार 99 की उपधारा (1) के अधीन प्रतिबन्धात्मक खण्ड के उपबन्धों का समुचित ध्यान रखते हुए प्रत्येक वर्ष ऐसे दिनाङ्क से पूर्व जो नियम द्वारा तदर्थ निश्चित किया जाय आगामी 31 मार्च को समाप्त होने वाले वर्ष के अपने वास्तविक तथा प्रत्याशित आय व्यय का पूरा लेखा तथा आगामी 1 अप्रैल से प्रारम्भ होने वाले वर्ष के लिए बजट अनुमान तैयार करेगी।''[3]

---

1. राज पंचायती राज अधिनियम 1961 की धारा 74
2. फतेहपुर जिला पंचायत बजट निर्माण प्रणाली - दैनिक जागरण पेपर
3. उत्तर प्रदेश क्षेत्र पंचायत जिला पंचायत अधिनियम 1994 धारा 99 उपधारा (1)

जिला पंचायत के बजट अनुमान तैयार करने में आय के अनुमान में राज्य सरकार से आयोजन एवं विकास के कार्यों के निमित्त प्राप्त अनुदानों को अलग प्रदर्शित किया जायेगा कि उन अनुदानों को किस प्रकार व्यय किये जाने का प्रस्ताव है। इसके पश्चात् जिला पंचायत अध्यक्ष निश्चित तारीख को तैयार किये गये लेखा तथा बजट अनुमान को जिला पंचायत की बैठक में प्रस्तुत करता है। तथा "उस बैठक में जिला पंचायत बजट पर चर्चा करती है तथा फिर विशेष प्रस्ताव द्वारा -

(क) पूरे बजट को पारित करेगी। या

(ख) बजट को किन्हीं ऐसे परिष्कारों के साथ पारित करेगी जो वह देगी।

(ग) बजट को पुनः तैयार करने हेतु कार्य समिति को वापस देगी।"[1]

जब जिला पंचायत बजट को पुनः तैयार करने हेतु कार्य समिति को लौटा दे। कार्य समिति नया बजट तैयार करती है और पुनः पूर्वोक्त प्रक्रिया से होते हुए बजट पारित होता है। जिला पंचायत अध्यक्ष मण्डल आयुक्त के पास कार्य समिति का मूल बजट, कार्य समिति का संशोधित बजट तथा जिला पंचायत द्वारा पारित बजट को भेजेगा और मण्डल आयुक्त जिला पंचायत द्वारा पारित पूरे बजट को पास कर सकता है या उस भाग में जो राज्य सरकार द्वारा नियोजन तथा विकास के कार्यों के निमित्त दिये गये अनुदानों से किये जाने वाले व्यय के सम्बन्ध में हो, कोई ऐसे परिवर्तन करने के लिए पश्चात् जो वह उक्त अनुदानों के प्रयोजनों की सिद्धि के लिए उपयुक्त समझे उसे स्वीकार कर सकता है तथा बजट के अवशिष्ट भाग के सम्बन्ध में ऐसी सिफारिशें कर सकता है जो वह उचित समझे।"[2] यदि मण्डल आयुक्त बजट के सम्बन्ध में कोई सिफारिश नहीं करता है तो बजट ऐसे परिष्कारों सहित (यदि कोई हो) जो उसने उक्त खण्ड के अधीन किये हों अन्तिम रूप से पारित समझा जायेगा। (प्रतिबन्ध यह है कि) यदि मण्डल आयुक्त ने कोई सिफारिशें की हैं तो अध्यक्ष उन्हें जिला पंचायत के समक्ष रखेगा। जिला पंचायत उन सिफारिशों के अनुसार बजट में परिवर्तन कर सकती है या कोई परिवर्तन करने से इंकार कर सकती है। जब बजट मण्डल आयुक्त द्वारा किये गये परिवर्तनों के साथ तथा जिला पंचायत द्वारा इस खण्ड के अधीन किये गये परिवर्तनों सहित यदि कोई हो, अन्तिम रूप से पारित समझा जायेगा।"[3]

---

1. पूर्ववत् की धारा 110 उपधारा (3) के अन्तर्गत
2. पूर्ववत् की धार 110 की उपधारा (6) (क)
3. पूर्ववत् की धारा 110 की उपधारा (6) (ख)

मण्डल आयुक्त द्वारा किये गये परिवर्तनों को जिला पंचायत के आवेदन पर राज्य सरकार पुनरीक्षित कर सकती है और ऐसी दशा में इस खण्ड के अधीन पारित समझा गया बजट परिष्कृत समझा जायेगा। यदि ऐसे दिनाङ्क के पूर्व जो नियत की गयी थी जिला पंचायत ने बजट न पारित किया हो और न उसके द्वारा पारित समझा जाय। यदि अध्यक्ष ने बजट न प्रस्तुत किया हो तो मण्डल आयुक्त अध्यक्ष से ऐसी सूचनायें देने के लिए कह सकता है जिसकी वह अपेक्षा करता हो तथा आयुक्त उस जिला पंचायत का बजट तैयार करवा सकता है और ऐसा बजट जिला पंचायत द्वारा पारित समझा जायेगा।''[1] और जो नियम द्वारा तारीख निश्चित की गयी थी और उस समय के अन्तर्गत मण्डल आयुक्त की सिफारिशें जिला पंचायत में पेश न की गयी हो या जिला पंचायत द्वारा मण्डल आयुक्त की सिफारिशों पर कोई विचार या ध्यान न किया गया हो तो बजट उन परिष्कारों सहित जो मण्डल आयुक्त ने सिफारिशें की हों अन्तिम रूप से पारित समझा जायेगा तथा जिला पंचायत कार्य समिति के परामर्श से समय-समय पर जैसा परिस्थितियों के अनुसार वांछनीय है। अन्तिम रूप से पारित समझे गये बजट में परिवर्तन कर सकती है। जिला पंचायत द्वारा बजट में किया गया प्रत्येक परिवर्तन मण्डल आयुक्त को भेजा जायेगा और वह परिवर्तन यथासम्भव उपधारा 6 (क) (ख) (ग) के उपबन्धों के अधीन रहेगा।

जिला पंचायत के बजट का पुनरीक्षण - पहली अक्टूबर के पश्चात् शीघ्रातिशीघ्र वर्ष का बजट तैयार किया जायेगा और यह पुनरीक्षित बजट यथासम्भव उन समस्त उपबन्धों के अधीन होगा जो धारा 110 के अधीन तैयार किये गये बजट पर प्रवृत्त होंगे।

जिला पंचायत के बजट का पुनरीक्षण - यदि राज्य सरकार आदेश द्वारा कोई न्यूनतम रोकड़ बाकी करे तो कार्य समिति बजट निर्माण करते समय उस न्यूनतम रोकड़ बाकी के लिए व्यवस्था करेगा और राज्य सरकार अपने अन्तिम रूप से पारित बजट का मण्डल आयुक्त राज्य सरकार को भेजेगी।

बजट में व्यवस्थित धनराशि से अधिक व्यय करने पर निषेध

''जब जिला पंचायत का बजट या पुनरीक्षित बजट अन्तिम रूप से पारित कर दिया गया हो तो जिला पंचायत बजट के उस शीर्षक के अतिरिक्त जिसमें करों को लौटाये जाने की व्यवस्था हो किसी भी शीर्षक के अन्तर्गत उस शीर्षक के अन्तर्गत, उस शीर्षक के अधीन

---

1. पूर्ववत् की धारा 6 (ग)

पारित धनराशि से अधिक व्यय करके व्यवस्था न कर दे।"[1] और जब ऐसे शीर्षक के अन्तर्गत, जिसमें करों को लौटाये जाने की व्यवस्था हो, उस शीर्षक के अन्तर्गत अधीन, अनुमोदित या स्वीकृति से अधिक धनराशि व्यय किया जाय तो बजट में परिवर्तन करके उस व्यय के लिए अविलम्ब व्यवस्था की जाय।"[2]

वित्तीय स्थिति की समीक्षा - 73 वें संविधान संशोधन के पश्चात देश भर में एक स्वरूप पंचायती राज व्यवस्था का अभ्युदय हुआ हैं तथा इन को सवैधानिक स्तर प्राप्त हो जाने से जन सामान्य में इन संस्थाओं के प्रति महत्व एवं विश्वास में वृद्धि हुयी तथा 73वे संविधान संशोधन के पश्चात पंचायती राज संस्थाओं से ग्रामीण क्षेत्रों में सामाजार्थिक न्याय की प्राप्ति के लिए नियोजन को अपनाते हुए विकास कार्यो के प्रभावी निष्पादन की अपेक्षा की गयी हैं। इन सब कार्यो को सम्पन्न करने तता जनता के दृष्टि में विश्वास पूर्ण बने रहने के लिए आर्थिक सम्पन्नता एक महत्व पूर्ण पूर्वापिक्षा हैं। सामान्यतः देश भर में पंचायती राज संस्थाओं की और विशेषतः उत्तर प्रदेश में इन सेस्थाओं की वित्तीय स्थिति सन्तोषप्रद नही कही जा सकती है।है। ये संस्थायें सदैव धनाभाव की समस्या से ग्रसित रहती हैं। उत्तर प्रदेश प्रथम राज्य वित्त आयोग ने राज्य सरकार को प्रस्तुत अपने प्रतिवेदन में यह कहा कि "राज्य में पंचायती राज्य संस्थाओं को आय की लगभग 60% हिस्सा राज्य सरकार की भागीदारी से लगभग 37% प्रतिशत केन्द्र की भागीदारी तथा 3.5% इनकी स्वयं की आमदनी होती हैं।"[3] ये आकड़े यह बताने के लिए पर्याप्त हैं कि पंचायती राज संस्थाओं ने अपनी आय बढ़ाने के लिए कोई उपाय नही किए हैं। अगर किए गए हैं तो वह पर्याप्त नहीं हैं। परिणामतः इन संस्थाओं की निर्बल वित्तीय स्थिति के कारण इनकी कार्यकुशलता भी प्रभावित होती है। संक्षेप में पंचायती राज संस्थाओं की निर्बल वित्तीय स्थिति के लिए निम्नांकित कारण बताये जा सकते हैं -

(i) पंचायती राज संस्थायें (विशेषतः जिला पंचायत के सदस्यगण) नागरिकों के निकटस्थ होने के कारण करारोपण से संकोच करती है।

(ii) जिन करों का आरोपण ये संस्थायें करती भी हैं उनकी वसूली में संस्थायें अपेक्षित रुचि नहीं लेती हैं। फलतः उनसे एकत्र होने वाली राशि के अभाव में ये संस्थायें वित्तीय रूप

---

1. पूर्ववत् की धारा 114 की उपधारा (1)
2. पूर्ववत् धारा 114 उपधारा (2)
3. प्रथम राज्य वित्त आयोग 1994 के प्रतिवेदन सेअरगल आर - म्यूनिसिपल गवर्नमेन्ट इन इण्डिया, पृष्ठ 34

से संकटग्रस्त रहती हैं।

(iii) राज्य सरकार द्वारा दिये जाने वाले प्रति वार्षिक अनुदान भी कम होता है।

(iv) 73वें संविधान संशोधन द्वारा इनका दायरा (कर्तव्य क्षेत्र) तो बढ़ा दिया गया किन्तु पर्याप्त वित्तीय संसाधन नहीं बढ़ाये गये हैं।

(v) "सरकार द्वारा दिया गया अनुदान किसी विशेष योजना या कार्यक्रम हेतु होता है। अतः आवश्यक होने पर ये संस्थायें उस धन को किसी अन्य आवश्यक कार्य में नहीं आधिरोपित कर सकती हैं।"

(vi) 73वें संविधान संशोधन के पश्चात् नियुक्त वित्त आयोग ने जो अभिशंसायें की हैं उससे भी इन संस्थाओं की वित्तीय स्थिति में कोई निर्णायक सुधार नहीं आया क्योंकि राज्य वित्त आयोग की अभिशंसाओं को राज्य सरकार ने गम्भीरता के साथ बाध्यकारी नहीं माना जितना कि केन्द्र सरकार केन्द्रीय वित्त आयोग की अभिशंसाओं को बाध्यकारी मानती है।

वित्तीय स्थिति में सुधार हेतु सुझाव - पंचायती राज संस्थाओं की वित्तीय स्थिति में राज्य वित्त आयोग की अभिशंसाओं के बाद भी पर्याप्त सुधार नहीं हुआ। कहा जा सकता है कि राज्य सरकार ने आयोग की अभिशंसाओं पर विशेष ध्यान नहीं दिया। नीचे ऐसे सुझावों का, जिनमें प्रथम राज्य वित्त आयोग द्वारा दी गयी अभिशंसायें भी शामिल हैं। दिया जा रहा है जिनके आधार पर पंचायती राज संस्थाओं की वित्तीय स्थिति में सुधार सम्भव हो सकता है।

1. संविधान में वित्तीय स्रोतों का उल्लेख - भारतीय संविधान में संघीय सरकार तथा राज्य सरकार के बीच राजस्व स्रोतों का बंटवारा किया गया है।"[1] उसी तरह संविधान के द्वारा स्थानीय इकाइयों के पक्ष में भी वित्तीय स्रोतों का स्पष्ट उल्लेख करना चाहिए। इन्हीं सब कमियों के पक्ष को ध्यान में रखते हुए समीक्षक यह आरोप लगाते हैं कि 73वां संविधान के द्वारा पंचायती राज को सशक्त बनाने के लिए किये गये उपाय अधूरे मन से किये गये हैं क्योंकि

(1) जिस तरह संघीय सूची, राज्य सूची, समवर्ती सूचियाँ बनाकर संघ व राज्यों के बीच शक्तियों का बंटवारा कर दिया गया है। उसी तरह स्थानीय शासन की इकाइयों के बीच

---

1. भारतीय संविधान का भाग 12 अनुच्छेद 268

शक्तियों का बंटवारा किया जा सकता था।

(2) अनुच्छेद 268 के द्वारा व उसके पश्चातवर्ती अनुच्छेदों के द्वारा संघ व राज्य के मध्य वित्तीय संसाधनों का जैसा बंटवारा किया गया वैसा ही प्रावधान संविधान द्वारा स्थानीय इकाइयों (ग्रामीण एवं नगरीय) के पक्ष में किया जा सकता है।

स्थानीय इकाइयों के सुदृढ़ वित्तीय स्थिति पर चिन्तन करने पर मालूम होता है कि यदि पंचायती राज संस्थाओं को लोकतंत्र की कुशल आधारशिला बनाना चाहते हैं तो निश्चित रूप से ऊपर लिखित दोनों विचारों का संविधान द्वारा परिष्कार किया जाना चाहिए। ऐसा करने मात्र से पंचायती राज संस्थायें विधायी और वित्तीय दोनों रूपों में सक्षम बन सकती हैं।

2. प्रथम राज्य वित्त आयोग द्वारा की गयी अभिशंसायें

उत्तर प्रदेश प्रथम राज्य वित्त आयोग ने पंचायती राज संस्थाओं की वित्तीय स्थिति को सुधारने के लिए निम्नांकित अभिशंसायें की है-[1]

(1) पंचायती राज संस्थाओं को अपने लिए निर्धारित दायित्वों का नागरिकों के हित में सन्तोषजनक पूर्ति के लिए अपने आय के संसाधनों में वृद्धि करनी चाहिए। आयोग ने यह सुझाया कि पंचायती राज संस्थायें अपनी कर लगाने की शक्तियों का अलोकप्रियता के डर से पूर्ण उपयोग नहीं कर रही हैं और जो कर लगाते भी हैं तो उनकी वसूली के प्रति उदासीन रहता है। इन्हें दूर करना चाहिए तथा अपनी कर, फीस, दण्ड, लाइसेन्स लगाने की शक्ति का प्रयोग सुनिश्चित करना चाहिए।

(2) ग्रामीण क्षेत्रों में निर्मित धनाढ्य वर्ग के आलीशान महलों पर कर लगाकर आय के साधन बढ़ाने के उपाय करने चाहिए।

(3) बारानी भूमि पर भूराजस्व आरोपित करने का अधिकार जिला परिषदों (पंचायतों) को दे दिया जाय तथा आय को पंचायतों के तीनों स्तरों में बांट देना चाहिए।

(4) जिला पंचायतों को चाहिए कि वह ग्राम पंचायतों की आय बढ़ाने में सहायता करे।

भारत शासन अधिनियम 1935 के पूर्व किसी व्यवस्था में स्थानीय सूची का वर्णन नहीं

---

1. प्रथम राज्य वित्त आयोग की की गयी अभिशंसायें, पृष्ठ 99 से 103

था। अतः भारत शासन अधिनियम 1935 के द्वारा प्रान्तीय एवं स्थानीय कर सूची एक कर दी गयी। इस अधिनियम द्वारा स्थानीय शासन करारोपण के सम्बन्ध में विशिष्ट स्थिति से वंचित हो गया है। यही स्थिति स्थानीय शासन की आज तक बनी हुई है। स्वतंत्र भारत के संविधान में स्थानीय शासन द्वारा लगाये जाने वाले किसी भी प्रकार के करों का उल्लेख नहीं है। दूसरी ओर स्थानीय शासन के कार्यों में दिनोंदिन वृद्धि होती गयी। स्थानीय निकायों का कार्य क्षेत्र जितना व्यापक है उनके वित्तीय स्रोत उतने ही कम हैं। सभी कार्यों को ढंग से संचालित करने के लिए धन की आवश्यकता होती है। स्थानीय निकाय इस धन को कहाँ से प्राप्त करेंगे, उनकी आय के क्या-क्या स्रोत होंगे यह एक विचारणीय प्रश्न है। प्रारम्भ में ऐसी आशा की जाती थी कि प्रान्तीय स्वायत्तता के बाद इन संस्थाओं को आय के नये स्रोत प्राप्त हो सकेंगे, पर ऐसा नहीं हुआ।

प्रारम्भ के वर्षों में यह मांग जरूर की गयी कि भारत में स्थानीय करों की पृथक् सूची होनी चाहिए। संविधान में केन्द्र और प्रान्तीय सूची की भाँति स्थानीय करों की सूची होनी चाहिए। अपनी वित्तीय स्थिति के लिए पूर्णतः राज्य सरकारों पर निर्भर है। इस समस्या के समाधान हेतु 1951 में स्थानीय वित्त जांच समिति ने विचार कर अपना प्रतिवेदन प्रस्तुत किया। समिति ने स्थानीय निकायों के वित्तीय स्रोत के लिए 13 करों का अपने प्रतिवेदन में उल्लेख किया था। जो निम्न है-

"(1) वायु, जल और रेल मार्ग द्वारा ढोये गये सामान और यात्रियों पर कर।

(2) भूमि एवं भवन पर कर

(3) खनिज अधिकारों पर कर

(4) स्थानीय क्षेत्र में उपभोग, उपयोग तथा बिक्री के लिए प्रविष्ट होने वाले माल पर कर।

(5) विद्युत उपयोग एवं बिक्री पर कर।

(6) समाचार पत्रों में प्रकाशित विज्ञापनों को छोड़कर अन्य विज्ञापनों पर कर।

(7) सड़कों अथवा अन्तरदेशीय जलमार्गों द्वारा ढोये गये माल तथा यात्रियों पर कर।

(8) वाहन कर।

(9) पशुओं तथा नावों पर कर।

(10) मार्ग कर।

(11) व्यवसाय, व्यापार, आजीविका तथा नौकरी पर कर।

(12) प्रति व्यक्ति कर।

(13) मनोरंजन कर।"[1]

स्थानीय वित्त जांच समिति 1951 के प्रतिवेदन प्रस्तुत करने के 2 वर्षों के पश्चात् करारोपण जांच समिति 1953-54 का गठन किया गया जिसका मूल उद्देश्य इस समस्या पर विचार प्रस्तुत करना था कि कौन-कौन से कर स्थानीय निकायों को सुपुर्द किये जाय। करारोपण जांच समिति 1953-54 ने मात्र 10 करों को स्थानीय निकायों को सौंपने का उल्लेख अपने प्रतिवेदन में किया था। जो निम्न हैं-

"(1) भूमि एवं वसूली कर।

(2) चुंगी वसूली।

(3) यंत्र चालित वाहनों को छोड़कर अन्य वाहनों पर।

(4) पशुओं तथा नौकाओं पर।

(5) व्यवसाय, व्यापार, आजीविका तथा नौकरी पर।

(6) समाचार पत्रों को छोड़कर अन्य विज्ञापनों पर।

(7) थियेटर कर।

(8) सम्पत्ति के हस्तान्तरण पर कर।

(9) सड़क तथा आन्तरिक जलमार्गों द्वारा ढोये जाने वाले माल तथा यात्रियों पर कर।

(10) पथ कर।"[2]

यदि हम स्थानीय वित्त जांच समिति 1951 तथा करारोपण जांच समिति 1953-54 के

---

1. पूर्ववत्
2. प्रथम राज्य वित्त आयोग का प्रतिवेदन, 1995, पृष्ठ 40

प्रतिवेदनों का तुलनात्मक अध्ययन करते हैं तो मालूम पड़ता है कि दोनों ही स्थानीय शासन को अधिक वित्त मुहैया कराने के पक्ष में थी तथा दोनों कुछ जगहों पर समानता का भाव भी रखती है। इसके पश्चात् गठित समितियों, जिनमें मुख्यतः मिनिस्टर्स कमेटी आन आगमेटेंशन ऑफ अरबन लोकल बाडी और ग्रामीण नगर सम्बन्ध समिति ने भी केन्द्रीय सरकार से यह सिफारिश की थी कि स्थानीय शासन हेतु कुछ करों को सुरक्षित कर दिया जाय। केन्द्रीय शासन ने सिफारिशों को मानते हुए राज्य शासन को यह सलाह दी परन्तु यह समिति की सिफरिशों को मानना अथवा न मानना राज्य सरकारों पर निर्भर करता है तथा केन्द्रीय परिषद के पास इस शक्ति का अभाव है कि यह तुरन्त राज्य सरकारों को इनके प्रतिवेदनों को लेकर कोई आदेश जारी कर सके। यह भी सोचने वाली बात होगी कि समितियों के प्रतिवेदनों से प्रस्तुत विचारों को स्वीकार करते हुए संविधान में समाविष्ट कर देने मात्र से क्या स्थानीय शासन की वित्तीय स्थिति में परिवर्तन सम्भव होगा और अगर हाँ तो क्या आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु पर्याप्त होगा?

अशोक मेहता समिति द्वारा पंचायतीराज संस्थाओं की आय बढ़ाने के स्रोत

भारत सरकार द्वारा गठित अशोक समिति का मत था कि पंचायती राज संस्थाओं की आय के समुचित साधन होने चाहिए। प्रत्येक संस्था को कर लगाने का अधिकार होना चाहिए। इन संस्थाओं की करारोपण सम्बन्धी समस्याओं को दूर करने के लि राज्य सरकारें प्रयास करें। राज्य सरकारों द्वारा उदार होकर इन संस्थाओं के वित्तीय प्रशासन का नियमन उसी प्रकार किया जाय जिस प्रकार केन्द्र राज्य वित्तीय सम्बन्ध का नियमन किया जाता है। राज्य को कार्यकारिणी का वित्तीय एवं प्रशासनिक अनावश्यक हस्तक्षेप ही समाप्त कर देना चाहिए।

उत्तर प्रदेश राज्य वित्त आयोग का गठन 1994 में किया गया था। आयोग ने अपना प्रतिवेदन 1996 को सरकार को प्रेषित किया। सभी राज्यों के वित्त आयोग का गठन राज्यपाल द्वारा किया जाता है। वित्त आयोग का गठन हर पांचवें वर्ष किया जाता है। आयोग का मुख्य राज्य से पंचायती राज संस्थाओं और नगर पालिकाओं को दी जानी वाली वित्तीय सहायता के सन्दर्भ में सुझाव प्रेषित करता है। वित्त आयोग के सदस्यों का निर्धारण राज्य स्वयं करेंगे। यह एक सदस्यीय भी हो सकता है। सदस्यों की नियुक्ति करते वक्त निम्न बातों का ध्यान रखा जाता है-

(1) सार्वजनिक अनुभव हो।

(2) उच्च न्यायालय का न्यायाधीश बनने की योग्यता रखता हो।

(3) सरकारी वित्त एवं लेखा का विशेष ज्ञान हो।

(4) प्रशासन एवं वित्तीय प्रशासन का ज्ञान हो।

(5) अर्थशास्त्र का विशेष ज्ञान हो।

जिला पंचायत की आय के स्रोत

पंचायतों को होने वाली आय को तीन वर्गों में विभक्त किया जा सकता है-

(1) पंचायतों की स्वयं की आय

(अ) करों से प्राप्त आय

(ब) करों के अतिरिक्त आय

(2) केन्द्र/राज्य सरकार से प्राप्त अनुदानों से आय (जिसमें D.R.D.A. की परियोजनाओं के माध्यम से प्राप्त राशि भी सम्मिलित है)

(3) ऋण, उधार या दान से प्राप्त आय।

इससे यह स्पष्ट होता है कि पंचायती राज व्यवस्था के तीनों स्तरों पर कार्यरत संस्थाओं के वित्तीय स्रोत लगभग एक समान हैं जो स्तरों की वृद्धि के अनुसार आय में वृद्धि हो जाती है। जिला पंचायतों की आय के स्रोत निम्न हैं -

1. पंचायतों की स्वयं की आय

उत्तर प्रदेश क्षेत्र पंचायत जिला पंचायत अधिनियम, 1994 के अनुसार जिला पंचायतों को निम्न कर व फीस अधिरोपित करने की शक्तियाँ प्रदान की गयी हैं तथा यह प्रावधान करता है कि ऐसी अधिकतम दरों के अधीन रहते हुए जो सरकार द्वारा निश्चित किया गया हो जिला पंचायत निम्नलिखित कर और फीस अधिरोपित करने तथा उदग्रहीत करने के लिए सक्षम होगी।

(क) किसी मेलों व बाजारों की अनुज्ञप्ति के लिए फीस।

(ख) जल कर दर, जहाँ जिला पंचायत द्वारा उसके अधिकारिता के भीतर पानी, सिंचाई या अन्य किसी प्रयोज्य हेतु जल प्रदान की व्यवस्था की गयी है।

(ग) अधिभारित ग्रामीण क्षेत्रों के स्टाम्प शुल्क पर 5 प्रतिशत तथा मण्डी फीस पर आधा प्रतिशत तक।"[1]

2. केन्द्र राज्य से प्राप्त अनुदान से आय

जिला पंचायत की पर्यवेक्षकीय स्थिति को देखते हुए प्रथम राज्य वित्त आयोग ने जिला पंचायतों को दिये जाने वाले अनुदान को निम्नलिखित तीन भागों में विभाजित किया है।

(क) सामान्य अनुदान - आयोग ने यह प्रस्ताव किया है कि जिला पंचायतों को उनके अधीन प्रति ब्लाक 30,000 रुपये की दर से सामान्य अनुदान किया जायेगा। आयोग के द्वारा प्रस्तावित अनुशंसा 1995-96 से प्रभावी हो गयी। इस मद में मिलने वाली राशि का उपयोग जिला पंचायत कार्यालय व्यय वाहनों के रखरखाव के लिए कर सकेगी।"[2]

(ख) साधारण रखरखाव का अनुदान - आयोग की अनुशंसा के अनुसार जिला पंचायतों को उनके स्वयं के स्वामित्व के भवनों के रखरखाव के लिए 20,000 रुपये वार्षिक अनुदान निश्चित किया गया है।"[3]

(ग) प्रोत्साहन अनुदान -

(4) राज्य की सभी पंचायत समितियों को अपने अधीन भूमि पर कर लगाना चाहिए। प्रारम्भ में यह कर 10% तक हो सकता है किन्तु बाद में इसे 50% तक किया जा सकता है।

(5) ग्रामीण क्षेत्रों में वसूल किये जाने वाला सरचार्ज और अन्य शुल्क पर एकत्रीकरण राज्य सरकार द्वारा किया जाये किन्तु उसे होने वाली आय को राजकीय न मानकर वित्त विभाग के माध्यम से पंचायती राज संस्थाओं में बांट दी जाय।

(6) आयोग का यह भी सुझाव था कि पंचायती राज संस्थाओं को लक्ष्य बनाकर प्रति

---

1. 1. उत्तर प्रदेश पंचायत एवं जिला पंचायत अधिनियम, 1994 धारा 51
2. राज्य वित्त आयोग का प्रतिवेदन, 1995, पृष्ठ 50
3. पूर्ववत्

वर्ष 15% की वृद्धि की जाय।

(7) इसी के साथ आयोग ने सुझाव दिया था कि पंचायत क्षेत्र से होकर गुजरने वाली राष्ट्रीय राजमार्ग है, उनके किनारे वाले व्यवसायिक प्रकृति के कार्यों जैसे- होटल, ढाबा, मोटर मैकेनिक सेवा, पेट्रोल डीजल पम्प आदि। इन गतिविधियों को वाणिज्यिक मानते हुए कर और शुल्क लगाकर पंचायतों की आय बढ़ाई जा सकती है।

(8) ऋण एवं सहायता उपलब्ध कराने हेतु पंचायती राज वित्त निगम स्थापित करने का सुझाव दिया तथा कहा कि राज्य सरकार प्रथम तीन वर्ष में प्रति वर्ष 5 करोड़ के अंशदान द्वारा इस निगम की स्थापना करें।

(c) वार्षिक प्रशासनिक रिपोर्ट पेश करना - उत्तर प्रदेश क्षेत्र पंचायत एवं जिला पंचायत अधिनियम 1994 यह प्रावधान करता है कि प्रत्येक वर्ष में अप्रैल के प्रथम दिन के पश्चात् यथाशीघ्र और ऐसी तारीख के पश्चात् यथाशीघ्र और ऐसी तारीख के पश्चात् जो राज्य सरकार द्वारा नियत की जाय जिला पंचायत के मुख्य कार्य पालक अधिकारी सहित पंचायती राज संस्थाओं के सक्षम अधिकारियों द्वारा पूर्ववर्ती वित्तीय वर्ष के दौरान अपनी संस्था की रिपोर्ट ऐसे प्रारूप में और ऐसे विवरण के साथ जो राज्य सरकार निर्दिष्ट करे, राज्य सरकार को प्रेषित करने के लिए विहित अधिकारी को प्रेषित करेगा।''[23] सम्बन्धित जिला पंचायत द्वारा प्रस्तुत प्रतिवेदन में लिखी गयी कार्यवाही का अवलोकन करते हुए राज्य सरकार एक ज्ञापन के साथ राज्य सरकार इस रिपोर्ट को विधान मण्डल में पेश करेगी।''[24]

(d) लघु उद्योगों के विकास हेतु प्रयत्न - फतेहपुर जिला पंचायत के अन्य वित्त एवं उद्योग सम्बन्धी कार्यों की तरह ही लघु उद्योगों की स्थापना एवं विकास में सहायता प्रदान करना भी एक महत्वपूर्ण कार्य है। विभिन्न लघु एवं कुटीर उद्योगों की स्थापना एवं विकास भी सहायक परिस्थितियाँ पैदा करना तथा उनके लिए कच्चे माल की व्यवस्था करना व बने हुए माल के लिए बाजारों की व्यवस्था करना तथा कामगारों को उचित मूल्य प्रदान करना आदि व्यवस्था के प्रति जिला पंचायत अपने अधिकारों का प्रयोग कर सकती है।

फतेहपुर जिला पंचायत लघु एवं कुटीर उद्योगों की स्थापना हेतु निम्नलिखित प्रयत्न कर रही है-[3]

---

1. क्षेत्र पंचायत एवं जिला पंचायत अधिनियम, 1994 की धारा, 122 (1)
2. पूर्ववत्
3. भारत में स्थानीय प्रशासन - सरोज चोपड़ा, पृष्ठ 126

(1) अपने क्षेत्र के अन्तर्गत पारम्परिक कुशल व्यक्तियों की पहचान और घरेलू उद्योगों का विकास करना।

(2) कच्चे माल की आवश्यकता का इस तरह विकास करना जिससे समय-समय पर उसका प्रदाय सुनिश्चित किया जा सके।

(3) परिवर्तनशील उपभोक्ता मांग के अनुसार डिजाइन एवं उत्पाद।

(4) कारीगरों एवं शिल्पियों के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रमों का आयोजन करना।

(5) उप मद (4) के अधीन कार्यक्रम के लिए ऋण दिलवाने के लिए सम्पर्क करना एवं।

(6) खादी, हथकरघा, हस्तकला और ग्राम तथा कुटीर उद्योगों को प्रोन्नत करना।

जिला पंचायत फतेहपुर के द्वारा जिन कुटीर एवं लघु उद्योगों की स्थापना एवं विकास हेतु प्रयत्न किये गये हों वे निम्नलिखित हैं-

(1) पशु पालन, दुग्ध उद्योग और कुक्कुट पालन [1]

(क) जिला और रैफलर अस्पतालों को छोड़कर पशु चिकित्सालयों की स्थापना और रखरखाव।

(ख) चारा विकास कार्यक्रम।

(ग) डेयरी उद्योग, कुक्कुट पालन और सुअर पालन को प्रोन्नत करने हेतु विभिन्न प्रयास करना।

(घ) महामारी और सांसर्गिक रोगों की रोकथाम।

(ङ) नस्लो का सुधार।

(2) मत्स्य पालन - [2]

(क) सिंचाई कार्यों में मत्स्य पालन का विकास।

(ख) मछुवारा कल्याण कार्यक्रमों का क्रियान्वयन।

---

1. उत्तर प्रदेश नयी पंचायती राज व्यवस्था एक दर्शन - किसान सेवा समिति, पृष्ठ 73
2. पूर्ववत्, पृष्ठ 73-74

(ग) मत्स्य पालक विकास एजेन्सी के समस्त कार्यक्रम।

(घ) निजी और सामुदायिक जलाशयों के मत्स्य संवर्धन का विकास।

(ङ) पारस्परिक मत्स्य पालन में सहायता करना।

(च) मत्स्य विपणन सहकारी समितियों की स्थापना करना।

(छ) मछुवारों के उत्थान और विकास के लिए कल्याण कार्यक्रम घोषित करना।

(3) बागवानी - [1]

(क) ग्रामीण पार्क और उद्योगों की स्थापना करना।

(ख) फलों और सब्जियों की खेती।

(4) कृषि - [2] जिला पंचायतें कृषि से सम्बन्धित सभी उद्योगों को बढ़ावा देने के लिए कुछ महत्वपूर्ण कार्य सम्पादित करती हैं जो निम्नलिखित हैं-

(क) कृषि उत्पादन में वृद्धि करने और समुन्नत कृषि उपकरणों और विकसित कृषि पद्धतियों के अंगीकरण को लोकप्रिय बनाने के लिए उपायों को प्रोन्नत करना।

(ख) कृषि मेलों एवं प्रदर्शनियों का संचालन करना।

(ग) कृषकों को प्रशिक्षण।

(घ) भूमि सुधार एवं भूमि संरक्षण।

(ङ) कृषि सम्बन्धित शिविर तथा प्रयोगात्मक प्रशिक्षण कार्य कृषकों के बीच करना।

(च) कृषि के नवीन साधनों एवं उपकरणों की सामान्य कृषकों को जानकारी उपलब्ध कराना।

(छ) जैव तथा रासायनिक खादों के प्रयोग एवं रोक के विषय में कृषकों को जागृत करने हेतु प्रयास करना।

---

1. पूर्ववत्, पृष्ठ 75
2. स्थानीय प्रशासन - अशोक शर्मा, आर. बी. एस. पब्लिशर्स - जयपुर, पृष्ठ 169

(5) लघु सिंचाई, भू जल प्रयोग और जल विभाजन विकास

जिला पंचायतें लघु एवं कुटीर उद्योगों को बढ़ावा देने हेतु तथा प्रमुखतः कृषि को बढ़ावा देने हेतु विभिन्न तरह की सिंचाई विकास से सम्बन्धित परियोजनायें तथा प्रयास संचालित कर रही हैं-

(क) भू जल स्रोतों के विकास हेतु अनुदान।

(ख) सामुदायिक पम्प सेट लगाना।

(ग) जल विभाजक विकास कार्यक्रम का क्रियान्वयन।

(घ) जिला पंचायत नियंत्रणाधीन सिंचाई योजनाओं के अधीन जल के समय पर और समान वितरण व पूर्ण उपयोग तथा राजस्व वसूली के लिए प्रबन्ध करना।''[1]

(6) घरेलू एवं कुटीर उद्योग - जिला पंचायत अन्य घरेलू एवं कुटीर उद्योगों की स्थापना एवं विकास हेतु कार्यक्रमों का क्रियान्वयन एवं संचालन करती है जो स्थान विशेष की परिस्थितियों एवं उपलब्ध संसाधनों के समुचित दोहन को विशेष रूप से प्रयास किया जाता है।

(क) स्थान विशेष में उपलब्ध पारम्परिक उद्योगों के कुशल कारीगरों की पहचान करना।

(ख) घरेलू उद्योगों को बढ़ावा देने के लिए स्थानीय कार्यक्रम तैयार करना।

(ग) खादी, हथकरघा, हस्तकला तथा अन्य कुटीर उद्योगों को प्रोन्नत करने हेतु विशेष प्रयास।''[2]

(घ) कच्चे माल की आवश्यकताओं का इस प्रकार से निर्धारण करना कि जिसे समय पर उसका प्रदाय निश्चित किया जा सके।

(ङ) परिवर्तनशील उपभोक्ता मांग के अनुसार डिजाइन तथा उत्पादन।

(च) कारीगरों तथा शिल्पियों के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रमों का आयोजन करना।

---

1. पूर्ववत्, पृष्ठ 169
1. पूर्ववत्, पृष्ठ 171

(छ) विभिन्न कुटीर एवं लघ उद्योग के लिए ऋण दिलवाने हेतु प्रयास करना।'

(ज) विभिन्न लघु उद्योगों के कारीगरों को सही एवं समुचित मजदूरी हेतु प्रयास।

(झ) कारीगरों को बीच-बीच में नवीन तकनीकी ज्ञान हेतु प्रशिक्षण कार्यक्रम संचालित करना।

(ञ) जिला पंचायतें लघु उद्योगों की स्थानीयता का विशेष ध्यान रखेगी।

(4) सामाजिक फार्म वानिकी एवं लघु वन उत्पाद - [1]

(क) सामाजिक एवं फार्म वानिकी, वृक्षारोपण एवं रेशम उत्पादन की प्रोन्नति हेतु आवश्यक संसाधन उपलब्ध कराना।

(ख) बंजर भूमि के विकास हेतु संसाधन उपलब्ध कराना।

(ग) लघु बन उत्पाद कार्यक्रमों की प्रोन्नति एवं उनके विकास हेतु कार्यक्रमों का कुशल क्रियान्वयन।

(e) लघु उद्योगों के विकास हेतु ऋण उपलब्ध कराना

उत्तर प्रदेश क्षेत्र पंचायत, जिला पंचायत अधिनियम 1994 में यह सामान्य प्रावधान किया गया कि कोई भी पंचायती राज संस्था तत्समय प्रवृत्त किसी विधि के उपबन्धों के अधीन रहते हुए राज्य सरकार के अनुमोदन से अपने उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए सरकार से या बैंक से अन्य वित्तीय संस्था से उधार ले सकती है।[2] तथा पंचायती राज संस्था के अधीन लगने वाले लघु एवं कुटीर उद्योग धन्धों के लिए जिला पंचायत अपने उपबन्धों के अधीन क्षेत्र के अन्तर्गत स्थापित धन्धों में लोगों को ऋण वितरित स्वयं कर सकते हैं या बैंक से ऋण दिलवा सकते हैं।

फतेहपुर जिला पंचायत अपने क्षेत्र के अन्तर्गत लघु एवं कुटीर उद्योग धन्धों में लगे व्यक्तियों को सन् 2006-07 में 9.65 लाख रुपया व्यय किया गया।[3]

---

1. पूर्ववत्, पृष्ठ 74
2. भारत में स्थानीय प्रशासन - अशोक शर्मा, पृष्ठ 250
3. वार्षिक प्रतिवेदन सन् 2006-07, फतेहपुर

औद्योगिक विकास हेतु जिला पंचायतों द्वारा किये जाने वाले प्रयास[1]

औद्योगिक विकास को जिले में प्रोत्साहन देने हेतु एवं जिले के विकास को गति प्रदान करने हेतु जिला पंचायतों को कुछ उद्योग एवं वित्त सम्बन्धी अधिकार सौंपे गये हैं तथा यह आशा की जाती है कि वे अपने अधिकार एवं शक्तियों का प्रयोग करके जिले के सीमान्तर्गत लघु एवं कुटीर उद्योग धन्धों को बढ़ावा देने का प्रयास करेंगे तथा उद्योग के अनुसार उचित संसाधन एवं परिस्थितियाँ उपलब्ध करायेंगे। निम्नलिखित स्टाफ की व्यवस्था की गयी है-

(1) जिला पंचायत स्तर पर उद्योग महाप्रबन्धक जिला उद्योग केन्द्र के समस्त कार्य का अनुश्रवण करेंगे तथा जिला पंचायत के अधीन कार्यरत केन्द्रों को समुचित मार्ग दर्शन करते हुए विकास कार्यों का नियमित अनुपालन सुनिश्चित करेंगे।

(2) सहायक महाप्रबन्धक जिला उद्योग केन्द्र की व्यवस्था एवं उनका संचालन करेंगे।

(3) जिला उद्योग केन्द्र में कार्यरत सभी कर्मचारी जिला उद्योग केन्द्र से प्रशासनिक नियंत्रण में रहेंगे।

जिला पंचायत स्तर पर जिले में उद्योगों को बढ़ावा दिये जाने हेतु निम्न प्रयास किये जा सकते हैं-

(1) खादी ग्रामोद्योग बोर्ड द्वारा संचालित कार्यक्रमों एवं उनके विकास तथा प्रसार व विकास विषयक उपलब्ध इन्सैटिव अनुसार क्रियान्वयन।

(2) उत्पादन प्रशिक्षण केन्द्रों को उनकी गुणवत्ता हेतु स्थापना विषयक प्रबन्ध।

(3) ग्रामीण कुटीर उद्योग के विपणन विषयक व्यवस्था।

(4) चर्म, हथकरघा, चिकन तथा ब्रास एवं मैटल पर आधारित उद्योगों का विकास।

(5) प्रशिक्षण, संगोष्ठी, सेमिनार का उद्योगों के विकासार्थ व्यवस्था विषयक क्रियान्वयन।

(6) जिला पंचायतों में निहित अधिकारी के अनुरूप परिसम्पत्तियों तथा भवनों का रखरखाव एवं मरम्मत आदि।

---

1. पंचायती राज गाइड - I, अतिरिक्तांक - शंकरराम, ग्राम विकास प्रकाशन अलीगंज, लखनऊ, पृष्ठ 4-5

(7) स्थानीय कच्चे माल की उपलब्धता तथा संसाधनों के अनुसार उद्योगों की स्थापना पर जोर।

(8) सहकारी संगठनों तथा स्वयं सेवा समूहों को संगठित कर उद्योगों की स्थापना करना तथा उत्पादन में वृद्धि हेतु प्रयास।

(9) बीच-बीच में प्रशिक्षण शिविरों का आयोजन।

(10) नई तकनीकी के विकास हेतु योजनाओं का क्रियान्वयन तथा प्रसार।

(11) प्रशासकीय इकाइयों को समन्वित करना।

(12) स्थानीय संगठनों एवं कार्य कौशल के अनुरूप जिला योजना के अन्तर्गत नई योजनाओं को तैयार कराना एवं उनकी स्वीकृति का प्रयास।

(13) जनपद का औद्योगिक सम्भाव्यता संर्वेक्षण करना।

(14) मानव संसाधन के विकास हेतु स्वरोजगार के इच्छुक उद्यमियों का सर्वेक्षण एवं उनके लिए उपयोगी उद्योग/व्यवसाय अथवा सेवा कार्यों का अभियापन।

जिला पंचायत फतेहपुर द्वारा सन् 2007-08 के बजट हेतु अनुमानित आय

जिला पंचायत फतेहपुर कार्यालय में 16 जून, 2007 को बजट एवं विकास कार्यों के लिए बुलाई गयी बैठक में जिला पंचायत को होने वाली आय-व्यय पर चर्चा की गयी। बैठक में नौकाघाट, कर तथा शुल्क, काजी हाउस, कृषि और सम्पत्ति आदि से होने वाली आय और सामान्य प्रशासन, उगाही पर व्यय चिकित्सा एवं देशी पद्धति, स्वास्थ्य व पेंशन आदि पर होने वाले व्यय की चर्चा की गयी। सन् 2007-08 के लिए अनुमानित आय-व्यय का ब्योरा इस प्रकार पेश किया गया।[1]

अनुमानित आय-व्यय बजट (वर्ष 2007-08) एक नजर में

अनुमानित आय-व्यय बजट (वर्ष 2007-08) को विश्लेषण करने के लिए एक तालिका द्वारा स्पष्ट किया जा सकता है, जो कि निम्नवत् है-

---

1. दैनिक जागरण - 17 जून, रविवार, 2007, कानपुर संस्करण

अनुमानित आय-व्यय बजट (वर्ष 2007-08) एक नजर में

आय		व्यय	
नौका घाट	9,00,000.00	सामान्य प्रशासन	36,91,000.00
अन्य निर्माण कार्य	10,00,00,000.00	उगाही पर व्यय	21,54,000.00
कर तथा शुल्क	1,18,50,000.00	चिकित्सा एवं देशी पद्धति	7,33,630.00
काजी हाउस	65,000.00	सार्वजनिक स्वास्थ्य	3,20,390.00
		हाट बाजार तथा टीकाकरण	
दुकानें बालू मौरम	66,50,000.00	सार्वजनिक निर्माण	10,42,750.00
		अनुभाग वेतन भत्ते	
कृषि एवं तरु पालन	50,000.00	मूल निर्माण कार्य	
		(क) मरम्मत	50,000.00
		(ख) आयोजनागत	5,00,00,000.00
		शासकीय अनुदान	
प्रकीर्ण	10,55,000.00	रा. ग्रा. रो.	5,00,00,000.00
		गारंटी योजना	
ऋण	10,02,100.00	पेंशन/आनुतोषिक	30,00,000.00
प्रकीर्ण	5,00,000.00		
असाधारण तथा ऋण	60,50,000.00		
आय -	12,20,42,100.00	व्यय -	11,75,41,770.00
पूर्व शेष -	7,87,81,161.00	अन्तिम शेष -	8,32,81,491.00
योग -	**20,08,23,261.00**	**योग -**	**20,08,23,261.00**

☆☆☆

अध्याय सप्तम

अध्याय सप्तम्

जिला पंचायत फतेहपुर के समन्वयमूलक तथा परामर्शमूलक कार्य

➢ (A) *जिला पंचायत फतेहपुर की समन्वयमूलक एवं परामर्शमूलक कार्यों की पृष्ठभूमि।*

➢ (B) *समाज कल्याण एवं कमजोर वर्गों के कल्याण हेतु योजनाओं का कार्यान्वयन।*

➢ (I) *अनुसूचित जाति, जनजाति और पिछड़े वर्गों को छात्रवृत्तियाँ, वृत्तिकायें, बोर्डिंग अनुदान, पुस्तकें और अन्य उपसाधन क्रय करने के लिए अन्य अनुदान देकर शिक्षा सुविधाओं का विस्तार।*

➢ (II) *निरक्षरता उन्मूलन और साधारण शिक्षा के नर्सरी विद्यालयों, बालवाड़ियों, रात्रि विद्यालयों और पुस्तकालयों का संगठन करना।*

➢ (II) *नेत्रहीन, मूक-बधिर तथा शारीरिक रूप से विकलांग निराश्रित व्यक्तियों को उनके भरण-पोषण हेतु अनुदान स्वीकृत करने की कार्यवाही।*

➢ (C) *ग्रामीण हाटों-बाजारों का अर्जन एवं रखरखाव सम्बन्धी कार्य।*

➢ (D) *समाज सुधार सम्बन्धी क्रिया-कलाप।*

➢ (E) *विकास योजनाओं को समन्वित या एकीकृत करने का कार्य।*

➢ (F) *जिला योजना के सम्बन्ध में राज्य सरकार को परामर्श देना।*

➢ (G) *महिला एवं बाल विकास सम्बन्धी कार्य।*

➢ (H) *ग्रामीण आवास एवं पेयजल।*

➢ (I) *इन्दिरा आवास योजना।*

➢ (I) *प्रधानमंत्री ग्रामोदय योजना (ग्रामीण आवास)*

➢ (B) *पेयजल*

➢ (I) *अन्य समन्वयमूलक कार्य।*

☆☆☆

जिला पंचायत फतेहपुर के समन्वयमूलक एवं परामर्श मूलक कार्य

पंचायती राज व्यवस्था से जुड़ा महत्वपूर्ण कार्य है। उसके समन्वयमूलक एवं परामर्शमूलक कार्य तथा उसमें जिला पंचायतों की भूमिका। जिला पंचायत एक स्वशासी निकाय है जो ग्रामीण क्षेत्रों के विकास के साथ समुदाय को समन्वित एवं अन्य संस्थाओं तथा व्यक्तियों को परामर्श सम्बन्धी कार्यों का निर्वाह करती है क्योंकि जिला पंचायत में स्थानीय आवश्यकताओं को यथार्थ रूप से समझने तथा ग्रामीण व्यक्तियों को योजना निर्माण में सम्मिलित करने, निर्णय करने आदि की क्षमता का विकास करने तथा उन्हें प्रेरणा देने की क्षमता विद्यमान होती है।

उत्तर प्रदेश में जिला पंचायत का इतिहास लगभग 50 साल पुराना है। उत्तर प्रदेश क्षेत्र पंचायत एवं जिला पंचायत अधिनियम 1961 जिला पंचायतों के समन्वयमूलक एवं परामर्श मूलक कार्यों की स्पष्ट विवेचना करने में असफल रहा था। फलस्वरूप जिला पंचायतों के कार्यकर्ताओं एवं राज्य के अधिकारियों एवं राजनीतिज्ञों के मध्य ही समन्यव नहीं स्थापित हो सका। जिला पंचायतों के पास साधनों का अभाव था। राज्य सरकार का नियंत्रण और ग्रामीण सामुदायिक जीवन में दलगत राजनीति का तनावपूर्ण वातावरण भी जिला पंचायत के समन्वयमूलक एवं परामर्शमूलक कार्यों को सफलतापूर्वक कार्य संचालन में बाधक रहा है। तब तक जिला पंचायतों को इस तरह के अधिकार देने के सम्बन्ध में सोचा तक नहीं गया था। बल्कि उसे जनता तक लाभ वितरित करने वाली कार्य प्रणाली के अन्तिम प्रयास के रूप में समझा गया था। जिला पंचायत को सामुदायिक विकास के लिए आवश्यक लोकप्रिय इकाइयों के रूप में समझा गया था।

जिला पंचायतों तथा ग्रामीण विकास एवं राज्य सरकार के बीच सम्बन्धों की स्थितियाँ, इसके अनुपूरक तथा तुलनात्मक लाभों को बढ़ाने की सम्भावनाओं का आंकलन करने तथा विश्लेषण करने से इसके कार्यों की विवेचना सम्भव होगी। इसमें निर्णायक तत्वों तथा उपायों और उनके मध्य के सम्बन्धों का आंकलन किया जा सकेगा।" समन्वय एवं परामर्शमूलक कार्यों से तात्पर्य है- संसाधन, शक्ति, कुशलता, आदि का समान वितरण करना जो अधिक

शक्तिशाली है। जिसके पास अधिक संसाधन हैं वह कम शक्तिशाली है के साथ उसका बंटवारा करे।'[1] विशेष बात यह है कि इनका राज्य सरकार व ग्रामीण जनता के साथ वैधानिक अधिकारों को बिना क्षति पहुंचाये कैसे सम्भव बनाया जाय? समन्वयमूलक एवं परामर्शमूलक कार्यों की सम्भावनायें आवश्यकताओं की एकरूपता और सभ्यता पर निर्भर करती है क्योंकि 'समान उद्देश्यों में सहयोग, सहभागिता एवं समन्वय का ही नाम है।''[2] आवश्यकताओं का वर्गीकरण, संगठनात्मक एवं विकास परक इन दो क्षेत्रों में किया जा सकता है। संगठनात्मक आवश्यकता किसी की निरन्तरता और विकास को बनायें रखने से सम्बन्धित होती है। प्रत्येक संगठन की आवश्कतायें पृथक होती हैं। विकास की आवश्यकतायें उस संगठन के विकास के लक्ष्यों से जुड़ी होती है और यह आवश्यक है कि ये उद्देश्य उन संगठनों के साथ मेल खाने चाहिए।

ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में लक्ष्य प्राप्ति के लिए जिला पंचायत द्वारा दो मुख्य विधियाँ अपनायी जाती है। देखरेख व कल्याण गतिविधियाँ और परिवर्तन व विकास लाने वाली गतिविधियाँ। ये दोनों कार्य पारस्परिक रूप से भिन्न नहीं है। बहुत सी पंचायतें दोनों प्रकार के कार्य करती हैं। विभिन्न क्षेत्रों में विकास के साथ-साथ पंचायती राज संस्थाओं की भूमिका का प्रसार भी हुआ है। यह सामाजिक कल्याण, रोजगार उपलब्धि, दक्षता प्रशिक्षण, आर्थिक विकास, मानव अधिकार आदि बिन्दुओं पर भी कार्य करने लगी है। साथ ही लोगों की समझदारी व चेतना को बढ़ाने मे भी मदद करती है। जिला पंचायत उपलब्ध अवसरों के अनुसार आधार स्तर पर और कुछ प्रखण्ड जिला, राज्य और राष्ट्रीय स्तर पर कार्य करती है।

जिला पंचायत के मुख्य कार्यों में स्वच्छता एवं स्वास्थ्य सार्वजनिक निर्माण, शिक्षा तथा संस्कृति, आत्मरक्षा, स्थानीय प्रशासन, जन कल्याण, कृषि तथा वन, पशु प्रजनन, पशुपालन, ग्रामोद्योग तथा अन्य विषय निर्दिष्ट है। पंचायती राज संस्थायें समान उद्देश्यों के साथ समन्वयमूलक तथा परामर्शमूलक कार्य भी सम्पादित करती है। साधारणतया ग्रामीण सामुदायिक विकास की दृष्टि से जो सहयोग मूलक सम्बन्ध स्थापित किये जाते हैं। उसमें निम्नलिखित मूलभूत दृष्टिकोण निहित होते हैं-[3]

---

1. भारत में पंचायती राज व्यवस्था - रूपा भगलानी, आर. पी. जोशी, पृष्ठ 135
2. पूर्ववत्, पृष्ठ 135
3. पूर्ववत्, पृष्ठ 136

(1) नवीन योजनाओं और वैकल्पिक तरीकों से विकास को तथा उनके पुर्नउपयोग को अधिकाधिक गतिशील बनाने के लिए।

(2) ग्रामीण समुदाय को दी जाने वाली सेवाओं और कार्यक्रमों में सुधार लाने के लिए।

(3) इस प्रणाली में सुधारों का सूत्रपात करने के लिए।

(4) लोगों की क्षमता में सुधार लाने के लिए ताकि वे सार्वजनिक प्रणाली और सेवाओं के क्षेत्र में अपनी मांगों को शामिल कर सकें।

(5) सशक्तिकरण के लिए।

(6) समान कार्यक्रमों की पुर्नक्रियान्विति को रोकने के लिए।

उपर्युक्त दृष्टिकोण को पंचायती राज संस्थायें साधारण रूप से ध्यान में रखकर समन्वय एवं परामर्शमूलक कार्यों को सम्पादित करती है। उत्तर प्रदेश सरकार ने विभिन्न विभागों तथा सरकारों के मध्य राज्य स्तरीय समन्वय की वर्तमान स्थिति को एक प्रयोग के रूप में लिया जा सकता है। पंचायती राज संस्थाओं और विभिन्न विभागों एवं ग्रामीण जनता के बीच समन्वय स्थापित करने के लिए ये श्रृंखलायें निम्न प्रकार की है-

(1) उभयपक्षीय सम्बन्ध- [1] इसके तहत पंचायती राज संस्थायें एक निश्चित कार्य को पूरा करने की दृष्टि से शासन के साथ समझौता करती है। इस समझौते की मुख्य विशेषतायें इस प्रकार हैं-

(अ) निष्कर्षों को मापना।

(ब) लक्ष्य निश्चित करना।

(स) लागत पूर्व निर्धारित हो सकती है।

(द) काम पूरा होने पर व्यय का पुर्नभरण उम्मीदवार को देय होता है।

(2) योजनावार प्रबन्ध - [2] इस तरह की व्यवस्थाओं के तहत राज्य सरकार की योजनाओं

---

1. पूर्ववत्, पृष्ठ 136
2. पूर्ववत्, पृष्ठ 136

और कार्यक्रमों में से पंचायती राज संस्थाओं की भागीदारी का प्रावधान होता है।

(3) संस्थागत कार्य - [1] ग्रामीण जनता, सरकार एवं पंचायती राज संस्थायें दोनों की परस्पर सम्बन्ध भूमिकायें तथा कार्यों को अंजाम देते हैं। जिसका लक्ष्य विकास के लक्ष्यों की पूर्ति होता है। इस प्रकार पंचायतीराज संस्थाओं की भूमिका राज्य सरकार की पूरक होती है।

4. पारस्परिक सुविधात्मक सम्बन्ध-[2] इस प्रकार के प्रबन्ध में सरकार एवं जिला पंचायत के मध्य सीधा वित्तीय सम्बन्ध नहीं होता है।

जिला पंचायत के समन्वय एवं परामर्शमूलक कार्य भिन्न होते हैं तथा समन्वयमूलक कार्यों में जनता की भागीदारी बढ़ाने का प्रयास किया जाता है वही परामर्शमूलक कार्यों में जिला पंचायत राज्य सरकार/केन्द्र सरकार व स्थानीय संस्थाओं को उनके कार्यों के सम्बन्ध में परामर्श प्रदान करती है तथा अपने जनपद से सम्बन्धित महत्वपूर्ण आंकड़े प्रस्तुत करती है। इन संस्थाओं को पड़ने वाली प्रत्येक आवश्यकता यदि जिला पंचायत से मांग की जाती है तो वह उसकी पूर्ति करने का प्रयास करती है। फिर भी समन्वय एवं परामर्शमूलक बिन्दुओं को एक प्रयोग के रूप में क्रियान्वित कर सकते हैं। यद्यपि समन्वयात्मक प्रबन्धों में प्रारम्भिक एकरूपता दिखाई देती है किन्तु फिर भी दोनों के मध्य संघर्ष उत्पन्न होते हैं। इन संघर्षों की क्षमता को कम करने के लिए भूमिकाओं का विभाजन किया जा सकता है।

(1) इनके कार्य क्षेत्र निश्चित होने चाहिए जहां ये सभी प्रकार के कार्य करने में सक्षम हो अथवा इन क्षेत्रों की भौगोलिक स्थितियों में विभाजन हो।

(2) समन्वय एवं परामर्शमूलक कार्यों को करने की स्थितियाँ अलग-अलग हो सकती हैं जहाँ समन्वयमूलक कार्यों में समुदाय को संगठित करने और प्रेरित करने का कार्य सौंपा जाता है और साथ ही साथ नई व्यवस्था समुदाय को हस्तान्तरित की जाती है। वही परामर्शमूलक कार्यों में किन्हीं कार्यों के सम्बन्ध में परामर्श देने पर सहयोग करने का कार्य किया जाता है।

जिला पंचायत फतेहपुर की समन्वयमूलक एवं परामर्शमूलक कार्यों में पृष्ठभूमि

जिला पंचायत के लिए अपने क्षेत्रीय जनता, अधिकारी, राजनीतिज्ञों के साथ समन्वय

---

1. पूर्ववत्, पृष्ठ 136
2. पूर्ववत्, पृष्ठ 136

स्थापित करने के उद्देश्य एवं आवश्यकतायें हैं। इन सबको एक दूसरे का सहयोगी बनकर कार्य करना चाहिए न कि प्रतियोगी बनकर। क्योंकि जिला पंचायत के पास जनता का सहयोग और कार्य के अनुभव के साथ एवं प्रशासनिक सम्बल दोनो होते हैं। यह दोनों कार्यों को निम्न प्रकार से सम्पादित कर सकती है-

(1) जिला पंचायत ग्रामीण जनता के साथ गहरा लगाव बनाकर समन्वयमूलक एवं परामर्शमूलक कार्य कर सकती है।

(2) अपने कार्यक्रमों में जनता की सक्रिय भागीदारी सुनिश्चित करके जिला पंचायत अपने कार्यों को सम्पादित कर सकती है जो जिला पंचायत का प्रमुख आधार है।

(3) कार्यक्रम की क्रियान्विति में अपने क्षेत्रीय सदस्यों का सहयोग प्राप्त कर सकती है।

(4) समन्वयमूलक कार्य एवं परामर्शमूलक कार्य में उनकी नई योजनाओं का परीक्षण तथा उनकी क्रियान्विति का विस्तार कर सकते हैं।

(5) जिला पंचायत परामर्शमूलक कार्यों के अन्तर्गत तकनीकी सलाह दे सकते हैं।

जिला पंचायत की विकास की व्यूह रचना के बतौर भी समन्वय के नये क्षेत्रों की तलाश करनी चाहिए क्योंकि अभी तक ऐसे क्षेत्र बहुत कम हैं जिनका विदोहन नहीं किया जा सकता है। 'ऐसे कार्यक्रम जिनमें ग्रामीण समुदाय की सघन भागीदारी आवश्यक है अथवा सुदूर क्षेत्रों में संचालित होने वाले कार्यक्रमों की निगरानी करना भी समन्वय के अन्तर्गत आता है।'[1] जिला पंचायत को छोटे स्थानीय निकाय की संस्थाओं की मदद भी करनी चाहिए।

यदि पंचायती राज संस्थाओं को उनके उद्देश्यों तक पहुंचाना है- तो उसे नये जन अभियान का रूप देने की आवश्यकता है जो परामर्श एवं समन्वयमूलक कार्यों को सम्पादित करके इसकी प्राप्ति भी की जा सकती है। गांधी जी के शब्दों में यह "लाखों गाँवों में सत्ता बिखेरने का कार्य है इसमें सबका सहयोग और नेतृत्व होना चाहिए। साथ ही साथ संस्थाओं की भरपूर मदद लेनी चाहिए।

भागीदारी के रूप में पंचायती राज संस्थाओं के बीच समन्वयमूलक एवं परामर्शमूलक कार्यों के सम्बन्ध की तार्किकता, जन विकास कार्यक्रमों की अवधारणा के विकास, नियोजन

---

1. पूर्ववत्, पृष्ठ 141

एवं क्रियान्वयन में प्रत्येक भागीदार की खूबियाँ एवं खामियां वस्तुनिष्ठ समझ पर आधारित होनी चाहिए। यह सम्बन्ध इस मान्यता पर भी आधारित होनी चाहिए। एक भागीदार दूसरे के मुकाबले सत्ता और शक्ति का प्रतिद्वन्द्वी केन्द्र न होकर उसका पूरक हो और उसे बल पहुंचाता हो।

यह तो स्पष्ट है कि समन्वय एवं परामर्शमूलक सम्बन्ध केवल विचारधारा ही नहीं है। यह ग्रामीण विकास की गति को तेज करने के लिए एक सामाजिक गतिविधि है। इस क्षेत्र में और अधिक अनुसन्धान और चिन्तन करने से सहयोगमूलक सम्बन्ध के विचारकों, विकासशील ग्रामीण समाज द्वारा जनतांत्रिक समाज के प्रभावशाली अस्त्र के रूप में विकसित करने के लिए पुष्ट और सुस्पष्ट किया जा सकता है।

जिला पंचायत फतेहपुर अपने परामर्शमूलक एवं समन्वयमूलक कार्य निम्नलिखित योजनाओं और कार्यक्रमों के अन्तर्गत सम्पादित करती है-

1. समाज कल्याण एवं कमजोर वर्गों के कल्याण हेतु योजनाओं का कार्यान्वयन

उत्तर प्रदेश क्षेत्र पंचायत एवं जिला पंचायत अधिनियम 1994 के अन्तर्गत फतेहपुर जिला पंचायत अपने क्षेत्र में समाज के कल्याण विशेषतया कमजोर वर्गों के कल्याण कार्यक्रम संचालित करती है। जिसके लिए उत्तर प्रदेश शासन ने समाज कल्याण विभाग की स्थापना कर रखी है। जो राज्य/किन्द्र सरकार द्वारा अनुसूचित जाति, जनजाति, पिछड़ा वर्ग तथा समाज के अन्य गरीब वर्गों से सम्बन्धित कार्यों का संचालन करता है तथा यह जिले में जिला पंचायत के अधीन होता है। जिला पंचायत इसके माध्यम से अपने निर्वाचन क्षेत्र में रहने वाले समाज के कमजोर वर्गों के कल्याण हेतु इस विभाग को परामर्श तथा समन्वय प्रदान करती है जिससे जनता को सरकार की लाभकारी योजनाओं का फायदा प्राप्त होता है। जिला पंचायत एक निर्वाचित निकाय होता है अर्थात् जनता के साथ गहरे सम्बन्ध होते हैं और निर्वाचित प्रतिनिधि अपने क्षेत्र की जनता के विकास एवं समृद्धि में रुचि रखते हैं जिससे कल्याणकारी योजनायें सीधे जनता के द्वार तक पहुंच जाती है। समाज के अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति, पिछड़ा वर्गों के कल्याण हेतु जिला पंचायत फतेहपुर योजनाओं का निर्माण करती है। उनका क्रियान्वयन, मार्ग दर्शन, पर्यवेक्षण एवं मूल्यांकन का भी कार्य करती हैं। जिला पंचायत फतेहपुर समाज कल्याण एवं कमजोर वर्गों के विकास हेतु निम्नलिखित कार्य करती है-

(क) अनुसूचित जतियों, अनुसूचित जनजातियों और पिछड़े वर्गों को छात्रवृत्तियाँ, वृत्तिकायें,

बोर्डिंग अनुदान, पुस्तकें और अन्य उपसाधन क्रय करने के लिए अन्य अनुदान देकर शिक्षा सुविधाओं का विस्तार-[1] संविधान के 73वें संविधान संशोधन के फलस्वरूप सत्ता के विकेन्द्रीकरण हेतु पंचायत व्यवस्था को सुदृढ़तर बनाये रखने के उद्देश्य से ग्रामीण क्षेत्रों के प्राथमिक एवं माध्यमिक विद्यालयों की कक्षा 1-8 तक की छात्रवृत्ति वितरण प्रक्रिया में जिसमें राजकीय विद्यालय के अतिरिक्त मान्यता प्राप्त, 'अशासकीय विद्यालय भी सम्मिलित होंगे तथा कक्षा 1-8 तक की समस्त छात्रवृत्तियों का वितरण जिला पंचायत द्वारा कराया जायेगा तथा समस्त छात्रवृत्ति प्राप्त करने वाले लाभार्थी छात्रों की सूची समाज कल्याण विभाग जिला पंचायत को उपलब्ध करायेगा।

छात्रवृत्ति का विवरण[2]

वर्ष	जाति	दी गयी कुल धनराशि 300 x 1 लाख में	
2004	अनुसूचित जाति	-	141509
2005	जनजाति	-	
पिछड़ा वर्ग	-	-	203002
अल्पसंख्यक	-	-	19318

वर्तमान व्यवस्था में निर्धारित प्रक्रिया पूर्ण करते हुए छात्रों की सूची तय करते हुए तथा देय धनराशि को निर्धारित करते हुए इससे सम्बन्धित चेक जिला स्तर से सम्बन्धित विद्यालय के प्रधानाध्यापक को छात्रवृत्ति वितरण हेतु दिये जाने की व्यवस्था है। संशोधित प्रक्रिया के अनुसार अब यह चेक प्रधानाध्यापक को न उपलब्ध करायी जाती है तथा ग्राम पंचायतों को ग्राम निधि में ग्राम पंचायत से सम्बन्धित विद्यालयों के वृत्तिकायें, बोर्डिंग अनुदान एवं पुस्तकें क्रय हेतु अनुदान समाज कल्याण विभाग द्वारा दिया जाता है।

(ख) निरक्षरता उन्मूलन और साधारण शिक्षा के नर्सरी विद्यालयों बाल बाड़ियों, रात्रि विद्यालयों और पुस्तकालयों का संगठन करना

जिला पंचायत समाज कल्याण विभाग के अन्तर्गत जनपदम में व्याप्त निरक्षरता को मिटानेनर्सरी विद्यालयों की स्थापना, बाल बाड़ियों की स्थापना, रात्रि विद्यालयों की स्थापना,

---

1. शासनादेशों का संगठन - पंचायती राज विभाग उत्तर प्रदेश शासन सन् 1999, पृष्ठ 174
2. सांख्यिकी पत्रिका वर्ष 2005-06 फतेहपुर संख्याधिकारी कार्यालय, पृष्ठ 29

पुस्तकालयों की स्थापना का कार्य करती है। किन्तु फतेहपुर जिला पंचायत सिर्फ निरक्षरता उन्मूलन की दिशा में कार्य कर रही है। बाकी अन्य विषयों में उसके कार्य नगण्य कहे जा सकते हैं। जिला पंचायत के अन्तर्गत न तो कोई रात्रि विद्यालय, न कोई पुस्तकालय या रात्रि विद्यालय ही संचालित किये जा रहे हैं।

(ग) अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों, पिछड़े वर्गों को कुटीर एवं ग्रामीण उझोगों में प्रशिक्षण देने के लिए आर्दश कल्याण केन्द्रों व शिल्प केन्द्रों का संचालन किया जा रहा है जो साधारण ग्रामीण रोजगार भी प्रदान करने का कार्य करता है।

(घ) अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति, पिछड़ा वर्गो के कल्याण हेतु सरकारी समितियो का गठन किया जाता है जो इन वर्गो के कल्याण हेतु कार्य करती है।

(ङ) समाज कल्याण विभाग द्वारा समाज के इन कमजोर वर्गो के लिए योजनाये बनायीं जाती हैं तथा उनका पर्यवेक्षण एवं मार्गदर्शन किया जाता हैं। गरीबी उन्मूलन कार्यक्रमों की योजनाओं का निर्माण, पर्यवेक्षण मूल्यांकन एंव क्रियान्वयन किया जाता है।

(च) समाज कल्याण विभाग के द्वारा ही वृद्धावस्था, पेंशन दी जाती है । वृद्धावस्था पेंसन योजना के अन्तर्गत वितरित की जाने वाली धन राशि के वितरण पर ग्राम पंचायतों का प्रभावशाली नियंत्रण रखा जाता है । जिससे इसका लाभ केवल पात्र व्यक्ति को ही मिल सके और अपात्र लोग और बिचौलिये इस योजना की धनराशि का व्ययहरण न कर सके । वृद्धावस्था पेंशन पाने वाली व्यक्तियों की ग्राम वार सूची बना ली जाती है। जिसे समय - समय पर अध्यावधिक किया जाता रहे तथा राष्ट्रीय सामाजिक सहायता कार्यक्रम तथा प्रदेश सरकार की वृद्धावस्था, किसान पेंशन योजना के लाभार्थियों का विवरण बनाकर जिला पंचायतों को सूची उपल्बध करायी जाये। किसी लाभार्थी की मृत्यु होने पर पात्र लाभार्थी का नाम सूची में सम्मिलित कर लिया जाता है। [1]

(छ) नेत्रहीन, मूक बधिर तथा शारीरिक रूप से विकंलाग निराश्रित व्यक्तियों को उनके भरण पोषण हेतु अनुदान स्वीकृत करने की कार्यवाही -

'जिला पंचायत के अन्तर्गत समाज कल्याण विभाग द्वारा संचालित इस योजना का मुख्य उद्देश्य नेत्रहीन, मूक बधिर तथा शारीरिक रूप से विकलांग निराश्रित पुरुष /महिला जो

---

1. पूर्ववत् पृ - 155

बाधित होने के कारण किसी प्रकार का परिश्रम नहीं कर सकते है। न उनका कोई आर्थिक स्रोत है। न ही किसी व्यक्ति के आश्रय पर रहते है। ऐसे व्यक्ति को भरण पोषम के लिए अनुदान की सहायता देना है।''[1] ऐसे अक्षम व्यक्ति जो उत्तर प्रदेश के निवासी है और प्रार्थना पत्र प्रस्तुत करने को तिथि से एक वर्ष से अवधि से उत्तर प्रदेश में निवास कर रहे हो वे अनुदान प्राप्त करने के पात्र होंगे किन्तु कोई विस्थापित व्यक्ति जो किसी दूसरे राज्य से उत्तर प्रदेश में आकर तीन मास से अधिक समय से बस गया है। अनुदान का पात्र होगा।

इस योजना के अन्तर्गत निम्न श्रेणियों के निराश्रित व्यक्तियों को अनुदान की सहायता प्रदान की जाती है -

(क) नेत्रहीन।

(ख) मूक-बधिर।

(ग) शारीरिक रूप से विकलांग।

स्पष्टीकरण

(i) पत्नी के जीवित होने से किसी व्यक्ति को अनुदान पाने के लिए तब तक अयोग्य समझा जायेगा जब तक ग्राम पंचायत से जांच कराकर सन्तुष्ट न हो जाय की पत्नी की आय अपने पति के निर्वाह के लिए आवश्यक है।

(ii) सौतेले पुत्र को पुत्र नहीं समझा जायेगा।

(iii) जहां पति और पत्नी 65 वर्ष से अधिक आयु के हैं। पति या पत्नी के अनुदान के पात्र होंगे। यदि उनका कोई पुत्र या पुत्र का पुत्र जीवित नहीं है।

(iv) यदि प्रार्थी पागल है या विक्षिप्त है तो उसके अधिकारी अभिभावक नियुक्त करेंगे और ग्राम पंचायत द्वारा नामांकित अभिभावक को अनुदान दिया जा सकता है। यदि अभिभावक इस आशय का अनुबन्ध करे कि वह पागल व्यक्ति का पोषण करेंगे।

(v) 1000 रुपया प्रति मास तक गरीबी रेखा के नीचे आय वाला प्रार्थी है, अनुदान के अयोग्य नहीं समझा जायेगा।

---

1. पंचायतों को सौंपी गयी योजनायें - एक परिचय, पंचायती राज विभाग, उत्तर प्रदेश, पृष्ठ 131

(B) ग्रामीण हाटों बाजारों का अर्जन, रखरखाव

जिला पंचायत अपने प्रादेशिक निर्वाचन क्षेत्र के अन्तर्गत हाटों, बाजारों जिनमें पशु बाजार भी सम्मिलित है, का अर्जन एवं रखरखाव का कार्य भी करती है। राज्य सरकार द्वारा तदर्थ बनाये गये किसी नियम के अधीन रहते हुए जिला पंचायत किसी ऐसे हाट, बाजार में जो उसके द्वारा स्थापित किया गया हो या जिसका वह अनुरक्षण या प्रबन्ध करती हो उसमें निम्नलिखित शुल्कों, पथकरों को आरोपित कर सकती है -

(1) व्यवसाय करने वाले लोगों पर लाइसेन्स शुल्क।

(2) बाजार में आने वाले सामानों पर तथा सामान ढोने वाले पशुओं एवं कुलियों, गाड़ियों पर पथ कर।

(3) इमारत संरचना के रुायोग क्रने पर बाजार शुल्क।

(4) ऐसे बाजारों में बेचे जाने वाले पशुओं की रजिस्ट्री पर शुल्क।

(5) जिला पंचायत द्वारा स्वीकृत लाइसेन्स के बिना या इस प्रकार स्वीकृत लाइसेन्स की शर्तों के अनुसरण से अन्यथा किसी स्थान को हाट, बाजार व बधशाला के रूप में अथवा मानव भोजन के लिए अभिप्रेत पशुओं या मांस-मछली के विक्रय के लिए बाजार या दुकान के रूप में प्रयोग करने पर शुल्क तथा उस स्थान को उस प्रयोग के अनुसार लाइसेन्स का नियमन।

(6) बाजारों हाटों, अश्वशालाओं, शिविर-भूमियों, सरायों, आटा चक्की के लिए स्थानों अथवा विक्रय या किराये के लिए पशुओं को अथवा ऐसे पशुओं को जिनसे प्राप्त पदार्थ बेचे जाते हैं, रखने या प्रदर्शित करने के लिए प्रयुक्त किये जाने वाले स्थान को तथा सार्वजनिक मनोरंजन या समागम के स्थानों की स्थापना के लिए और उसके विनियमन तथा निरीक्षण के लिए व्यवस्था करना।

(7) शर्तें जिनके अधीन तथा परिस्थितियाँ जिनमें और क्षेत्र या स्थान जिनके सम्बन्ध में ऐसे प्रयोग के लिए लाइसेन्स स्वीकृत, अस्वीकृत या निलम्बित किये जा सकते हैं या वापस लिये जा सकते हैं। नियत करना।

---

1. उत्तर प्रदेश क्षेत्र पंचायत, जिला पंचायत अधिनियम, 1961, पृष्ठ 73

(8) शर्तें जिनके अधीन तथा परिस्थितियां जिनमें और क्षेत्र या स्थान जिसके सम्बन्ध में लाइसेन्स स्वीकृत, अस्वीकृत या निलम्बित किया जा सके या वापस लिये जा सकें, नियत करना तथा ऐसे लाइसेन्स के लिए देय शुल्क निश्चित करना।

(C) समाज सुधार सम्बन्धी क्रिया कलाप

जिला पंचायत फतेहपुर समन्वयमूलक एवं परामर्शमूलक कार्यों के अन्तर्गत समाज सुधार सम्बन्धी कार्यक्रमों का क्रियान्वयन करती है जो समाज में विभिन्न उत्पन्न करने वाले कारकों को नष्ट या समाप्त करके एकरूपता लाने का प्रयास करता है। चाहे यह विभिन्न जातिगत हो, धर्म गत हो, भाषागत व शारीरिक हो। समाज सुधार सम्बन्धी निम्नलिखित क्रियाकलाप जिला पंचायत फतेहपुर द्वारा संचालित किये जा रहे है-

(i) महिला संगठन और कल्याण

(ii) बाल संगठन एवं कल्याण

(iii) स्थानीय आवारागर्दी का निवारण।

(iv) विधवा, वृद्ध, शारीरिक रूप से निःशक्त निराश्रितों के लिए पेंशन और बेरोजगारी व अन्तर्जतीय विवाह के युगलों (जिनमें से एक से एक सदस्य अनुसूचित जाति या जनजाति) का हो के लिए यंत्रों की जल्दी मंजूरी और वितरण की मानीटरिंग करना।

(v) अग्नि नियंत्रण।

(vi) अन्ध विश्वास, जातिवाद, छुआछूत, नशाखोरी, खर्चीले विवाह और सामाजिक समारोह दहेज तथा दिखावटी उपभोग के विरुद्ध अभियान।

(vii) सामुदायिक विवाह और अन्तर्जातीय विवाहों को प्रोत्साहित करना।

(viii) आर्थिक अवरोधों जैसे तस्करी, करवंचन, खाद्य अपमिश्रण के विरुद्ध सतर्कता।

(ix) भूमिहीन श्रमिकों को सौंपी गयी भूमि का विकास करने में सहायता।

(x) जनजातियों द्वारा अन्य संक्रमित भूमियों का पुर्नग्रहण।

(xi) बन्धुओं मजदूरों की पहचान करना उन्हें मुक्त करना और उनका पुर्नवास।

(xii) सांस्कृतिक और मनोरंजन क्रिया कलापों का अयोजन करना।

(xiii) खेलकूद और खेलों को प्रोत्साहन तथा ग्रामीण स्टेडियमों का निर्माण, पारम्परिक उत्सवों को नया रूप देना और उन्हें समाजप्रिय बनाना तथा

(15) निम्नलिखित के माध्यम से मितव्ययिता और बचत की प्रोन्नति करना।

(i) बचत की आदतों की प्रोन्नति।

(ii) अल्प बचत अभियान।

(iii) कूट साहूकारी प्रथाओं और ग्रामीण ऋणग्रस्तता के विरुद्ध लड़ाई।[1]

(i) महिला संगठन और कल्याण कार्यक्रम

कल्याण कार्यक्रमों की निश्चित परिभाषा नहीं दी जा सकती है क्योंकि यह देश के आर्थिक विकास, सामाजिक व्यवस्था, नैतिक मूल्यों और औद्योगीकरण के अनुसार बदलती रहती है। भारत की जनगणना 2001 के अनुसार भारत में महिला जनसंख्या 49-58 करोड़ थी। स्पष्ट है कि समाज के इतने बड़े भाग की उपेक्षा करके हम प्रगति नहीं कर सकते हैं। भारतीय समाज में महिलाओं की प्रास्थिति समय-समय पर परिवर्तित होती रहती है। प्राचीन काल में भारतीय महिलाओं की स्थिति बहुत उन्नत रही थी। उन्हें शक्ति, ज्ञान, सम्पत्ति का प्रतीक माना जाता था। हमारे समाज में पुरुष के बिना स्त्री को स्त्री के बिना पुरुष को अपूर्ण माना जाता है किन्तु बाद में स्त्रियों की स्थिति बहुत दयनीय हो गयी। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद समाज सुधार कार्यक्रमों और कुछ समाज सुधारकों के भगीरथ प्रयासों के बाद महिलाओं की स्थिति में कुछ सुधार आया है तथा भारतीय संविधान में महिलाओं की स्थिति को सुधारने के लिए बहुत से साधन उपलब्ध किये गये हैं। इनका परिणाम आशाजनक रहा है क्योंकि वर्तमान समय में महिलायें पुरुषों के समान ही जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में प्रगति कर रही हैं। भारतीय संविधान के अनुच्छेद 15 के अनुसार 'महिलाओं और बच्चों के कल्याण के लिए विशेष व्यवस्था की गयी है जिसके अनुसार उनके विकास, उत्थान और कल्याण के लिए धर्म, मूल वंश, जाति, लिंग, जन्म स्थान के आधार पर विभेद किया जा सकता है।'[2] क्योंकि वह

---

1. पंचायती राज व्यवस्था - एक दर्शन, किसान सेवा समिति उत्तर प्रदेश, पृष्ठ 128, 129

2. भारतीय संविधान - अनुच्छेद 15

शारीरिक, मानसिक रूप से, आर्थिक दृष्टियों से पुरुषों के समान नहीं हो सकती है। अतः उनका संरक्षण और कल्याण जनहित का कार्य हो जाता है।

(I) महिला कल्याण सम्बन्धी कार्य - स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद महिलाओं की स्थिति में सुधार हेतु सरकारों द्वारा अनेक महत्वपूर्ण कदम उठाये गये हैं जिनका क्रियान्वयन पर्यवेक्षण एवं निरीक्षण आदि जिला पंचायत द्वारा किया जाता है। महिलाओं को पुरुषों के समान अधिकार दिये गये हैं। महिलाओं की सामाजार्थिक समीक्षा को ध्यान में रखकर कई उल्लेखनीय कदम उठाये गये हैं। महिलाओं के उत्थान हेतु राष्ट्रीय कार्य योजना भी बनायी गयी है जिसमें महिलाओं की सहभागिता एवं सशक्तीकरण के विभिन्न पहलुओं को भी सम्मिलित किया गया है। महिला कल्याण एवं विकास से सम्बन्धित जिला पंचायतों द्वारा अपने अधीन विभागों के तहत निम्नलिखित योजनायें क्रियान्वित की जा रही हैं -

(1) शिक्षा के क्षेत्र में प्रगति पर कार्य - जिला पंचायतों द्वारा महिला शिक्षा हेतु विशेष प्रयास किये जा रहे हैं। महिला शिक्षा हेतु विशेष बालिका प्राथमिक एवं उच्च प्राथमिक विद्यालय स्थापित किये जा रहे हैं तथा यह प्रयास किया जा रहा है कि महिलायें शत प्रतिशत विद्यालयों में नामाङ्कन करायें जिसके लिए छात्रवृत्ति, ड्रेस, भोजन आदि की विद्यालयों में व्यवस्था की जा रही है। फतेहपुर जिला पंचायत द्वारा बालिका शिक्षा एवं उच्च प्राथमिक विद्यालय भी स्थापित किये जा रहे हैं। सन् 2005-06 तक 220 बालिका उच्च प्राथमिक विद्यालय फतेहपुर में स्थापित किये जा चुके है।[1]

क्रम सं.	वर्ष	प्राथमिक विद्यालय	उच्च प्राथमिक विद्यालय	बालिकाओं की संख्या प्राथ. विद्यालय	उ. प्राथ. विद्यालय
1	2004-05	2117	576	167408	51415
2	2005-06	2187	686	188508	52428

(2) स्वास्थ्य सेवायें और सुविधायें - महिलाओं के स्वास्थ्य सम्बन्धी कार्यक्रम भी जिला पंचायतों द्वारा विशेष रूप से संचालित किये जा रहे हैं। इनमें मातृत्व एवं शिशु कल्याण केन्द्रों की स्थापना अत्यन्त प्रमुख है। मातृत्व लाभ योजना के अन्तर्गत गरीबी रेखा से नीचे जीवन यापन करने वाली 19 वर्ष से अधिक उम्र की महिलाओं को दो बच्चों के जन्म पर आर्थिक

---

1. सामाजार्थिक समीक्षा सन् 2006-07, पृष्ठ 25

सहायता और प्रसव के 8 से 12 सप्ताह पहले 300 रु. किश्त के रूप में प्रदान किये जाते हैं। 'फतेहपुर जनपद के अन्तर्गत 15 प्रमुख एवं 324 मातृत्व लाभ एवं शिशु कल्याण केन्द्र संचालित किये जा रहे हैं।'[1]

(3) व्यवसायिक प्रशिक्षण कार्यक्रम - जिला पंचायत फतेहपुर द्वारा समय-समय पर महिलाओं को व्यवसायिक प्रशिक्षण कार्यक्रम संचालित किये जाते हैं जिनमें कुटीर एवं ग्रामीण उद्योगों का प्रशिक्षण देकर उन्हें रोजगार के अवसर उपलब्ध कराये जाते हैं। सिलाई प्रशिक्षण, आचार मुरब्बा आदि बनाने का प्रशिक्षण, मोमबत्ती, अगरबत्ती बनाने का प्रशिक्षण तथा अन्य घरेलू कुटीर उद्योंगों का प्रशिक्षण दिया जाता है।

(4) अन्य कल्याण कार्यक्रम - जिला पंचायत द्वारा ग्रामीण महिलाओं के कल्याण हेतु अनेक सरकारी कार्यक्रम चलाये जा रहे हैं जिनमें ग्रामीण महिला शिशु विकास कार्यक्रम, समेकित बाल विकास सेवा, जवाहर रोजगार योजना, ट्राईसेम, स्वर्ण जयन्ती ग्राम स्वरोजगार योजना, विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनेक कार्यक्रम व्यवहारिक पोषाहार कार्यक्रम अवार्ड प्रमुख हैं। महिलाओं के साथ घरेलू हिंसा की रोकथाम और उनके प्रति अत्याचारों अपराधों की जांच और रोकथाम के समाधान में सक्रिय भूमिका निभाती है।

महिलाओं की स्थिति को सुधारने के लिए जिला पंचायत द्वारा किये गये प्रयत्न

जिला पंचायत द्वारा महिलाओं की स्थिति सुधारने, उनकी समस्याओं का समाधान करने और उन्हें शिक्षित, प्रशिक्षित करने और समाजोपयोगी बनाने की दृष्टि से महिला कल्याण से सम्बन्धित अनेक प्रयास किये गये हैं, जो इस प्रकार हैं-[2]

(1) जिला पंचायत फतेहपुर द्वारा अनेक महिला कल्याण कार्यक्रमि संचालित किये जा रहे हैं।

(2) स्त्रियों की दशा सुधारने हेतु मातृत्व लाभ एवं शिशु कल्याण केन्द्रों की स्थापना की गयी है।

(3) समय-समय पर व्यवसायिक प्रशिक्षण कार्यक्रम संचालित किये जाते हैं।

---

1. पूर्ववत्, पृष्ठ 27
2. समाज शास्त्र - डॉ. ओ. पी. वर्मा, पृष्ठ 128, 129

(4) महिला शिक्षा हेतु विभिन्न स्तरों पर महिला विद्यालयों की स्थापना की गयी है।

(5) महिलाओं के आवास हेतु महिला हास्टल स्थापित किये गये हैं।

जिला पंचायत फतेहपुर के द्वरा राज्य/केन्द्र सरकार द्वारा प्रायोजित एवं अनुदानित योजनाओं का संचालन किया जा रहा है। महिलाओं के हितों की सुरक्षा हेतु निम्नलिखित कार्य योजनायें प्रस्तुत की गयी हैं।'[1]

(1) महिलाओं के लिए कल्याण कार्यक्रम संचालित किये जा रहे हैं।

(2) रोजगार एवं प्रशिक्षण कार्यक्रम।

(3) स्वयं सिद्धा योजना।

(4) सामाजिक-आर्थिक कार्यक्रम

(5) बालिका समृद्धि योजना

(6) स्वशक्ति परियोजना

(7) विस्थापित परिवारों की असहाय एवं वृद्ध महिलाओं को आवासीय सुविधायें।

(II) बाल कल्याण कार्यक्रम - बालक/बालिकायें ही राष्ट्र के कर्णधार होते हैं, उनके समुचित पालन-पोषण, शिक्षा, स्वास्थ्य आदि का दायित्व बहुत कुछ समाज पर निर्भर करता है। बच्चों की दयनीय स्थिति को देखते हुए केन्द्र /राज्य सरकार व स्थानीय संस्थाओं ने बाल कल्याण हेतु विभिन्न कार्यक्रम एवं योजनायें निर्धारित की। जिला पंचायतों द्वारा निम्नलिखित प्रयास किये जा रहे हैं।[2]

(1) सामाजिक दृष्टि से विकलांग बच्चों की देखरेख हेतु तथा संरक्षण एवं पुर्नवास हेतु संस्थाओं का संचालन।

(2) चर्म एवं क्षय रोग से पीड़ित बच्चों हेतु अस्थायी गृहों की व्यवस्था।

(3) शिशु गृह, बालवाड़ी, नर्सरी/प्राथमिक विद्यालयों एवं बच्चों के देखरेख हेतु

---

1. पूर्ववत्, पृष्ठ 129, 130
2. पूर्ववत्, पृष्ठ 139, 140

दिवसाकालीन केन्द्रों की स्थापना।

(4) निम्न आय वाले लोगों के बच्चों के लिए मनोरंजनात्मक सांस्कृतिक केन्द्रों और अवकाशकालीन केन्द्रों की स्थापना।

(5) मानसिक रूप से पिछड़े एवं अधिक समय से बीमार चल रहे बच्चों के लिए विशिष्ट स्कूल एवं आवासीय संस्थाओं की व्यवस्था।

(6) बाल स्वास्थ्य केन्द्रों की स्थापना।

(7) बाल परामर्श क्लीनिक की व्यवस्था।

(8) बेसहारा/अनाथ बच्चों के लिए समन्वित कार्यक्रम।

(9) किशोरी शक्ति योजना का निर्माण।

(10) राष्ट्रीय बाल आयोग की स्थापना।

(11) बाल पोषण एवं शिक्षा की व्यवस्था हेतु शिशु सदनों की स्थापना आदि।

(III) स्थानीय आवारागर्दी का निवारण - जिला पंचायत उपविधियों का निर्माण करके किसी स्थान विशेष में आवारागर्दी करने वाले व्यक्तियों को दण्डित कर सकती है तथा विशेष समय में ग्राम पंचायतों की सुरक्षा हेतु गांव के नागरिकों के विशेष सहयोग से रात्रि के समय आवारागर्दी से रक्षा हेतु जागरण की व्यवस्था कर सकती है तथा ग्राम पंचायत के चौकीदार को यह निर्देश दे सकती है कि वह आवारागर्दी करने वाले वाले तथा उसके संरक्षणदाताओं के विषय में स्थानीय प्रशासन को सूचित करे। हाटों, बाजारों में आवारागर्दी को रोकने के लिए आवारा लोगों का चिन्हांकन कर प्रवेश वर्जित कर सकती है या पूर्व से वहां पर प्रशासन की व्यवस्था भी कर सकती है।

वर्ष	पेन्शन	कुल संख्या	धनराशि 150x1 लाख में
2004-05	वृद्धावस्था } किसान	25611	379230000
	विधवा	8655	1559400

(IV) विधवा, वृद्ध, शारीरिक रूप से निशक्त निराश्रितों के लिए पेन्शनों की, बेरोजगारों, अन्तर्जातीय विवाहों के युगलों की जिनमें से एक अनुसूचित जाति या जनजाति का सदस्य हो के लिए भत्ते की मंजूरी और वितरण की देखभाल करना- जिला पंचायत के द्वारा अपने अधीनस्थ विभागों के माध्यम से विधवा, वृद्ध एवं शारीरिक रूप से निःशक्त निराश्रितों को पेन्शन योजना के अन्तर्गत 150 रुपये प्रति माह की दर से पेन्शन दी जाती है तथा अन्तर्जातीय विवाह करने वाले युगलों को जिनमें से एक हरिजन की परिभाषा के अन्तर्गत आता है तो सरकार द्वारा प्राप्त अनुदान उस युगल को सहायता के रूप में अन्तर्जातीय विवाहों के प्रोत्साहन हेतु प्रदान किया जाता है। इन सब योजनाओं के कुशल संचालन की देखरेख की जिम्मेदारी जिला पंचायत पर आश्रित है क्योंकि यह एंक निर्वाचित निकाय है। जनता की सीधी सहभागिता होने से जनता के सात बराबर सम्बन्ध बने रहते हैं।

(V) अग्नि नियंत्रण - जिला पंचायत ग्रामीण स्थानीय निकाय है। ग्रामों में लगभग कच्चे आवास पाये जाते हैं और उनमें अग्नि जल्दी लगने और फैलने के आसार बने रहते हैं। अतः जिला पंचायत अग्नि नियंत्रण हेतु निम्नलिखित प्रयास करती है -

(क) फतेहपुर जिला पंचायत द्वारा अग्नि नियंत्रण हेतु तीन अग्नि शमन केन्द्रों की स्थापना की गयी है। जहां पर अग्नि नियंत्रण वाहन एवं अग्नि शमन कर्मी निरन्तर रूप से बन रहते हैं और सूचना पर तत्काल क्रियाशील होते हैं।

(ख) अग्नि नियंत्रण हेतु ग्रीष्म काल में नुक्कड़ नाटकों एवं शिविरों के माध्यम से जन जाग्रति हेतु प्रयास।

(ग) अग्नि नियंत्रण हेतु संसाधनों की जानकारी प्रदान करने हेतु विशेष शिविर।

(घ) अग्नि नियंत्रण एवं विशेष परिस्थितियों हेतु जिला स्तर पर समिति का गठन।

(ङ) अग्नि से नष्ट हुए गांवों के नागरिकों हेतु सहायता कार्य तथा उनके लिए आवास, भोजन व कपड़ों की तुरन्त व्यवस्था।

(VI) अन्ध विश्वास, जातिवाद, छुआछूत, नशाखोरी, खर्चीले विवाह और सामाजिक समारोहों, दहेज तथा दिखावटी उपभोग के विरुद्ध अभियान चलाकर ऐसी सामाजिक कुरीतियों के खिलाफ लोगों में जन जाग्रति पैदा करना।

(VII) सामुदायिक विवाह अन्तर्जातीय विवाहों को प्रोत्साहन

जिला पंचायत सामुदायिक विवाह तथा अन्तर्जातीय विवाहों को प्रोत्साहन प्रदान करती है। समय-समय पर जिला पंचायत फतेहपुर सामुदायिक विवाहों का आयोजन करती है जिसमें गरीब घरों की लड़कियों के विवाहों को दहेज रहित सम्पन्न कराकर उनको उचित उपहार प्रदान करते हैं तथा अन्तर्जातीय विवाह करने वाले युगलों को प्रोत्साहन राशि प्रदान की जाती है।

(VIII) आर्थिक अपराधों के विरुद्ध सतर्कता - जिला पंचायत फतेहपुर अपने प्रादेशिक निर्वाचन क्षेत्र के अन्तर्गत होने वाले आर्थिक अपराधों पर भी स्पष्टतया नजर रखती है तथा आर्थिक अपराध करने वाले व्यक्ति को दण्ड का प्रावधान भी करती है। आर्थिक अपराधों में तस्करी, कर वंचन, खाद्य अपमिश्रण आदि है।

जिला पंचायत फतेहपुर तस्करी के मामले में मछली घाटों से चोरी से मछली बेचने तथा विभिन्न जंगली जानवरों के अंगों व चर्बी आदि की तस्करी पर पूर्ण नियंत्रण रखती है या किसी अन्य आवश्यक वस्तु के जिस पर प्रतिबन्ध हो के क्रय-विक्रय पर विशेष दृष्टि रखती है तथा ऐसे करने वाले व्यक्ति को अदालत के दण्डित करवा सकती है। व खुद आर्थिक दण्ड लगा सकती है। कर वंचन के मामलों पर भी पूरी तरह से नियंत्रण होता है। क्षेत्र के अन्तर्गत लगन वाले समस्त करों के मामले में अगर कोई व्यक्ति कर चोरी करता है तो जिला पंचायत उसे दण्डित कर सकती है। खाद्य अपमिश्रण के लिए भी जिला पंचायत विभिन्न खाद्य एवं पेय पदार्थों की दुकानों पर निरीक्षण कर सकती तथा दोष पाये जाने पर आर्थिक या अदालती दण्ड का उपबन्ध कर सकती है।

(IX) भूमिहीन श्रमिकों को सौंपी गयी जमीन का विकास करने में सहायता - भूमिहीन श्रमिकों को पंचायतों द्वारा ग्राम समाज के नाम पर पड़ी जमीन को बांट दिया जाता है तथा जो बेकार जमीन पड़ी रहती है उसको कृषि योग्य बनाकर भूमिहीन कृषकों के नाम परिवर्तित कर दिया जाता है तथा ऐसी जमीन प्राप्त श्रमिकों को आर्थिक या संसाधनों से सहायता देकर भूमि का विकास किया जाता है।

(X) जनजातियों द्वारा अन्य संक्रमित भूमियों का पुर्नग्रहण - जिन क्षेत्रों में जनजातियां पाई जाती हैं। वहाँ पड़ी हुई जमीन को उनके द्वारा अपने निवास क्षेत्र में सम्मिलित कर लिया जाता है तथा उस भूमि का जनजातीय बस्ती के नाम पर दाखिला कर दिया जाता है।

(XI) बन्धुआ मजदूरों की पहचान, मुक्त एवं उनका पुर्नवास - जिला पंचायत द्वारा अपने प्रादेशिक निर्वाचन क्षेत्र के अन्तर्गत बन्धुआ मजदूरों की पहचान कर, उनको मुक्त कराकर उनके पुर्नवास की व्यवस्था करने का कार्य भी करती है। ये बन्धुआ मजदूर किसी स्थान विशेष या उद्योग विशेष में कार्यरत हो सकते हैं। अधिकतर ऐसी समस्यायें ईट-भट्ठों के मजदूरों, मिल के मजदूरों के पास पाई जाती हैं।

(XII) सांस्कृतिक एवं मनोरंजनात्मक क्रियाकलापों का आयोजन - जिला पंचायत फतेहपुर सांस्कृतिक एवं मनोरंजनात्मक क्रियाकलापों का भी आयोजन करती है। ये सांस्कृतिक कार्यक्रम किसी व्यक्ति विशेष पर्व, विशेष या स्थान विशेष के सन्दर्भ में हो सकते हैं। फतेहपुर जिला पंचायत द्वारा 26 जनवरी, 15 अगस्त को सांस्कृतिक एवं मनोरंजनात्मक कार्यक्रमों का आयोजन किया जाता है जिसमें बालक/बालिकाओं के कार्यक्रमों के अलावा अन्य विशिष्ट लोगों को आमंत्रित किया जाता है तथा उनसे ऐसी आशा की जाती है कि वे इस कार्यक्रम के सफल संचालन में सहभागिता अर्जित करें। जिला पंचायत से सम्बन्धित समस्त स्टॉफ व सदस्य अन्य स्थानों पर होने वाले कार्यक्रमों में भी सहभागिता निभाते हैं।

(XIII) खेलकूद और खेलों को प्रोत्साहन तथा ग्रामीण स्टेडियमों का निर्माण पारम्परिक उत्सवों को नया रूप देना उन्हें समाजप्रिय बनाना - जिला पंचायत फतेहपुर खेलकूदों का आयोजन ग्राम स्तर से लेकर जनपद स्तर तक करती है तथा उनके प्रोत्साहन हेतु खिलाड़ियों को पुरस्कार एवं प्रोत्साहन राशि भी वितरित किये जाते हैं। क्षेत्र पंचायत स्तर पर क्षेत्रीय ग्रामीण खेदकूद प्रतियोगिता का आयोजन किया जाता है तथा ग्रामीण स्टेडियमों का निर्माण किया जाता है। पारम्परिक खेलों एवं उत्सवों को नवीन स्वरूप प्रदान कर उनके समाजप्रिय बनाने की कोशिश की जाती है।

(D) विकास योजानाओं को समन्वित या एकीकृत करना

जिला विकास के सभी कार्यक्रमों में जिला पंचायत का योगदान उल्लेखनीय रहा है। भूमि सुधार में हमारे प्रान्त की शानदार उपलब्धि जिला पंचायतों को इस कार्यक्रम में शामिल करके प्राप्त किया गया है। इसी काम के बदले खाद्यान्न, राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम, ग्रामीण भूमिहीन रोजगार गारन्टी योजना की सफलता का श्रेय भी जिला पंचायत को जाता है। योजना आयोग के मूल्यांकन संगठन ने अपनी अन्तिम रिपोर्ट में कहा है कि कार्यक्रम तैयार करने व उन्हें लागू करने के कार्य में जिला पंचायतों को शामिल करने से बेहतर स्थिति

प्राप्त हुई है। यह भी देखा गया है कि उत्तर प्रदेश में जिला पंचायत योजना निर्माण की बैठकें बुलाती है तथा इन बैठकों में प्राथमिकतायें भी तय की जाती हैं। आमतौर पर पंचायतों द्वारा तैयार योजनाओं की लागत केन्द्र/राज्य सरकार द्वारा तैयार योजनाओं की लागत से कम होती है। क्योंकि पंचायतें अपनी योजनाएं स्वयं स्वैच्छिक रूप से करती हैं। इस तरह समन्वित ग्रामीण विकास में पंचायतों को भागीदार बनाने से यह सुनिश्चित हो गया कि कार्यक्रमों में बेईमान व दलाल न कार्य कर सकेंगे। कुछ समय पूर्व नाबार्ड ने समन्वित ग्रामीण विकास योजना को लागू करने का नमूना सर्वेक्षण किया जिसमें पाया गया कि पंचायतों को विकास कार्यों में भागीदार बनाने से कोई दलाल या बेईमान नहीं लाभ ले सका था।

'उत्तर प्रदेश में जिला पंचायत के सराहनीय कार्यों को देखते हुए इन्हें और अधिकार प्रदान किये गये हैं। अब ये आम आदमी के लिए योजनाएं बना सकती हैं और उनका क्रियान्वयन भी करती हैं। इस उद्देश्य के लिए जिला पंचायत में नियोजन समिति गठित की गयी है। जिसका कार्य है योजनाओं का समन्वय और उनकी समस्याओं का निराकरण करना। इस समिति में पंचायत सदस्यों, अब सम्बन्धित पंचायत प्रतिनिधियों और सभी विभागों के सम्बन्धित अधिकारियोंओ को शामिल किया गया है। इसमें जिला पंचायत का अध्यक्ष, सभापति तथा जिला मजिस्ट्रेट को सदस्य सचिव बनाया गया है।'[1]

जिला नियोजन समिति को अतिरिक्त प्रशासकीय और तकनीकी कर्मचारी दिये जा रहे हैं। राज्य स्तर से प्राथमिकतायें निश्चित करने के बारे में दिशा निर्देश जारी किये जाते हैं और वित्त की व्यवस्था की जाती है। जिला योजना तैयार करते समय समूचे जनपद की आवश्यकताओं को ध्यान में रखा जाता है। यह ध्यान रखा जाता है कि हमारे राज्य का कुल योजना खर्च का 50 प्रतिशत भाग कैसे खर्च हो। इस बात का निर्णय जिला स्तर पर किया जाता है। विकेन्द्रीकृत योजना तैयार करने में समूचे जनपद के लिए यह एक महत्वपूर्ण शुरुआत है।

(E) जिला योजना के विषय में राज्य सरकार को परामर्श देने का कार्य

जिला पंचायत जिला योजना के निर्माण के सम्बन्ध में राज्य सरकार को परामर्श प्रेषित करती है तथा जिले के ग्रामीण क्षेत्रों के विकास हेतु पंचायतों द्वारा तैयार की गयी योजनाओं

---

1. उत्तर प्रदेश नयी पंचायती राज्य व्यवस्था - एक दर्शन, पृष्ठ 17 (किसान सेवा समिति, लखनऊ)

का समेकन करने और सम्पूर्ण जिले के विकास हेतु विकास प्रारूप तैयार करने के लिए जिला पंचायत जिला योजना के सन्दर्भ में निम्नलिखित परामर्श दे सकती है - [1]

(1) जिले के लिए पंचायतों द्वारा तैयार की गयी योजनाओं की राज्य सरकार को समुचित जानकारी प्रदान करना।

(2) विकेन्द्रित योजना के लिए जिला और ब्लाक संसाधन की पार्श्विका तैयार करने के लिए आंकड़े का ठोस आधार तैयार करने हेतु जिला की प्राकृतिक एवं मानव संसाधन से सम्बन्धित सूचना प्रेषित करना है।

(3) जिला के लिए तैयार की गयी रोजगार योजनाओं की जानकारी प्रेषित करना।

(4) जिला योजना के वित्त पोषण के लिए वित्तीय संसाधनों का प्राक्कलन तैयार करना।

(5) जिला योजना में सम्मिलित की गयी योजनाओं के सम्बन्ध में राज्य सरकार को नियमित प्रतिवेदन प्रस्तुत करना।

(6) जिले में विकेन्द्रीकृत योजना की रूपरेखा के अधीन कार्यान्वित की जा रही योजनाओं और कार्यक्रमों, जिनके अन्तर्गत केन्द्रीय सेक्टर, केन्द्र पुरोनिधानित योजनाये और संसदीय निर्वाचन और विधानसभा निर्वाचन क्षेत्रों की स्थानीय, क्षेत्रीय विकास योजनाओं की प्रगति का अनुश्रवण, मूल्यांकन और समीक्षा आदि की जानकारी राज्य सरकारों को देना।

(7) कोई अन्य कृत्य जो राज्य सरकार द्वारा सौंपे जाय।

(F) महिला एवं बाल विकास से सम्बन्धित कार्य

समेकित बाल विकास परियोजना का मुख्य उद्देश्य आंगनबाड़ी केन्द्रों के माध्यम से 0-6 वर्ष की आयु के बच्चों तथा गर्भवती एवं धात्री महिलाओं को अनुपूरक पुष्टाहार उपलब्ध कराना, प्रतिरक्षण, स्वास्थ्य, शिक्षा, निर्देशन एवं सन्दर्भ सेवायें तथा 6 वर्ष के बच्चों को स्कूल पूर्व अनौपचारिक शिक्षा प्रदान करना है। 'आंगनबाड़ी केन्द्रों का संचालन आंगनबाड़ी कार्यकर्ती तथा सहायिका के माध्यम से किया जाता है। प्रत्येक 1000 की आबादी पर एक आंगनबाड़ी केन्द्र खोलने की व्यवस्था है।'[2]

---

1. उत्तर प्रदेश क्षेत्र पंचायत जिला पंचायत अधिनियम 1961 - विवेक मिश्रा, पृष्ठ 238
2. पंचायती राज्य व्यवस्था - एक परिचय, पंचायती राज विभाग उत्तर प्रदेश, पृष्ठ 130

महिला एवं बाल विकास विभाग द्वारा प्रत्येक केन्द्र 8.4 अथवा 86 लाभार्थियों की संख्या निर्धारित की गयी है। केयर तथा विश्व खाद्य कार्यक्रम के तहत आंगनबाड़ी कार्यकर्ती व सहायिका को भी पुष्टाहार दिया जाता है। '86 अथवा 84 लाभार्थियों में गर्भवती व धात्री महिलां की संख्या 16 निर्धारित की गयी है तथा 0-6 वर्ष के बच्चों की संख्या 68 होगी।'[1]

राज्य सहायतित केन्द्रों में गर्भवती व धात्री महिलाओं को 140 ग्राम पंजीरी या 70 ग्राम बिस्किट, 7 माह से 6 वर्ष के बच्चों को 70 ग्राम पंजीरी या 35 ग्राम बिस्किट, विश्व खाद्य कार्यक्रम के अन्तर्गत गर्भवती/धात्री महिलाओं को 160 ग्राम पंजीरी व 7 माह से 6 वर्ष के बच्चों को 80 ग्राम पंजीरी व केयर योजना के अन्तर्गत गर्भवती/धात्री महिलाओं को 150 ग्राम पंजीरी व 7 माह से 6 वर्ष के बच्चों को 75 ग्राम पंजीरी वितरित की जाती है तथा जो बच्चे कुपोषण का शिकार होते हैं उन्हें सामान्य से दो गुना पंजीरी दी जाती है। राज्य सहायतित व विश्व खाद्य कार्यक्रम परियोजना में प्रति 100 ग्राम पुष्टाहार में 12 ग्राम प्रोटीन व 300 कैलोरी होती है। केयर पुष्टाहार में 13.5 ग्राम प्रोटीन व 450 ग्राम कैलोरी होती है।

0-3 वर्ष के बच्चों, गर्भवती/धात्री महिलाओं को पोषाहार सुनिश्चित करने की दृष्टि से प्रत्येक सप्ताह का पोषाहार एक ही दिन में वितरित किये जाने की दृष्टि से टेक होम राशन व्यवस्था भी लागू की गयी है जिस दिन ए. एन. एम. की सहायता से परियोजना क्षेत्र में आने वाले एक साल तक के बच्चों तथा गर्भवती महिलाओं का टीकाकरण किये जाने के साथ स्वास्थ्य सम्बन्धी जांच की व्यवस्था करायी जाती है।

'आंगनबाड़ी कार्यकर्ती/सहायिकाओं को निश्चित मासिक मानदेय वितरित किया जाता है। आंगनबाड़ी कार्यकर्ती को प्रतिमाह 1250 रुपया तथा सहायिका का 500 रुपये मानदेय दिया जाता है।''[2]

(G) ग्रामीण आवास एवं पेयजल - जिला पंचायतों को ग्रामीण क्षेत्रों में (निर्धन) गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन करने वाले लोगों को आवासीय योजनाओं के तहत अनुदान देने का अधिकार है। निर्बल वर्ग आवास एवं इन्दिरा आवास योजना, प्रधानमंत्री ग्रामोदय योजना (ग्रामीण आवास), योजनाओं के अन्तर्गत आवासों का निर्माण कराकर बांटे जा रहे हैं। अब तक 20042 इन्दिरा आवास बनाये गये हैं। जिला पंचायत के माध्यम से निम्नलिखित

---

1. फतेहपुर जनपद के अन्तर्गत संचालित आंगनबाड़ी केन्द्रों सम्यक से प्राप्त जानकारी।
2. जनपद फतेहपुर के क्षेत्र पंचायत कार्यालय विजईपुर के मानदेय रजिस्टर में दर्ज वेतन के अनुसार।

आवासीय योजनायें संचालित की जा रही हैं -

इन्दिरा आवास योजना - इन्दिरा आवास योजना को सन् 1985 में प्रारम्भ किया गया। इसके अन्तर्गत गरीबी रेखा (B.P.L.) के नीचे जीवन यापन कर रहे लोगों को जो आवासहीन हैं। निःशुल्क आवास प्रदान किया जाता है। यह केन्द्र व राज्य सरकार की मिश्रित योजना है। केन्द्रीय लाभांश 75 प्रतिशत और राज्य का लाभांश 25 प्रतिशत होता है।

'इन्दिरा आवास योजना के अन्तर्गत निर्मित भवनों की लागत पहाड़ी एवं कठिनाई वाले क्षेत्रों में 22 हजार रुपये तथा मैदान क्षेत्रों में 20 हजार रुपये प्रति आवास है। जिनके पास कच्चा आवास उपलब्ध होता है, उन्हें 10 हजार रुपये आवास उच्चीकरण हेतु प्रदान किया जाता है।''[1]

योजना की विशेषताएं - इन्दिरा आवास योजना में निम्नलिखित विशेषतायें पाई जाती है-[2]

(1) वार्षिक परिव्यय का 80% नये आवासों के निर्माण हेतु तथा 20 प्रतिशत कच्चे आवासों के उच्चीकरण हेतु प्रदान किया जायेगा।

(2) कुल लाभार्थियों में 60 प्रतिशत अनुसूचित जाति/जनजाति के तथा 3 प्रतिशत विकलांग होना आवश्यक है।

(3) लाभार्थी का चयन पंचायत की खुली बैठक में होगा।

(4) आवासों का निर्माण लाभार्थी द्वारा स्वयं किया जायेगा।

(5) स्वच्छ शौचालय एवं धूम्ररहित चूल्हा योजना का अभिन्न अंग होगा।

(6) आवासों की कोई डिजाइन निर्धारित नहीं है। शर्त मात्र यह है कि कुर्सी क्षेत्र कम से कम 20 वर्गमीटर हो।

(7) लाभार्थियों को दो किश्तों में धनराशि उपलब्ध करायी जायेगी जो सीधे उनके बैंक खातों में हस्तान्तरित की जायेगी।

---

1. पंचायती राज व्यवस्था एक परिचय - पंचायती राज विभाग उत्तर प्रदेश, पृष्ठ 35
2. पूर्ववत्

(8) आवास महिलाओं के नाम आवंटित किये जाते हैं तथा विशेष परिस्थितियों में पति-पत्नी दोनों के नाम हो सकता है।

फतेहपुर जनपद के अन्तर्गत अबतक 20042 इन्दिरा आवास तथा उच्चीकृत 174 आवास तथा 175000 निर्बल वर्ग आवास का निर्माण कराया जा चुका है। वर्ष 2003-04 में 2722 इन्दिरा आवास का निर्माण कराया गया है-[1]

क्रम सं.	योजना	वर्ष	कुल निर्माण
(1)	इन्दिरा आवास योजना	2003-04	2742
(2)	" "	2004-05	2265
(3)	" "	2005-06	2221
(4)	" "	2006-07	17800
			(रुपये परिव्यय निश्चित)

प्रधानमंत्री ग्रामोदय योजना (ग्रामीण आवास) - आवास मानव जीवन के लिए एक आवश्यक आवश्यकता होती है। सभी नागरिकों को आवास के साथ उचित पेयजल एवं स्वच्छता की आवश्यकता होती है। इसी कारण ग्रामीण आवासों को निर्माण हेतु प्रधानमंत्री ग्रामोदय योजना नाम की नयी योजना प्रारम्भ की गयी है। जिसमें ग्रामीण गरीबों को लाभ पहुंचाने पर ध्यान केन्द्रित किया गया है। इस योजना का प्रमुख उद्देश्य गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन करने वाले लोगों की (मकान) आवास की कमी को पूरा करना है तथा इन क्षेत्रों में स्वास्थ्य पुर्नवास विकास करना है।

प्रधानमंत्री ग्रामोद योजना भी इन्दिरा आवास योजना के पैटर्न पर आधारित है। इस योजना के अन्तर्गत गरीबी रेखा से नीचे जीवन यापन करने वाले अनुसूचित जाति/जनजाति तथा बन्धुआ मजदूर कार्य में लगे लोग हैं। एक वित्तीय वर्ष के अन्तर्गत अनुसूचित जाति/जनजाति के लिए 40% अंशदान से ज्यादा नहीं होगा। विकलांगों के लिए 3% अंशदान निर्धारित किया गया है।

'जिला योजना फतेहपुर में सन् 2005-06 हेतु 5500 रुपये निर्धारित किये गये थे किन्तु 2006-07 के दौरान इस योजना हेतु कोई धनराशि निर्धारित नहीं की गयी है।''[2]

---

1. सामाजार्थिक समीक्षा वर्ष 2006 फतेहपुर जिल संख्या कार्यालय, फतेहपुर, पृष्ठ 29
2. पूर्ववत्, पृष्ठ 34

पेयजल - पेयजल मानव जीवन की मूलभूत आवश्यकता है। अतः समाज के प्रत्येक वर्ग को शुद्ध जल यथेस्ट मात्रा में उपलब्ध कराने के लिए शासन विशेष रुप से स्थानीय प्रशासन प्रयत्नशील रहता है। फतेहपुर जनपद के 1353 आबाद ग्रामों में हैण्डपम्प ही पेयजल का प्रमुख स्रोत बन गया है। जिला पंचायत द्वारा 1353 आबाद ग्रामों में अपने संसाधनों से हैण्ड पम्प तथा नल लगाकर पेयजल की आपूर्ति कर रहा है।'' 150 की आबादी पर एक हैण्डपम्प लगाने का लक्ष्य है।''[1] 353 आबाद ग्रामों को संतृप्त किया चुका बताया जाता है किन्तु यथार्थ स्थिति इससे बिल्कुल भिन्न है। वर्ष 2005-06 में पेयजल की व्यवस्था हेतु जिला योजना, पूर्वांचल विकास निधि, विधायक /सांसद निधि, समग्र विकास योजना के अन्तर्गत पेयजल हेतु हैण्ड पम्प लगाये जाने की व्यवस्था है। 'वर्ष 2005-06 के दौरान 2625 इण्डिया मार्का-2 हैण्डपम्प की स्थापना की गयी तथा 2125 हैण्डपम्पों की मरम्मत की गयी।'[2]

(H) अन्य समन्वयमूलक कार्य - इस अधिनियम तथा राज्य/किन्द्र सरकारों द्वारा जिला पंचायतों को सौंपे या प्रत्यायोजित किये गये कृत्यों के क्रियान्वयन के लिए आवश्यक या आनुसंगिक सभी कार्य करना इन कृत्यों के अलावा कुछ सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक, आर्थिक समन्वय एवं परामर्शमूलक कार्य करने पड़ते हैं। जो समन्वयमूलक कार्य निम्नलिखित हैं-

(1) लोक उपयोगिता के किसी भी कार्य का उसमें निहित या उसके नियंत्रण या प्रबन्ध के अधीन किसी संस्था का प्रबन्ध व रखरखाव।

(2) ग्रामीण पार्कों एवं उद्यानों का निर्माण एवं रखरखाव।

(3) पंचायत समिति व ग्राम पंचायतों को तदर्थ अनुदानों का विकास करना तथा उनके कार्य का समन्वय करना।

(4) कष्ट निवारण के कार्यों को अंगीकार करना।

(5) जिले में पंचायत समितियों द्वारा तैयार की गयी योजनाओं से समन्वित और एकीकृत करना।

(6) जिले की पंचायत समितियों के बजट प्राक्कलनों की परीक्षा करना और उन्हें मंजूर

---

1. 1. पूर्ववत्, पृष्ठ 27
2. पूर्ववत्, पृष्ठ 29

करना।

(7) एकाधिक खण्डों में विस्तृत किसी कार्यक्रम को हाथ में लेना और उसका निष्पादन करना।

(8) जिले के पंचों, सरपंचों, प्रधानों और पंचायत समितियों के प्रधानों के शिविरों, संगोष्ठियों सम्मेलनों का आयोजन करना।

(9) किसी भी स्थानीय प्राधिकरण से उसके क्रियाकलापों के विषय में सूचना देने की अपेक्षा करना।[1]

☆☆☆
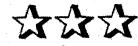
1. उत्तर प्रदेश नयी पंचायती राज व्यवस्था एक दर्शन, किसान सेवा समिति, पृष्ठ 77, 78

अध्याय अष्टम

अध्याय अष्टम्

> *जिला पंचायत फतेहपुर की कार्यपद्धति*

तथा

> *इसमें आने वाली कठिनाइयाँ (समस्यायें)*

एवं

> *उनका निवारण*

☆☆☆

फतेहपुर जिला पंचायत की कार्य पद्धति

पंचायती राज व्यवस्था में जिला पंचायत शीर्ष स्तरीय संस्था है। यह उत्तर प्रदेश में सामुदायिक विकास योजनाओं को लागू करने में कार्यपालिका की भूमिका अदा करती है तथा राज्य सरकार समय-समय पर इसके अधिकार क्षेत्र में परिवर्तन करती रहती है। उत्तर प्रदेश क्षेत्र पंचायत, जिला पंचायत अधिनियम 1961 के द्वारा इसके कार्य एवं अधिकारों का क्षेत्र निश्चित किया गया था।

इस अध्याय में जिला फतेहपुर की जिला पंचायत के कार्य पद्धति का विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है। इस सन्दर्भ में यह उल्लेखनीय है कि 'स्वतंत्रता के पश्चात् ग्रामीण भारत के चतुर्दिक विकास हेतु पंचायती राज की स्थापना की गयी थी क्योंकि भारत गांवों का देश है अतः ग्रामीण विकास हेतु स्थापित पंचायती राज व्यवस्था ही वह साधन है। जिससे भारत के विकास की परिकल्पना की जा सकती थी।'[1] स्वतंत्रता के पूर्व भारत में ग्राम विकास पर कोई ध्यान नहीं दिया गया था। अतः भारत में गांवों की दशा बहुत दयनीय एवं चिन्तनीय थी। गांवों की आर्थिक एवं शैक्षिक दशा बहुत पिछड़ी हुई थी। तत्कालीन सरकार अपनी नीतियों के अनुसार ग्राम विकास पर जोर न देकर शहरी विकास पर ध्यान केन्द्रित रखा था। अतः गांव अविकसित की श्रेणी में ही बने रहे। मानव जीवन की सुख सम्पदा शहरों एवं नगरों में सिमटकर भारतीय गांवों को नग्ण करती सी महसूस होती थी।

भारतीय नेतृत्वकर्ताओं ने भारत के समग्र विकास के लिए जिन साधनों एवं संसाधनों का चयन किया, उनमें से एक है पंचायती राज व्यवस्था। अगर यह कहा जाय कि उन साधनों में पंचायती राज व्यवस्था सर्वोपरि एवं उत्तम साधन है तो किसी प्रकार की अतिशयोक्ति नहीं कहा जा सकता है। वास्तविकता भी देखने से यह प्रतीत होती है कि भारतीय ग्रामीण विकास के लिए पंचायती राज संस्थाओं का कार्य करने की पद्धति उसके

---

1. के. एम. पनिक्कर - औ. सी. पु., पृष्ठ 2

चतुर्दिक विकास पर आधारित है। पंचायती राज व्यवस्था की स्थापना के समय ही निम्नलिखित संकल्प पारित किया गया था। - 'कृषि उत्पादन को बढ़ाने, रोजगार के अवसर जुटाने, गरीबी हटाने तथा ग्रामीण अर्थव्यवस्था के सभी पहलुओं में सुधार लाने के लिए सरकारें ग्रामीण विकास को सर्वोच्च प्राथमिकता देती हैं। सरकार का विचार है कि इन उद्देश्यों की पूर्ति के लिए दोनो क्षेत्रों का आयोजन तथा उसके कार्यान्वयन में सर्वाधिक विकेन्द्रीकरण आवश्यक है। तदनुसार राज्य सरकारों तथा सही राज्य क्षेत्रों के साथ मशविरा करके पंचायतीराज संस्थाओं की कार्य प्रणाली की जांच करने तथा उसके सुदृढ़ बनाने के लिए उपाय सुझाने के लिए एक समिति के गठन करने का निर्णय लिया गया है ताकि आयोजन तथा विकास की विकेन्द्रीकरण प्रणाली को प्रभावशाली बनाया जा सके।''[1]

पंचायती राज व्यवस्था को लोकतंत्र का मूल आधार तथा बीजारोपण कहा जा सकता है क्योंकि पंचायतें लोकतंत्र की शिक्षा प्रदान करती हैं तथा नागरिकों को अपने अधिकार एवं कर्तव्यों के प्रति जागरुक करती हैं तथा इसने राजनेताओं व नौकरशाहों के मध्य स्वाभाविक पृष्ठभूमि तैयार की तथा सामाजिक एवं सांस्कृतिक दृष्टि से क्रान्तिकारी विचारों वाला नया नेतृत्व उत्पन्न किया। अपेक्षाकृत कम उम्र के नागरिकों में आधुनिक विचारधारा का बीज वपन करके सामाजिक परिवर्तनों का मार्ग प्रशस्त किया।

सर्वेक्षण से यह ज्ञात होता है कि फतेहपुर जिला पंचायत के जन प्रतिनिधियों में अधिकांश में यह अवधारणा विकसित है। पंचायती राज संस्थाओं की स्थापना से नेतृत्व के स्वरूप को परिवर्तित किया गया तथा जनपद के सामाजिक एवं आर्थिक विकास के मार्ग को प्रशस्त किया। ग्रामीण जनप्रतिनिधियों से किये गये साक्षात्कार में एक प्रश्न के सन्दर्भ में[2] 70 प्रतिशत जनप्रतिनिधियों ने यह स्वीकार किया कि पंचायती राज की स्थापना न ग्रामीण क्षेत्रों के नेतृत्व के स्वरूप को परिवर्तित किया एवं ग्रामीण जनता में सामाजिक, राजनीतिक एवं आर्थिक चेतना को जाग्रत किया जिससे ग्रामीण क्षेत्रों के विकास की गति में तीव्रता आई है लेकिन यह धारणा सर्वमान्य रूप से विकसित नहीं पायी गयी।

पंचायती राज ने नेतृत्व के स्वरूप को परिवर्तित कर सामाजिक विकस के मार्ग को प्रशस्त किया है।

---

1. 1. संकल्प सं० 14-1-0-66 C.F., 12 दिसम्बर, 1977 मंत्रिमण्डल, सचिवालय, नयी दिल्ली।
2. क्या आप स्वयं यह अनुभव करते हैं कि पंचायती राज नेतृत्व किस स्वरूप को परिवर्तित कर सामाजिक एवं आर्थिक विकास के मार्ग को प्रशस्त किया है।

तालिका - 1

विचार अभिव्यक्ति	संख्या	प्रतिशत
स्वीकार	140	70%
अस्वीकार	60	30%
योग	200	100%

क्योंकि 30 प्रतिशत ग्रामीण जन प्रतिनिधियों ने इस तथ्य को अपने व्यक्तिगत अनुभवों के आधार पर अस्वीकार किया है।

अनिवार्य रूप से जिला पंचायत के कार्य पर उसके ढाँचे का स्वरूप निर्धारित होता है। और इसी तरह इनके कार्यकलाप विकास की सम्भावनाओं पर निर्भर रहते है। विशेषतया ग्रामीण विकास में यह तथ्य लागू होता है क्योंकि यहाँ नई -नई तकनीकी सेवायें एवं नई -नई संस्थाओं के जन्म लेने एवं संगठित होने में काफी समय लगता है। ग्रामीण अर्थव्यवस्था के विकास में आयाम तभी व्यापक होते है जब पंचायतीं राज्य की कार्य पद्धति अबाध रहे। 'जब से भारत अपने आर्थिक विकास पर अग्रसर हुआ है। तब से इसने सामाजिक वर्गो की बेहतरी हेतु विशेष प्रयास किये। आर्थिक विकास के गति के अनुरूप समाज के कमजोर वर्गो में अपने अधिकार एवं दायित्वों के लिए जागृति भीं बढ़ती है। आर्थिक बेहतरी एवं सामाजिक समानता से कमजोर वर्गो की स्थिती में तेजी से परिर्वतन हुआ है। इसलिए समतावादी हमारी विकास नीति का लक्ष्य बन गया है। वर्तमान सम्बध में पंचायती राज संस्थाओं को इस दिशा में अपनी कार्यपद्धति के माध्यम से एक महत्वपूर्ण भूमिका निभानी है।[1]

स्वतन्त्र भारत के बदलते हुए परिवेश के सन्दर्भ में कृषि के क्षेत्र में कई परिवर्तन हुए है। यद्यपि स्वतन्त्रता के बाद कुछ क्षेत्र पाकिस्तान के पास चले गये जो अपनी आवश्यकता से अधिक अन्न पैदा करते थे। गेहूँ उत्पादन के क्षेत्र में इस क्षेत्र परिर्वतन ने भारत को गेहूँ आयात पर निर्भर बना दिया भारत सरकार ने कृषि की उपज बनाने के लिए सिंचाई की सुविधाओं को बढ़ाया। सामुदायिक विकास और राष्ट्रीय प्रसार सेवा कार्यक्रम इसी उद्देश्य से प्रारम्भ किये गये कि ग्रामीण जनता में नया उत्साह पैदा हो। मानसिक तौर पर मानवीय और भौतिक संसाधनों के विकास हेतु ग्रामीण क्षेत्रों की वार्षिक एवं सामाजिक व्यवस्था में परिवर्तन

---

1. अशोक मेहता कमेटी रिपोर्ट, औप. सीट।

किए गये। उसका ही परिणाम है कि उत्पादन में वृद्धि हुई। बलवन्तराय मेहता अध्ययन दल की यह सिफारिश थी कि 'जनतंत्रीय विकेन्द्रीकरण की योजना तैयार की जाय जिसमें जिला स्तर पर सार्वजनिक निगरानी एवं नियंत्रण की व्यवस्था हो।'[1]

मेहता कमेटी की सिफारिशों के आधार पर ग्रामीण अर्थव्यवस्था में महान परिवर्तन करने के प्रयास किये गये। पंचायती राज की स्थापना व्यवहारिक रूप में इस दल के प्रतिवेदन के आधार पर ही की गयी।

पंचायती राज की स्थापंना लोकतांत्रिक प्रक्रिया की आधारभूत कड़ी है। चतरा अनुमण्डल के पंचायत जनप्रतिनिधियों में एक प्रश्न के सन्दर्भ में यह स्वीकार किया कि[2] पंचायती राज वस्तुतः लोकतांत्रिक प्रक्रिया की की आधारभूत कड़ी है। यह अवधारणा 62 प्रतिशत नेताओं में विकसित है। स्वाभाविक है कि स्वतंत्रता प्राप्ति के 30 वर्षों के उपरान्त भी यह भावना - क्या पंचायती राज लोकतांत्रिक प्रक्रिया की आधारभूत कड़ी है।

तालिका नं० 2

विचार अभिव्यक्ति	संख्या	प्रतिशत
सहमत	124	62%
असहमत	76	38%
योग	200	100%

पंचायत नेताओं में विकसित नहीं हो पायी है। यह इस तथ्य का परिचायक है कि फतेहपुर जिला पंचायत में ऐसे जनप्रतिनिधि हैं जिनमें यह अनुभव का अभाव है, स्वाभाविक है कि पंचायती राज कार्य पद्धति में दोष अवश्य ही है। देश के संसद तथा राज्य की विधानसभा के चुनावों में लोकतांत्रिक एवं राजनीतिक प्रक्रियाओं का अनुभव भारतीय जनता को प्रदान किया है और लोगों के उनकी शक्तियों और अधिकारों के प्रति सजग बना दिया है। सन् 2007 के विधानसभा चुनावों ने लोकतांत्रिक मार्ग के प्रति जनता की आस्था एवं अडिग विश्वास को उजागर किया है। इसका यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि स्थानीय मामलों के प्रबन्ध में जनता भागीदार होना चाहती है या अधिक से अधिक अवसर चाहती

---

1. द्रष्टव्य बलवन्त राय मेहता कमेटी रिपोर्ट
2. पंचायती राज लोकतांत्रिक प्रक्रिया की आधारभूत कड़ी है।

है। स्थानीय स्तर पर ग्रामीण विकास से सम्बन्धित प्रशासन पर लोकतांत्रिक नियंत्रण की आवश्यकता को पूरा करने के लिए ही एक अनिवार्य तत्व के रूप में पंचायती राज को प्रश्रय दिया जा रहा है। लोकतांत्रिक राज्य को तभी सुदृढ़ बनाया जा सकता है जब प्रतिनिधित्व के निम्नतर स्तर पर जनता को भागीदार बनायां जाय।

राजनीतिक दलों एवं सामान्य जनता को अपने शक्तियों एवं अधिकारों के प्रयोग का विभिन्न स्तरों पर अवसर मिलने से लोकतांत्रिक राज्य व्यवस्था और अधिक सुव्यवस्थित और सुदृढ़ होती है। अनुभव यह बताता है कि स्थानीय स्तर पर लोगों के अपने प्रतिनिधि ग्रामीण भारत की परिस्थितियों को बदलने के लिए सर्वथा उपयुक्त होते हैं तथा वही सामाजिक परिवर्तन लाते हैं। इतना निश्चित है कि शिक्षा का प्रसार चाहे जितना सीमित क्यों न हो ग्रामीण क्षेत्रों में प्रबुद्ध तथा विकासोन्मुखी नेतृत्व पनपा है - इसे नकारा नहीं जा सकता है।

एक अन्य प्रश्न के सन्दर्भ में[1] फतेहपुर जिला पंचायत से सम्बद्ध ग्रामीण जन प्रतिनिधियों में करीब 48 प्रतिशत ने यह स्वीकार किया है कि पंचायती राज व्यवस्था की स्थापना ने ग्रामीण समाज के प्रबुद्ध एवं विकासोन्मुखी नेंतृत्व के विकास को प्रेरित किया है। इसके विपरीत 52 प्रतिशत जन प्रतिनिधियों ने इसे अपने अनुभव के आधार पर अस्वीकार किया है। अध्ययन क्षेत्र में यद्यपि इस तथ्य की प्रगति अधिक नहीं हो पायी है लेकिन इस दिशा में विकास का मार्ग धीरे-धीरे प्रशस्त हो रहा है। यह स्थिति उत्पन्न होने में पंचायती राज संस्थाओं का अत्यधिक योगदान रहा है।

तालिका - 3

क्या पंचायती राज ने ग्रामीण क्षेत्र में प्रबुद्ध नेतृत्व को प्रेरित किया है?

विचार अभिव्यक्ति	संख्या	प्रतिशत
स्वीकार	96	48%
अस्वीकार	104	52%
योग	200	100%

अतः पंचायती राज को लोकतांत्रिक स्वायत्त शासन का एक सजीव अंग माना जा सकता है। वह ग्रामीण लोकतांत्रिक स्वतः प्रबन्ध की एक इकाई भी है जिसका साध्य और साधन ग्रामीण भारत में एक समृद्ध उपयोगी जीवन दर्शन तथा आचरण का निर्माण करना

है।

'बलवन्त राय मेहता अध्ययन दल के प्रतिवेदनों से पंचायत रूप में संरचनात्मक युक्ति संगतता आयी। सभी ग्रामीण विकास कार्यक्रमों के कार्यात्मक केन्द्र के रूप में जिला स्तर पर जिला पंचायतों के गठन करने की सिफारिश की गयी है।'[1] लेकिन विभिन्न राज्यों में भिन्न-भिन्न स्थितियाँ पैदा हो गयीं। इस कारण से ये भिन्न-भिन्न रूपों में दिखायी पड़ती है। एक अन्य प्रश्न के सन्दर्भ[2] में 61 प्रतिशत ग्रामीण जन प्रतिनिधियों ने स्वीकार किया कि पंचायती राज अधिनियम के माध्यम से जिला पंचायत का संगठन प्रजातांत्रिक मूल्यों एवं तथ्यों पर किया है। ग्रामीण समुदाय के प्रत्येक वर्ग को समुचित प्रतिनिधित्व प्रदान करने का प्रयास किया गया है। इस तथ्य को अधिकांश ग्रामीण नेताओं ने स्वीकार किया है लेकिन यह अवधारणा सर्वव्यापक रूप से प्रचलित नहीं है। 39 प्रतिशत ग्रामीण नेताओं की धारणा है कि क्या जिला परिषद का संगठन प्रजातांत्रिक मूल्यों एवं तथ्यों पर आधारित है कि जिला पंचायत का संगठन लोकतांत्रिक मूल्यों एवं तथ्यों पर आधारित नहीं है। इनकी धारणा है कि समाज के अनेक वर्ग ऐसे हैं जिनको इस महत्वपूर्ण प्रजातांत्रिक संस्था में प्रतिनिधित्व प्रदान नहीं किया गया है। लेकिन इस मत विभिन्नता के बावजूद यह स्वीकार किया जा सकता है कि जिला परिषद के संगठनात्मक स्वरूप को अधिक से अधिक प्रजातांत्रिक एवं प्रतिनिधियात्मक बनाने का प्रयास किया गया है।

तालिका - 4

विचार अभिव्यक्ति	संख्या	प्रतिशत
स्वीकार	122	61%
अस्वीकार	78	39%
योग	200	100%

उपर्युक्त संगठनात्मक स्वरूप के विश्लेषण से यह ज्ञात होता है कि राष्ट्र के समग्र विकास के लिए यह आवश्यक है कि राज्य स्तर से नीचे विकेन्द्रीकरण का पहला केन्द्र जिला स्तर पर बनाया जाये। विकास कार्यक्रमों के आयोजन, पर्यवेक्षण और समन्वय के लिए आवश्यक योग्यता वाली प्रशासनिक एवं तकनीकी क्षमता इसी स्तर पर उपलब्ध होती है। नीचे के स्तर

---

1. 1. दृष्टव्य बलवन्त राय मेहता कमेटी रिपोर्ट
2. क्या आप अपने अनुभव के आधार पर स्वीकार करते हैं कि जिला पंचायत का संगठन प्रजातांत्रिक मूल्यों एवं तथ्यों पर आधारित है।-

क्षेत्र एवं ग्राम स्तर पर नहीं। गुजरात एवं महाराष्ट्र जैसे राज्यों में जहाँ जिले का विकेन्द्रीकरण किया गया है अभी तक का अनुभव इस प्रक्रिया के अनुकूल साबित हुआ है। इन राज्यों में प्रखण्ड को खण्ड कहा जाता है। जिले के विस्तार को खण्डों में विभाजित करने की परम्परा रही है। जब तक जिले का आकार बहुत छोटा नहीं हो जाता तब तक के अन्तवर्ती चरण में खण्डों (प्रखण्डों) की स्थिति को राष्ट्र विकास में बरकरार रखने की आवश्यकता है।

वस्तुतः पंचायतों की कार्य पद्धति पंचायतों के आकार पर निर्भर करता है। संसाधनों के अभाव में विद्यमान पंचायत प्रभावपूर्ण ढंग से कार्य करने में असमर्थ है। संसाधनों का अभाव पंचायतों की कार्यकुशलता को प्रभावित करती है।

एक प्रश्न के सन्दर्भ में[1] फतेहपुर जिला पंचायत के ग्रामीण नेताओं में 56 प्रतिशत ने यह स्वीकार किया है कि साधनों के अभाव में पंचायतों की कार्यकुशलता घटती है। व्यक्तिगत अनुभवों के आधार पर पंचायत नेताओं ने इस तथ्य को स्वीकार किया है। पंचायत की कार्य कुशलता के ह्रास होने में केवल साधनों के अभाव का योगदान ये नेता स्वीकार नहीं करते हैं। यह केवल गांव की गरीबी के कारण ही नहीं बल्कि संसाधन के आधार पर छोटे आकार के कारण भी है। अतः यह भी दलील दी जाती है कि पंचायतों के साधनों में पर्याप्त वृद्धि की जानी चाहिए। कुछ लोगों का तर्क है कि पंचायत के छोटे आकार के कारण ही मुख्यतः उनमें संसाधनों की कमी है जिसकी वजह से पंचायतें प्रभावपूर्ण ढंग से कार्य नहीं कर सकती है।

तालिका 5

विचार अभिव्यद्यि	संख्या	प्रतिशत
स्वीकार	112	56%
अस्वीकार	88	44%
योग	200	100%

विद्यमान पंचायतें आर्थिक तौर से सम्पन्न नहीं हैं। 'केवल केरल राज्य की स्थिति विशिष्ट है। वहाँ बड़े आकार की डी 974 पंचायते हैं जिनकी कुल आय लगभग 10.6 करोड़ रुपये वार्षिक है। पंचायतों की औसत आय एक लाख रुपये से अधिक होती है। ये पंचायतें नगर

---

1. क्या साधनों का अभाव पंचायतों की कुशलता में ह्रास का प्रमुख कारण है?

पालिका और जन कल्याण सम्बन्धी अधिकांश आवश्यकतायें पूरी करने और सरकार की ओर से गृह निर्माण जैसी योजना शुरू करने और संस्थानिक वित्त उपलब्ध करने में भी समर्थ होती हैं।'[1]

सभी राज्यों में विद्यमान पंचायतों के छोटे आकार के कारण उनके समक्ष संसाधनों का अभाव महसूस होता है और यह अभाव ही पंचायतों की कार्य पद्धति पर बुरा प्रभाव डालता है।

विकास की वर्तमान गतिशीलता, तकनीकी हस्तान्तरण की विधि और अनेक प्रयोजनों के लिए आवश्यक सामूहिक कार्य के कारण ऐसा लगता है कि मौजूदा परिस्थितियों में विद्यमान पंचायतें प्रभावपूर्ण ढंग से कार्य नहीं कर सकती हैं। सर्वेक्षण से यह स्पष्ट हो जाता है कि छोटी पंचायतें ऐसे कार्य को करने में सर्वथा असमर्थ रहती हैं, जिन्हें करने की उनसे अपेक्षा की जाती है। ज्यादा से ज्यादा उनमें से कुछ केवल वे परम्परागत कार्य जो कि नागरिक एवं जनकल्याण सम्बन्धी होते हैं, किस प्रकार कर पायेंगे। पंचायतों के कार्य पद्धति की सफलता अपेक्षाकृत बड़े आकार पर आधारित होती है। एक से अधिक गांवों के लिए किये जाने वाले कार्य पद्धति की व्यवस्था दलों के आधार पर होगी। अधिकतर कृषि कार्यक्रम गांव के आधार पर नहीं बल्कि किसी एक केन्द्र के अन्तर्गत परिवारों की संख्या पर आधारित है। अतः क्षेत्र का आकार टेक्नालाजी हस्तान्तरण के सन्दर्भ में प्रासंगिक है। बहुत से कार्य जिला स्तर पर होने चाहिए। जिला राज्य द्वारा निष्पादित किया जा रहा है।

एक प्रश्न के सन्दर्भ में[2] फतेहपुर जिला पंचायत के पंचायती राज संस्थाओं के 59 प्रतिशत नेताओं ने स्पष्ट रूप से स्वीकार किया है कि पंचायती राज संस्था के सफल कार्य संचालन के लिए यह आवश्यक है कि अधिकांश कार्य जो राज्य स्तर पर राज्य सरकारें कर रही हैं, उसका निष्पादन समुचित एवं सफल रूप से जिला पंचायत द्वारा किया जा सकता है। इस तथ्य को 41 प्रतिशत नेताओं ने स्वीकार किया। अतः जिला पंचायत के कार्य के क्षेत्र का विस्तार होना वांछनीय है।

प्रश्न- क्या अनेक महत्वपूर्ण कार्य जिला स्तर पर जिला पंचायतों द्वारा सम्पन्न किया जाना पंचायती राज के सफल कार्य के लिए अनिवार्य है।

---

1. 1. पंचायत समिति रिपोर्ट, कृषि एवं सिंचाई मंत्रालय, 1978, नयी दिल्ली, पृष्ठ 32
2. क्या अनेक महत्वपूर्ण कार्य जिला स्तर पर जिला पंचायत द्वारा सम्पन्न किया जाना पंचायतों के सफल कार्य पद्धति के लिए आवश्यक है।

तालिका - 6

विचार अभिव्यक्ति	संख्या	प्रतिशत
स्वीकार	118	59%
अस्वीकार	82	41%
योग	200	100%

जिला पंचायत, कृषि, पशुपालन, सिंचाई, स्वास्थ्य, परिवार कल्याण, विपणन, उद्वेग, पिछड़ी जाति कल्याण आदि कार्यों को करने में सक्षम है जो उस जिले से सम्बन्धित है। जिला पंचायत अपने स्तर पर उपर्युक्त कार्यों को निम्न स्तर पर विकेन्द्रीकरण करेगी तभी पंचायती राज की कल्पना साकार हो सकेगी।

यह विवाद का विषय है कि शिक्षा को जिला पंचायत के अन्तर्गत रखा जाय या नहीं। इस मत के विरोधी यह तर्क देते हैं कि दिन प्रतिदिन का कार्य जिसे कोई निर्णय लेने के लिए अनिवार्य रूप से जिला पंचायत के साथ रखने की जरूरत नहीं है, इसके अतिरिक्त शिक्षा के स्तर या किसी अपेक्षित सुधार के लिए उस पर अपना प्रभाव डालने की संभावना सीमित है। इस तथ्य को जिला पंचायत फतेहपुर के अन्तर्गत कार्यरत नेताओं ने भी एक प्रश्न के सन्दर्भ में[1] में स्वीकार किया। पंचायत नेताओं में 71 प्रतिशत इस बात को स्वीकार करते हैं। अतः शिक्षा को पूर्ण रूपेण जिला पंचायत के नियंत्रण में नहीं रखना ही वांछनीय होगा, यह विचार लोकप्रिय है।

प्रश्न- क्या जिला स्तर पर शिक्षा का प्रबन्ध एवं नियंत्रण जिला पंचायत द्वारा होना चाहिए-

तालिका - 7

विचार अभिव्यक्ति	संख्या	प्रतिशत
असहमत	142	71%
सहमत	58	29%
योग	200	100%

सामान्य रूप से विकास सम्बन्धी कार्यों की जिम्मेदारी पंचायती राज संस्थाओं की और

---

1. क्या जिला स्तर पर शिक्षा का प्रबन्ध एवं नियंत्रण जिला पंचायत द्वारा होना चाहिए।

विशेष रूप से जिला पंचायतों को सौंपने से विकेन्द्रीकरण की प्रक्रिया पूरी हो जाने की सम्भावना है किन्तु व्यवहारिक दृष्टि से यह तब पूरा होगा जब कि निष्पादित करने वाले प्राधिकारों को सम्बन्धित अधिकार दे दिया जायें। जिला स्तर पर विकेन्द्रीकरण का दूसरा आयोजन चाहिए। इस समय अनेक मामलों में जो जिले से सम्बन्धित हैं उसमें जिला पंचायत द्वारा स्वतः निर्णय नहीं लिया जाता है, जिला के अनेक संगठनों के लिए नीति विकास तथा उपयुक्त परियोजनाओं का विकास एक ऐसा विषय है जिस पर सभी योजना प्रलेख में हमेशा जोर दिया जाता रहेगा। यह कार्य अवश्य ज़िला पंचायतों को सौंपा जाना चाहिए।

एक प्रश्न के उत्तर में[1] फतेहपुर जिला पंचायत के जनप्रतिनिधियों ने स्वीकार किया कि आयोजन के क्षेत्र में अधिक सेअधिक समय जिला पंचायतों को प्रदान किया जाना चाहिए।

तालिका - 8

विचार अभिव्यक्ति	संख्या	प्रतिशत
स्वीकार	126	63%
अस्वीकार	74	37%
योग	200	100%

इस तथ्य को फतेहपुर जिला पंचायत के सर्वेक्षण द्वारा ज्ञात नेताओं में 63% ने स्वीकार किया जबकि 37 प्रतिशत पंचायत नेताओं ने इस तथ्य को स्वीकार नहीं किया। अतः स्पष्ट रूप से कहा जा सकता है कि जिला पंचायत की कार्य कुशलता एवं लोकतांत्रिक बनाने के लिए जिला स्तर पर आयोजन का दायित्व इस संस्था के द्वारा निभाया जाना समीचीन होगा।

निजी लघु सिंचाई कार्यों (कुआं खोदने, उथले नलकूपों, कुओं को गहरा करना या उसका पुरर्निर्माण करना, रहट, पम्प सेट आदि की व्यवस्था करना) के लिए जहाँ छोटे कृषकों को 25 प्रतिशत पूंजी लगती है। सीमान्त कृषकों की 33.2% पूंजी लगती है या जो सहायता सरकार द्वारा दी जाती है वह पंचायतों की जानकारी में रहनी चाहिए। पंचायतों को उपर्युक्त कार्यों के लिए धनराशि को स्वीकृत करने का कार्य सौंपा जाना चाहिए। बशर्ते संस्थागत वित्तीय स्रोतों से इस रकम की स्वीकृति मिल गयी हो। पंचायतें बड़े आकार वाले कुओं की जानकारी रखे, उनकी सिफारिश करे तथा इन बात का ध्यान रखें कि रखरखाव के लिए

---

1. क्या आयोजन के क्षेत्र में जिला पंचायतों को और अधिक सत्ता प्रदान किया जाना चाहिए।

सिंचाई दर का भुगतान करावे। लगु एवं कुटीर उद्योग कारीगरों के प्रशिक्षण आदि में पंचायत आवश्यक भूमिका निभा सकती है।

'जब एक कार्य को कार्यान्वयन कार्य का दर्जा मिल जाता है तो यह बात स्पष्ट हो जाती है कि पंचायतों को सौंपे जाने वाले कार्यों के साथ ही पूंजी की भी व्यवस्था की जानी चाहिए। अगर कृषि मंडल पंचायत का एक कार्य है तो इससे किसी को लाभ नहीं प्राप्त होता है। यदि कार्यक्रम या परियोजना के साथ उसका सम्बन्ध न हो जिला पंचायतों को आर्थिक रूप में कार्यान्वयन की अपनी विशिष्ट भूमिका की जानकारी होनी चाहिए। जहां सरकार जिला पंचायतं को केवल सामान्य सहायता या समर्थन देने के रूप में मान्यता देना चाहती है। वहाँ इन्हें प्रोत्साहन सम्बन्धी कार्य माना जा सकता है'[1]

अनुभव के आधार पर पंचायत नेताओं ने सर्वेक्षण के दौरान यह स्पष्ट किया कि जिला पंचायत के कार्यान्वयन के क्षेत्र का विस्तार किया जाना चाहिए। इस तथ्य की आवश्यकता को सर्वेक्षित पंचायत के 73% प्रतिशत ग्रामीण नेताओं ने स्वीकार किया जब कि 27 प्रतिशत नेताओं ने इस तथ्य को आवश्यक महसूस नहीं किया। अतः व्यवहारिक प्रश्न यह है कि यदि लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण को तथ्यपूर्ण बनाना है तो अनिवार्य रूप से पंचायती राज संस्थाओं के कार्यान्वयन क्षेत्र को व्यापक एवं विस्तृत किया जाय।

एक प्रश्न के सन्दर्भ में फतेहपुर जिला पंचायत[2] के विभिन्न ग्रामीण नेताओं ने स्वीकार किया कि आयोजन के क्षेत्र में जिला पंचायत को कार्य कुशल एवं लोकतांत्रिक बनाने के लिए जिला स्तर पर आयोजन का दायित्व इस संस्था के द्वारा सम्पन्न किया जाना समीचीन होगा।

अपेक्षाकृत बड़े शहरों में नगर पालिका सुख सुविधाओं के लिए साधन जुटाने का कार्य करती है और राज्य सरकार नगर पालिका के आर्थिक सहयोग के साथ अन्य प्रकार के सहयोग भी करती है। जिला पंचायतों का अधिकांश कार्य नगरपालिका के कार्य के समान है। जिला पंचायतें मौजूदा सम्बन्ध, जल सप्लाई, स्वास्थ्य, शिक्षा जैसे कल्याण और सुख सुविधाओं के प्रदान करने वाले कार्यों से है। ग्रामीण क्षेत्रों में निम्न स्तर की सुविधा को देखते हुए नगरपालिका और नागरिक आवश्यकताओं को देखते हुए नगरपालिका और नागरिक

---

1. सर्वेक्षण से उपलब्ध सूचनायें।
2. क्या आयोजन का दायित्व जिला पंचायतों को सौंपा जाना चाहिए?

आवश्यकताओं के साथ इस तरह का पूर्ण अधिकार पंचायती राज संस्थाओं के पास होना अपरिहार्य है। इनके विषय में जागरुकता आवश्यक है। कुछ आवश्यकतायें ऐसी हैं जो स्थानीय कही जा सकती है। इन्हें किन्हीं राज्य योजना में सम्मिलित नहीं किया जा सकता है। इसके लिए पर्याप्त अतिरिक्त कार्यवाही की आवश्यकता है।

जिला स्तर पर इस तरह के कार्य आरम्भ करने होंगे। अतः इस तरह के कार्यों को पंचायतों के तीनों स्तरों को सौंपना आवश्यक होगा। बलवन्त राय मेहता अध्ययन दल ने सरकार को यह सुझाव दिया था कि राज्य सरकारों द्वारा पंचायती राज संस्थाओं को हस्तान्तरित किये जाने वाले अनुदान का अधिकांश भाग जिला पंचायतों को मिलना चाहिए।[1] पंचायती राज संस्थाओं द्वारा अर्जित निधि और सरकार द्वारा दिये गये अनुदान का उपयोग पंचायती राज संस्थाओं के सुख-सुविधाओं के क़ार्यों के लिए करें। वे अपने निजी कार्यक्रम तैयार कर सकते हैं। इसके लिए राज्य सरकार से स्वीकृति लेने की आवश्यकता नहीं है। लेकिन सम्पूर्ण बजट के लिए सम्बद्ध स्तर पर राज्य सरकार से स्वीकृति लेनी होगी। अगर पंचायती राज संस्थायें इन कार्यक्रमों को कार्यान्वित करने में सक्षम न हों तो उच्च स्तर पर तकनीकी अधिकारी उसकी मदद कर सकते हैं। इन कार्यों को बड़े पैमाने पर जिला पंचायत स्तर पर निपटाना होगा। अतः जिला के लिए निधि के आवंटन में जिला पंचायतों के गठन में सबको एक समान लाभ देना होगा।

पंचायती राज संस्थाओं के नियामक कार्य अपना विशिष्ट महत्व रखते हैं। ये सब कार्य सामान्यतः कानून और व्यवस्था से सम्बन्धित हैं। प्रायः राज्य सरकार पंचायती राज संस्थाओं को कोई कानून व्यवस्था लागू करने वाले कोई कार्य नहीं देती है। वर्तमान स्थिति में इस स्तर पर यह युक्तिसंगत लगता है। प्रगतिशील समाज में नित नये परिवर्तन हो रहे हैं तो तनाव की स्थिति का पैदा होना स्वाभाविक है। यह स्थिति दीर्घकाल तक बनी रह सकती है। पंचायती राज संस्थायें इन ताकतों के प्रभाव तथा आन्तरिक व्यवस्था को स्वयं प्रभावित करती हैं। अतः कानून एवं व्यवस्था अथवा अन्य नियामक अधिनियमों के अन्तर्गत आने वाले कार्य जिनमें सामाजिक कानून सम्मिलित है, केवल कलेक्टर के पास रह सकते हैं। यह उचित भी नहीं प्रतीत होता कि ऐसे कार्य पंचायती राज संस्थाओं को प्रदान किये जायें।

सर्वेक्षण एवं अध्ययन से स्पष्ट होता है कि फतेहपुर जिला पंचायत के अवस्थित ग्रामीण

---

1. द्रष्टव्य बलवन्तराय मेहता अध्ययन दल कमेटी रिपोर्ट

नेताओं ने अपने व्यक्तिगत अनुभवों के आधार पर[1] यह स्वीकार किया कि विधि एवं व्यवस्था से सम्बन्धित नियामक शक्तियों को पंचायती राज संस्थाओं को हस्तान्तरित किया जाना वर्तमान सामाजिक एवं आर्थिक परिवेश में पूर्ण रूपेण अनुचित होगा। नियामक प्राधिकार जिला पंचायतों को हस्तान्तरण सर्वदा अनुचित होगा। इस तथ्य को 83 प्रतिशत ग्रामीण पंचायत नेताओं ने स्वीकार किया। जब कि 17 प्रतिशत ग्रामीण जन प्रतिनिधि इसे उचित स्वीकार करते हैं। विधि व्यवस्था के नियमन से पंचायती राज संस्थाओं को सम्बद्ध नहीं किया जाना ही इसकी उपयोगिता होगी।

प्रश्न - क्या विधि व्यवस्था से सम्बन्धित नियामक अधिकार जिला पंचायतों को दिया जाना चाहिए?

तालिका - 9

विचार अभिव्यक्ति	**संख्या**	**प्रतिशत**
अस्वीकार	166	83%
स्वीकार	34	17%
योग	200	100%

राष्ट्र के समग्र क्षेत्र (ग्रामीण एवं शहरी) में विकासात्मक और नियामक अधिकारों के बीच एक रेखा है जो अत्यन्त अस्पष्ट और धुंधली है। विकासात्मक कार्यों के कार्यान्वयन से सम्बन्धित विधान होंगे। स्कूल का निरीक्षण, महामारी की स्थिति में अनिवार्य टीकायोजना का कार्यान्वयन, मछली पकड़ने, चारा उपयोग के अधिकारों को लागू करना तथा इसी तरह के अन्य कार्य या तो नियात्मक कार्यों पर आधारित होते हैं या उनसे समायोजित होते हैं। ऐसे नियात्मक कार्य जिनका सम्बन्ध विकास के कार्यों से बहुत गहरा होता है जिला पंचायतों को सौंपे जाते हैं तो राज्य सरकार को उनके साथ नियात्मक कार्य के उन हिस्सों को भी शामिल करना होगा जिनका निपटारा उन्हें करना है।[2]

गत्यात्मक कार्यों का प्रभाव नियामक विभागों पर भी होता है। राजस्व विभाग, नियात्मक विभाग भी हैं, इसे पंचायती राज संस्थाओं को प्रोत्साहन देने और उनके कार्यक्रमों को आसान बनाने पर जोर देना चाहिए। लघु सिंचाई कार्यों को आरम्भ करने की स्वीकृति

---

1. क्या विधि व्यवस्था से सम्बन्धित नियामक अधिकार जिला पंचायत को जे दिया जाना चाहिए?
2. सर्वेक्षण से प्राप्त सूचनाओं के आधार पर।

देने में, मछली पालन में, तालाबों का उपयुक्त ढंग से उपभोग करने में, झाड़ी वाले जंगलों में चारा वृक्ष लगाने के लिए जिला पंचायत के प्रस्ताव तैयार करने में राजस्व विभाग को भी सहयोगात्मक और विकासात्मक भूमिका निभानी चाहिए।[1] अन्यथा पंचायती राज संस्थाओं को संतोषजनक ढंग से कार्य करना बहुत कठिन हो जाता है। जिला पंचायतों की सफल कार्य पद्धति के लिए कसौटी के रूप में राज्य सरकार को चाहिए कि वह नियात्मक कार्यों का हस्तान्तरण स्थानीय स्वशासन को करे। जिला कलेक्टर को भी जिला पंचायत के अधीन कर दे। पंचायती राज के समर्थकों की इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए सक्रिय रहने की आवश्यकता है। जिला पंचायत के विकास सम्बन्धी सारे कार्यों को निपटाने में सक्षम होना चाहिए और विकासात्मक निजी योजना का प्रारूप तैयार करना चाहिए। सरकार को साधन जुटाने का कार्य जिला पंचायतों को सहयोग देना चाहिए जिससे जिला पंचायत में स्थिरता आयेगी और उपयुक्त क्रिया विधि भी तैयार होगी।

सर्वेक्षण के समय फतेहपुर जिला पंचायत के अन्तर्गत अवस्थित पंचायतों के नेताओं ने इस तथ्य को एक प्रश्न[2] के सन्दर्भ में स्वीकार किया कि विकासात्मक योजना को तैयार करने एवं उनके क्रियान्वयन का उत्तरदायित्व पंचायती राज संस्थाओं को प्रदान किया जाय।

प्रश्न- क्या विकासात्मक कार्यों की योजना एवं क्रियान्वयन का कार्य जिला पंचायतों को सौंपा जाना चाहिए?

तालिका - 10

विचार अभिव्यक्ति	संख्या	प्रतिशत
सहमत	130	65%
असहमत	70	35%
योग	200	100%

इस तथ्य की इस आवश्यकता को 65 प्रतिशत पंचायती राज संस्थाओं के नेताओं ने यह स्वीकार किया कि जब कि 35 प्रतिशत नेताओं को इस तथ्य से असहमति थी। अतः यह अवधारणा प्रचलित एवं लोकप्रिय है कि विकासात्मक कार्यों की योजना बनाना एवं उनके क्रियान्वयन करने का दायित्व जिला पंचायतों को दिया जाना लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण के

---

1. द्रष्टव्य पंचायती राज समिति की रिपोर्ट सन् 1978
2. क्या विकासात्मक कार्यों की योजना एवं क्रियान्वयन का कार्य जिला पंचायतों को सौंपा जाना चाहिए?

लिए आवश्यक होगा एवं औचित्यपूर्ण होगा।

जिला पंचायतों क विकास केन्द्रों के साथ गहरा सम्बन्ध स्थापित करने की आवश्यकता है। जहाँ जिला मुख्यालयों में जब किसी अन्य दिशा में विकास हो रहा है। वहां अनेक पंचायतों को अनौपचारिक रूप से लेकिन विकास केन्द्र के नियमित रूप से और नियम समय एक साथ बैठकर विचार-विमर्श करने की आवश्यकता है। अन्य संगठनों के साहचर्य में वे विपणन निवेशों की आपूर्ति, सुख-सुविधाओं के प्रोत्साहन, वन्य सेवाओं एवं कल्याण कार्यो के लिए सुविधायें उपलब्ध कराने पर विचार कर सकती है। जिला पंचायत की अपनी समस्यायें सामने रखनी चाहिए जिससे कि उन पर विचार किया जा सके तथा हल किया जा सके। जिला पंचायत परियोजना क्रियान्वयन का सबसे उच्च पंचायती स्तर है जब और अधिक परियोजनायें उन्हें सौंपी जाती हैं और तकनीकी विशेषज्ञों की नियुक्ति ऊपर से नीचे की ओर होती है जो जिला पंचायत धीरे-धीरे सुझाव देने या अपनी निजी परियोजना तैयार करने के योग्य हो जायेगी।

'इस बात में सत्यता का अनुभव किया जा रहा है कि वर्तमान समय में जिला स्तर पर पंचायती राज व्यवस्था का कार्य सन्तोषजनक नहीं है। इसका कारण यह है कि उसके पास पर्याप्त साधन नहीं हैं। बहुकोणीय दृष्टि से देखा जाय तो स्पष्ट परिलक्षित होता है कि जिला विकेन्द्रीकरण प्रक्रिया में पंचायती राज संस्थाओं की पहली इकाई बन गयी है। लेकिन जब सभी कार्यों का विकेन्द्रीकरण जिला स्तर पर किया जायेगा तो उसकी त्रुटियां स्पष्ट हो जायेंगी। जिला पंचायत राज्य सरकार द्वारा सौंपे जाने वाले कुछ बहुत ही महत्वपूर्ण कार्यों को नीचे से ऊपर की ओर भेजना होगा। जैसें- समग्र आयोजन का मानचित्र तैयार करना, साधन एकत्रीकरण, ऋण नीति तैयार करना, निरीक्षण आदि। इसके बाद ये कार्य स्वाभाविक रूप से जिला पंचायत द्वारा आरम्भ किये जायेंगे। इस प्रकार ये कार्य अन्ततः केवल जिला पंचायत और मण्डल पंचायत स्तर पर पूरे किये जायेंगे।[1]

इस अवस्था में पंचायती राज संस्थाओं को राज्य सरकार द्वारा तैयार किये गये कार्यक्रमों को कार्यान्वित करने का कार्य आरम्भ करना होगा। 'अपनी निजी आवश्यकताओं और परियोजनाओं की रूपरेखा तैयार करने के लिए उन्हें शक्तिशाली बनाने की प्रक्रिया विधि पर राज्य सरकारों को विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है। जिला पंचायत अपनी निजी

---

1. दृष्टव्य पंचायती राज समिति प्रतिवेदन 1978 सीट, पृष्ठ 236

योजनायें तैयार करेगी जिन्हें निम्न स्तरों पर तैयार की गयी योजनाओं से पूरा किया जायेगा तथा इसके लिए राज्य सरकार के साथ विचार करेगी' जिसे कि राज्य सरकार योजना तैयार की जा सके। अपनी निजी योजनायें तैयार करना और उन्हे कार्यान्वित करने का कार्य करना। एजेन्सी कार्य करने की ऐसी अवस्था है जिस तक पहुंचाने में अभी समय लगेगा।'[1]

पंचायती राज की सफलता इस बात पर निर्भर है कि आयोजन एवं कार्यान्वयन में कितनी कुशलता यह बरत रहा है। समुचित आयोजन और समुचित कार्यान्वयन इसकी सफलता की कुंजी है। विकेन्द्रीकरण के सिद्धान्त पर पंचायती राज व्यवस्था का महल खड़ा किया जा सकता है। सिद्धान्त और आधार के औचित्य के अनुरूप इसकी प्रशस्ति होगी।' योजना दस्तावेज में यह उल्लेख किया गया है कि किसी भी योजना के तब तक सफल होने की संभावना नहीं है जब तक कि देश के लाखों छोटे कृषक इसके उद्देश्य को पूरा नहीं कर सकते हैं। उसे पूरा करने में हाथ नहीं बंटाते और उसे अपनी निजी योजना के रूप में मान्यता नहीं देते हैं।[2]

इस सन्दर्भ में पंचायती राज नेताओं के अवधारणा का विश्लेषण एक प्रश्न[3] के माध्यम से किया गया तो स्पष्ट होता है कि इन नेताओं में अधिकांश 63 प्रतिशत ने स्वीकार किया कि जिला स्तर पर नियोजन एवं कार्यान्वयन में समुचित सामंजस्य एवं समन्वयन होना अनिवार्य है। तभी लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण सार्थक एवं सफल होगा तथा अनेक बाधायें दूर होंगी। नियोजन एवं क्रियान्वयन में समन्वय की आवश्यकता पर 37 प्रतिशत ग्रामीण नेताओं ने बल नहीं दिया। लेकिन प्रचलित अवधारणा इस प्रकार के समन्वय के पक्ष में है।

प्रश्न- क्या जिला स्तर पर नियोजन एवं क्रियान्वयन में समुचित सामंजस्य एवं समन्वय होना अनिवार्य है?

तालिका - 11

विचार अभिव्यक्ति	संख्या	प्रतिशत
स्वीकार	126	63%
अस्वीकार	74	37%
योग	200	100%

1. सर्वेक्षण से प्राप्त सूचनायें।
2. पंचायती राज समिति रिपोर्ट 1999 औप. सीट, पृष्ठ 59
3. क्या जिला स्तर पर नियोजन एवं क्रियान्वयन के समुचित सामंजस्य एवं समन्वय होना अनिवार्य है।

बलवन्तराय मेहता अध्ययन दल के प्रतिवेदन के पश्चात् सम्पूर्ण देश में पंचायती राज संस्थाओं की स्थापना के साथ आयोजन प्रक्रिया में जिस मात्रा में लोकप्रिय सहभागिता के विचार और गांव के ऊपर स्तर पर लोकतांत्रिक जनप्रिय संस्थाओं के साथ कुछ सीमा तक परस्पर सम्बन्ध का विकास हुआ मालूम होता है, उसी अनुपात में जिला पंचायतों की कार्य पद्धति की सुस्पष्टता एवं तदनुकूल स्पष्ट होती है। 'बलवन्तराय मेहता अध्ययन दल (जनवरी 1957) लोकतांत्रिक आयोजन की जरूरतों के अनुरूप इसे बनाने के लिए जिला प्रशासन के ढांचे के पुर्नगठन का प्रश्न है, सम्बन्धित अपने भौतिक विचारार्थ विषय में कुछ नहीं बात जोड़ी है। यद्यपि लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण से सम्बन्धित दल के प्रस्ताव ने भारत की आर्थिक प्रक्रिया में एक बड़े संस्थागत अभाव को पूरा किया लेकिन न तो पंचायती राज संस्थाओं का कार्यकरण और न ही निम्न स्तरों पर योजनाओं का विकास उसकी तीव्रता, व्यापकता या सफलता में वृद्धि कर पाया है।'[1]

'कुछ अधिनियमों में जिला स्तर के पंचायत के आयोजन कार्य का उल्लेख किया गया। आन्ध्र अधिनियम ने जिला पंचायत को जिले से सम्बन्धित तैयार की गयी नीति एवं योजनाओं का सम्बन्ध समन्वय एंव एकीकरण करने तथा सम्पूर्ण जिले से सम्बन्धित योजनायें तैयार करने का अधिकार दिया है। बिहार जिला परिषद अधिनियम जिला परिषद को जिले के लिए योजनायें तैयार करने का अधिकार प्रदान करती हैं। हिमाचल प्रदेश अधिनियम के अनुसार जिला परिषद, प्लान परियोजनाओं, स्कीमोंया दो चार अधिक समितियों के लिए सामान्य अन्य कार्यों को तैयार करने के लिए सलाह देती हैं और उससे पंचायत समितियों से सम्बन्धित विकास-योजनाओं के सम्बन्ध, समन्वय और समीकरण का अधिकार प्राप्त है। [2] पंजाब, राजस्थान एवं पश्चिम बंगाल के अधिनियमों में समन्वय की बात कही गयी है, अतः जिले की सम्पूर्ण योजना में जिला पंचायत की भूमिका का लम्बे समय से विचार होता रहा है। अतः स्पष्ट होता कि विभिन्न राज्यों के अधिनियमों में इस महत्वपूर्ण तथ्यों का उपयोग किया गया है।

'दांतेवाला कार्यकारी दल ने आयोजन वाले मसले का बड़ी योग्यता से विवेचन किया है। इस दल ने जिला पंचायत द्वारा समुचित रूप से निपटाये जाने वाले कार्यों से सम्बन्धित समस्याओं पर विचार किया है। ये क्षेत्र आयोजन एवं विकास सम्बन्धी कार्यों के कार्यान्वयन

---

1. बलवन्त राय मेहता अध्ययन दल प्रतिवेदन 1937
2. पंचायती समिति रिपोर्ट 1978 औप. सीट, पृष्ठ 60

दोनों दृष्टियों से महत्वपूर्ण होंगे। विकास केन्द्र सम्पूर्ण आर्थिक गति को क्रियाशील बनायेंगे और समीपवर्ती क्षेत्रों के लिए सुख-सुविधाओं में सुधार लाने के कार्य में सहायता करेंगे।'[1]

राष्ट्रीय कृषि आयोग के अनुसार आर्थिक तथा सामाजिक स्तर पर अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित जनजातियों को सामान्य विकास संरचना के अन्तर्गत गांवों के गरीब लोगों के साथ जोड़ा जा सकता है। अनुसूचित जातियों /जनजातियों के विकास हेतु स्वीकृत नीति के अनुसार - 'नौवीं पंचवर्षीय योजना में विकास पर मुख्य बल सामान्य क्षेत्रों द्वारा दिया जाना था। राज्यों/ संघ शासित क्षेत्रों में योजना कार्यान्वियन विभाग को ऐसी योजनायें बनाने के लिए कहा गया था। जिनके लाभ अनुसूचित जातियों/जनजातियों तथा समाज के अन्य कमजोर वर्गों को पहुंच सके।'[2]

बड़ी मात्रा में जल संसाधनों और सामुदायिक भूमि को कानूनी तौर पर पंचायतों को नियंत्रण में दे दिया जाता है। दुर्भाग्य है कि इनका निर्धन वर्गों के लिए पूर्णतः उपयोग नहीं किया जाता है। अतः पंचायतों को केवल भूमि उपलब्ध करायी जाती है। बल्कि निर्धन वर्गों के विकास से सम्बन्धित ऐसी जमीनों पर आधारित कार्यक्रम तैयार किया जाना चाहिए। पंचायतों के कार्य पद्धति के अन्तर्गत इस बात पर भी ध्यान दिया जाना चाहिए कि पंचायतें उन अतिक्रमित जमीन को उसके मौलिक कमजोर वर्ग के मालिक को सौप दिये जाने का कार्यक्रम अख्तियार करें। जिन जमीनों को गांव के प्रभावशाली लोग सामुदायिक सम्पत्ति के बहुमूल्य भागों का अतिक्रमण करते हैं। 'जिला पंचायतों को अतिक्रमण घटाने सहित इन जमीनों के सम्बन्ध में नियात्मक कार्य विकासात्मक कार्यों के एक भाग के रूप में सम्मिलित किये गये हैं।[3]

वन विभाग के पास बड़ी मात्रा में आरक्षित बाग होते हैं जिनमें पेड़ भी नहीं होते हैं। जिनमें उपयोगी लकड़ियां नहीं होती हैं। वन विभाग के संरक्षण में गांवों के इर्द-गिर्द संरक्षित वन भी होते हैं जिनमें उपयोगी लकड़ियां नहीं होती हैं। पंचायती राज संस्थाओं के माध्यम से इन आरक्षित वनों के क्षेत्रों को बंटाने का अभियान कार्य चलाया जा रहा है। अपरिभाषित क्षेत्र की भूमि को भी निर्धन वर्गों को आवंटित करना जिला पंचायतों के कार्य क्षेत्र के अन्तर्गत है। कुछ क्षेत्र ऐसे होते हैं जिन्हें बंजर कहा जाता है। कमजोर वर्ग के लाखों लोगों की ऐसी भूमि आवंटन की व्यवस्था जिला पंचायतों के कार्यक्रम का एक अंग है। भूमिहीन श्रमिक जो

---

1. पूर्ववत्, पृष्ठ 61
2. द्रष्टव्य नौवीं पंचवर्षीय योजना, भारत सरकार 20002
3. सर्वेक्षण से प्राप्त सूचनाओंओ के आधर पर

सर्वांशतः आदिवासी, हरिजन और पिछड़ी श्रेणियों की जातियों में आते हैं, को यदि उपर्युक्त प्रकार की भूमि को आवंटित किया जाता है तो कमजोर वर्गों को अधिक आर्थिक सुदृढ़ता प्राप्त करने का अवसर मिल जाता है। कुछ क्षेत्र ऐसे हैं जहाँ अनुपयोगी खारा जल भरा रहता है। सहकारी समितियों के द्वारा संसाधनों, ऊर्जा और अपेक्षित टेक्नालॉजी को मुहैया कराकर मछली पालन का कार्य भी करवाने का कार्य अनेक राज्यों में जिला पंचायतों के कार्य का अंग है। कठिनाई यह है कि जिला पंचायतों पर ग्रामीण विकास के लिए जो दायित्व लादे गये हैं उनकी पूर्ति के लिए अप्रचुर राशि इस संस्था को उपलब्ध करायी जाती रही है। फल यह हुआ कि सारे कार्य मात्र नारा बनकर रह गये हैं। कार्यक्रम के कार्यान्वयन के लिए राज्य सरकारों को सम्बन्धित स्थानीय स्तरों पर पर्याप्त शक्तियों और कार्यों का मात्र विकेन्द्रीकरण करना तब तक कारगर नहीं होगा जब तक अनुमानित वित्तीय संसाधन जिला पंचायतों को उपलब्ध नहीं कराया जाता है।

बलवन्त राय मेहता के नेतृत्व में गठित पंचायती राज समिति की सिफारिशें 'पंचायती राज के गठन, आय, कार्यकरण पर विशेष प्रकाश डालती हैं। उत्तर प्रदेश तथा अन्य राज्यों में जो पंचायती चुनाव सम्पन्न हुआ है वह उक्त समिति की अनुशंशाओं और सिफारिशों पर आधारित है। जिला पंचायतों के कार्य पद्धति से सम्बन्धित सिफारिशें निम्नवत् हैं-[1]

एक जिले से सम्बन्धित सभी विकास कार्य जो अब राज्य सरकार द्वारा सम्पन्न किये जाते हैं, जिला परिषदों को सौंपे जायेंगे। कुछ एक कार्यों में जो इस प्रकार के विकेन्द्रित किये जा रहे हैं, ये शामिल हैं कृषि और सम्बद्ध क्षेत्र, स्वास्थ्य, शिक्षा, संचार, ग्रामीण उद्योग, विपणन, पिछड़े वर्गों का कल्याण आदि।

जहां तक शिक्षा का सम्बन्ध है। यह जिला परिषद को इस शर्त पर सौंपी जा सकती है कि 'स्थानान्तरण और नियुक्ति की देखरेख के लिए वह एक विशेष समिति का गठन करेगी। स्थानीय निकायों द्वारा पर्यवेक्षण से न केवल अध्यापकों की उपस्थिति में सुधार होगा वरन् यह आशा की जाती है कि विद्यार्थियों के स्कूल छोड़ने का अनुपात भी कम हो जायेगा। प्रौढ़ शिक्षा के कार्यक्रम को भी बढ़ावा मिलेगा।'[2] पंचायतों के सामूहिक कार्यों को गतिशील बनाने, संगठन बनाने तथा परियोजना तैयार करने के लिए मुख्य भूमिका अदा करनी होगी।

---

1. पंचायती राज समिति रिपोर्ट, 1978 औप. सीट 164

2. पूर्ववत्, पृष्ठ 166

जिला पंचायतों के लिए जिस संसाधन की आवश्यकता है वह है कार्यान्वयन के लिए उन्हें सौंपे गये कार्यों के साथ-साथ सोद्देश्य कार्य आवंटन तथा जन वितरण।

जिला पंचायत की पूर्ण रूपेण स्थापना हो जाने पर जब वे उपलब्ध अथवा उनको सौंपे गये संसाधनों से अपनी योजनाओं को कार्यान्वित कर सकती है तब जिला पंचायतों को नियात्मक कार्य सौंपने के प्रश्न का पुनरीक्षण किया जाय।

जिला पंचायतों को उत्पादन केन्द्रों के साथ उचित रूप से समन्वित किया जाना चाहिए। इस सम्बन्ध में अन्य संस्थाओं के सहयोग से उन्हें विपणन, निवेश, आपूर्ति, प्रतिक्षण तथा सेवा और कल्याण की जरूरतों से सम्बन्धित आवश्यक निर्णय लेने होंगे।

'विविध प्रकार के व्यवसायों के विकास कार्यक्रमोंओ की अनुसूचित जातियों/अनुसूचित जनजातियों के लिए अधिक मात्रा में प्रासंगिकता है। पंचायतों को डेयरी, मुर्गी पालन, सुअर पालन, मछली पालन, जंगल वन आदि जैसे क्षेत्रों में ग्रामीण इलाकों में इन व्यवसायिक धन्धों को शुरू करने में शामिल किया जा सकता है।'[1]

जिला पंचायतों के जन संस्था के रूप में अनुसूचित जातियों/अनुसूचित जनजातियों के लिए वित्त विकास निगमों (जो कुछ राज्यों में कार्य कर रहे हैं और जहां पर ये विद्यमान नहीं हैं, वहां स्थापित किया जाना चाहिए) को अनुसूचित जातियों/जनजातियों पर आधारित विभिन्न कार्यक्रमों के लिए वित्तीय तथा तकनीकी सहायता प्रदान करने हेतु क्षेत्र आधार पर सहायता सुलभ कर सकती है।

जिला पंचायत विकासात्मक, म्यूनिसिपल तथा कल्याणकारी कार्यों को करती रहेगी। अतः यह उनके लिए ही सम्भव होगा कि वे अंशकालिक सहायक के बजाय एक पूर्णकालिक पंचायत अधिकारी रखें। उनका वेतन व भत्ते पर्याप्त रूप से योग्य कार्मिकों को आकृष्ट करने के लिए उपयुक्त होनी चाहिए। जिला स्तर पर विभिन्न विकास विभागों को यथेष्ट रूप से कर्मचारी वर्ग (अर्थात् कृषि विस्तार अधिकारी, पशु चिकित्सा, स्टॉक मैन, मछली पालन, विस्तार सहायक, वाणिज्यिक फसल कार्यकर्ता, लघु उद्योग प्रोत्साहन कर्मचारी और स्वास्थ्य उपकेन्द्र कर्मचारी वर्ग आदि) को जिला पंचायत स्तर पर कार्य करना चाहिए।

विकास कार्यों की मात्रा में वृद्धि और उनकी जटिलता के कारण विकासात्मक अपेक्षाओं

---

1. पूर्ववत्, पृष्ठ 167

का निरन्तर अध्ययन करने और पंचायती राज संस्थाओं की देखभाल करने वाले राज्य स्तर के विभागों के ढांचे तथा कार्यों का निर्माण करने की आवश्यकता है। पंचायती राज विभाग में जिस प्रकार महत्वपूर्ण विभागों के लिए मंत्री आदि की व्यवस्था की जाती है, होनी चाहिए। रोजमर्रा के प्रशासनिक कार्यों के लिए सुदृढ़ पंचायती राज निदेशालय और विकास आयुक्त के अधीन एक सचिवालय विभाग अनिवार्य होगा। लेकिन विकास विभागों को पंचायती राज संस्थाओं के सफल कार्यपद्धति की भूमिका निभानी होगी।

राज्य सरकार को स्वतंत्र टीम द्वारा, ज़िनमें महत्वपूर्ण भूमिका निभाने वाली शिक्षा संस्थायें और विश्वविद्यालय भी शामिल हैं - जिला पंचायतों की कार्य पद्धति का समय-समय पर स्वतंत्र मूल्यांकन कराने की व्यवस्था भी करानी चाहिए।

कार्य पद्धति की सीमायें आय-व्यय के अनुपात में बढ़ती घटती हैं। एक तरह जहां जिला पंचायतों की कार्य पद्धति का उल्लेख आवश्यक है वहीं दूसरी ओर कार्य पद्धति के सफल निर्वाह के लिए जिला पंचायतोंओ की आय उसकी रीढ़ है। 'बलवन्त राय मेहता अध्ययन दल ने अपने प्रतिवेदन में जिला पंचायतों के कार्य पद्धतियों को सुदृढ़ आधार प्रदान करने हेतु वित्त के प्रचुर प्रावधान का भी उल्लेख किया है।'[1]

जिला पंचायतों को दी गयी कराधान शक्तियाँ सीमित तथा विशिष्ट होनी चहिए और उन्हें न्यायोचित रूप से सम्पादित किया जाना चाहिए। सामाजिक न्याय सुनिश्चित करने के लिए कुछ एक धन्धों तथा व्यवसायों जिनमें कमजोर वर्गों का बाहुल्य है, को साविधिक उपबन्धों के माध्यम से छोड़ दिया जाना चाहिए। करों के अतिरिक्त पंचायती राज संस्थाओं की रोशनी, सफाई, जलापूर्ति आदि ऐसी सेवाओं के लिए शुल्क/कर उगाहना चाहिए। एकरूपता के अभाव व मनमाने पन से बचने के लिए इन शुल्कों को निम्नतम तथा अधिकतम दर को निर्धारित किया जाना चाहिए। चूंकि कर लगाने की शक्ति उनकी वसूली की शक्ति से अलग नहीं की जानी चाहिए। अतः जिला पंचायतों के अधिकारियोंओ को स्वयं कर वसूलना चाहिए।

आय की सुदृढ़ता पर आधारित अतिरिक्त ग्रामीण उत्पादन कार्य के लिए पंचायतों को आत्म निर्भर होने की आवश्यकता है। सभी लोगों में अर्न्तनिहित चेतना को विकसित करने हेतु प्रौढ़ शिक्षा कार्यक्रमों को महत्व देना चाहिए। इस प्रकार जिला पंचायतों के कार्य पद्धति

---

1. दृष्टव्य - बलवन्तराय मेहता अध्ययन दल रिपोर्ट 1957

में विश्वास सुदृढ़ होगा। जिला पंचायत के ऐसे कार्यक्रम आयोजित करने में मुख्य भूमिका अदा करना होगा।

जिला पंचायतों से यह प्रत्याशा की जाती है कि लोगों के आर्थिक एवं सामाजिक कार्य के बारे में समग्र दृष्टिकोण अपनायें जब कि सहकारी समितियों की आर्थिक आवश्यकताओं को पूरा करना है। इस जिला पंचायत तथा सहकारी समितियों के बीच अधीनस्थ स्वरूप का सम्बन्ध न होकर समन्वय का सम्बन्ध होना चाहिए।

एक प्रश्न के सन्दर्भ में[1] में सर्वेक्षित फतेहपुर जिला पंचायत के नेताओं में 57 प्रतिशत ने स्वीकार किया है कि इन दोनों संस्थाओं के बीच समन्वयात्मक सम्बन्ध होना आवश्यक है ताकि विकासात्मक कार्यों को समुचित रूप से सम्पन्न किया जा सके। इस प्रकार के समन्वय की आवश्यकता को 43 प्रतिशत नेताओं ने अस्वीकार किया है लेकिन प्रचलित अवधारणा समन्वयात्मक सम्बन्ध के अनुपक्ष में ही है।

प्रश्न- क्या पंचायती राज संस्थाओं एवं सहकारी समितियों में समन्वयात्मक सम्बन्ध अनिवार्य हैं?

तालिका - 12

विचार अभिव्यक्ति	**संख्या**	**प्रतिशत**
आवश्यक	114	57%
अनावश्यक	86	43%
योग	200	100%

पंचायती राज व्यवस्था एवं संस्था के उपर्युक्त कार्य पद्धति के आलोक में फतेहपुर जिला पंचायत की कार्य पद्धति का सोदाहरण लिया गया है।

पूर्व अध्यायों में यह उल्लेख किया जा चुका है कि फतेहपुर जिला पंचायत न सिर्फ पिछड़ी हुई है बल्कि फतेहपुर जनपद ही उत्तर प्रदेश के पिछड़े हुए जनपदों में से एक है। पंचायती राज की संकल्पना ऐसे क्षेत्रों के उत्पादन से अधिक सम्बन्धित होनी चाहिए। जिला मुख्यालयों से सुदूर अवस्थित रहने तथा उसी अनुपात में विकास से दूर रहने के कारण यह

---

1. क्या पंचायती राज संस्थाओं और सहकारी समितियों के बीच समन्वयात्मक सम्बन्ध होना अनिवार्य है।

जनपद पिछड़ा रहा है। पंचायतें इसकी विकास की गति को तेज करने के लिए कारगर सिद्ध हो सकती हैं। ऐसी आशायें और विश्वास ही पंचायती राज की स्थापना के पीछे खड़े थे। आर्थिक, राजनीतिक, शैक्षिक एवं सामाजिक विकास के अनुपात में यातायात के विकास की सम्भावनायें पंचायती राज व्यवस्था में निहित थीं और यह भी विश्वास था कि यातायात की सुविधा के अनुरूप पंचायती राज व्यवस्था फतेहपुर जनपद में आर्थिक, राजनीतिक, शैक्षिक एवं सामाजिक उत्कर्ष पैदा कर सकेंगी।'[1] परन्तु पंचायती राज व्यवस्था एवं इसकी संस्थाओं की कार्य पद्धति के सर्वेक्षण करने पर स्पष्ट होता है कि सारे देश के नेतृत्वकर्ताओं एवं देश की सारी जनता की महत्वाकांक्षा ध्वस्त होकर रह गयी है और यह जिला पंचायत अपने विकास मार्ग में जहां की तहां खड़ी रह गयी है। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद जो भी विकास दृष्टिगोचर हो रहे हैं वे जिला पंचायतों की देन न होकर सामान्य राष्ट्रीय प्रशासन की देन हैं।

एक प्रश्न के सन्दर्भ में[2] फतेहपुर जिला पंचायत में अवस्थित पंचायत नेताओं में जिनका साक्षात्कार किया गया है उनमें 72 प्रतिशत ने स्वीकार किया कि इस जनपद के विकास के मार्ग को पंचायती राज संस्थाओं ने प्रशस्त न हीं किया है। यह इन संस्थाओं की कार्यपद्धति में व्याप्त दोषों का परिचायक है। लेकिन 28 प्रतिशत ग्रामीण नेताओं ने स्वीकार किया कि विकास कार्यों में इन संस्थाओं का योगदान रहा है। अधिकांश नेता विफलता के ही परिपोषक हैं तथा इन संस्थाओं के योगदान को स्वीकार नहीं करते हैं।

प्रश्न - क्या फतेहपुर जिला पंचायत ने इस जनपद के विकास के मार्ग को प्रशस्त किया है?

तालिका - 13

विचार अभिव्यक्ति	**संख्या**	**प्रतिशत**
हाँ	144	72%
नहीं	56	28%
योग	200	100%

पंचायती राज व्यवस्था (जिला पंचायत) की स्थापना और इसके कार्यकरण के लिए

---

1. साक्षात्कार से उपलब्ध सूचनायें एवं तथ्य।
2. क्या फतेहपुर जिला पंचायत ने इस जनपद के विकास के मार्ग को प्रशस्त किया है?

व्यतीत एक व्यापक काल के अन्तराल के बाद फतेहपुर जिले के तमाम गांवों को सड़कों से नहीं जोड़ा जा सका है। पंचायती राज संस्थाओं की जिला स्तर की प्रमुख संस्थाओं में जिला पंचायत का एक प्रमुख स्थान है। जिला पंचायतों को वार्डो में बांटकर अपनी सीमा को विकास की दृष्टि से और भी छोटा कर लेती है। जिला पंचायत के वार्डो तथा वार्डो से चुने हुये प्रतिनिधियो की जनपद में एक अलग पहचान होती है। अतः अध्यक्ष और मुख्य कार्याधिकारी ही जिला पंचायत के प्रशासन के अधिकारी माने जाते है। मानसिक एवं सामाजिक दोनों दृष्टिकोणों से काफी पिछड़ा होने के कारण पंचायत की प्रगति की दिशा निष्क्रिय ही रह जाती है। स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद अंग्रेजों ने जो ऊँच-नीच की भावना पैदा कर दी अनेक शिकार यहाँ के निवासी भी है। ये व्यक्तिगत विकास को छोड़कर दूसरे के विषय में सोचते तक नही है। अतः उत्थान की दिशा का मार्ग इनके मस्तिष्क पर समान ही रहा है। प्राकृतिक स्थितियां इस मार्ग में बृहद आकार में बन जाती है। इतना ही नही विकासात्मक और आवागमन का कार्य विकास भी अवरुद्ध भी बना है। पंचायत के निर्वाचित और नियुक्ति सभी पदाधिकारी मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति की वस्तुओं में लिप्त होकर सामाजिक एवं राष्ट्रीय भावना को नजरअन्दाज कर देते है। इसके बावजूद सरकारी तन्त्र के भय और कुछ नैतिकता के भय के कारण कुछ विकासात्मक कार्यो को सम्पन्न किया जा रहा है।

"फतेहपुर जिला पंचायत के सन्दर्भ में किये गये कार्यो का मूल्यांकन यदि व्यवहारिक दृष्टि से किया जाय तो उसे सन्तोषजनक नहीं कहा जा सकता है।"[1] शिक्षा का प्रसार ग्राम पंचायतों के माध्यम से नही किया जा सकता है और न किया जाना एक अहम प्रश्न है। विजयीपुर विकास खण्ड के गढ़ा ग्राम पंचायत में पूर्व माध्यमिक विद्यालय तो हैं- सैद्धान्तिक रूप से शिक्षक भी है किन्तु व्यवहार में स्थिति बिल्कुल विपरीत है। शिक्षा विभाग के अधिकारी इन दूरवर्ती विद्यालयों का निरीक्षण करने भी नही आते है। यदि पंचायती क्षेत्र में प्राथमिक एवं माध्यमिक विद्यालयों की नियमित कक्षाओं का प्रकालन किया जाय तो इसका असर सन्तोषजनक होता। जिला पंचायत के पास शिक्षा के मद में अतिरिक्त धन का अभाव रहता है तथा जिला पंचायत द्वारा शिक्षा के क्षेत्र में जो विशेष कार्य किये जाते है। वे सरकारी आकड़ों की पूर्ति हेतु अपर्याप्त होते हैं।

"पंचायतीराज संस्थायें और सरकारी संस्थाओं को अक्सर विकेन्द्रीकरण और लोकतन्त्र

---

1. सर्वेक्षण से ज्ञात सूचना के अनुसार

की जुड़वा आधार शिला कहा जाता है।" [1]इस निकट सैद्धान्तिक साम्य और आपस में बंटे हुये प्रयोजनों के कारण आपस में इन दोनों के बीच घनिष्ठ समन्वय की आवश्यकता है। इस सन्दर्भ में भारत सरकार ने 1961में पंचायती राज और सहकारी समितियों पर एक कार्य दल गठित किया था। जिसने यह सुझाव दिया था कि सहकारी सगंठन को परस्पर नही मिलाया जा सकता है। और न ही सहकारी संगठनों को पंचायती राज संस्थाओं की अधीनता में ही रखा जा सकता है।

"जिला पंचायत पर विचार करते समय नियामक कार्यो पर विचार आवश्यक है। जो सामान्य कानून और व्यवस्था पर आधारित है। फतेहपुर जिला पंचायत के नियामक कार्यो पर नियत्रण रखने का अधिकार मुख्य अधिकारी को है। इस कारण पंचायती राज के विभिन्न क्षेत्रों में कानून और व्यवस्था के मामले में पंचायत मूक दृष्टा मात्र है।"[2]

जिला पंचायत द्वारा ग्रामीण विकास हेतु जो संसाधन प्रयोग किये जाते हैं। उनका अधिक प्रयोग जिला पंचायत अध्यक्ष, सदस्य ही विशेषतया करते हैं छोटे - छोटे पुलों - पुलियों का निर्माण, छोटे बाँधों का निर्माण, आंर्थिक सहायता प्राप्त करके बाँध कूप पोखर, पंचायत भवन कमरे प्राथमिक एवं उच्च प्राथमिक विद्यालय भवन दो कक्षीय अतिरिक्त कक्ष ... कृषि भूमि का निर्माण, कुओं और तालाबो की सफाई, न्यूनाधिक मात्रा में

सैद्धान्तिक रूप से जिला पंचायत की जो आकृति पढ़ने को मिलती है। पुस्तको में व्यवहारत; बिल्कुल भिन्न परिस्थितियां देखने को मिलती है। कार्य करण से सम्बन्धित व्यवहारिक पक्ष को देखने के बाद पंचायती राज का सपना समग्रतः व्यवस्थित मालूम होता है।

एक प्रश्न के सन्दर्भ में 41सर्वेक्षित जिला पंचायतो के नेताओं ने केवल 49 प्रतिशत ने ही स्वीकार किया कि पंचायतीराज संस्थाओं की कार्य पद्धति ने फतेहपुर जिला पंचायत के विकास में अधिक योगदान दिया है। जबकि 51 प्रतिशत नेताओं ने इनके योगदान को नकार दिया है।

प्रश्न- क्या पंचायतीराज की कार्य पद्धति ने फतेहपुर जनपद के विकास में अहम योगदान दिया है।

---

1. 1. दृष्टव्य इण्डिया 1981,इण्डिया 1982 भारत सरकार
2. सर्वेक्षण से प्राप्त सूचना के आधार पर इस जिला पंचायत के अन्तर्गत देखने को मिलते हैं।

तालिका - 14

विचार अभिव्यक्ति	संख्या	प्रतिशत
अस्वीकार	98	49%
स्वीकार	102	51%
योग	200	100%

अतः निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है। कि फतेहपुर जिला पंचायत का विकास हेतु योगदान बहुत सीमित रहा। व्यवहारिक पक्ष यह है कि जिन उद्देश्यों से प्रेरित होकर इन संस्थाओं का निर्नाण किया गया वे वस्तुतः पर्याप्त रूप से उपलब्ध नही हो पाया है। क्योंकि इनकी कार्य पद्धति में अनेक दोषों का सम्मिश्रण है।

फतेहपुर जिला पंचायत की कार्य पद्धति में आने वाली कठिनाईयाँ तथा उनके निवारण

फतेहपुर जिला पंचायत को विविध आयामों से अध्ययन के पश्चात यह तथ्य उभर कर आता है कि फतेहपुर जिला पंचायत की अदंभुत विलक्षण विशेषता है जनपद की। इसे स्वशासन की उच्चतर इकाई भी कह सकते है। फतेहपुर जनपद के ग्रामीण क्षेत्रों में विकास एवं लोकतत्र का कुशल एवं सफल कार्य का संचालन जिला पंचायत के द्वारा ही किया जा रहा है। जिला पंचायत को ऊर्जावान, गत्यात्मक बनाकर ही विकास की ओर गतिमान, सुदृढ़, सशक्त जनपद का निर्माण किया जा सकता है। निःसन्देह सम्पूर्ण राष्ट्र के परिप्रेक्ष्य में पंचायती राज व्यवस्था की सफलता ही लोकतान्त्रिक भारत के भविष्य को निर्धारित करेगी। इसी परिप्रेक्ष्य में फतेहपुर जिला पंचायत की मूल सम्सयाओं का अध्ययन समीचीन होगा।

"पंचायती राज व्यवस्था नव आयामों से युक्त ऐतिहासिक अवधारणा है।" "पंच सो परमेश्वर" की भावना चाहे वह अतीत काल मे वैदिक कालीन स्थानीय शासन संस्थायें हो ब्रिटिश कालीन परतंत्र भारत की स्थानीय शासन संस्थायें हों या 73 वें संविधान संशोधन के पश्चात स्थापित पंचायती राज संस्थाओं का नवस्वरूप भारतीय जनमानस का सदैव विद्यमान रहा है। 73वें संविधान संशोधन के पश्चात 24 अप्रैल 1993 से देश में पंचायती राज संस्थाओं को संवैधानिक मान्यता प्राप्त होने के साथ ही विविध राज्यों में पंचायती राज्य अधिनियमों के

---

1. क्या पंचायती राज संस्थाओं की कार्य पद्धति ने फतेहपुर जिला पंचायत के विकास में अहम योगदान दिया है।

73वें संविधान संशोधन के आलोक में है। आज यदि भारत में पंचायती राज संस्थाओं के संस्थागत एवं व्यवहारिक पक्षों का अध्ययन करें। तो यह सिद्ध हो जाता है। कि विगत वर्षो में पंचायती राज व्यवस्था को उक्त संविधान संशोधन के अनुरूप निष्पादित किये जाने की आवश्यकता है। 73वें संविधान संशोधन के पश्चात पंचायती राज व्यवस्था की स्थापना के बाद जिला पंचायत शीर्ष स्तर की संस्था है। तथा इसका कार्यक्षेत्र भी अन्य स्थानीय शासन की संस्थाओं की अपेक्षा अधिक विस्तृत होता है। अतः इनके कार्य एवं कार्यपद्धति भी अपना विस्तार रूप धारण कर लेते हैं। कार्यों के करने व उनके समाधान में अनेक समस्यायें सामने आती है। जिला पंचायत फतेहपुर के कार्यो में निम्नलिखित समस्याएं सामने आती हैं-

1. पंचायती राज व्यवस्था (जिला पंचायत के विशेष परिप्रेक्ष्य में) सेविका प्रशासन की समस्या -

किसीं भी प्रशासनिक संस्था की सफलता उसके कुशल एवं योग्य कर्मचारियों पर निर्भर है। अतः जिला पंचायत फतेहपुर के कार्य के निवारण में सेविवर्ग प्रशासन एक अहम समस्या है। क्योंकि 73वें संविधान संशोधन के पश्चात इसके कार्यो मे तो वृद्धि हो गयी है- किन्तु उसके कर्मचारियों में वृद्धि नही की गयी है। जो कर्मचारी उसके पास है भी वह कामचलाऊ व्यवस्था के आधार पर तैनात किये गये है। यही कारण है कि जिला पंचायत को सौंपे गये कार्यो के साथ सामंजस्य नही बन पा रही है और यही मुख्य आधार है कि अच्छी से अच्छी नीतियां एवं योजनायें अकुशल अधिकारियों के हाथ में चले जाने से असफल सिद्ध होती है। जिला पंचायत में सेविवर्ग : भर्ती वर्गीकरण, पदोन्नति, प्रशिक्षण और सेवा दशाओं सम्बधी अनेक समस्याएं है जो इस प्रकार है-

(क) वर्गीकरण - जिला पंचायत के कर्मचारियों को दो भागों में बांटा जा सकता है। प्रथम में कर्मचारी जिन्हें राज्य सरकार पंचायतों में प्रति नियुक्ति में भेजती है। सामान्यतः ये कर्मचारी राज्य लोक सेवा के सदस्य होते है। राज्य सरकार उन्हे अपने सेवाकाल में ग्रामीण क्षेत्रो में कार्य करने हेतु प्रतिनियुक्ति पर भेजती है। तथा उनके स्थानान्तरण के बाद दूसरा कर्मचारी उनका स्थान ले लेता है। और वे पुनः राज्य लोक सेवा में चले जाते है। दूसरे वर्ग में वह कर्मचारी आते है। जो पंचायती राज्य सेवा (क्षेत्र पंचायत एवं जिला पंचायत) में है। इस वर्ग के कर्मचारियों पर जिला पंचायत का पूर्ण नियंत्रण रहता है।

''उत्तर प्रदेश में सभी नगर कर्मचारियों की सेवाओं को 19 सेवाओं में विभक्त कर अत्यधिक व्यापक योजना को स्वीकार किया गया है। इन सेवाओं में प्रशासन, स्वास्थ,

चिकित्सा अभियंत्रण, जन्म-मृत्यु, वृक्षारोपण, शिक्षा, लेखा-जोखा, अधीनस्थ सेवायें तथा महिला अधीक्षक सम्मिलित है। इसके अतिरिक्त ग्रामीण प्रशासन में केवल स्वास्थ अधिकारियों की समन्वित सेवा 1927 से चली आ रही है।[1]

(ख) भर्ती - ग्रामीण प्रशासन में कुछ कर्मचारी राज्य सेवा से प्रतिनियुक्ति पर भेजे जाते है। उनका चयन राज्य लोक चयन आयोग द्वारा किया जाता है। सामान्यतः स्थानीय प्रशासन के प्रति नियुक्ति पर वरिष्ठ अधिकारी ही भेजे जाते है। पंचायती राज व्यवस्था में निम्न वर्ग के कर्मचारियों की भर्ती के लिए विभिन्न राज्यों के कई प्रणालियों के आधार पर कर्मचारियों की नियुक्ति की जाती है। 'राजस्थान में जिला परिषद सेवा में निष्पक्ष भर्ती हेतु राज्य स्तर पर एक सेवा चयन आयोग का गठन किया गया है।'[2] किन्तु राजस्थान की भांति उत्तर प्रदेश में कर्मचारियों की भर्ती हेतु आयोग का गठन नही किया गया है। कर्मचारी वर्ग 3 तथा 4 के पदों की भर्ती जिला पंचायत स्वयं कर लेती है। जिस पर समय-समय पर घूसखोरी, भ्रष्टाचार आदि के आरोप लगते रहे हैं।

शिक्षण एवं प्रशिक्षण - शिक्षण एवं प्रशिक्षण कर्मचारियों को संगठन के उद्देश्यों की जानकारी प्रदान करता है एवं कर्मचारी को कर्तव्यबोध की शिक्षा प्रदान करता है। उनको निर्णय करने का ज्ञान प्रदान करता है। आज पंचायती राज सेवा को जिन कर्तव्यों एवं उत्तरदायित्वों का वहन करना पड़ता है वह नवीन एवं अत्यन्त जटिल है। सामुदायिक विकास योजनाओं का सफल क्रियान्वयन का उत्तरदायित्व पंचायती राज संस्थाओं को ही दिया गया है। विभिन्न प्रकार की क्षमताओं को विकसित करने के लिए राज्य सरकारों ने पंचायती राज व्यवस्था के निर्वाचित तथा स्थायी सदस्यों को प्रशिक्षण देने के लिए अनेक कार्यक्रमों का संगठन किया है।

पंचायती राज व्यवस्था के कर्मचारियों के प्रशिक्षण के सन्दर्भ में जवाहरलाल नेहरू ने कहा था - "सामुदायिक विकास कार्यक्रम जिनका लक्ष्य हमारे सम्पूर्ण समाज की बनावट को परिवर्तित करना है। हमारे विचारों तथा कार्यक्रमों में परिवर्तन करना है। यदि कभी उद्देश्य प्राप्ति में असफल होता है तो इसलिए नहीं कि इसके लिए धन की कमी है अपितु इसलिए कि हमारे पास प्रशिक्षित कर्मचारियों का अभाव है।"[3]

---

1. राजस्थान नगरपालिका अधिनियम, 1959
2. पंचायती राज एवं जिला परिषद अधिनियम 1959 की धारा 80 के अन्तर्गत
3. कुरुक्षेत्र, जून 19612 पृष्ठ 21

इस प्रकार पंचायती राज व्यवस्था के सन्दर्भ में कर्मचारियों की भर्ती, वर्गीकरण एवं प्रशिक्षण एक अत्यन्त महत्वपूर्ण समस्या बनी हुई है। इस समस्या के समाधान हेतु निम्नलिखित निराकरण प्रस्तुत किये जा सकते हैं-

निराकरण - (1) कर्मचारियों के वर्गीकरण की समस्या के निराकरण के लिए नगरीय प्रशासन की व्यवस्था की तरह ही सम्पूर्ण कर्मचारियों जैसे-

(क) राज्य लोक सेवा के कर्मचारी

(ख) स्थानीय सेवा कर्मचारी या जिला परिषद सेवा कर्मचारी

(ग) समन्वित सेवा कर्मचारी।

(2) जिला परिषद के कर्मचारियों की भर्ती के लिए राज्य स्तर पर एक आयोग का गठन किया जाय।

(3) जिला पंचायत के कर्मचारियों की नियुक्ति प्रत्यक्ष भर्ती विधि द्वारा किया जाय।

(4) जिला पंचायत कर्मचारियों के स्थानान्तरण की व्यवस्था करना।

(5) जिला पंचायत सेवा के सदस्यों को दण्डित करने तथा उन पर अनुशासनात्मक कार्यवाही हेतु उपबन्ध करना।

(6) राज्य लोक सेवा से प्रतिनियुक्ति पर आने वाले कर्मचारियों के ऊपर जिला पंचायत का नियंत्रण स्थापित करना तथा उन्हें दण्ड एवं अनुशासनात्मक कार्यवाही करने का अधिकार देना।

(7) जिला पंचायत कर्मचारियों के शिक्षा एवं प्रशिक्षण हेतु प्रत्येक राज्य स्तर पर प्रशिक्षण संस्थानों की स्थापना की जाय।

(8) विद्यालयों एवं विश्वविद्यालयी स्तरों पर स्थानीय शासन के सम्बन्ध में अध्ययन को महत्व प्रदान किया जाय।

(9) योग्यता पर आधारित भर्ती के प्रभावकारी प्रणाली, प्रतियोगी वेतनमान तथा सेवा की सुनिश्चित शर्तों के आधार पर कर्मचारियों की नियुक्ति।

(10) स्थानीय प्रशासन के कर्मचारियों के लिए उनके सेवाकाल में समय-समय पर शिक्षा एवं प्रशिक्षण की व्यवस्था करना। जिससे वह नवीन समस्याओं पर कार्यकुशलता के साथ कार्य कर सकें।

2. समस्या-2 जिला पंचायत की वित्तीय समस्या

किसी संस्था के कुशल एवं सफल संचालन में वित्त महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है। वित्त को संस्था का जीवन रक्त कहा जा सकता है। 73वें संविधान संशोधन के उपरान्त पंचायती राज संस्थाओं के कार्यों में अपेक्षित वृद्धि कर दी गयी किन्तु इन कार्यों के सापेक्ष वित्तीय साधन नहीं सौंपे गये। अर्थात् जिला पंचायत अपने कार्यों के क्रियान्वयन के लिए केन्द्र एवं राज्य सरकारों की तरफ आशा भरी निगाहें लगाये रहती हैं जिससे वह पूरी तरह उन पर निर्भर हैं और अपनी योजनाओं को प्रभावशालीं ढंग से सम्पन्न करने में भी असमर्थ सिद्ध होती है। वित्तीय प्रशासन हेतु जो साधनं सौंपे भी गये हैं वह या तो इतने कम हैं कि उनसे इनकी पूर्ति सम्भव नहीं है या तो जिला पंचायत के प्रतिनिधि एवं कर्मचारी स्थानीय होने के कारण किसी से उनकी वसूली नहीं कर पाते हैं। जिला पंचायतों का प्रभुत्व राज्य शासन पर निर्भर होने के कारण उसे संविधान द्वारा कर लगाने का अधिकार मूलरूप से प्राप्त नहीं है। जिला पंचायतें वही कर सकती हैं जिन्हें राज्य सरकार स्वीकृत करती है। जिला पंचायतों के बढ़ते कार्यों को देखते हुए जो धन संगठित किया जाता है वह उसके उद्देश्य पूर्ति हेतु अपर्याप्त होता हैं। भारत में समय-समय पर जिला पंचायतों (स्थानीय संस्थाओं) के वित्तीय समस्याओं पर विचार करने हेतु समितियों एवं आयोगों का गठन किया गया है।

निराकरण - पंचायतों की वित्तीय समस्या के समाधान हेतु समय-समय पर आयोग गठित किये गये हैं। करारोपण जांच समिति 1953-54 बलवन्तराय मेहता समिति 1957, अशोक मेहता समिति आदि ने अपने प्रतिवेदन में निराकरण प्रस्तुत किये हैं। उनमें प्रमुख निम्नलिखित हैं-

(1) भारत सरकार द्वारा गठित अशोक मेहता समिति का मत है कि पंचायती राज संस्थाओं के आय के समुचित साधन होने चाहिए। प्रत्येक संस्था को कर लगाने का अधिकार होना चाहिए। इन संस्थाओं को करारोपण सम्बन्धी बाधाओं को दूर करने के लिए राज्य सरकारें प्रयास करें। राज्य सरकारों द्वारा उदार होकर इन संस्थाओं के वित्तीय सम्बन्ध का नियमन उसी प्रकार किया जाय, जिस प्रकार केन्द्र-राज्य वित्तीय सम्बन्धों का नियमन किया

जाता है। राज्य को कार्यकारिणी का वित्तीय व प्रशासनिक अनावश्यक हस्तक्षेप भी समाप्त कर देना चाहिए।

(2) पंचायती राज संस्थाओं के वित्तीय प्रशासन हेतु राज्य वित्त आयोग का प्रत्येक पांचवें वर्ष गठन तथा इसका प्रमुख कार्य जिला पंचायत तथा पंचायत समिति व ग्राम पंचायत के वित्तीय बंटवारे एवं इनकी वित्तीय सहायता उपलब्ध कराना होना चाहिए।

(3) 'सरकारों द्वारा जिला पंचायत को दिया जाने वाला अनुदान किसी कार्य विशेष के लिए होता है। जिला पंचायत उसे स्वेच्छा से खर्च नहीं कर सकती है। सरकारें धन खर्च करने तथा उपयोग करने में कठोरता से पेश आती हैं। फलस्वरूप संस्थाओं की पहल करने की शक्ति समाप्त हो जाती है। एक विशेष कार्य हेतु दिया गया धन बचा रहता है। वे उस धन को आवश्यक कार्य हेतु खर्च कर देती हैं। अर्थात् किसी विशेष कार्य हेतु प्रदान धन उसी कार्य पर खर्च किया जाय।'[1]

(4) प्राप्त अनुदान का जिला पंचायत द्वारा स्थानीय परिस्थितियों एवं आवश्यकता के अनुसार धन खर्च न करने से नियोजन की प्रक्रिया अवास्तविक बन गयी है। उस धन को समयानुसार एवं आवश्यकतानुसार खर्च करने का अधिकार प्रदान किया जाय।

(5) विभिन्न कार्यक्रमों हेतु धन का हस्तान्तरण करते वक्त स्थानीय परिस्थितियों का ध्यान रखा जाय।

(6) जिला पंचायत को और अधिक कर लगाने की शक्ति प्रदान की जाय।

(7) जिला पंचायतों को इन विशेष करों को उगाहने का अधिकार दिया जाय।'[2]

(क) पथ कर

(ख) भूमि कर

(ग) भवन कर

(घ) वाहन एवं नौका पर कर

---

1. भारत में स्थानीय प्रशासन - सरोज चोपड़ा, पृष्ठ 258
2. भारत सरकार अधिनियम 1919 में लागू व्यवस्था के अनुसार।

(ङ) पशु कर

(च) चुंगी वसूली

(छ) सीमान्त कर

(ज) घरेलू नौकरों पर कर

(झ) व्यापार, व्यवसाय, आजीविका पर कर

(ञ) निजी घाटों, बाजारों पर कर

(ट) अन्य कर'

(8) जिला पंचायत से सम्बन्धित अधिनियमों के अनुसार समय-समय पर कर निर्धारण तालिका में संशोधन किया जाना चाहिए -

(9) कर निर्धारक स्थानीय संस्थाओं के न होकर राज्य सरकार के आधीन रखे जाने चाहिए ताकि वह स्थानीय प्रभावों से मुक्त होकर निर्धारण का उत्तरदायित्व पूरा कर सके। साथ ही उन्हें प्रशिक्षित करने की भी व्यवस्था की जाय।'[1]

(10) कई बार प्रभावशाली लोगों द्वारा करों की चोरी की जाती है अतः इसे निपटने के लिए आवश्यक कार्यवाही का अधिकार जिला पंचायतों को सौंपा जाय।

समस्या - 3 जिला पंचायत धड़ेबाजी के अड्डे

विकेन्द्रीकरण प्रक्रिया के अन्तर्गत प्राप्त अधिकारों एवं सत्ता द्वारा निर्वाचित जिला पंचायतों के बारे में यह एक गम्भीर प्रश्न चिन्ह है कि इनके कारण ही हमारे ग्रामीण क्षेत्रों में गहरी एवं पक्की धड़ेबाजी फैली हुई है। आपसी मतभेद, जातिगत विभेद, भाषागत एवं सम्प्रदायगत भेदों के कारण सरकारी कार्यों में सामुदायिक प्रयास कमजोर पड़ जाते हैं। इसके अतिरिक्त ग्रामीण क्षेत्रों में धन का दुरुपयोग, सामन्तवादी शोषण, महिलाओं के प्रति असमानता, हरिजनों पर अत्याचार तथा चुनावों में हेराफेरी जैसी बुराइयों को भी बल मिलता है। यह कहना कि इस तरह की आशंकायें प्रत्येक क्षेत्र में विद्यमान हैं। यह सरासर गलत है

---

1. स्व. एम. वी. सिन्हा - भारत में नगरीय सरकारें, पृष्ठ 123 - 213

कि किन्तु कुछ ग्रामीण क्षेत्रों में इस तरह लोकतंत्र विरोधी तत्व मौजूद हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में धड़ेबाजी से निपटना एक दुरूह कार्य है। किन्तु इसी आधार पर स्थानीय स्वशासन की व्यवस्था को समाप्त कर देना ठीक नहीं होगा और न ही साम्प्रदायिकता के अस्तित्व से इंकार नहीं किया जा सकता है, के आधार पर ऐसा निर्णय करना उचित है। वास्तव में यही तर्क भारत को स्वतंत्रता दिये जाने से इंकार करने के लिए पेश किया गया था। परन्तु क्या हमारे सार्वजनिक जीवन में राजनीतिक एवं साम्प्रदायिक धड़ेबाजी नहीं है। पाल हैरिसन ने एक बार कहा था कि 'घोर असमानता से ग्रस्त समाजों से पश्चिमी ढंग के लोकतंत्र को लागू करने से आर्थिक दृष्टि से शक्तिशाली वर्गों का वर्चस्व कायम हो जायेगा। स्पष्ट वर्गों में बंटे समाज का निर्वाचित प्रतिनिधि मुख्यतया उन्हीं लोगों का प्रतिनिधित्व करेगा, जिनके हित उनसे मेल खाते हैं। परिषद के जो सदस्य जमींदार हैं वे केवल जमींदारों के हितों की रक्षा करेंगे। गरीब देशों में प्रायः ज़ेबरे शेरों को अपना प्रतिनिधि चुन लेते हैं और फिर वे उससे यही उम्मीद कर सकते हैं कि वे उन्हें खा जायें।'[1]

निराकरण - जिला पंचायत में आपसी धड़ेबाजी को रोकने के लिए निम्नलिखित उपाय किये जा सकते हैं -

(1) जिला पंचायत के निर्वाचन को निष्पक्ष सम्पन्न करवाने का प्रयास राज्य सरकारों को करना चाहिए।

(2) राज्य निर्वाचन आयोग को और अधिक शक्ति सम्पन्न बनाना चाहिए।

(3) जिला पंचायत के अन्तर्गत राजनीतिक एवं साम्प्रदायिक धड़ेबाजी को रोकने हेतु विशेष प्रयास किये जाने चाहिए।

(4) महिलाओं तथा हरिजनों पर हो रहे अत्याचारों को रोकने के लिए पंचायतों को प्रशासनिक शक्तियाँ प्रदान की जाये।

(5) 'पंचायत चुनावों में फर्जी मतदान हेतु मतदान के पेपर कब्जा करने के माफिया के प्रयासों को रोकने हेतु उपायों की व्यवस्था करना।'[2]

---

1. पाल हैरिसन - द थर्ड वर्ल्ड टुमारो, पृष्ठ 299
2. पंचायती राज व्यवस्था - देवेन्द्र उपाध्याय, पृष्ठ 101

समस्या-4 जिला पंचायत में नियंत्रण सम्बन्धी समस्या

जिला पंचायत की संरचना राज्य सरकार द्वारा पारित अधिनियमों के आधार पर की जाती है। ये सार्वभौम सत्ता नहीं है, न केवल भारत में बल्कि विश्व के सभी देशों में स्थानीय स्वायत्त शासन के अधिकार और कार्य क्षेत्र कानून द्वारा परिभाषित है। राज्य/किन्द्र सरकारें इन पर नियंत्रण में रहती हैं जिससे स्वायत्त शासन संस्थायें अनुशासन में रहते हुए कुशलतापूर्वक अपना उद्देश्य पूरा कर सकें तथा नियंत्रण के साधन भिन्न-भिन्न हो सकते हैं। जिला पंचायत बहुत सी ऐसी राशि खर्च करती है जिससे उसका दूर-दूर तक कोई सम्बन्ध नहीं होता है। अतः वह राज्य सरकार द्वारा सहायता अनुदान के रूप में प्राप्त करती है। राज्य सरकार द्वारा किसी विशेष कार्य हेतु सहायता अनुदान प्रदान किया जाता है। अतः राज्य सरकार द्वारा जिला पंचायत पर नियंत्रण आवश्यक हो जाता है कि जो धन सहायतार्थ दिया जा रहा है। उसका सदुपयोग हो रहा है अथवा नहीं। पंचायती राज सेमिनार49 में मत प्रकट किया गया है कि 'जो देश अपने यहां स्थानीय स्वशासन की व्यवस्था करता है उसके सामने व्यवस्था सम्बन्धी मुख्यतया तीन कार्य होते हैं -

(क) राज्य के अन्तर्गत स्थानीय स्वशासन की संस्थाओं को सृजनात्मक क्रियाकलापों के स्वतंत्र केन्द्रों के रूप में विकसित करना।

(ख) जनता में राजनीतिक बोध तथा अपने एवं राज्य के कार्यक्रमों में साझीदार बनाने की प्रवृत्ति को जाग्रत करना।

(ग) क्रियान्विति नीतियों/योजनाओं को कुशलतापूर्वक लागू कराना।'

उक्त उद्देश्यों के बीच सदैव सन्तुलन बनाना कठिन कार्य है। अतः राज्यों में पंचायती राज संस्थाओं में अधिक स्वतंत्रता कम नियंत्रण तथा कुछ में ही राज्य की पंचायती राज संस्थाओं में समय तथा स्थान के अनुसार नियंत्रण की स्थिति बदलती रहती है। सरकार को आवश्यक दबाव डालने के लिए तैयार रहना चाहिए जिससे उसके आवश्यक कार्यों को कार्यान्वित किया जा सके और यदि आवश्यकता हो तो वह उन्हें समुचित कार्यवाही द्वारा स्वयं पूरा करने का उद्यम करें।

'पंचायती राज संस्थाओं (जिला पंचायत) पर नियमन को अनेक आधारों पर उचित ठहराया गया है। प्रथम एक तो ग्रामीण नागरिकों को भारत में विदेशी शासन के कारण इस स्तर पर प्रजातांत्रिक संस्थाओं में कार्य करने का अनुभव नहीं है। दूसरा ग्रामीण क्षेत्रों में

अशिक्षा, संकुचित ज्ञान और स्थानीय निहित स्वार्थ, इन्हें एक स्तर से ऊपर नही उठने देते हैं।'[1]

सभी पंचायती राज संस्थाओं में विधायी, न्यायिक तथा कार्यपालिका नियंत्रण होता है। सभी प्रकार के नियंत्रण पंचायती राज संस्थाओं में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं। अतः कभी-कभी यह नियंत्रण आवश्यक न होकर अपरिहार्य हो जाते हैं और जिला पंचायत से कार्यों को कार्यान्वित करने की जगह कार्यों के क्रियान्वयन में बाधा उत्पन्न करते हैं।

निराकरण - पंचायती राज संस्थाओं पर राज्य सरकार का नियंत्रण विद्यमान रहता है। अतः राज्य सरकारें कभी-कभी स्थानीय इच्छाओं एवं आवश्यकताओं के विपरीत भी कार्य कर सकती हैं। इस अधिकार का प्रयोग करते हुए कई बार राज्य सराकारों ने जिला पंचायत से अधिकार छीन कर प्रशासनिक अधिकारी नियुक्त कर देती है जो कभी-कभी पूर्वाग्रह एवं विद्वेषपूर्ण कार्य होता है। अतः इस नियंत्रण सम्बन्धी समस्या के हल के लिए निम्नलिखित उत्तरदायित्व पूर्ण कार्य सम्पादित किया जाना चाहिए -

(1) 'पंचायती राज संस्थाओं के सम्बन्ध में नियंत्रण एवं परीक्षण ऐसा होना चाहिए जिससे एक ओर तो उसमें निरन्तरता बनी रहे और दूसरी ओर आवश्यकता पड़ने पर सुधारात्मक कार्यवाही तुरन्त की जाय। यदि सरकार को निर्वाचित अधिकारियों के विरुद्ध नियंत्रण की शक्तियाँ दे दी जाय तो इस बात की सम्भावना बनी रहती है कि उस पक्षपात का आरोप लगा दिया जाय जिससे काम में देरी हो। अतः यह उचित होगा कि अनुशासनात्मक एवं नियंत्रण की शक्तियों का प्रयोग कोई निकाय करे।'[2]

(2) 'पंचायती राज संस्थाओं पर नियंत्रण एवं अनुशासनात्मक कार्यवाही हेतु जिला अधिकरण की स्थापना की जाय।'[3]

(3) 'पंचायती राज संस्थाओं को मैत्रीपूर्ण एवं अनौपचारिक ढंग से सलाह और निर्देशन उपलब्ध कराने के लिए प्रत्येक जिला में एक आयोग का गठन किया जाय।'[4]

(4) नियंत्रण की केन्द्रीय कृत प्रक्रिया के कारण परिस्थितियों का बदल जाना निर्वाचित

---

1. 1. रिपोर्ट आन वर्किंग ग्रुप आन पंचायत इण्डिया, पृष्ठ 6-9
2. राजस्थान पंचायती राज अध्ययन दल प्रतिवेदन, जयपुर 1964, पृष्ठ 18-71
3. उपरोक्त पृष्ठ 18-70
4. लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण प्रतिवेदन 1961, पृष्ठ 143

प्रतिनिधियों के विरुद्ध अनुशासनात्मक कार्यवाही सम्बन्धी कदम तुरन्त नहीं उठा सकना, लेखा परीक्षण के दौरान पाई गयी अनियमितताओं से सम्बन्धित कार्यवाही में धीमी गति होना, दोषी अधिकारियों के प्रति कार्यवाही करते समय पक्षपात एवं शक्ति का दुरुपयोग, वैधानिक अधिकारों का प्रयोग, राजनीतिक उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए करना, नियंत्रण की कठोरता आदि को दूर करना आदि उस निकाय के कार्य बना दिये जाय।

(5) 'सरकार की भूमिका के सम्बन्ध में धारणा बदलनी चाहिए, उसका कार्य नियंत्रण करना न होकर सलाह देना है, मार्ग दर्शन करना और सहायता करना होगा।'[1]

(6) 'पंचायती राज संस्थायें राज्य सरकार की प्रतिनिधि शासन सत्ता है। अतः स्थानीय निकायों के उचित कार्यान्वयन को सुनिश्चित करने में महत्वपूर्ण भूमिका है। यह देखना उसका उत्तरदायित्व है कि स्थानीय निकायों को सुचारू रूप से गठित किया जाय वे अपने कर्तव्यों का उचित रीति से पालन करें और देश के विकास में समुचित रूप से हाथ बंटायें। इसलिए सरकार की भूमिका केवल निषेधात्मक नहीं है। अतः वे केवल इस बात तक सीमित नहीं है कि लेखा परीक्षण और आवधिक जांच के द्वारा स्थानीय निकायों को शक्ति के दुरुपयोग से रोका जाय, वरन् उसकी भूमिका भावात्मक है अर्थात् उसका कर्तव्य है कि स्थानीय संस्थाओं को प्रोत्साहन दें और उनका विकास करें। किन्तु राजकीय नियंत्रण इतना सूक्ष्म और व्यापक होना चाहिए कि स्थानीय स्वशासी संस्थायें प्रशासक के कुशल उपकरणों के रूप में विकसित हो सके और वे नीति निर्धारित करने तथा उसे कार्यान्वित करने में सफल हो सकें।'[2]

समस्या-5 जिला पंचायत और महिला भागीदारी

जिला पंचायत एक निर्वाचित निकाय है। तथा 73वें संविधान संशोधन द्वारा इस संस्था में महिलाओं को 33% आरक्षण प्रदान किया गया है कि वह अपनी जनसंख्या के अनुरूप भागीदारी निभा सकें। महिला प्रतिभाओं का भी उपयोग हो सके तथा महिलाओं के प्रति समाज में उत्पन्न समस्याओं की जानकारी प्राप्त हो तथा उनका निराकरण किया जा सके, किन्तु क्या वास्तविकता में ऐसा देखने को मिलता है। स्थिति बिल्कुल विपरीत है। महिला आरक्षण का सहारा लेकर वर्चस्वपूर्ण व्यक्ति जिला पंचायत में स्थान बनाने में सफल हो जाता है तथा महिला जो निर्वाचित हुई है, वह घर की चहारदीवारी में ही कैद रह जाती है। कभी-कभी

---

1. 1. स्थानीय शासन जांच समिति प्रतिवेदन, 1957, पृष्ठ 42
2. करारोपण जांच आयोग, 1953-54, पृष्ठ 37

तो जिला पंचायत में महिला आरक्षण के तहत निर्वाचित प्रतिभागी स्वयं समस्या का शिकार हो जाती है।

निराकरण - जिला पंचायत में महिला प्रतिनिधियों के समान व्यवहार एवं सहभागिता हेतु निम्न उपबन्ध किया जाना चाहिए-

(1) पंचायतों में महिला भागीदारी के सफल क्रियान्वयन हेतु निर्वाचित महिला प्रतिनिधि के स्थान पर किसी अन्य को जिला पंचायत के बैठकों में भाग न लेने दिया जाय।

(2) 'श्री राजीव गांधी ने कहा था कि पंचायती राज संस्थाओं से सम्बद्ध महिलाओं का परिसंघ बनाया जाय ताकि महिलाओं की प्रगति और पंचायती राज योजनाओं की प्रगति पर नजर रखी जा सके।'[1]

(3) महिलाओं के लिए पंचायतों द्वारा विशेष कार्य योजना तैयार की जाय तथा उसका कुशल क्रियान्यवन महिलाओं द्वारा ही कराया जाय।

(4) 'पंचायतों के बैठकों में महिला सदस्य की उपस्थिति अनिवार्य कर दी जाय। (कुछ परिस्थितियों को छोड़कर)

(5) महिला आरक्षण की 33% से अधिक बढ़ाकर भागीदारी बढ़ायी जाय।

☆☆☆

---

1. पंचायती राज और महिला सम्मेलन 3 मई और 4 मई, 1989 (मानव संसाधन विकास मंत्रालय)

अध्याय नवम

अध्याय नवम्

उपसंहार

भारत में पंचायती राज व्यवस्था वैदिक काल से किसी न किसी रूप में बनी रही है। इस तरह वैदिक काल में सभा और समिति नाम की संस्थायें ज्ञात होती हैं। इसके पश्चात् मुगल वंश रहा हो या गुप्त वंश सबने इन संस्थाओं को स्वीकार किया है। प्रत्येक के शासन काल में किसी न किसी रूप में अपनी पहचान बनाने में सफल रही है। अन्ततः ब्रिटिश काल में क्राउन ने भी इस संस्थाओं को स्वीकार किया है और समयानुसार अपने राज्यगत व्यवस्था के अनुकुल इन्हें संचालित करने का प्रयास किया है। स्वतंत्रता आन्दोलन के समय विभिन्न क्रान्तिकारियों ने भी इस विषय पर बल दिया है। गांधी जी ने तो विशेष रूप से पंचायती राज व्यवस्था पर अपने विचार प्रस्तुत किये हैं। पंचायत राज व्यवस्था में गांधीवाद पूरी तरह से आज भी हावी है। पंचायतों की कल्पना करते हुए एक बार गांधी जी ने कहा था- 'हर गांव में पंचायत राज होगा, उसके पास पूरी सत्ता होगी। इसका मतलब यह है कि हर गांव को अपने पैरों पर खड़ा होना होगा। अपनी जरूरतें पूरी करनी होगी। ताकि वह अपना सारा कारोबार स्वयं चला सकें। यही ग्राम राज, पंचायती राज की मेरी कल्पना है।'[1] स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद नये संविधान में पंचायती राज संस्थाओं के विषय में सिर्फ अनुच्छेद 40 में निर्देशित किया गया था किन्तु जल्द ही इस गल्ती को दूर किया गया और पंचायती राज को संवैधानिक दर्जा देते हुए एक नयी विचारधारा के साथ जनता के सामने लाया गया जिसका उद्देश्य था कल्याणकारी राज्य की कल्पना को साकार करना। 1957 में बलवन्तराय मेहता कमेटी का गठन 1952 में लागू सामुदायिक विकास कार्यक्रम की असफलता के कारणों की खोज हेतु किया गया था तथा उसके द्वारा दिये गये सुझावों से यह संस्थायें अपने स्थापना के उद्देश्य की पूर्ति में तत्पर दिखाई पड़ती है। उत्तर प्रदेश में इनके सुझावों के उपरान्त सन् 1961 में पंचायती राज व्यवस्था का कलेवर बदला गया तथा ग्रामीण क्षेत्रों में कार्य करने वाली

---

1. ग्रामीण स्थानीय प्रशासन - चन्द्रा पटनी, पृष्ठ 157

पंचायती राज संस्थाओं का महत्व राज्य सरकार ने समझा था, बलवन्तराय मेहता कमेटी द्वारा प्रस्तुत सुझावों के बाद जन सहभागिता में वृद्धि के प्रयास, शक्ति तथा सत्ता का विकेन्द्रीकरण, स्थानीय विकास के लिए जिम्मेदारी आदि पहली बार स्थानीय संस्थाओं में देखने को मिलती है तथा सरकारों द्वारा इन्हें अधिक शक्ति सम्पन्न बनाने का प्रयास किया जाने लगा।

भारतीय प्रजातंत्र गांवों में ही अवस्थित है। जैसा कि प्रजातंत्र में नागरिकों को अपने प्रतिनिधियों के माध्यम से विकास सम्बन्धी नीतियों को कार्यान्वित करने में पूर्ण सहयोग देना पड़ता है। स्थानीय स्वायत्त संस्थाओं को ऐसे लोगों को प्रतिनिधि बनाकर भेजना होता है जो गांव से या ग्रामीण विकास से घनिष्ठ सम्बन्ध रखता हो या रुचि रखता हो और ऐसे प्रतिनिधियों से यह अपेक्षा की जाती है कि वह गाँवों का पुर्निर्माण करेंगे।

भारतीय प्रजातंत्र के विकास में अनेक अवरोधक तत्व सामने आये। अशिक्षा, निर्धनता, सामाजिक स्थिति, आर्थिक स्थिति, शैक्षिक दृष्टि से पिछड़ापन आदि के कारण भारत में प्रजातंत्र अपना सुचारु विकास न कर सका था। पिछड़ेपन के कारण ही वोट की राजनीति जातिवाद, भाषावाद, सम्प्रदायवाद, धन, गुटबन्दी, हिंसा और भय से प्रभावित रखती है। कहा जा सकता है कि स्थानीय संस्थायें प्रजातंत्र की प्रथम पाठशाला होने के कारण इन सब बुराइयों से मुक्त नहीं रह सकी। अब देखते हैं कि भारतीय राजनीति में सेवा जैसा भाव लेकर बहुत कम लोग शामिल होते हैं। अधिकतर नेता या पदाधिकारी समाज में अपनी स्थिति मजबूत करने, मान व समान में वृद्धि करने और अधिक अधिकार सम्पन्न बनकर दूसरे के अधिकारों का अपहरण करने का उद्देश्य लेकर आते हैं। पंचायती राज संस्थायें स्थानीय होने के कारण इनमें जातिवाद, भाई-भतीजावाद, धर्मवाद अधिक देखा जाता है। ये सभी लोग स्थानीय संस्थाओं पर किसी भी तरह से कब्जा करके अपनी शक्ति व सुविधा जुटाने का साधन बना लेते हैं और अपने समर्थकों को ठेका देकर, लाइसेंस देकर या किसी अन्य प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से लाभ पहुंचाना चाहते हैं जिससे भविष्य में होने वाले निर्वाचन में उनके समर्थन में वृद्धि हो।

उदाहरण स्वरूप फतेहपुर जिला पंचायत जो उत्तर प्रदेश पंचायती राज संस्थाओं का हिस्सा है- 1920 में डिस्ट्रिक्ट बोर्ड के रूप में स्थापित हुआ।'[1] बाद में सामुदायिक विकास योजना में सहभागी बना तथा सन् 1961 में जिला परिषद फतेहपुर के रूप में जाना जाने

---

1. 1. स्मारिका - विप्लव तिवारी, पृष्ठ 10
2. उत्तर प्रदेश क्षेत्र परिषद जिला पंचायत अधिनियम, 1961
3. सामाजार्थिक समीक्षा 2006, फतेहपुर संख्या अधिकारी प्रभाग, पृष्ठ 5

लगा।'[2] जिला पंचायत फतेहपुर का कार्य क्षेत्र 54152 वर्ग किमी. है।'[3] इसकी कुल जनसंख्या 2308384 है जिसमें पुरुषों की संख्या 1219602 तथा महिलाओं की संख्या 1088782 है।'[1]

उत्तर प्रदेश सरकार के अधिनियमों के आधार पर जिला पंचायत का गठन होता है। परन्तु इसके गठन में पंचायत की सामाजिक एवं राजनीतिक स्थिति का प्रभाव पड़ता है। जिला पंचायत के सदस्यों का चुनाव प्रत्यक्ष रूप से तथा जिला पंचायत के प्रमुख या अध्यक्ष का चुनाव अप्रत्यक्ष रूप से होता है। इन चुनावों में अवैध साधनों का प्रयोग भी पर्याप्त रूप से देखा जा सकता है। गुटबन्दी के द्वारा भी विरोधियों को कुछ काल के लिए गायब करके तथा मतदाताओं को पद एवं धन का लालच देकर, जातीय, एकता आदि साधनों द्वारा प्रभावित करके प्रत्याशी विजय हासिल करते हैं। अब देखा जाय तो सर्वसम्मति से चुनाव बहुत कम होते हैं। यदि होते भी हैं तो उनके पीछे निश्चित रूप से किसी बड़ी आपराधिक, राजनीतिक शक्ति कार्य कर रही होती है। यद्यपि स्थानीय निकाय के चुनावों के राजनीतिक दलों के प्रभावों से मुक्त रखने की कोशिश की गयी है लेकिन इन चुनावों में क्षेत्रीय एम. पी., एम. एल. ए., एम. एल. सी. गुप्त रूप से अपनी प्रतिष्ठा, राजनीतिक स्थिति एवं इन संस्थाओं में पारिवारिक पकड़ बनाये रखने हेतु पूरा प्रयास करते हैं क्योंकि ये संस्थायें ग्रामीण विकास हेतु संगठित की गयी है और अधिकतर वोट बैंक भी गांवों में निवास करता है जिससें जब इनका निर्वाचन होना होगा तो ये ग्रामीण संस्थाओं के प्रतिनिधि अपने क्षेत्र में उनके वोट बैंक के एजेन्ट के रूप में कार्य कर सकें तथा इनको ये ग्रामीण वोट का 'कस्टोडियम ऑफ रूरल वोट बैंक्स'[2] का संरक्षक मानते हैं। स्थानीय नेताओं का उपयोगिता सिद्धान्त रूप से दलगत राजनीति से अलग है किन्तु व्यवहार में दलीय राजनीति की अनुगामिनी है।

ग्रामीण कार्यकर्ताओं को यह मानना चाहिए कि पंचायती राज संस्थायें सत्ता का केन्द्र न होकर जनसेवा का केन्द्र होती हैं। पंचायती राज संस्थायें ग्रामीण जीवन में आर्थिक सम्पन्नता, विकास और निवासियों के जीवन स्तर को बढ़ाने के लिए एक सामाजिक संस्था मात्र है। पंचायती राज संस्थाओं के कार्यकर्ताओं हेतु आवश्यक है कि उन्हें लोकतंत्र की संस्थाओं के संरचना की जानकारी होनी चाहिए। अन्यता ये संस्थायें अपने उद्देश्य से दूरी बनाकर कार्य करती रहेंगी।

---

1. पूर्ववत्; पृष्ठ 5
2. पंचायती राज संगठन एवं कार्य प्रणाली - देवेन्द्र मिश्र, पृष्ठ 175

भारतीय संविधान निर्माताओं ने राज्य के नीति निर्देशक सिद्धान्तों में अनुच्छेद 40 के अन्तर्गत पंचायती राज संस्थाओं के संगठन और कार्यान्वयन का उल्लेख किया गया है। पंचवर्षीय योजनाओं के अनुसार इन संस्थाओं के सुव्यवस्थित एवं सुचारू रूप से संचालन हेतु इनके महत्व को समझते हुए संवैधानिक दर्जा दिया गया। केन्द्रीय सरकार तथा योजना आयोग के अनेक प्रलेखों में जोड़ दिया गया है। बलवन्तराय मेहता अध्ययन दल का गठन इसी के अनुसार गठित किया गया जिसका उद्देश्य अपने प्रतिवेदन में यह बताना था कि इन संस्थाओं को किस तरह जन सहभागिता से जोड़कर व्यवहारिक स्वरूप प्रदान किया जाय। यही कारण है कि जिस उद्देश्य हेतु बलवन्तराय मेहता अध्ययन दल का गठन किया गया था वह संकल्प या उद्देश्य ग्रामीण विकास तथा ग्रामीण जीवन स्तर को ऊपर उठाना था क्योंकि पंचायती राज संस्थायें प्रारम्भ से ग्रामीण विकास की बुनिदायी जरूरत रही हैं।

फतेहपुर जिला पंचायत की संरचना देखने से पता चलता है कि फतेहपुर जिला पंचायत में ऊंचे वर्ग तथा आर्थिक रूप से सम्पन्न व्यक्तियों का बोलबाला रहा है। यह भी स्पष्ट होता है कि यह शक्ति उच्च वर्ग के लोगों ने राजनीतिक रूप से छल, प्रपंच, सहमति और चातुर्य भ्रष्टाचार के बल से प्राप्त की गयी। ये सभी समस्यायें सिर्फ फतेहपुर जिला पंचायत की नहीं हैं बल्कि यह सम्पूर्ण भारत की जिला पंचायतों या पंचायती राज संस्थाओं की हैं। प्रत्येक जिला पंचायत के चुनाव को जाति, धर्म, दलीय व्यवस्था प्रभावित करती है।

ज़िला पंचायत या पंचायती राज संस्थाओं में कमियां एवं समस्याये हैं। इनके बावजूद ये संस्थायें राजनीतिक एवं सामाजिक दृष्टिकोण से उपयोगी सिद्ध हुई है तथा भारत में लोकतंत्र को ग्रामीण क्षेत्रों में मजबूती के साथ खड़ा किये हुए है। सामान्य ग्रामीण नागरिक पहले की अपेक्षा अपने अधिकारों के प्रति अधिक सजग हुए हैं तथा उनका उपयोग कर रहे हैं। सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक दृष्टिकोण से एक नया नेतृत्व जन्मा है जो केवल आयु गणना के आधार पर नया नहीं है बल्कि उसके चिन्तन में भी नया जोश एवं उत्साह है जो सामाजिक रूप में होने वाली कुरीतियों एवं रूढ़ियों को बदलने का पक्षधर है।

भारत में मिश्रित अर्थव्यवस्था है। जिसमें पूंजीवादी तथा समाजवादी दोनों अर्थव्यवस्थाओं के गुण समाहित हैं। पूंजीवाद के विकास हेतु जमीनी एकाधिकार, सूदखोरी, जाति दमन, सामाजिक, सांस्कृतिक पिछड़ेपन से, पूंजीवादी संस्थाओं से तथा विदेशी आर्थिक

---

1. अरगल आर - म्यूनिसिपल गवर्नमेन्ट इन इण्डिया, पृष्ठ 34

प्रभुत्व से आवश्यक हैं किन्तु विचारणीय है कि ये सभी तत्व लोकतंत्र हेतु बाधक हैं क्योंकि पूंजीवाद से शोषक और शोषित दो वर्गों का अभ्युदय होता है। अतः नया नेतृत्व इस पूंजीवादी विकास के ढांचे में परिवर्तन लाना चाहता है क्योंकि जबतक इसमें परिवर्तन नहीं लाया जायेगा सामाजिक रूप से पिछड़े लोगों की समस्याओं का समाधान भी तब तक नहीं हो सकेगा। लोकतंत्र में निर्वाचन प्रमुख है और इसको पवित्र बनाये रखने हेतु यह आवश्यक है कि अवैध साधनों एवं प्रलोभनों (व्यक्तिगत हित कार्य) को समाप्त करना होगा।

पंचायती राज संस्थायें राष्ट्रीय एवं राज्य स्तरीय लोकतांत्रिक संस्थाओं की भांति साध्य एवं साधन दोनों हैं। साध्य इसलिए कि वह लोकतांत्रिक का आवश्यक स्तम्भ है, साधन इसलिए कि यह राज्य एवं राष्ट्रीय सरकारों द्वारा दिये एक अधिकार एवं (कार्यों) कर्तव्यों को पूरा करने के लिए एक उत्तरदायी संस्था है। निष्कर्षतः पंचायतीराज संस्थायें साध्य एवं साधन दोनों रूपों में ग्रामीण भारतीयों के जीवन के स्तर में वृद्धि तथा विकास दोनों का आधार मानी जाती है। पंचायती राज संस्थायें ग्रामीण जीवन के सामाजिक तथा राजनीतिक विकास का अनिवार्य तत्व है। राज्य एवं केन्द्र सरकार इन संस्थाओं को महत्वपूर्ण एवं पर्याप्त अधिकार हस्तान्तरित करें यही लोकतंत्र के विकेन्द्रीकरण का उद्देश्य है।

बलवन्तराय मेहता अध्ययन दल की सिफारिशों के बाद ग्रामीण भारत में अनेक परिवर्तन देखने को मिलते हैं-

(1) समाज में अत्यधिक निर्धन किसानों तथा मजदूर वर्गों को विशेष रूप से संगठित तथा सहायता करने का प्रयास किया गया है।

(2) विभिन्न परियोजनाओं के संचालन हेतु बैंकिंग ऋण को अधिक उपयोग में लाया गया है।

(3) कृषि के क्षेत्र में क्रान्तिकारी परिवर्तन हुए हैं। डेयरी, सुअर, मछली पालन व छोटे-छोटे धन्धों का पर्याप्त विकास हुआ है। छोटी सिंचाई परियोजनायें तथा विभिन्न वैज्ञानिक उपकरण जो प्रतिदिन के कार्यों में सहायता करते हैं वह गांव तक पहुंच चुके हैं।

पंचायती राज संस्थाओं का संस्थागत, रचनात्मक, कार्यात्मक स्वरूप होना चाहिए न कि विकास के द्रुतगामी पहिये के रूप में हो। पंचायती राज संस्थाओं को ग्रामीण नागरिकों के जीवन से सम्बन्धित सभी महत्वपूर्ण क्षेत्रों में क्रान्तिकारी परिवर्तनों के साथ कार्य करना है। राज्य सरकार या केन्द्र सरकार द्वारा जिला पंचायत स्तर से जो कार्य सम्पन्न करवाये जाते

हैं। उनमें अस्थायित्व जैसी बुराई हो सकती है तथा समाज को प्रभावित करने की क्षमता नगण्य हो सकती है जबकि पंचायती राज संस्थाओं को समाज के आधारभूत ढांचे में जो अक्षुण्ण सामाजिक स्थितियाँ हैं उनका आंकलन करके उनमें परिवर्तन के साथ उनका आधुनिकीकरण भी करना है। पंचायत स्तर पर सौंपे गये कार्य काफी पर्याप्त हैं। जिनसे समाज के विकास का सही मार्ग दर्शन किया जा सकता है।' संविधान की ग्यारहवीं अनुसूची में 29 विभागों के कार्य पंचायतों हेतु उल्लिखित किये गये हैं।'[1] जिस प्रकार दिनोंदिन सामजिक स्थितियाँ परिवर्तित हो रही हैं उसी तरह पंचायती राज संस्थाओं को उनके साथ मेल मिलाप बनाये रखने हेतु अनुकूल परिस्थितियाँ उपलब्ध करवानी चाहिए। इसका मतलब यह होता है कि विकेन्द्रीकरण एक राजनीतिक विचार या प्रशासनिक व्यवस्था है। पंचायती राज संस्थाओं की विकास गतिशीलता को दृष्टिगत करते हुए ही उनको कार्य सौंपे जाने चाहिए तथा इन कार्यों के सफल संचालन हेतु आवश्यक है कि उनके पास पर्याप्त वित्तीय संसाधन हो जिससे कार्यों के कार्यान्वियन में अड़चन न आयें। कार्य एवं शक्ति तथा धन उपलब्ध करवाने मात्र से पंचायती राज संस्थायें ग्रामीण समाज के विकास में अपना महत्वपूर्ण सहयोग न दे सकेगी। इसके लिए आवश्यक है कि उन्हें विधि निर्माण जैसे कार्य भी सौपने चाहिए। जिला पंचायतों को यह साफ निर्देश होना चाहिए कि ऐसे कार्यक्रम या शक्ति जिनका सम्बन्ध उस जिला पंचायत के अन्तर्गत आने वाले क्षेत्र से है तो उस पर वह विधि का निर्माण कर सकती है क्योंकि जिला पंचायत के प्रतिनिधि स्थान विशेष से सम्बन्ध रखते हैं। उन्हें उस स्थान विशेष की काल, परिस्थिति, संसाधन एवं समस्याओं का पर्याप्त ज्ञान होता है जो किसी कार्यक्रम के सफल संचालन हेतु आवश्यक होती है तथा जिला पंचायतों को यह अधिकार होना चाहिए कि वह उस विधि के अनुरूप योजना बनायें।

प्रजातांत्रिक प्रणाली में आवश्यक होता है कि समाज के सभी वर्गों का बराबर सहयोग प्राप्त हो।

उच्च वर्गीय पुरुषों के वर्चस्व को समाप्त करके ही समाज के सभी वर्गों का सहयोग प्राप्त कर सकते हैं। महिला जिसकी स्थिति राजनीति में बड़ी दयनीय है उसे भी पंचायती राज संस्थाओं में भागीदारी दी गयी है।

लोकतंत्र की सफलता हेतु आवश्यक है कि लोकतंत्र के प्रत्येक स्तर में राजनीतिक एवं

---

1. 73वां संविधान संशोधन, 1992

प्रशासनिक अधिकारियों के बीच समुचित समन्वय बना रहे। हम देखते हैं कि पंचायती राज संस्थाओं में भी यही स्थिति बरकरार है कि कुछ मुद्दों में मतैक्यता होती है तो कुछ मुददों में मत भिन्नता। बावजूद इसके इन दोनों के बीच विकास एवं सुरक्षा के मामले में इनमें विरोध नहीं पाया जाता है। पंचायती राज संस्थाओं के प्रतिनिधि जन प्रतिनिधि होने के नाते स्थानीय समस्याओं के सम्बन्ध में राजनीतिक या प्रशासनिक उच्चाधिकारियों का ध्यान आकर्षित कर सकता है। अध्यक्ष या जन प्रतिनिधि जब अपने स्वार्थ के लिए कार्य करने लग जाते हैं तब समस्यायें उपस्थित हो जाती हैं।' छोटी-छोटी समस्याओं का समाधान पंचायत प्रतिनिधि एवं पदाधिकारी मिलकर कर देते हैं। सामान्यतः ये विरोध पंचायत, जिला पंचायत के विकास सम्बन्धी शिक्षा एवं सुरक्षा को लेकर होते हैं। प्रगति का काम इसके बाद भी अवरोधित नहीं होता है। आपसी संघर्ष एवं विरोध की स्थिति इनमें जो कुछ भी है उन्हें सहकारिता का सन्देश देने, विरोध की सम्भावनाओं को पहले ही समाप्त करने के लिए प्रयत्न करने से जो इसकी वर्तमान स्थिति है उसमें सुधार सम्भव हैं।'[1] उच्च अधिकारियों एवं जन प्रतिनिधियों को जिला पंचायत के कुशल प्रशासन एवं संचालन हेतु आवश्यक है कि प्रशिक्षित एवं जागरुक किया जाय।

जिला पंचायत, पंचायत राज संस्थाओं की शीर्षस्थ कड़ी है। यह स्थानीय समस्याओं को ध्यान में रखकर सरकारी शासनादेशों के अनुसार विकास एवं सुरक्षा के कार्यों हेतु अपने अधीनस्थ संस्थाओं को आदेश जारी करती हैं तथा स्वयं भी उन्हीं के अनुसार कार्य करती है। जिला पंचायत एक स्थानीय संस्था है -

जो राज्य एवं केन्द्र सरकार के आदेशों के अनुरूप विकास कार्यों को सम्पादित करती है तथा जिला पंचायत के द्वारा किये गये कार्यों में स्वावलम्बन तथा सहभागिता का पूरा ख्याल रखा जाता है। इसी सिद्धान्त के अनुसार जिला पंचायत द्वारा किये गये निर्णयों को लागू किया जाता है। यहाँ पर यंह स्पष्ट है कि 'स्थानीय प्रतिनिधियों को स्थानीय समस्याओं के सम्बन्ध में उचित जानकारी होती है तथा उनके द्वारा समाधान के लिए जो निर्णय लिये जाते हैं वह उचित एवं जनहित में होते हैं।'[2]

केन्द्र/राज्य शासन द्वारा समय-समय पर पंचायतों के कार्यों को कार्यान्वित करवाने हेतु शासनादेश जारी किये जाते हैं तथा इन शासनादेशों के अनुसार जिला पंचायत द्वारा किये

---

1. पंचायती राज व्यवस्था में पंचायत समिति - उमेश प्रसाद मिश्र, पृष्ठ 129
2. उपर्युक्त, पृष्ठ 129

जाने वाले कार्यों को दो भागों में बांटा जा सकता है-

(i) निर्णायक कार्य

(ii) अनुशंसित कार्य'[1]

जिला पंचायत द्वारा जिले के अन्तर्गत वित्त, विकास, जलापूर्ति, सिंचाई एवं छोटी-बड़ी योजनाओं के सम्बन्ध में निर्णय लिया करते हैं तथा इन कार्यों हेतु आवंटित राशि के खर्च के सम्बन्ध में भी इसका निर्णय अन्तिम होता है तथा इसके निर्णयानुसार सरकारी मशीनरी पूरे जनपद में अपनी कार्य योजना तैयार करती है।

अनुशंसित कार्यों के अन्तर्गत जिला पंचायत द्वारा किये जाने वाले राहत एवं सहायता कार्य, नलकूप, सिंचाई एवं विद्युत कार्य के लिए भोजन योजना, यातायात आदि के सम्बन्ध में किये जाने वाले कार्य आते हैं तथा इनके सम्बन्ध में आने वाली समस्याओं पर निर्णय का अधिकार जिला पंचायतों को होता है।

जिला पंचायत के अध्यक्ष के गुणों, व्यक्तित्व एवं उसके कार्य करने की क्षमता पंचायत समिति को विकसित करने हेतु आवश्यक होती है। अध्यक्ष जिला पंचायत के प्रतिनिधियों तथा अधिकारी, कर्मचरियों के बीच कड़ी के रूप में होता है। जो सम्पूर्ण सदन की व्यवस्था को संचालित करता है। अगर कभी कर्मचारियों व सदस्यों के मध्य किसी तरह की मतभिन्नता आ जाती है तो दोनों पक्ष अध्यक्ष से शिकायत करते हैं तथा अध्यक्ष उन शिकायतों को दूर करने का प्रयास करता है। इस प्रकार अध्यक्ष सदन का सबसे प्रभावशाली व्यक्तित्व होता है।

पंचायती राज व्यवस्था में जिला पंचायत के मुख्य अधिकारी का महत्वपूर्ण स्थान होता है। मुख्य अधिकारी के लिए आवश्यक है कि उसमें लगनशीलता, कार्यक्षमता एवं व्यवहारिक ज्ञान हो क्योंकि सदन के अन्तर्गत किये जाने वाले कार्यों के प्रति उसका उत्तरदायित्व होता है। जिला पंचायत फतेहपुर के मुख्य अधिकारी बहुत ही जवाबदेह व्यक्ति हैं तथा उन्होंने सदैव कार्यों को महत्व दिया है।

प्रदेश की सभी जिला पंचायतों के लिए एक समान कानून, आदेश, अध्यादेश, परिपत्र एवं निर्देश जारी किये जाते हैं लेकिन जिला पंचायतों का व्यवहारिक रूप उसके

---

1. पूर्ववत्, पृष्ठ 129

सदस्यों/अध्यक्षों, उपाध्यक्ष, मुख्य अधिकारी, कर्मचारियों के योग्यता एवं व्यवहारिक ज्ञान पर आधारित होता है तथा जिला पंचायत के उद्देश्यों की पूर्ति इनकी कार्यक्षमता तथा तत्परता पर निर्भर होती है। जिला पंचायत के अन्तर्गत कुछ ऐसे लोग होते हैं जो अपने पद का गलत प्रयोग करके स्वार्थ पूर्ति करते हैं लेकिन अगर कर्मचारी एवं सदस्य समय से ध्यान दे तो ऐसा करने से रोका जा सकता है। तत्पश्चात् जो योजना जिसके लिए बनायी जाती है वह उसका लाभ उठा सकते हैं।

जिला पंचायत राज्य/केन्द्र सरकारों द्वारा आये हुए निर्देशों के अनुसार निश्चित अवधि के लिए निश्चित स्थान हेतु अस्थायी तौर पर कानूनों का निर्माण करती है तथा नीति को उचित ढंग से लागू करने का प्रयास करता है। उदाहरण स्वरूप किसी प्राकृतिक आपदा के समय कानून का निर्माण करती है कि अधिक प्रभावित क्षेत्र में अधिक सहायता एवं सामान उपलब्ध कराया जाता है। कम प्रभावित क्षेत्रों में कम तथा जो क्षेत्र बिलकुल प्रभावित नहीं होते हैं वहां बिल्कुल नहीं वितरित करने का कानून बनाया जाता है तथा 'जिला पंचायत आवश्यकतानुसार प्रस्ताव पारित करके केन्द्र/राज्य सरकार को भेजती है तथा ये ऊंची संस्थायें इसी के प्रस्ताव के अनुसार सुविधा प्रदान करती हैं या राशि आवंटित करती हैं। आपात स्थिति जैसे- बाढ़ या महामारी आदि के समय में जिला पंचायत अपने प्रतिनिधियों को उनके क्षेत्रान्तर्गत समिति गठित करने का निर्देश देती है। पंचायत समिति एक कार्य पालक संस्था है जो कार्यान्वयन के सम्बन्ध में अपने क्षेत्रान्तर्गत नीति का निर्धारण करती है।'[1]

निर्देशन के माध्यम से ऊंची संस्थायें अपने अधीनस्थ कर्मचारियों को कर्मचारी अपने कार्यकर्ताओं को कार्य करने की विधि, अवधि एवं राशि के सम्बन्ध में निर्देश देता है। पंचायती राज व्यवस्था में जिला पंचायतों को उच्च संस्थाओं से समय-समय पर निर्देश मिलते हैं जिसके अन्तर्गत जिला पंचायत कार्य करती है। सरकार या उच्च अधिकारियों के निर्देश के अलावा जिला पंचायत आवश्यकतानुसार अपने सदस्यों एवं कर्मचारियों को निर्देश जारी करती है कि किस कार्य को, किस समय, किस विधि से करना है जिसके माध्यम से सरकार के उद्देश्यों, कार्यान्वयन एवं दृष्टि की जानकारी होती है। विकास की दृष्टि से कार्यों के शीघ्र सम्पादन के लिए भी वह अपने कर्मचारियों को निर्देश देती है।

'कार्यों के उचित ढंग से लागू करने हेतु पर्यवेक्षण आवश्यक होता है। पर्यवेक्षक

---

1. पूर्ववत्, पृष्ठ 131

पूर्वाग्रहरहित, विवेकपूर्ण एवं निष्ठा से जब कार्य करता है तब कार्यकर्ताओं में तत्परता, लगनशीलता एवं उत्साह में वृद्धि होती है। साथ ही साथ गलत ढंग से कार्य करने वाले कार्यकर्ताओं को वह दण्डित भी करता है।'[1] पर्यवेक्षक सदैव सामान्य किन्तु स्पष्ट दृष्टिकोण रखता है जिसमें कार्यकर्ता में उचित एवं अनुचित का आकलन हो सके। पर्यवेक्षक अगर पूर्वाग्रह रहित नहीं होता है तो जो लगनशील एवं तत्पर कार्यकर्ता है वह भी दण्डित हो जाता है एवं उसकी कार्यक्षमता प्रभावित होती है तथा मनोबल गिरता है। दूसरी तरफ पर्यवेक्षक के पक्षपातपूर्ण कार्यों से गलत कार्यकर्ता अनुचित प्रश्रय पाता है जिससे उसकी गलत करने की प्रवृत्ति में वृद्धि होती है। अन्ततः यह सत्य है कि पर्यवेक्षक की दृष्टि एवं दूरदर्शिता से उचित निर्णय लिये जाते हैं।

जन प्रतिनिधि होने के नाते अध्यक्ष यह चाहता है कि उसके क्षेत्र में विकास का कार्य ज्यादा हो। वह अपने क्षेत्र की समस्याओं को जिला पंचायत के प्रतिनिधियों के सामने रखता है। एक प्रस्ताव पारित कराकर सम्बन्धित अधिकारियों का ध्यान आकर्षित करता है। ग्रामीण क्षेत्र में दूसरी कोई संस्था विकास के क्षेत्र में जो कार्य करती है उसे कहीं ज्यादा यह संस्था करती है।

विकास कार्यों को अधिक गति प्रदान करने हेतु यह सुझाव है कि ईमानदार एवं लगनशील कर्मचारियों को जिला पंचायत में पद स्थापित किया जाय। जिला पंचायत के प्रतिनिधि चरित्रवान, लगनशील, कर्तव्यनिष्ठ तथा जनता से लगाव रखने वाले पदाधिकारी होने चाहिए। जनता का भी यह कर्तव्य होना चाहिए कि 'प्रतिनिधि चुनते वक्त अपने मत का सही प्रयोग करें न कि जातिगत, दल उम्मीदवार को प्रांथमिकता देनी चाहिए। प्रतिनिधि जब अध्यक्ष का चुनाव करे तो योग्यता एवं कर्मठता को प्रश्रय दें। सदस्यगण एवं कर्मचारियों को सदैव ही आपस में समन्वय स्थापित करके चलना चाहिए। अध्यक्ष तथा मुख्य अधिकारी के बीच कार्यों को लेकर असमानता नहीं होनी चाहिए। अगर हो तो उन्हें समाप्त करने का प्रयास करना चाहिए और उनका कर्तव्य है कि कर्मचारियों एवं सदस्यों के बीच अगर असमानता हो तो उसे दूर करने का प्रयास करना चाहिए। राज्य सरकार के आदेशानुसार जिला पंचायत का चुनाव बिना किसी भेदभाव के संचालित किया जाय। सदस्यों के लिए आवंटित राशि का भुगतान का समय पर आवंटित किया जाय। सांसदों एवं विधायकों का यह कर्तव्य है कि पंचायत स्तर पर जो त्रुटियां हों उन्हें दूर करने का प्रयास करें तथा उनकी

---

1. पूर्ववत्, पृष्ठ 131

जो मांग हो उन पर सरकार को अवगत करायें तथा हल करवाने का प्रयास करें। जिला पंचायत का अगर इन सुझावों के आधार पर संचालन किया जाय तो आज जितनी सफलता प्राप्त हुई है कहीं इससे ज्यादा प्राप्त हो सकती है।

निष्कर्ष स्वरूप यह कहा जा सकता है कि कठिनाइयों, समस्याओं एवं परिसीमनों के बावजूद जिला पंचायत की भूमिका सार्थक सिद्ध हो रही है। धीरे-धीरे सत्ता का विकेन्द्रीकरण हो रहा है। सहयोग एवं सहभागिता का आयतन बढ़ रहा है और विकास की बुनियादें ठोस होती जा रही हैं। पीटर वक्राच का कथन है कि 'स्वस्थ लोकतंत्र के लिए समाज के विवेकशील व्यक्तियों की सहमति आवश्यक है ताकि नेताओं और कार्यकर्ताओं के प्रयास विपुल किंये जा सकें।

☆☆☆

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

- डॉ. सरोज चोपड़ा, स्थानीय प्रशासन, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, 1993
- अशोक शर्मा, भारत में स्थानीय प्रशासन, आर. बी. एस. ए. प्रकाशन, जयपुर 1991
- शंकर राम, पंचायती राज गाइड प्रथम, ग्राम विकास प्रकाशन, 1997
- अजय कुमार, पंचायती राज गाइड द्वितीय, ग्राम विकास प्रकाशन, 1999
- राजेश्वर दयाल, पंचायती राज इण्डिया, नई दिल्ली, 1972
- श्री राम महेश्वरी, पंचायती राज ग्रामीण वित्त आयोग, उत्तर प्रदेश 1986
- श्री शरण, पंचायती राज और लोकतंत्र 2001
- देवेन्द्र उपाध्याय, पंचायत राज व्यवस्था, 1993
- श्री रमेश चन्द्र, भारत में पंचायती राज, 1961
- श्री रवीन्द्र शर्मा, ग्रामीण स्थानीय प्रशासन, रोमा प्रिन्टर्स एण्ड एसोसिएशन्स, जयपुर 1985
- अवध नारायण दुबे, ग्रामीण प्रशासन और राजनीति, निर्मल प्रकाशन, वाराणसी, 1983
- श्री भटनागर एस., रूरल लोकल गवर्नमेन्ट इण्डिया लाइट एण्ड लाइफ पब्लिसर्स नई दिल्ली, 1978
- श्री भोंसले शांताराम के., लोकल गर्वमेन्ट्स एण्ड एडमिनिस्ट्रेशन इन इण्डिया परिमाल प्रकाशन औरंगाबाद, 1977
- एस. के. के., पंचायती राज प्लानिंग एण्ड डेमोक्रेसी मुंबई, 1964
- विप्लव कुमार तिवारी, फतेहपुर जिला पंचायत स्मारिका सहकारी मुद्रण एवं प्रकाशन समिति लि. फतेहपुर, 1994
- सुभाष कश्यप, भारतीय संविधान, 1994

- श्री राम भवन शर्मा जिला परिषद का बदलता स्वरूप, 1991
- पंचायती राज ग्रामीण एवं वित्त आयोग, उत्तर प्रदेश इलाहाबाद, 1986
- विवेक शर्मा, उत्तर प्रदेश क्षेत्र पंचायत जिला पंचायत अधिनियम 1961 इलाहाबाद 1994
- शिवानंद श्रीवास्तव उत्तर प्रदेश क्षेत्र पंचायत, जिला पंचायत अधिनियम 1961 इलाहाबाद, 1989
- अजय कुमार उत्तर प्रदेश क्षेत्र पंचायत जिला पंचायत अधिनियम 1961 इलाहाबाद 1996
- आर. बी. जैन पंचायती राज वैल्यू फ्राम आई. आई. पी. ए. नई दिल्ली
- सी. पी. भांभरी, स्क्टेस्लिशमेन्ट ऑफ जिला परिषद इन राजस्थान, 1966
- पंचायती राज व्यवस्था, श्री देवेन्द्र उपाध्याय, सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली
- पंचायती राज संगठन और कार्य प्रणाली, श्री देवेन्द्र मिश्र, क्लासिकल पब्लिसिंग कम्पनी, नयी दिल्ली
- स्थानीय स्वशासन, श्री चन्द्र प्रकाश वर्थवाल, सुलभ प्रकाशन 17 अशोक मार्ग, लखनऊ
- भारत में पंचायती राज, आर. पी. जोशी, रूपा मंगलानी, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी जयपुर
- ग्रामीण स्थानीय प्रशासन, चन्द्रा पाटनी, रिसर्च पब्लिसिंग त्रिपोलिया बाजार, जयपुर
- इंग्लैण्ड में स्थानीय प्रशासन, श्री हरिश्चन्द्र, कालेज बुक डिपो, त्रिपोलिया बाजार, जयपुर
- पंचायती राज व्यवस्था में पंचायत समिति, श्री उमेश प्रसाद सिंह, राधा पब्लिशिंग कम्पनी, नयी दिल्ली
- द थर्ड वर्ल्ड टुमारो, पाल हैरीसन
- अरजल आर. - म्यूनिसिपल गवर्नमेन्ट इन इण्डिया
- जिला पंचायत फतेहपुर की त्रैमासिक समीक्षा रिपोर्ट
- सांख्यिकी पत्रिकायें, संख्या अधिकारी कार्यालय फतेहपुर द्वारा प्रकाशित

- सामाजिक समीक्षा जनपद फतेहपुर 2006
- राजनीति विज्ञान, बी. एल. फड़िया, कुलदीप फड़िया साहित्य भवन प्रकाशन इलाहाबाद
- ह्यूम सेम्पल एण्ड मार्टिन एलिन एमे. द स्ट्रक्चर ऑफ लोकल गवर्नमेन्ट टू द वर्ल्ड (द हेग 1961)
- भारत में स्थानीय प्रशासन, प्रो. श्रीराम महेश्वरी, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल प्रेस, आगरा
- भारत में नगरीय सरकारें, डॉ. बी. एम. सिन्हा, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर
- द हण्ड्रेड इयर ऑफ गवर्नमेन्ट इन आसाम, बी. वेंकटराव बनि प्रकाशन मण्डल गौहाटी, 1965
- एन आऊन लाईन ऑफ इंग्लिश लोकल गवर्नमेन्ट, लन्दन मैथ्यू एण्ड कम्पनी, 1925
- प्रतिवेदन प्रथम पंचवर्षीय योजना, 1954
- रिप्रेजेन्टेटिव गवर्नमेन्ट, जे. एस. मिल, लन्दन गवर्नमेन्ट लाईब्रेरी प्रेस 1957
- एन साइक्लोपीडिया ऑफ सोशल साइंसेज वैल्यूम 9 - 10
- वेवस्टर को न्यू टेवन्टीयथ सेन्चुरी डिक्सनरी ऑफ इंग्लिश लैंग्वेज - इंडियन एडिकशन 1960
- रिपोर्ट फार द टीम फॉर स्टडी ऑफ क्यूनिकेशन डेवलप एण्ड नेशनल एक्टेशन सर्विस - सामुदायिक विकास सहभागिता मंत्रालय भारत सरकार 1957
- डेमोक्रेटिक डिसट्रेलाइजेशन : द आइडिया द इमेज एण्ड द रियल्टी - समालित - आर. वी. जैन
- एडमिनिस्ट्रेटियल आर्गनाइजेशन - पाल मेयर
- भारत में ग्राम्य विकास के चार दशक - श्री एस. पी. गुप्ता : ग्राम्य विकास प्रकाशन लखनऊ
- फतेहपुर प्रगति परिक्रमा, सम्पादक - प्रेमलाल, सूचना एवं प्रसारण विभाग, लखनऊ

पत्र - पत्रिकायें

- राष्ट्रीय पत्र
- दैनिक जागरण
- अमर उजाला
- इण्डिया टुडे (पत्रिका)
- सहारा समय (साप्ताहिक)
- फ्रन्ट लाइन (पत्रिका)
- जनपदीय पत्र
- युगान्तर प्रवाह (साप्ताहिक)
- दो आबा वार्ता
- फतेहपुर चक्र
- न्यूज लीड
- जन कदम
- चौथी आँख
- क्रान्ति स्वर (साप्ताहिक)
- कैसी आजादी

☆☆☆